साक्षी

साक्षी

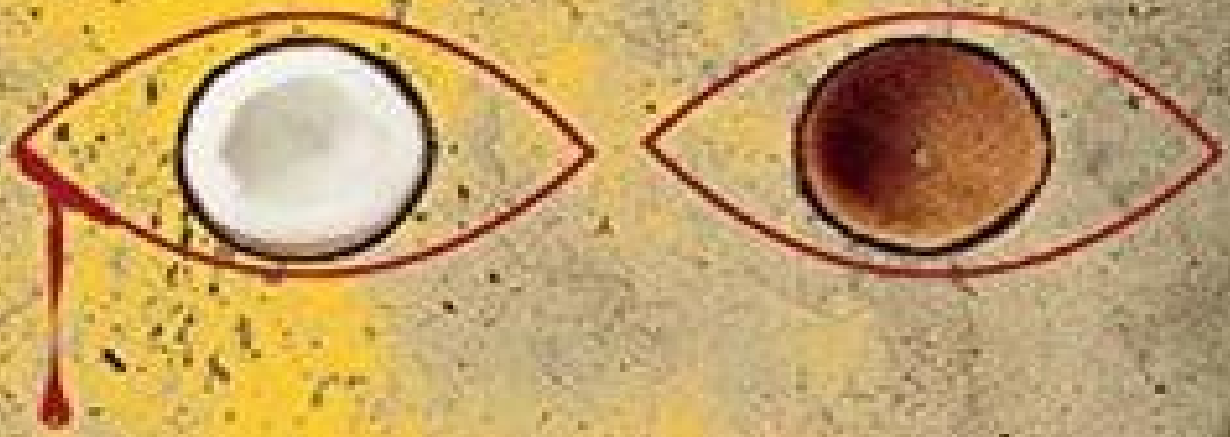

एस.एल. भैरप्पा

मूल कन्नड से एल.वी. शांताकुमारी द्वारा

अनुवादित

साक्षी

साक्षी

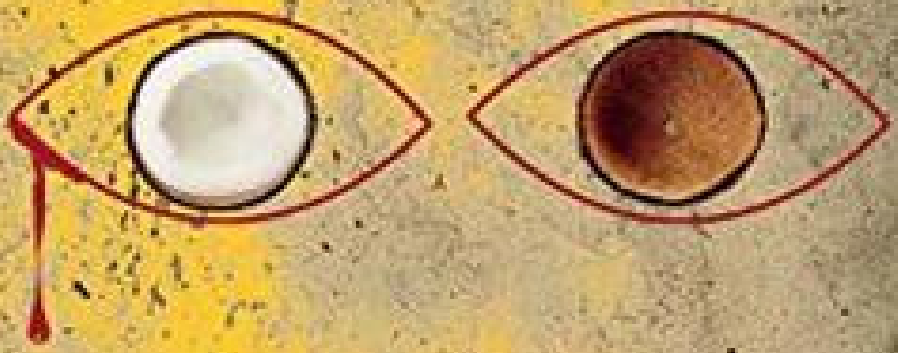

एस.एल. भैरप्पा

मूल कन्नड से एल.बी. शंताकुमारी द्वारा

अनुवादित

SAAKSHI

THE WITNESS

S.L. BHYRAPPA

TRANSLATED FROM THE KANNADA ORIGINAL BY
LV Shanthakumari

Table of Contents

हाफटाइटल पृष्ठ
शीर्षक पेज
कॉपीराइट पृष्ठ
अंतर्वस्तु
साक्षी
अनुवादक का नोट

SAAKSHI

SAAKSHI

THE WITNESS

S.L. BHYRAPPA

TRANSLATED FROM THE KANNADA ORIGINAL BY
LV Shanthakumari

द्वारा प्रकाशित

नियोगी पुस्तकें
ब्लॉक डी, भवन संख्या 77,
ओखला औद्योगिक क्षेत्र, चरण-I,
नई दिल्ली-110 020, भारत
दूरभाष: 91-11-26816301, 26818960
ईमेल: niyogibooks@gmail.com
वेबसाइट: www.niyogibooksindia.com
पाठ © एस.एल. भैराप्पा
संपादक: गीता राजन
कवर डिज़ाइन: मिशा ओबेरॉय
Layout: Shashi Bhushan Prasad
ISBN: 978-81-933935-5-0
प्रकाशन: 2017
यह एक काल्पनिक रचना है। इसमें वर्णित नाम, पात्र और घटनाएँ लेखक की कल्पना की उपज हैं। किसी भी जीवित या मृत व्यक्ति, घटना या स्थान से कोई भी समानता महज़ संयोग है।
सभी अधिकार सुरक्षित हैं। प्रकाशक की पूर्व लिखित अनुमति और सहमति के बिना इस प्रकाशन का कोई भी भाग किसी भी रूप में या किसी भी माध्यम से, इलेक्ट्रॉनिक या यांत्रिक रूप से, जिसमें फोटोकॉपी, रिकॉर्डिंग या किसी भी सूचना भंडारण और पुनर्प्राप्ति प्रणाली शामिल है, पुनरुत्पादित या प्रसारित नहीं किया जा सकता है।
मुद्रित: नियोगी ऑफसेट प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, भारत

अंतर्वस्तु

Saakshi
अनुवादक का नोट

एक अलग ही रोशनी, बिलकुल अपरिचित। दृष्टि या देखने की क्रिया में सहायक रोशनी से बिल्कुल भिन्न। ऐसा नहीं है कि ऐसी रोशनी पहले कभी नहीं देखी गई। भला एक पल में चमक कर गायब हो जाने वाली और समझ से परे ही प्रकाश का स्रोत अंधकारमय हो जाने वाली ऐसी चमक में पूरा चेहरा कैसे देखा जा सकता है?
अंगूठे के आकार के प्रेत ने चारों ओर देखा और सोचने लगा, क्या यह यमलोक है? या फिर यह कहीं बीच में है? इन शंकाओं के बावजूद, प्रेत को न तो डर लगा, न चिंता हुई और न ही उत्साह। बस यह जिज्ञासा थी कि दस दिशाओं से उसे घेरे हुए प्रकाश का यह विशाल पिंड बाहरी है या आंतरिक। असमंजस में प्रेत स्थिर खड़ा रहा। काफी समय तक वह इसी अवस्था में रहा, जिसमें स्मृति, विचार और अपेक्षाएँ व्यक्त और सक्रिय नहीं हो पा रही थीं। प्रेत ने चारों ओर देखा और संदेह फिर से उभर आया - क्या यह यमलोक है या उससे पहले का कोई लोक? इस विचित्र प्रकाश के अलावा और कोई उत्तर नहीं मिल रहा था।
और फिर, एक आवाज आई: 'क्या तुम परमेश्वरय्या नाम के व्यक्ति के प्रेत हो?'
वह एक स्पष्ट, कोमल और भावहीन आवाज थी, जिसमें जरा भी शोर नहीं था, लय, उतार-चढ़ाव या परिवर्तन नहीं थे, और न ही उसका कोई निश्चित स्रोत था। ऐसा लग रहा था मानो वह आवाज चारों ओर से एक साथ आ रही हो।
लेकिन प्रेत किसे जवाब दे, जब कोई दिखाई ही नहीं दे रहा था, कोई उपस्थित ही नहीं था। प्रेत अपने बारे में कैसे बात कर सकता था? इस तरह सोचते हुए, प्रेत को अहसास हुआ कि उसका दूसरा रूप परमेश्वरय्या नामक एक व्यक्ति था; वह उस व्यक्ति का अंगूठे के आकार का छोटा सा प्रेत था; और वह उस व्यक्ति के विचारों, व्यवहार और कर्मों का पात्र था। इस ज्ञान की दृष्टि से देखने पर, परमेश्वरय्या का भौतिक रूप बाहरी आँखों के लिए आवश्यक प्रकाश में प्रकट होने लगा। फिर भी, वह इस बात से अवगत था कि अब वह एक बिल्कुल अलग प्रकाश में, अंधकार के संसार की चमक में खड़ा है।
यमधर्म की उपस्थिति में प्रेतों से सीधे प्रश्न नहीं पूछे जाते। यहाँ के नियमों के अनुसार, चित्रगुप्तों से प्रेतों द्वारा पृथ्वी पर रहते हुए किए गए अच्छे और बुरे कर्मों का वर्णन करने को कहा जाता है। यहाँ पहुँचने पर प्रेत रोते हैं, विनम्रतापूर्वक विनती करते हैं, झूठ बोलते हैं, कहते हैं कि उन्होंने कोई पाप नहीं किया है, अनजाने में किए गए कर्मों के लिए क्षमा या सहानुभूति की याचना करते हैं। इसलिए प्रत्येक प्राणी के शरीर में निवास करने वाले दो चित्रगुप्तों को आदेश दिया जाता है

कि वे सब कुछ लिख लें और यहाँ रिपोर्ट करें। ये रिपोर्टर क्रोध, ईर्ष्या, दुख और जलन से मुक्त होते हैं। उनका कर्तव्य है कि वे वहाँ घटी हर बात का वर्णन करें, उसे स्मृति में रखें और रिपोर्ट करें। क्योंकि वे कभी झूठ नहीं बोलते, इसलिए केवल उनका कथन ही सत्य माना जाता है। अंत में, प्रेत से पूछा जाता है कि क्या चित्रगुप्त के वर्णन में कोई असत्य या विसंगति है।

परमेश्वरय्या के प्रेत की आंखें और कान वक्ता को खोज रहे थे। कोई दिखाई नहीं दिया। चारों ओर से एक दृढ़, भावहीन, कोमल और स्पष्ट आवाज गूंजी, जिसमें न तो सांत्वना थी और न ही निंदा। 'हम आपके मामले में प्रक्रिया से हट रहे हैं। आपने असहनीय पीड़ा सहन की है, पश्चाताप और निराशा का अनुभव किया है और पृथ्वी पर अपने पूरे जीवन में एक झूठ बोलने के कारण आपने जीना छोड़ दिया है; आप आत्महत्या करके यहां आए हैं। हमें विश्वास है कि आप झूठ नहीं बोलेंगे और हमने निर्णय लिया है कि आपको स्वयं अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करनी चाहिए। लेकिन यदि आप सत्य से भटक जाते हैं और भूल, शर्म या भय के कारण झूठ बोलना शुरू कर देते हैं, तो चित्रगुप्त हस्तक्षेप करेंगे और रिपोर्ट को ठीक करेंगे। समझें कि अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करने का यह अवसर यमधर्म द्वारा आपको दिया गया एक विशेष अनुग्रह है।'

आवाज रुक गई। प्रेत परमेश्वरय्या से जुड़ी स्मृति को स्पष्ट रूप से याद करने में लीन था। प्रेत को परमेश्वरय्या के संपूर्ण जीवन का वर्णन करने का आदेश दिया गया था। परन्तु, जिससे उसे बात करनी थी, वह प्रकट नहीं हो रहा था। एक अदृश्य प्राणी से, जो हमारे सामने न हो, भला कोई कैसे बात कर सकता है? इसके अलावा, यदि परमेश्वरय्या के जीवन का वर्णन करना था, तो क्या-क्या बताना था? शुरुआत कहाँ से करनी थी? कौन से विवरण शामिल करने थे और कौन से छोड़ने थे, कहाँ पर समाप्त करना था? क्या किसी मनुष्य के संपूर्ण जीवन का वर्णन करना कभी संभव है? प्रेत जब विचार कर रहा था, तभी आवाज सुनाई दी:

'आम लोगों को किसी औपचारिक भाषा के अभाव में बोलना मुश्किल लगता है – चाहे वह सौम्य हो या कठोर। अगर आपको भी ऐसा ही लगता है, तो मुझे बताएं, मैं आपके मनचाहे रूप में प्रकट हो जाऊंगा।'

प्रेत परमेश्वर के जीवन की यादों में खो गया और परमेश्वरय्या की दिनचर्या को याद करने लगा। उसने सोचा: मैं अधिकतर समय मौन रहता था। मैं केवल उतना ही बोलता था जितना दिन-प्रतिदिन के कार्यों के लिए आवश्यक होता था। बाकी सारी

बातें मेरे भीतर ही होती थीं। मैं अपने अंतर्मन को एक लंबी रिपोर्ट देता था, उसमें मतभेद करता था, सहमति जताता था और परिस्थितियों के गुण-दोषों का विश्लेषण करता था। मैं पहाड़ियों की चोटी तक, बादलों को छूते हुए, ऊपर देखता था और अपने बोले हुए शब्दों का मूल्यांकन करता था। यह मेरा अभ्यास था और सहज था। अब यमलोक में भी, मैं बिना किसी प्रत्यक्ष रूप के अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर सकता हूँ।

जब प्रेत ऐसा सोच ही रहा था, तभी आवाज सुनाई दी।

'क्या आप जानना चाहते हैं कि शुरुआत कहाँ से करें? किन-किन बातों को शामिल करना चाहिए? आपने झूठ क्यों बोला और किसलिए? एक झूठ बोलने पर आपने आत्महत्या क्यों कर ली? पहले इन दोनों सवालों के विस्तार से जवाब दें।'

'नियंतृ, आप यमधर्म हैं, सही-गलत के स्वामी, धर्म के स्वामी। आपके प्रश्न का उत्तर देने से पहले, मैं अपने भीतर इस समय हो रहे परिवर्तन को स्वीकार करना चाहता हूँ। आपके बोलने से पहले, मैं सोचता था कि पृथ्वी पर छोड़े गए जीवन और प्रेत के रूप में मेरी वर्तमान अवस्था के बीच कोई संबंध नहीं है। तब मुझे लगता था कि उनके बीच केवल स्मृति का संबंध है। लेकिन अब मुझे लगता है कि मैं अपने छोड़े गए जीवन के लिए नैतिक और धार्मिक उत्तरदायित्व अभी भी रखता हूँ। यही उत्तरदायित्व है जिसने आपको प्रश्न पूछने का अधिकार और मुझे उत्तर देने का कर्तव्य दिया है। क्या मैं सही हूँ?'

'जी हां, बिलकुल। आपको इस बारे में कोई संदेह नहीं होना चाहिए।'

अब प्रेत के लिए आगे बढ़ना आसान हो गया था। इसके अलावा, प्रेत को यह सटीक जानकारी मिल गई थी कि परमेश्वरय्या ने ही आत्महत्या की थी और यहाँ आए थे, अब वह आसानी से उत्तर दे सकता था और उसने अपना वर्णन शुरू कर दिया:

मैंने जो कहा वह महज़ झूठ नहीं था। वह झूठी गवाही थी। मैंने गवाह के कटघरे में न्यायाधीश के सामने शपथ लेकर झूठ बोला था कि मैं अपनी अंतरात्मा की आवाज़ सुनकर सच बोलूंगा। मैंने अदालत में उपस्थित सभी लोगों के सामने झूठ बोला था और इस झूठ को मैंने स्वयं, आरोपी, अन्य गवाहों और दुनिया के सभी प्राणियों की जानकारी में बोला था। अब मैं इस सवाल का जवाब दूंगा कि मैंने झूठ क्यों बोला। अगर मैं संक्षेप में जवाब दूं और यह न बताऊं कि मैंने क्यों, किसके लिए और किस संदर्भ में झूठ बोला, तो यह आपके सामने पूरी सच्चाई रखने के बराबर नहीं होगा।

लेकिन मैं हिचकिचा रहा हूं क्योंकि उन सभी विवरणों को सुनना आपको अनावश्यक लग सकता है। शायद सही और गलत का संक्षिप्त विवरण ही काफी होगा।

"संक्षिप्त सारांश में सत्य का कोई सार नहीं होगा। मुझे सब कुछ बताओ।" आवाज़ में कोई लय नहीं थी। अब तक प्रेत समझ चुका था कि उस आवाज़ में एक नैतिक उपदेश का गुण था, एक निष्पक्ष और तटस्थ कथावाचक का अंदाज़ था, जिसमें लय, दबाव या भावना का अभाव था। प्रेत उस आवाज़ के साथ बढ़ती आत्मीयता महसूस कर रहा था और खुद को उसी मापदंड पर परख रहा था। उसका आत्मविश्वास बढ़ रहा था। उसे पूरा विश्वास था कि वह बिना किसी आत्म-दया या आत्म-समर्थन के, तटस्थ भाव से वर्णन कर सकेगा।

'नियंत्रु, मैंने इस घटना के लिए मंजय्या को न तो दोषी ठहराया है और न ही ठहराऊँगी। उसने मुझे झूठ बोलने का प्रलोभन दिया। लेकिन उसने मुझे मजबूर नहीं किया और न ही शारीरिक बल का प्रयोग किया। उसने नारियल के बाग में हमारी मुलाकात यह स्पष्ट रूप से कहते हुए समाप्त की कि उसके पक्ष में गवाह बनना या न बनना मेरी मर्ज़ी है। सब कहते हैं कि दुनिया भर के वकील झूठे होते हैं और दूसरों को झूठ बोलना सिखाते हैं। मैं भी यह जानती थी। इसलिए, मैं अधिवक्ता वेंकटरामय्या को, मंजय्या के प्रलोभन को स्वीकार्य, कानूनी रूप से सही और उचित दिखाने के लिए शब्दों के चतुर हेरफेर के लिए दोषी नहीं ठहराना चाहती। यह सच है कि जो भी प्रलोभन देता है वह झूठा होता है, लेकिन जो उस प्रलोभन में फंस जाता है वह उससे भी बड़ा झूठा होता है। जब मुझे यह बात स्पष्ट हो गई, तभी मैंने आत्महत्या करने का सोचा। कांची की मृत्यु संयोगवश नहीं हुई थी, रात में चोरी के अपने नियमित चक्कर के लिए बाग में जाते समय नारियल के पेड़ से फिसलकर गिरने से नहीं। मुझे कभी कोई संदेह नहीं था कि कांची की हत्या मंजय्या ने ही की थी।' लोग कहते हैं कि झूठा व्यक्ति न तो साहसी होता है, न निडर और न ही सच्चा। शायद यह बात सामान्यतः सच है।

लेकिन उस दिन सूर्यास्त के समय, जब मैं अपने बगीचे में कुएँ के पास था, मंजय्या बेफिक्र और निर्भीक भाव से अंदर आया, मानो कुछ हुआ ही न हो! वह मेरे पास आया, मेरी आँखों में सीधे देखा और बोला। न तो उसमें विनम्रता थी और न ही विनती। उसके हावभाव से साफ पता चल रहा था: "अगर तुम चाहो तो कर सकते हो, अगर नहीं तो तुम्हारी मर्जी है, कोई दबाव या ज़बरदस्ती नहीं है।" कितना

आत्मविश्वास था उसमें, यह जानते हुए भी कि उसे कम से कम दस साल की कठोर कारावास की सजा मिलेगी! उसके पहले शब्द खेती के बारे में थे। "देखो, तुम्हारी बाड़ के उस तरफ़ के लगभग छह पेड़ों में कोमल और मुड़ी हुई पत्तियाँ निकल रही हैं। तुम्हें उनमें दो सेर नमक डालना है और क्यारियों में खूब पानी डालना है।" उसके शब्दों ने मुझे स्तब्ध कर दिया। इससे पहले कि मैं संभल पाता, उसने आगे कहा, "बाजार में एक नए प्रकार का कीटनाशक उपलब्ध है। अगर आप इसे पौधों पर छिड़क दें, तो नारियल के पेड़ों को नष्ट करने वाले वे हानिकारक कीड़े कभी आसपास नहीं आएंगे। अगली बार जब मैं हसन या टिपटूर जाऊंगा, तो आपके लिए ले आऊंगा," और वह पत्थर की पटिया पर बैठ गया। मैं खड़ा रहा। मेरा मन विचारों में खो गया। उसने मेरी बेटी से शादी की, उसे छोड़ दिया और चन्नरायपट्टाना में एक शिक्षिका के रूप में अपना जीवन यापन करने के लिए मजबूर कर दिया। उसने उससे और हमसे दूरी बना ली थी। अब, मानो कुछ हुआ ही न हो, वह तालाब के पास पत्थर की पटिया पर आराम से बैठ गया। यह मेरे लिए भी बैठने का संकेत था। फिर उसने बोलना शुरू किया: "देखिए, मेरे पास समय की कमी है। पूरा गाँव जानता है कि कांची चोर है। लोग सुबह से शाम तक धूप में मेहनत करते हैं, खेती करते हैं, पौधे लगाते हैं, उन्हें पानी देते हैं और उनकी देखभाल करते हैं ताकि वे फलदार पेड़ बन सकें। फिर कांची आता है और फलों के गुच्छे नीचे लटकाकर ऐसे ले जाता है जैसे गाँव के सारे बाग उसी के हों। किसी ने भी उसे रंगे हाथों नहीं पकड़ा। चन्नरायपट्टाना में बैठकर अपनी शक्ति और अधिकार का प्रदर्शन करने वाले और अपने कारनामों का बखान करने वाले पुलिसवालों ने उसे कभी चेतावनी नहीं दी। वे न तो हमारी समस्याएँ सुनते हैं और न ही हमारी मदद करते हैं। यह अन्याय कब तक बेरोकटोक चलता रहेगा? यह सच है कि मैंने कांची को हटा दिया और यह भी सच है कि पुलिस मुझे ढूंढ रही है। लेकिन इससे पहले कि वे मुझे पकड़ें, मैं चन्नरायपट्टाना पुलिस स्टेशन में आत्मसमर्पण कर दूंगा। आप अदालत में आकर मेरे पक्ष में गवाही दीजिए और मुझे इस आरोप से बचाइए। बरी होने के बाद, मैं वादा करता हूँ कि आपके घर आऊँगा, आपके सामने सावित्री के सामने अपने गुनाह कबूल करूँगा, और मैं उसका घर संभालूंगा और एक ईमानदार पति बनूंगा। मैं अब कभी भी पहले जैसा व्यवहार नहीं करूंगा।" वह चुप हो गया। उसकी आँखें मेरी आँखों से मिलीं और दृढ़ थीं, मानो किसी पहलवान ने मेरी दृष्टि को जकड़ रखा हो। मैंने सोचा, क्या

उसने मेरे अंतर्मन की नब्ज़, मेरी कमज़ोरी को पकड़ लिया है? उसने कोशिश तो की थी, लेकिन मैं कमज़ोर नहीं थी। मैं मन ही मन हँस पड़ी। मेरी ओर से कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई, या शायद, अनजाने में ही, मेरे चेहरे ने कुछ ऐसी प्रतिक्रिया दिखाई हो जिसका मुझे खुद भी एहसास नहीं था। उन्होंने बोलना जारी रखा: "मैंने आत्मसमर्पण करने का फैसला कर लिया है। क्या मुझे बचाना आपका नैतिक कर्तव्य नहीं है? न केवल आपकी बेटी के पारिवारिक जीवन के लिहाज से, बल्कि उस व्यक्ति को बचाने के लिहाज से भी जिसने ग्रामीणों के लिए एक दुष्ट कीड़े, एक काँटे, एक खतरे को दूर कर दिया है। अदालत में इतना कहना ही काफी होगा: 'उस रात आप मेरे साथ किसी काम से तिपतुर गए थे। आप और मैं अगली शाम तक आपके सहयोगी नागप्पा के घर रुके। फिर मैं काम से अरसिकेरे चला गया और आप अपने गाँव लौट आए।' अदालत में आकर इतना कहना ही काफी है। नागप्पा भी इस बयान की पुष्टि करेंगे।" मैं परेशान हो गया। नागप्पा झूठी गवाही दे सकते हैं, लेकिन मंजय्या कैसे सोच सकते हैं कि मैं भी झूठी गवाही दूँगा? उन्होंने आगे कहा, "नागप्पा किसी भी मामले में गवाह बनकर आएंगे। वकील ने कहा कि गवाह के तौर पर आपका बयान मामले को मज़बूत करेगा। मैं कुछ क्यों छुपाऊं? वकील ने कहा कि जज भी आपकी बातों पर विश्वास करते हैं और उन्हें शास्त्रों के वचन मानते हैं। लगता है जज आपका नाम जानते हैं और आपकी गवाही को दस अन्य गवाहों के बराबर समझते हैं। क्या आपको लगता है कि मुझे जेल भेजना उचित है या आपको लगता है कि मेरी रक्षा करना सही है, उस चोर को जिसने हर रात दूसरों की संपत्ति हड़प ली थी? मुझे आपको धर्म की बारीकियां सिखाने की ज़रूरत नहीं है। मैं मानता हूं कि मैंने बुरे कर्म किए हैं। लेकिन कांची को हटाना उनमें से एक नहीं था। हो सकता है उसने आपके उपवन से चोरी न की हो," उन्होंने अपनी बात समाप्त की और चुप हो गए। उनकी निर्भीक निगाहों से साफ पता चल रहा था कि उन्हें कोई परवाह नहीं थी। मंजय्या ने आगे कहा, "सुनो, मलाली वेंकटरामय्या, वकील ने कहा, 'यह कोई सोची-समझी हत्या नहीं है, न ही यह पुरानी दुश्मनी के कारण की गई है। यह एक आकस्मिक मृत्यु है, जो बाग से चोरी रोकने के दौरान हुई, उस फसल की चोरी जो मेहनत और प्रेम से उगाई गई थी। उसकी जगह मैं भी मर सकती थी। इसलिए, अगर मैं दोषी भी पाई जाती हूँ, तो मुझे केवल पाँच साल की सज़ा होगी।' यहाँ रहने के बजाय, मैं जेल में रहूँगी। लेकिन सवाल यह है कि तुम्हारा नैतिक कर्तव्य क्या है? क्या मेरी रक्षा करना या

कांची जैसे चोर को आज़ाद छोड़ देना? क्या तुमने कभी, एक दिन के लिए भी, कांची का सामना किया है, उसे समझाया है कि वह जो कर रहा है वह गलत है, धर्म के विरुद्ध है और उसे सुधारने की कोशिश की है? तुमने नहीं की। या अपने स्वभाव और प्रवृत्ति को देखते हुए, तुम्हें उसके अंदर के चोर को, उसकी चोरी करने की प्रवृत्ति को नष्ट कर देना चाहिए था। मैंने उस चोर को नष्ट कर दिया। अगर तुम मेरी रक्षा नहीं करते, तो यह कांची के कृत्यों को जायज़ ठहराने के बराबर है।" मंजय्या उठे और घमंड से बोले, "मैं आपसे विनती करने या अपना पक्ष रखने नहीं आया हूँ। आप तय करें कि आपका नैतिक कर्तव्य क्या है। मैं अपने वचन का पालन करता हूँ।" दृढ़ और साहसी कदमों से वे नारियल के पेड़ों की कतारों के बीच बनी पहाड़ी पर चलते हुए बाग के द्वार की ओर चल दिए।

'नियंत्रु, मुझे अपने भीतर उत्पन्न दुविधा, सच्चे धर्म की खोज में मेरा मन किन दिशाओं में गया और उस दिन से मैं किस प्रकार पीड़ित हुआ, इसका थोड़ा और विस्तार से वर्णन करना चाहिए। मुझे अच्छी तरह याद है कि वह अमावस्या का गुरुवार का दिन था। मंजय्या ने मेरे सामने दो आकर्षक प्रलोभन रखे, इस स्पष्ट इरादे से कि मैं उन्हें स्वीकार कर लूँ। पहला, धार्मिक प्रलोभन: अर्थात्, कांची की हत्या जन कल्याण के लिए थी। दूसरा, पुत्रवत स्नेह को प्रेरित करने वाला प्रलोभन, अर्थात्, आरोपों से बरी होने के बाद, वह मेरे घर आएगा, मुझसे मेरी बेटी के लिए क्षमा मांगेगा, उसे घर ले जाएगा और एक सभ्य पारिवारिक जीवन व्यतीत करेगा। अगले दिन, यानी शुक्रवार को, वह आत्मविश्वास से भरे हुए चन्नरायपट्टाना पुलिस स्टेशन पहुंचे और बोले: "मुझे पता चला कि आप लोग मुझे ढूंढ रहे हैं। जैसे ही मुझे इसकी जानकारी मिली, मैं यहां आ गया हूं। अपनी कानूनी कार्रवाई शुरू कीजिए। न्याय की प्रक्रिया शुरू होने दीजिए। लेकिन कानून का अक्षरशः पालन कीजिए। याद रखिए, मैं मंजय्या हूं।"

दो सप्ताह बाद, फिर से एक गुरुवार को, हमारे जिले के प्रसिद्ध वकील मलाली वेंकटरामय्या हमारे गाँव आए। ऐसा लगता है कि उन्होंने मंजय्या के बाग का दो घंटे से अधिक समय तक निरीक्षण किया, वह स्थान जहाँ कांची की हत्या हुई थी। फिर वे कांची की विधवा लक्कू के घर गए और उनसे अकेले में मुलाकात की। वे दोपहर के भोजन के लिए हमारे घर आए। मेरे बेटे रामकृष्ण ने उनका आदरपूर्वक स्वागत किया और नौकर के माध्यम से मुझे संदेश भेजा, क्योंकि मैं बाग में काम कर रहा था। मेरी बहू सुकन्या ने अतिथि के सम्मान में विशेष व्यंजन बनाए - चावल, रसम,

दाल, करी, अन्य व्यंजन और दही। लेकिन रागी के गोले नहीं थे। दोपहर के भोजन के बाद, जब हम चटाई पर बैठकर पान और सुपारी चबा रहे थे, तो वकील ने मंजय्या द्वारा पहले से दी गई सूची में एक और प्रलोभन जोड़ दिया। यह झूठ को सही ठहराने के रूप में था। रामकृष्ण भी वहाँ मौजूद थे। वकील ने गुप्त बात कहने के लिए अपनी आवाज इतनी धीमी कर ली थी कि रसोई में बैठी सुकन्या भी उसे सुन सकती थी। उन्होंने कहा: "यह सच है कि मंजय्या एक व्यभिचारी, एक लंपट व्यक्ति है। एक पत्नी ऐसे व्यक्ति को कैसे सहन कर सकती है, और वह भी एक सभ्य परिवार में जन्मी, देवी महालक्ष्मी के समान सुंदर बेटी, उसे कैसे बर्दाश्त कर सकती है? एक वकील होने के नाते मैं सवाल करता हूँ, उसे ऐसा क्यों करना चाहिए? अगर मेरे दामाद ने ऐसा किया होता, तो मैं उसे कभी बख्शता नहीं। लेकिन, परमेश्वरय्या, एक बात समझ लीजिए। घोर दुख और विपत्ति के समय सबसे नीच व्यक्ति भी आत्मनिरीक्षण करता है। वह अपने पापों को शुद्ध करना चाहता है। मैंने मंजय्या से जेल में पाँच बार मुलाकात की। वह हर बार रो रहा था। उसका इरादा मुझे बचाने का नहीं था, बल्कि वे दिल से निकले पश्चाताप के आँसू थे। उसे लगता था कि एक अच्छी पत्नी, एक धर्मपरायण ससुर और एक मित्रवत देवर के प्रति उसकी बेवफाई ही उसके मन को हत्या करने के लिए इतना दुष्ट बनाने का मूल कारण थी। उसने कहा कि वह सजा का हकदार है। उसने मेरे हाथ पकड़े और विनती की, 'कृपया मेरी जान लेने की कोशिश न करें।' बरी होना।' आप देखिए, हिरासत में जाने से पहले तक वह पहले वाले मंजय्या ही थे। अब, जेल के माहौल और वहाँ के अनुभवों ने उनमें एक नैतिक परिवर्तन ला दिया है।" इन शब्दों का रामकृष्ण पर गहरा असर हुआ। बाद में जब मैंने सुकन्या से बात की, तो मुझे पता चला कि उन शब्दों का उन पर भी वैसा ही प्रभाव पड़ा था जैसा चाहा गया था। लेकिन मंजय्या के बारे में वकील की सिफारिश पर विश्वास करना मेरे लिए लगभग असंभव था।

फिर वकील ने अपना दूसरा मुद्दा शुरू किया: "आप जानते हैं, मैं चालीस साल से ज़्यादा समय से इस पेशे में हूँ। न सिर्फ़ इस ज़िले के, बल्कि अलग-अलग सत्र न्यायालयों के वकील भी मुझसे सलाह लेने आते हैं, अगर हत्या के मामले बहुत गंभीर हों। अगर मामले बहुत अहम हों, तो वे मुझसे उन्हें संभालने का अनुरोध करते हैं और दूर-दूर से मुझे बुलाते हैं। मैं आपको अपने अनुभव से बताता हूँ: देखिए, हत्याएँ होती हैं और उनमें से नब्बे प्रतिशत न्यायोचित होती हैं। अगर कोई

व्यक्ति हत्या करने का फ़ैसला करता है, यह जानते हुए कि उसे कड़ी सज़ा या मौत की सज़ा मिलेगी, तो उसने ज़रूर बहुत बड़ा अन्याय सहा होगा, है ना? लोग सज़ा देने और कानून को अपने हाथ में लेने का फ़ैसला तब करते हैं जब उन्हें लगता है कि अन्याय को कानूनी तौर पर हल करना नामुमकिन है। आप खुद जानते हैं कि कांची सबके बागों से नारियल चुराता था। मान लीजिए कि गाँव वालों ने उसके खिलाफ़ पुलिस स्टेशन में शिकायत दर्ज कराई, तो पुलिस उससे कई सवाल पूछेगी, जैसे, 'उसके चोरी करने का क्या सबूत है, क्या आपने उसे कभी रंगे हाथों पकड़ा है, वगैरह।' अगर ऐसा है, तो इस चोर को कैसे सुधारा जा सकता है? इसके अलावा एक और सवाल है यहां मनोविज्ञान की बात करते हैं। अगर आपके बाग से सिर्फ पचास नारियल चोरी हो जाएं तो इतना बड़ा नुकसान नहीं होगा। कोई भी बाग मालिक इसे अपमान समझेगा कि कोई ऐसा व्यक्ति उसके बाग में, जो बंद और बाड़ से घिरा हुआ है, घुसपैठ करे। वह खुद को बेबस महसूस करेगा। यह सिर्फ पचास-साठ बेकार नारियलों का नुकसान नहीं है, यह वह अपमान है जिसके लिए चोर को मार डाला जाता है। जैसा कि आप जानते हैं, मंजय्या गुस्सैल स्वभाव का है। इस घटना से दो दिन पहले, ऐसा लगता है कि कांची मंजय्या के बाग में घुसकर नारियल चुरा लाया था। उस दिन, अमावस्या के गुरुवार को, मंजय्या अपने बाग में इंतजार कर रहा था। यह सोचकर कि मंजय्या कहीं बाहर गया है, कांची बाग में घुस गया और मंजय्या से भिड़ गया। उस घने, अंधेरे अंधेरे में, गांव के बाहर बाग में, दोनों के बीच लड़ाई छिड़ गई। इस गांव में कांची जैसे आदमी से लड़ने की हिम्मत और किसमें थी? इस झड़प में कांची की जगह मंजय्या खुद मर सकता था। तो फिर आप इसे हत्या कैसे कह सकते हैं?

वकील द्वारा उठाया गया तीसरा मुद्दा हमारी कानूनी व्यवस्था से संबंधित था। "अगर आप कांची के खिलाफ शिकायत दर्ज कराते हैं और कहते हैं कि वह चोर है, तो पुलिस सबूत मांगती है। लेकिन उन्हें पृष्ठभूमि या घटनास्थल के बारे में क्या जानकारी होती है? मैं यह नहीं कहता कि कोई जांच नहीं होनी चाहिए। लेकिन मुझे लगता है कि उचित जांच यहीं, इस गांव बिलिकेरे में, भगवान शिव के मंदिर के विशाल परिसर में, गांव के बुजुर्गों के सामने और आप जैसे ईमानदार, धर्मनिष्ठ लोगों के नेतृत्व में होनी चाहिए, जिन्होंने आज तक एक भी झूठ नहीं बोला है। कोई भी सजा जो किए गए अपराध, अपराध की गंभीरता, परिस्थितियों, संदर्भ और अपराध और सजा के बीच संतुलन को ध्यान में रखे, स्वीकार्य होगी। अगर आप यह

तय करते हैं कि मंजय्या को भगवान शिव के मंदिर के सामने वाले विशाल बरगद के पेड़ की शाखा पर लटका दिया जाए, तो वह भी सही होगा। दूर शहरों में बैठकर और तथ्यों को जाने बिना रिकॉर्ड देखकर न्याय देने वाली अदालतें उन अंग्रेजों द्वारा स्थापित की गई थीं जो समुद्र पार से आए थे। वहां बोला गया सत्य सत्य नहीं होता और झूठ झूठ नहीं होता। यह मेरे जैसे वकीलों के लिए केवल जीविका का साधन है। महात्मा गांधी ने जिसे 'स्वदेशी सत्य' कहा था, वह इसी तरह का था। जांच का।"

'तभी मेरी नज़र उस पर पड़ी। इस प्रतिष्ठित वकील ने सफेद खादी की धोती और सफेद खादी की कमीज़ पहनी हुई थी। हालाँकि मैं गांधी जी का अनुयायी नहीं था, फिर भी मैं जानता था कि वे एक सच्चे इंसान हैं। अगर मेरे बड़े दामाद, मट्टीकेरे के सत्यनारायण, अपनी कामुक इच्छाओं को संयमित रखते हुए सदाचारी जीवन जी रहे हैं, तो यह केवल महात्मा गांधी के प्रभाव के कारण ही है। खैर, वकील ने इतना ही कहा, अपनी चमचमाती काली कार की पिछली सीट पर बैठे और चले गए। उनके जाने के बाद, मेरे मन में यह दुविधा उत्पन्न हुई: क्या मंजय्या कांची की हत्या का दोषी था? क्या हत्या सही थी या गलत? यह सच है कि मैंने कांची को सुधारने के लिए कुछ नहीं किया। मैंने कांची के कारण अन्य बाग मालिकों को हो रहे नुकसान को टालने के बारे में सोचा ही नहीं था। मट्टीकेरे के सत्यनारायण ने तो ज़रूर कोशिश की होती।' वह कांची के घर जाकर उसकी पत्नी को सलाह देता या किसी गर्म दोपहर में कांची के घर जाकर, उसके भोजन करते समय उसके सामने बैठता और कहता, "देखो कांची, तुम जो कर रहे हो वह अन्याय है, अधर्म है। जब तक तुम अपने हाथ में रखे भोजन की कसम खाकर यह नहीं कहते कि 'मैं चोरी छोड़ देता हूँ', मैं उपवास करूँगा," और फिर सत्याग्रह शुरू कर देता। लेकिन मैं? मैं अकेला रहता था, मुझे यह भी पता नहीं था कि कांची नाम का एक चोर हमारे गाँव में हमारे बीच रहता है। शायद वह कभी हमारे बगीचे में आया ही नहीं, क्योंकि मैं सारा दिन अपने बगीचे में ही बिताता था। तो कांची रात में चोरी करने कैसे आ सकता था, जब तक कि वह दिन में बगीचे में न आता और उसे पके हुए नारियल के गुच्छों वाले पेड़ों पर नज़र रखने का मौका न मिलता? इसीलिए वह मेरे बगीचे में नहीं आया था। कुल मिलाकर, मैं कुएँ के मेंढक की तरह अपने स्वार्थ में डूबा रहता था, अपने पड़ोसियों की समस्याओं और दुखों को समझने की कोशिश भी नहीं करता था। लेकिन मंजय्या ने सबकी समस्या हल कर दी। शायद उनका तरीका

गलत था। इसी सोच के साथ, न्याय की मेरी भावना का पलड़ा चार-पाँच दिनों तक मंजय्या के पक्ष में झुकता रहा। मुझे लगा कि सत्यनारायण मुझसे ज़्यादा सदाचारी जीवन जी रहे हैं। मेरी बेटी सीता की मृत्यु के बाद वे मुझसे मिलने बहुत कम आते हैं। इसके अलावा, हम अलग-अलग तालुकों से हैं।

मुझे इस बात का नैतिक अफसोस था कि मैंने कांची को सुधारने के लिए कुछ नहीं किया। अब मंजय्या का क्या किया जाए जिसने समस्या को अपने तरीके से सुलझा लिया? यह सवाल मुझे परेशान कर रहा था; अगर मैं मंजय्या को बरी कराने में मदद न करूं और उसे कारावास या मृत्युदंड भुगतने दूं, तो क्या यह बदले की भावना में डूबना नहीं होगा? उसने मेरे परिवार के साथ अन्याय किया है और मेरी बेटी का जीवन बर्बाद कर दिया है। साथ ही, अदालत में झूठी गवाही देना मेरे लिए संभव नहीं था। क्या मैं नहीं जानता था कि सत्य और असत्य न्याय या अन्याय द्वारा तय किए गए शब्द नहीं हैं? वे तथ्य हैं जो अंतरात्मा की गहराई में चमकते प्रकाश को दर्शाते हैं। अगर मंजय्या के साथ अन्याय होने पर भी मैं चुप रहूं और उदासीन बना रहूं, तो मेरे सत्य का क्या मूल्य रह जाएगा? यह विचार भी मेरे भीतर उथल-पुथल मचा रहा था कि मैं अपने सत्य और असत्य को ही सर्वोच्चता दे रहा हूं। स्वभाव से मैं कम बोलने वाला था। तीस साल पहले अपनी पत्नी की मृत्यु के बाद से मैं और भी अंतर्मुखी हो गया था। मैं किससे सलाह ले सकता था? मैं किससे अपने दुख का इज़हार करता ताकि मेरा दुःख कम हो सके? भगवान भी उस दर्द के काँटे को नहीं निकाल सकते जो मेरे भीतर चुभता है। इसलिए मैं अकेला ही रहता था। मेरे जीवन के सारे दुःख 'सत्य का अर्थ क्या है?' इस प्रश्न के इर्द-गिर्द घूमते थे और उसी से आकार लेते थे। इतने वर्षों तक जीने का एकमात्र सहारा सत्य को जानना और उसका अभ्यास करना ही था। लेकिन इस वकील के बोलने के बाद, मुझे सत्यनारायण याद आ गए। मुझे लगने लगा कि व्यक्तिगत दुःख के कारण अपने अंतर्मन में सिमटने के बजाय, अगर मैं परोपकारी कार्यों में लगा रहता, तो सत्य की प्राप्ति न भी हो, मुझे तृप्ति का अनुभव अवश्य होता। मैं धीरे-धीरे अवसादग्रस्त होता गया, यह सोचकर कि इतने वर्षों की चुप्पी और अलगाव व्यर्थ और निरर्थक थे। नींद मुझसे पूरी तरह दूर हो गई। पत्नी की मृत्यु के बाद से ही मेरी शांतिपूर्ण नींद भंग हो चुकी थी। तब से एक भी रात चैन से नहीं गुज़री। घंटों करवटें बदलने के बाद ही थोड़ी-बहुत नींद आती थी या फिर उधड़-बठकर आती थी। जब मैं बहुत थका हुआ होता था, तो जल्दी सो जाता था। लेकिन आधी रात तक मैं पूरी तरह

जाग जाता था, यहाँ तक कि पिछवाड़े में लगे अलसी के पेड़ पर हवा चलने की आवाज़ या मच्छरों के भिनभिनाने और काटने की आवाज़ भी सुनाई नहीं देती थी। चारों ओर फैली ऐसी शांति में, मैं ऐसे जागता था जैसे मुझे भीतर से ज़ोरदार लात लगी हो। मैं चाहे कुछ भी कर लूँ, नींद कभी मेरे पास नहीं आती थी। क्या चालीसवें वर्ष से ही ऐसा होना चाहिए? यह विधवा होने की यौन इच्छा नहीं थी जिससे मैं पीड़ित था। मेरी कामेच्छा मेरी पत्नी की चिता पर राख हो गई थी। जागते या सोते समय भी इसने मुझे परेशान नहीं किया। तो फिर इस अनिद्रा का कारण क्या था? सत्य और असत्य का मूल क्या है? असत्य की उत्पत्ति क्यों और किस स्रोत से हुई? क्या यह इस शाश्वत प्रश्न का संतोषजनक उत्तर न मिलने का दर्द था? मन की इस विचलित और एकांत अवस्था में मैंने अपने बच्चों का पालन-पोषण किया। मैंने अपनी बेटी सीता का विवाह सत्यनारायण से किया और उसकी मृत्यु देखी। मैंने रामकृष्ण को शिक्षा प्राप्त करने के लिए हसन भेजा और यह सुनिश्चित किया कि सावित्री को भी शिक्षा मिले।

चाहे फसल अच्छी हो या खराब, मेरे पूर्वजों के समय से ही हमारे परिवार में यह परंपरा रही है कि हमारे घर आने वाले किसी भी व्यक्ति को खाली पेट वापस न भेजा जाए। हाल ही में हमारे गाँव तक जाने वाली सभी सड़कें कच्ची हुई हैं और बसें हमारे गाँव तक पहुँचने लगी हैं। पहले अगर पूर्व और उत्तर-पूर्व से लोग हसन, बेलूर, सकलेशपुरा (पश्चिम दिशा) जाना चाहते थे तो उन्हें बिलिकेरे होकर जाना पड़ता था। दोपहर में भगवान शिव के मंदिर के पास बैठे किसी भी यात्री को घर लाकर भोजन कराना हमारे परिवार की परंपरा थी। मेहमान को भोजन कराने के बाद ही हम दोपहर का भोजन करते थे। अपने मृत्युशय्या पर पिता ने मुझसे शपथ लेने को कहा था, मेरा हाथ उनके हाथ पर रखकर, प्रतिज्ञा की पुष्टि करते हुए। उन्होंने कहा, "देखो, मेरे बेटे, मैं तुमसे कुछ नहीं माँगता सिवाय इसके कि तुम मेहमानों को भोजन कराने की इस परंपरा को निभाते रहो और आतिथ्य सत्कार की हमारी परंपरा को जारी रखो।" उन्होंने तभी अंतिम साँस ली जब मैंने उनसे यह वादा किया। मैंने इस अन्नदान को निष्ठा और भक्ति के साथ निभाया। अब, बसों के चलने के बाद, पैदल यात्रा करने वाले लगभग न के बराबर रह गए थे। दोपहर के भोजन के लिए रुकने वाले लोग भी बहुत कम थे। फिर भी मेरा पुत्र रामकृष्ण भी उसी श्रद्धा और भक्ति के साथ इस परंपरा को निभा रहा है। मैंने अपने अनुभव से समझा कि यह कहना कि खाना पकाने और परोसने के लिए पत्नी की आवश्यकता

होती है, केवल एक बहाना था। यदि मुझे इस अन्नदान का सहारा न मिलता, तो पत्नी की मृत्यु के बाद मुझे क्या सहारा मिलता? जब मेरी पत्नी का निधन हुआ, तब रामकृष्ण उन्नीस वर्ष के और सीता पंद्रह वर्ष की थीं। सबसे छोटी सावित्री केवल पाँच वर्ष की थी। सावित्री के बाद जन्मे दो बच्चे, जिनकी जल्द ही मृत्यु हो गई, उन्हें तो गिना ही नहीं जा सकता। मैं घर के सारे काम करता था और मेहमानों के लिए खाना भी बनाता था; लेकिन मैंने अपने बच्चों की शिक्षा नहीं रोकी। मैं शिवालय में बैठे मेहमानों की अनुमानित संख्या के अनुसार खाना बनाता था। मैं खाने के बर्तनों को ढककर, दरवाजा बंद करके मंदिर चला जाता था। कुछ दिनों में काफी लोग होते थे। मैं उन्हें घर लाती, खाना खिलाती और अगर खाना खत्म हो जाता तो मैं अपने और बच्चों के लिए दोबारा खाना बनाती। मैं इमली का रसम जैसा कुछ बना लेती। इससे मुझे खुशी मिलती थी। इससे मुझे जीवन का अर्थ और उद्देश्य समझ आता था। इतनी मेहनत के बाद भी मुझे रात को चैन की नींद नहीं आती थी। रामकृष्ण और सीता अपना होमवर्क खत्म करने के बाद हॉल के एक हिस्से में सो जाते और मैं सावित्री के साथ दूसरे हिस्से में सोती।

अधिवक्ता मलाली वेंकटरामय्या के हमारे यहाँ आने के पाँच-छह दिन बाद, रामकृष्ण ने मुझसे कहा, "यदि हम केवल उस दुष्ट, नीच मंजय्या के बारे में सोचें, तो यह उचित है कि उसे या तो फाँसी दी जाए या कठोर कारावास की सजा दी जाए। लेकिन सावित्री और मंजय्या को मिलाने का यही एकमात्र अवसर है। यदि उसे दंडित किया जाता है, तो उनके मिलन का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। वैसे भी अब वह पश्चाताप से शांत हो गया है। हालाँकि उसकी बातों पर विश्वास करना मुश्किल है, फिर भी वह प्रख्यात अधिवक्ता उसकी बातों का समर्थन करता है।"

जब रामकृष्ण बोल रहे थे, उनके चेहरे, आँखों और आवाज़ में भय झलक रहा था। उनके शब्दों में यह अप्रत्यक्ष संकेत था कि मुझे झूठी गवाही देनी चाहिए। यह मानो मुझसे मेरे पूरे जीवन के धार्मिक अभ्यास को छोड़ने के लिए कहने जैसा था। मैंने उन्हें कोई उत्तर नहीं दिया। जब मैंने अपनी आँखें उठाकर उनकी आँखों में सीधे देखा, तो उनका सिर ऐसे झुक गया मानो उन्हें फाँसी दी गई हो। पश्चाताप से भरे स्वर में उन्होंने कहा, "मैंने ये शब्द हमारी सावित्री की खुशी के लिए कहे थे, और किसी कारण से नहीं।"

असल में सावित्री ने ही मुझे थकाकर कमजोर कर दिया था। बचपन से ही वह बहुत जिद्दी थी। रामकृष्ण उससे चौदह साल बड़े थे और सीता दस साल। माताजी

के निधन के बाद इन दोनों ने उस छोटी बच्ची को बहुत लाड़-प्यार दिया और बिगाड़ दिया था। मैंने भी उसकी कोई बात नहीं मानी। पता नहीं यह लाड़-प्यार था या सावधानी, लेकिन मैंने सोचा कि भावनाओं के संतुलन में कोई असंतुलन नहीं होना चाहिए। यह बिल्कुल सच नहीं है कि बच्चे जिद्दी और अपनी बात मनवाने वाले इसलिए बन जाते हैं क्योंकि माता-पिता उनकी सारी मांगें पूरी कर देते हैं। खैर, यह सावित्री का स्वभाव था। अगर ऐसा नहीं होता, तो वह सत्रह साल बड़े मंजय्या से शादी करने पर इतनी अड़ी क्यों रहती, जो गली के कुत्ते से भी ज्यादा अनैतिक था? खैर, यह सीख कुत्तों पर लागू नहीं होती। जब मैं बाग से घर लौटा, तब तक रामकृष्ण ने सत्रह साल की सावित्री को बुरी तरह पीट दिया था। उसके गालों, कंधों और पीठ पर चोट के निशान थे। मैंने उसे पिछवाड़े में भूसे के ढेर के पास ले जाकर पूछा, "हम उसे रोक सकते हैं। हम उसे सजा और सलाह दे सकते हैं, लेकिन क्या हमें हिंसा का सहारा लेना चाहिए?" रामकृष्ण ने उत्तर दिया, "क्या हम उसके अपरिपक्व मन की हठधर्मिता के आगे झुककर उसका विवाह मंजय्या से करने के लिए सहमत हो सकते हैं? आप तो अनासक्त हैं। बड़े भाई होने के नाते, क्या कन्यादान करना मेरा कर्तव्य नहीं है? क्या उसे ऐसे व्यक्ति को विदा करने के पाप से बेहतर यह पिटाई नहीं है?" मैं आगे कुछ नहीं बोला। किसी तरह मेरा मन नहीं कर रहा था कि मैं हाथ उठाऊं और मारूं। मुझे ऐसा लगा जैसे कमजोरी ने मुझे जकड़ लिया हो और मैं कुछ भी तय नहीं कर पा रहा था। मेरे बेटे ने मुझे अनासक्त कहा था। वह मेरे चेहरे को देख रहा था। मैं सदमे से उबरकर बोला, "सिर्फ चार नहीं, उसे दस थप्पड़ मारो। अगर यह विवाह टल जाए, तो मुझसे ज्यादा खुश कौन होगा? लेकिन, यह हठधर्मिता उसका प्रारब्ध कर्म प्रतीत होती है। मैं हस्तक्षेप नहीं करूंगा। इस मामले में आप ही परिवार के मुखिया हैं।" मैं अंदर आई, लेकिन सावित्री की तरफ नहीं देखा। रामकृष्ण और मैंने खाना खाया। तभी मैंने सुना कि सुकन्या कमरे में चटाई पर लेटी सावित्री को खाना खाने के लिए मना रही थी। सावित्री टस से मस नहीं हुई, जबकि उसकी भाभी ने कई तरह से मिन्नतें कीं, फुसलाया और कहा कि अगर सावित्री खाना नहीं खाएगी तो वह भी भूखी रह जाएगी। मैंने सुना कि सावित्री अपनी भाभी से कह रही थी, "मुझे मत छुओ!" और बार-बार सुकन्या का हाथ हटा रही थी। क्या यह वैराग्य था? या...? मैं, जो हॉल में एक खंभे से टेक लगाकर बैठी थी, तुरंत उठी, कमरे में भागी और सुकन्या से कहा, "बच्ची, तुम इस कमरे से चली जाओ। मैं इसे सबक सिखाऊंगी।" इतना कहकर

मैंने सावित्री को पीटना शुरू कर दिया, उसके कंधों और पीठ पर लात मारी। मुझे नहीं पता कब मैंने उसे लात मारना शुरू कर दिया, कमर पर, पीठ पर, कूल्हे पर – एक लात दाहिने पैर से, दूसरी बाएं पैर से, बार-बार। अगर रामकृष्ण बीच में आकर मुझे न रोकते, तो मैं उसे लात मारना बंद ही नहीं करती। अगर इस तरह लगातार मार-पीट और लात मारना कुछ और देर तक चलता रहता, तो निश्चित रूप से सावित्री मर जाती। रामकृष्ण ने मेरे हाथ पकड़े और मुझे खींचकर हॉल में ले गए। सुकन्या ने कमरे का दरवाजा अंदर से बंद कर दिया, मानो उसे डर था कि मैं रामकृष्ण की पकड़ से छूटकर कमरे में घुस जाऊंगी और सावित्री को फिर से पीटना शुरू कर दूंगी।

उस रात मुझे अपनी रोज़ाना की नींद भी नहीं आई। यह स्पष्ट था कि रामकृष्ण भी नहीं सोए थे। अगर वे सो रहे होते, तो लहरों की गर्जना की तरह खर्राटे ले रहे होते। जब भी घर के अंदर लहरों की गर्जना सुनाई देती, तो समझ जाता कि रामकृष्ण सो रहे हैं। पूरी रात घर के अंदर और बाहर, गाँव में, बाहर खेतों में, उपवन में, तालाब में और आकाश में सन्नाटा छाया रहा। हमेशा की तरह मुर्गे की बांग के साथ मैं उठी और उपवन चली गई। मुझे कोई काम करने का मन नहीं था। मैं चुपचाप तालाब के पास पत्थर की पटिया पर बैठ गई। घंटों तक मैं इस दुविधा में फंसी रही कि क्या मुझे यह विवाह रोक देना चाहिए या इसे भी एक और परीक्षा, एक प्रारब्ध-लीला मानकर स्वीकार कर लेना चाहिए और अनासक्त रहना चाहिए। ग्यारह बजे रामकृष्ण उपवन में आए। आमतौर पर वे उपवन में नहीं आते थे, क्योंकि वे दलदली और सूखे खेतों की देखरेख करते थे। उनके चेहरे के हर रोम और नींद से भरी आँखों से थकान और कमजोरी झलक रही थी। वह भी उस पत्थर की पटिया के किनारे बैठ गया और बोला: "अप्पा, मैंने पूरी रात इस बारे में सोचा है। सावित्री अपनी ज़िद छोड़ने वाली लड़की नहीं है। कल पूरे दिन उसने खाने का एक निवाला भी नहीं खाया। जब तक मैं घर से निकला, उसने कुछ भी नहीं छुआ था। सुकन्या ने भी उसे कई बार ज़बरदस्ती की और अब उसने हार मान ली है। शादी के लिए राज़ी होना या न होना बिल्कुल अलग बात है। फैसला मुझ पर छोड़ दीजिए। अगर आप फैसला लेने में हिस्सा लेंगे और उसमें शामिल होंगे, तो आप ज़रूर क्रोधित होंगे। आप उसे पीटेंगे और लात मारेंगे। जहाँ तक मुझे याद है, आपने कभी क्रोध नहीं किया। आपने कभी जानवरों को पीटने के लिए भी हाथ नहीं उठाया। इसके बावजूद, कल रात आपने सावित्री को बेरहमी से, बिना किसी रोक-टोक के लात

मारी। अगर मैंने आपको दूर न खींचा होता, तो आप उसे ज़रूर मार डालते। मुझे पता है कि आप उससे बहुत प्यार करते हैं और यह स्वाभाविक है कि जब उसने गलत रास्ता चुना तो आप बहुत क्रोधित हुए। लेकिन अगर आप क्रोधित होते हैं, और एक पल के लिए भी आपका मन क्रोध से भर जाता है, मुझे लगता है कि हमारे परिवार की बुनियाद ही हिल जाएगी। इसलिए, अगर सावित्री को सज़ा मिलनी ही है, तो कृपया भविष्य में यह फैसला मुझ पर छोड़ दीजिए। उसकी मांग मानकर मंजय्या से उसकी शादी करवाना है या नहीं, यह एक अलग बात है। आपने मुझे इसकी पूरी ज़िम्मेदारी सौंपी है। चाहे अच्छा हो या बुरा, फैसला मुझ पर छोड़ दीजिए। मैं आपको अपने फैसले के बारे में नहीं बताऊंगी। आखिर में, मैं आपको अपना निर्णय बताऊंगी। अगर आप बात नहीं करना चाहते, तो आपको 'हां' या 'ना' कहने की ज़रूरत नहीं है।

यह सच था कि रामकृष्ण ने मेरे कंधों से यह ज़िम्मेदारी उतार ली, लेकिन क्या मेरी ज़िम्मेदारी सचमुच खत्म हो गई? इस दुविधा में मैं क्या कर सकता था? वे भी सावित्री से पिता समान प्रेम करते थे। जब उनकी माता का देहांत हुआ, तब रामकृष्ण उन्नीस वर्ष के थे। उन्होंने अपनी पाँच वर्षीय बहन को प्यार से समझाया और सांत्वना दी। वे और सीता दोनों सावित्री को अम्मा कहकर पुकारते थे, क्योंकि वह अपनी माँ की हूबहू प्रतिरूप थीं, चेहरे की बनावट, गोरा रंग, नाक, ठोड़ी, नुकीली भौंहें और कद-काठी में। रामकृष्ण मुझसे मिलते-जुलते थे, उनका शरीर मर्दाना था, वे लंबे और स्वभाव से गंभीर थे। सीता हम दोनों के कुछ गुणों का मिश्रण थीं। उनका माथा अपने मामा की तरह चौड़ा था। लेकिन क्या शारीरिक समानताएँ किसी व्यक्ति के गुणों को दर्शाती हैं? सावित्री की माँ में यह हठधर्मिता नहीं थी। फिर भी, सावित्री को यह कहाँ से मिली? रामकृष्ण घर लौट आए। दोपहर के बाद मैं हमेशा की तरह शिवालय गया। वहाँ चार यात्री थे। उन्हें घर ले जाकर दोपहर का भोजन कराना मुझे संतोष प्रदान करता था। पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही इस परंपरा के सिवा जीवन में मुझे सहारा देने वाला और क्या था? मैंने यह नहीं पूछा कि सावित्री ने खाना खाया है या नहीं। तीन दिन बाद, शाम होते-होते रामकृष्ण उपवन में आए और कहा कि उन्होंने सावित्री का विवाह मंजय्या से करने का निर्णय लिया है। मैं चुप रही। गाँव में सभी मंजय्या के बारे में जानते थे। वह चौंतीस वर्ष का था। उसका विवाह बारह वर्ष पहले हो सकता था। उसके माता-पिता का निधन उसके युवावस्था में ही हो गया था, लेकिन वह संपन्न था और उसके

पास पर्याप्त संपत्ति थी। वह बहुत सुंदर था। उसका चेहरा और शरीर नाटकों में अर्जुन की भूमिका निभाने के लिए उपयुक्त थे। लंबे बाल, जिनके सिरे घुंघराले थे। वह इतना आकर्षक था कि कोई भी लड़की उस पर मोहित हो जाती। युवावस्था में ही वह अय्याश बन गया और बुरे रास्ते पर चल पड़ा। भला कौन अपनी बेटी का विवाह ऐसे व्यक्ति से करवाएगा? इसके अलावा, उसे विवाह की कोई आवश्यकता नहीं थी। उसके लिए, जो बिना किसी नियम, विनियम या बंधन के असीमित सुख चाहता था, वैवाहिक जीवन और विवाह का यह सीमित सुख मात्र एक बाधा था। मंजय्या के इतिहास को भली-भांति जानते हुए भी सावित्री उससे विवाह करने के लिए कैसे राजी हो गई? वह इतनी दृढ़ कैसे हो गई कि केवल उसी से विवाह करेगी और यहाँ तक कि उसने स्वयं को भूखा रखकर मृत्यु को गले लगाने का निश्चय कर लिया? एक दिन जब सावित्री गाँव के तालाब में कपड़े धोने गई, तो ऐसा प्रतीत हुआ कि मंजय्या तालाब के गहरे पानी से उभरे हुए एक बड़े पत्थर के पास तैर रहा था। तीन-चार दिनों तक वह उसी स्थान पर कपड़े धोने जाती रही जब वहाँ कोई नहीं होता था। वह भी तैरने के लिए आता था। उनकी मुलाकात हुई, बातचीत हुई और यहीं से सब कुछ शुरू हुआ। रामकृष्ण ने उससे पूछा, "देखो, उसका अतीत ऐसा रहा है। क्या गारंटी है कि वह भविष्य में भी सभ्य और सदाचारी रहेगा?" सावित्री ने कहा कि मंजय्या ने अच्छा बनने की शपथ ली थी। जब रामकृष्ण ने पूछा, "ऐसे व्यक्ति की शपथ का क्या कोई मूल्य या अर्थ है?" तो उसने उत्तर दिया, "यदि आप शुरू से ही संदेह पर आधारित व्यवस्था अपनाते हैं, तो कुछ भी हासिल नहीं किया जा सकता।" ऐसा लगता है कि उसने अपने भाई को दिलासा देते हुए कहा: "वह जैसा भी इंसान हो, मुझे पूरा भरोसा है कि मैं उसे सुधार लूंगी। मिडिल स्ट्रीट की ये अफवाह फैलाने वाली औरतें - चन्नमत्ते, पुत्तनम्मा और वेंकटालक्षम्मा - ईर्ष्यावश बातें बढ़ा-चढ़ाकर गढ़ रही हैं क्योंकि वह उनके परिवारों की लड़कियों से शादी नहीं करता।"

शादी संपन्न हुई। कौन कह सकता था कि मंजय्या चौंतीस साल का आदमी है? आस-पास के गांवों से आए मेहमानों ने भी उसे बाईस या तेईस साल का युवक समझा। आज भी, जबकि वह बावन साल से अधिक का है, कोई भी उसे पच्चीस साल का युवक कहेगा। उसका व्यक्तित्व और शारीरिक बनावट उसकी वास्तविक उम्र को छुपा देती है।

खैर, जो हुआ सो हुआ, जैसा हमें डर था। शादी के बाद तीन महीने तक मंजय्या अपने घर और नई शादीशुदा पत्नी से दूर नहीं गया। उसके बाद उसकी अय्याशी की पुरानी आदत फिर से जाग उठी। करीब छह महीने बाद सावित्री को इस बात का पता चला। उसने कुछ महीनों तक उसे रोकने की पूरी कोशिश की। आखिरकार, उसने उसे छोड़ दिया और एक शाम हमारे घर वापस आ गई। करीब एक साल तक उसने किसी से बात नहीं की और अपराधबोध के साथ यहीं रही। नौकरानी की तरह, वह सुबह से शाम तक घर के काम करती रही, जबकि उसकी भाभी ने उसे ऐसा करने के लिए नहीं कहा था। फिर उसने अपनी आजीविका के लिए कहीं भी नौकरी करने पर जोर दिया। रामकृष्ण और मैंने उसे समझाने की कोशिश की और कहा कि यह उसका भी घर है और उसे यहां रहने का पूरा अधिकार है। लेकिन हमेशा की तरह वह अपनी बात पर अड़ी रही। रामकृष्ण ने चन्नारायपट्टाना के चालपति शेट्टी से संपर्क किया और उनके प्रभाव से रामकृष्ण ने सावित्री को स्थानीय मिडिल स्कूल में शिक्षक का पद दिलवा दिया। सावित्री वहाँ गई, दो कमरों का मकान किराए पर लिया और वहाँ रहने लगी। नियान्त्, अपनी आत्महत्या की पृष्ठभूमि बताने के प्रयास में मैंने तुम्हारे सामने कुछ और बातें भी कह दी हैं। लेकिन, मेरी कही हुई एक भी बात झूठ नहीं है। मुझे सत्य और असत्य का पूर्ण ज्ञान नहीं है। लेकिन मैं विश्वासपूर्वक कह सकता हूँ कि मेरे ज्ञान और मेरे कथन में कोई अंतर नहीं है,' अंगूठे के आकार के प्रेत ने कहा और बोलना बंद कर दिया।

'यदि तुम्हारे कथन में कोई असत्य आ जाए, तो चित्रगुप्त हस्तक्षेप करके उसे सुधार देंगे। जारी रखो,' आवाज ने उसी तटस्थ भाव से आदेश दिया।

"सावित्री चाहे कितनी भी जिद्दी क्यों न हो, रामकृष्ण का अपनी छोटी बहन के प्रति स्नेह कभी कम नहीं हुआ। वरना क्या वह मुझे उसके लिए झूठी गवाही देने का सुझाव देते? उन्होंने कहा, "अप्पा, आपसे बात करने से पहले मैं चन्नरायपट्टाना गया और सावित्री से बात की। मुझे संदेह था कि अगर हम मंजय्या को सजा से बचा भी लें, तो भी क्या वह उनके साथ दोबारा रहने को राजी होगी। जब मैंने यह बात उठाई, तो उसने कहा, 'अगर अप्पा का मन नहीं है, तो मैं नहीं रहना चाहती,' और उसकी आँखों से आंसू बहने लगे।"

दो सप्ताह बाद, मुझे हसन की अदालत से समन मिला। इसका मतलब था कि मुझे अदालत में पेश होना ही था। इससे बचा नहीं जा सकता था। जब आप न्यायाधीश

के सामने खड़े होते हैं, तो आपके पास सच बोलने या झूठ बोलने का ही विकल्प होता है। लेकिन अगर आप इस विकल्प से बचते हैं और अदालत में पेश नहीं होते, तो मुझे लगा कि यह भी एक तरह का झूठ ही होगा। जैसे-जैसे सुनवाई का दिन नज़दीक आता गया, मुझे लगा कि मेरी आंतरिक शक्ति कम होती जा रही है। मेरी रोज़ की नींद घटकर रात में सिर्फ़ आधा घंटा रह गई। मैंने चन्नरायपट्टाना जाकर सावित्री से मिलने का सोचा। लेकिन एक दूसरा विचार मन में आया: निर्णय और कार्य तो मुझे ही करना था। उनसे मिलकर मैं उन पर वह दायित्व डाल रहा होता जो मैं उनसे चाहता था। इसलिए मैं चुप रहा। रामकृष्ण ने कहा: "अप्पा, कांची की हत्या के बाद से किसी भी बाग से एक नारियल या नारियल का पत्ता भी चोरी नहीं हुआ है।" बाग़ जाते समय बानाप्पा, चिगारिगौड़ा, चिक्केगौड़ा, केंगय्या और कई अन्य लोग मेरे पास आए और अपनी मर्ज़ी से बोले: "आपका दामाद भले ही लंपट हो, पर मर्द तो है। कांची को हटाने का साहस और कौन कर सकता था? अब हमारी फसलें सुरक्षित हैं।" इन सब बातों ने अदालत में झूठ बोलने के मेरे इरादे को सही ठहराया। रामकृष्ण और मैं शाम को चन्नरायपट्टाना होते हुए बस से हसन पहुँचे। मैंने रामकृष्ण से कहा कि मैं सावित्री से नहीं मिलना चाहता। हम रात बिताने के लिए वकील वेंकटरामय्या के घर गए। मेरे सहयोगी नागप्पा, जो खोपरा गोदाम के मालिक थे, भी वहाँ आए हुए थे। वकील ने अगले दिन की सुनवाई का तरीका समझाया और हमें बताया कि हमें क्या जवाब देना है, जिरह के दौरान हमें कितना सावधान रहना चाहिए। नागप्पा बहुत बुद्धिमान थे। वे वकील के बताने से पहले ही जवाब दे देते थे। उस रात नागप्पा, रामकृष्ण और मुझे ऊपर के हॉल में ठहराया गया। रामकृष्ण करवटें बदल रहे थे। उन्हें ज़रा भी खर्राटे नहीं आ रहे थे। क्या उन्हें अपने पिता को झूठ बोलने के लिए पीड़ा नहीं हो रही थी? नागप्पा भी तुरंत नहीं सोए और मुझसे बोले, "तुम्हें अदालत जाने का अनुभव नहीं है। दोनों प्रपत्रों पर हस्ताक्षर करना मत भूलना। गवाह होने का खर्च, आने-जाने का किराया, रहने-खाने का खर्च आदि सब इकट्ठा कर लेना। भूल गए तो कुछ नहीं मिलेगा। वैसे भी हम साथ जा रहे हैं, तो मैं तुम्हें याद दिला देता हूँ।"

मैंने कोई जवाब नहीं दिया, क्योंकि मैं जानता था कि नागप्पा का जीवन हमेशा धन से ही चलता था। मैं चुपचाप लेट गया। अगली सुबह मैं उठा और स्नान किया। वकील उस बड़े घर के चबूतरे पर बने अपने कमरे में फाइलों और अभिलेखों को देखने में व्यस्त था। मैंने मन ही मन भगवान से प्रार्थना की कि वे उस दिन की

परीक्षा में मेरी मदद करें। दस बजे तक नागप्पा, रामकृष्ण और मैं अदालत पहुँच गए। मुझे सबसे पहले बुलाया गया। कांपते हुए मैं गवाहों के कटघरे की सीढ़ियाँ चढ़ गया और न्यायाधीश की ओर देखा। 'हे प्रभु,' ऐसा कहते ही अंगूठे के आकार का वह प्रेत इतनी ज़ोर से हँसने लगा कि उसकी हँसी यमलोक में हर जगह गूँज उठी। ऐसा लगा मानो वह प्रेत अचानक यमधर्म की भव्य और प्रभावशाली उपस्थिति और उसके अच्छे-बुरे कर्मों के फैसले की गंभीरता को भूल गया हो। प्रेत मानो इसे एक मामूली बात समझ रहा हो, ज़ोर-ज़ोर से हंसने लगा, मानो उल्टी फूट रही हो और रुकने को तैयार न हो। हालांकि प्रेत ने शुरू में अपनी हंसी रोकने की कोशिश की, लेकिन उसने उस व्यर्थ प्रयास को छोड़ देना ही बेहतर समझा और बेरोक-टोक हंसने लगा, जिसकी गूंज नरक, पाताल लोक और प्रेतों द्वारा बसे सभी क्षेत्रों में सुनाई दी।

फिर आवाज सुनाई दी। 'प्रेता, चाहे हँसी हो, रोना हो या कहानी सुनाना हो, यहाँ नियम यह है कि सब कुछ शांत और संयमित आवाज में होना चाहिए। अब तक तो तुम्हें यह समझ आ जाना चाहिए था। हँसना बंद करो, हमें अपनी हँसी का कारण बताओ।'

प्रेत तुरंत गंभीर हो गया। उसने पल भर में खुद को संभाला और फिर बोला: 'मैंने आपको बताया कि मैं कैसे अदालत में दाखिल हुआ। जैसे ही मैंने यह वर्णन करना शुरू किया, मुझे न्याय देने का तरीका, पूरी व्यवस्था और गंभीर चेहरे के साथ कुर्सी पर बैठे न्यायाधीश याद आ गए और मुझे हंसी आ गई। जब गंभीर विचार की लय से अलग कोई लय उत्पन्न होती है, तो पेट पकड़कर हंसने वाली हंसी आती है, है ना? और वहां बैठा न्यायाधीश घात लगाकर बैठा है, यह देखने के लिए कि जब दो झूठ आपस में टकराते हैं तो सत्य की बिजली चमकती है या नहीं। उसकी हालत दया की पात्र है। इसके अलावा, उसके पास चित्रगुप्तों, श्रावणों और श्रावणियों की सहायता नहीं है, जैसे आपके पास यहां है। और वहां प्रतिवादी और आरोपी अपनी मांगें और मामले केवल झूठ के रूप में प्रस्तुत करते हैं...'

और तभी एक आवाज़ सुनाई दी: 'यहाँ आने वाले प्रेत-काय भी झूठ बोलते हैं। इसीलिए मैंने रिपोर्टिंग का काम चित्रगुप्तों को सौंपा है। चित्रगुप्तों के मन में किसी के प्रति न प्रेम है, न शत्रुता और न ही घृणा। उनका कर्तव्य केवल यही है कि जो कुछ हुआ है उसे नोट करें और अंत में, सब कुछ यहाँ रिपोर्ट करके मौन हो जाएँ।'

लेकिन नियान्तु, क्या झूठ बोलना मनुष्य का जन्मजात स्वभाव है? वहाँ प्रचलित शास्त्रों में कहा गया है कि जन्म से पहले, जीवनकाल में और मृत्यु के बाद भी मनुष्य झूठ बोलता है। और झूठ ही जन्म का कारण है। क्या यह सच है?
'दार्शनिक चर्चाएँ बाद में करेंगे। आपकी रिपोर्ट अभी पूरी नहीं हुई है। अदालत में जो कुछ हुआ, उसका ब्योरा दीजिए।' आवाज़ शांत, गंभीर और कोमल थी। अब, अंगूठे के आकार के प्रेत को पूरी तरह समझ आ गया था कि यह आवाज़ ही वह शक्ति है जो उसके बोलने की दिशा को नियंत्रित और निर्देशित करती है।
मंजय्या अभियुक्तों के लिए बने दूसरे बॉक्स में खड़ा था। न्यायाधीश विशाल मेज के पीछे बने चबूतरे पर एक ऊँची कुर्सी पर बैठे थे। उन्होंने काला गाउन पहना हुआ था। चबूतरे के नीचे, अधिवक्ताओं के लिए बने स्थान पर मंजय्या के अधिवक्ता वेंकटरामय्या बैठे थे। उनका व्यवहार ऐसा था मानो हम पहले कभी मिले ही न हों, और अगर मिले भी होते तो इस मामले पर कभी बात न की हो। न्यायाधीश ने मुझसे शपथ लेने को कहा: इस कानूनी निर्णय की प्रक्रिया में, मैं केवल सत्य बोलने का वचन देता हूँ, मैं पूर्ण सत्य बोलूँगा। सत्य के सिवा मैं कुछ और नहीं बोलूँगा। मैं ऊपर वाले के नाम पर और अपनी अंतरात्मा की कसम खाता हूँ - मैं जो कुछ भी कहूँगा वह केवल सत्य होगा। - न्यायाधीश द्वारा शपथ का अंतिम वाक्य दोहराने के बाद, उन्होंने वेंकटरामय्या की ओर तिरछी नज़र डाली। जैसे ही मेरी ज़बान से शपथ निकली, मेरे अंदर एक अजीब सी जलन शुरू हो गई। यह एक हल्की सी चमकती रोशनी के तीव्र ज्वाला में बदलने और बाकी सब कुछ जलाने जैसा एहसास था। लेकिन वेंकटरामय्या ने उस नाटक की पटकथा पर काम शुरू कर दिया था जिसे उन्होंने लिखा था, मुझे सिखाया था और जिसका अभ्यास करवाया था। नाटक की शैली में यह शक्ति होती है कि पहले पात्र के बोलने के तुरंत बाद दूसरे पात्र भी बोलना शुरू कर देते हैं। वेंकटरामय्या ने मंजय्या की ओर इशारा करते हुए नाटक का पहला संवाद शुरू किया। 'क्या तुम इस आदमी को पहचानते हो?', 'इस दुनिया में मुझसे बेहतर इसे कौन जानता है?', हालाँकि मेरे भीतर कई बातें एक भंवर की तरह उमड़ने लगीं, मैंने वही कहा जो मुझे रटा गया था: 'हाँ, मैं पहचानता हूँ। इनका नाम मंजय्या है। ये मेरे गाँव बिलिकेरे के हैं।' फिर कई सवाल पूछे गए: तेरह तारीख, शनिवार की रात तुम कहाँ थे? तुम टिपटूर में किसके साथ ठहरे थे? मंजय्या वहाँ क्यों आए थे? मुझे नहीं पता कि इन सबका क्या अंत हुआ! वे मेरी ओर से बोलने वाले थे। मैंने बस वही संवाद बोला जो उन्होंने मुझे रटा था।

फिर मैंने वेंकटरामय्या को अंग्रेजी में 'दैट्स ऑल योर ऑनर' कहते सुना और वे पर्दे के पीछे चले गए। अब अभियोजन पक्ष का वकील आया, मेरे सामने खड़ा हुआ और सवाल करने लगा। "आपने सर्वव्यापी ईश्वर और अपनी अंतरात्मा के नाम पर न्याय के इस आसन के समक्ष शपथ ली है कि आप केवल पूर्ण सत्य बोलेंगे और जरा सा भी झूठ नहीं बोलेंगे। क्या यह सही है?" नियान्त्रु, जैसे ही वकील ने 'न्याय का आसन' शब्द कहा, मेरे भीतर कहीं न कहीं मुझे आपकी याद आ गई। ऐसा नहीं था कि मैंने आपको पहले कभी देखा था। लेकिन मैंने आपके बारे में सुना था, जो हर इंसान के भीतर गहराई में निवास करते हैं। मैंने सोचने-समझने की क्षमता विकसित करने के क्षण से ही, और उससे भी अधिक अपनी पत्नी की मृत्यु के दिन से, आपको जगाने और सक्रिय करने का प्रयास किया था। मैंने आपको बताया था कि जब न्याय के आसन ने मेरी अंतरात्मा के नाम पर शपथ दिलाई, तो ऐसा लगा जैसे हल्की चमकती रोशनी एक मशाल में बदल गई हो और हर चीज को जला रही हो। वास्तव में हुआ यह था: जब न्यायाधीश ने मेरी अंतरात्मा का आह्वान किया, तो मेरे भीतर गर्मी छा गई और धुआं मुझे घेरने लगा। जब अभियोजन पक्ष के वकील ने एक बार फिर मेरी अंतरात्मा को निशाना बनाया और सीधे उसे संबोधित किया, तो वह तुरंत फिर से जागृत हो गई। मुझे बेहोशी सी महसूस हुई। मैं गवाह के कटघरे पर झुक गई, उसे कसकर पकड़ लिया और खुद को संभाला। मुझे ऐसा लगा जैसे मेरे कानों में ठंडा पानी भर गया हो और मैं कुछ भी नहीं सुन पा रही थी। जब मैं थोड़ी संभली, तो मुझे वहां से भाग जाने की तीव्र इच्छा हुई। लेकिन न्याय के सामने आ जाने के बाद भागना कैसे संभव था? बाहर जाने की हिम्मत किसमें थी? नीयन्त्रु, एक बार कोई आपकी सीमा में प्रवेश कर जाए, तो क्या वह बाहर जा सकता है? क्या आपने दरवाजे पर कोई पहरेदार नियुक्त किया है ताकि अंदर के लोग भाग न सकें? उस अवस्था में जब मुझे लगा कि मेरी अंतरात्मा पूरी तरह डूब गई है और भीग गई है, मुझे नहीं पता था कि अभियोजन पक्ष के वकील ने कोई सवाल पूछा या न्यायपीठ ने कोई गहन या तीक्ष्ण प्रश्न पूछे। एक बार न्यायाधीश ने कहा, 'अब आप जा सकते हैं,' लेकिन जब उन्होंने देखा कि मैंने नहीं सुना, तो उन्होंने इसे फिर से दोहराया। मुझे ऐसा लगा जैसे मुझे रिहा कर दिया गया हो। मैं जल्दी से गवाह के कटघरे से नीचे उतरी और मुख्य द्वार से बाहर निकल गई। नागप्पा दौड़ते हुए मेरे पास आए और मुझसे पूछा: 'क्या तुमने यात्रा खर्च और दैनिक भत्ते के फॉर्म पर हस्ताक्षर कर दिए?' मृत कांची की विधवा लक्कू पालथी

मारकर बैठी पान के पत्ते और सुपारी चबा रही थी। मैं अदालत परिसर से बाहर निकला और कुत्ते से पीछा छुड़ाने वाले की तरह दौड़ने लगा और रास्ता भटक गया। मैं लगातार दौड़ता रहा, पसीने, हांफती सांसों और धड़कते दिल की मुझे कोई परवाह नहीं थी। जब मैं बहुत थक गया और दौड़ नहीं सका, तो मैं तेज चलने लगा और जब वह भी संभव नहीं हुआ, तो मैंने धीरे-धीरे कदम बढ़ाए। जब मुझे लगा कि मेरा दिल और पैर एक साथ बंध गए हैं और तनाव में हैं, तो मैं पेड़ की छांव में घास पर लेट गया। मैं सो गया। ओह! क्या नींद थी! एक गहरी और लंबी नींद जो मुझे अपनी पत्नी की मृत्यु के बाद से नहीं आई थी। ऐसी नींद जिसमें बाहरी दृश्य सपनों के रूप में नहीं मंडरा रहे थे। इसने मुझे ऐसा महसूस कराया जैसे मैं पूरी तरह से अपने भीतर हूं।

जब मैं जागा, तो अंधेरा छा चुका था। उठने की हिम्मत नहीं थी और मैं थोड़ी देर करवटें बदलता रहा। फिर उठा। बरगद के पेड़ की छांव से बाहर आया और तारों से भरे आकाश में ओरियन तारामंडल की स्थिति देखने लगा। जब मुझे वह मिला, तो मैंने अनुमान लगाया कि सुबह के लगभग दो बज रहे थे। मैं एक घनी, अंधेरी और सुनसान जगह पर था और मुझे जरा भी अंदाजा नहीं था कि यह छोटी पहाड़ी किस कस्बे के पास है या किस दिशा में, कितनी दूरी पर है। चारों ओर सन्नाटा छाया हुआ था, सूखी पत्तियों की सरसराहट की आवाज भी नहीं थी, जैसे गिलहरी, छिपकली या गिरगिट के चलने की आवाज, या भेड़िये, सियार या भेड़ों के झुंड की आवाज। मैं वहीं जमीन पर उकड़ू बैठ गया। थोड़ी देर में हल्की हवा चलने लगी। फिर मुझे जमीन पर सूखी पत्तियों की सरसराहट सुनाई दी, उस घने अंधेरे में जहां आंखों से कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था। बरगद की डालियाँ स्थिर थीं। वे हिल नहीं रही थीं, हवा इतनी हल्की थी। लेकिन मैं उसे भी सहन नहीं कर सका। मुझे ऐसा लगा जैसे मैं जहां बैठा था वहीं से गिर रहा हूँ और सचमुच गिर रहा था, सूखे पत्ते की तरह तैर रहा था। मेरा वज़न कम हो गया था। मेरा वह केंद्रीय गुरुत्वाकर्षण बल खत्म हो गया था जो मेरे व्यक्तित्व के संतुलन को नियंत्रित और बनाए रखता था। मैंने हाथ फैलाकर इधर-उधर टटोला, यह देखने के लिए कि क्या मुझे कोई ठोस चट्टान मिल सकती है जिस पर मैं बैठकर बैठ सकूँ। लेकिन मुझे कुछ नहीं मिला। मुझे लगा कि अगर मैंने हिम्मत करके अपने शरीर को सीधे उस हवा के सामने रखा जो सूखे पत्तों को फड़फड़ा रही थी, तो मैं इधर-उधर धक्के खाकर कहीं गिर जाऊँगा। अपने शरीर की सुरक्षा को लेकर सतर्क रहते हुए, मैं पीठ के

बल ज़मीन पर लेट गया। तुरंत ही मेरे भीतर क्रोध आग की तरह भड़क उठा। मुझे रामकृष्ण, अधिवक्ता वेंकटरामय्या और सावित्री पर बहुत गुस्सा आया। मैंने सोचा कि इन तीनों को, खासकर सावित्री को, आग में डालकर राख कर दूँ। जब मैंने अपनी आँखें खोलीं, तो पाया कि लाखों टिमटिमाते तारों से भरा अंधेरा आकाश एक लाल जलते हुए गोले में बदल गया था। बहती हवा और वहाँ उगते बरगद के पेड़, जो अंधेरे में खड़े थे, भी चटकने की आवाज़ के साथ जल रहे थे। उस भीषण आग में जलकर सावित्री चीख उठी। लेकिन मंजय्या कहीं नहीं मिला। मैंने उसे याद किया और उसकी छवि अपने मन में संजो ली। लाख कोशिश करने पर भी मेरा मन उसे उस धधकती आग में धकेल कर राख करने को तैयार नहीं था। मेरा गुस्सा सिर्फ अपने परिवार के सदस्यों के लिए था: खासकर अपनी बेटी सावित्री के लिए। अंत में, उस आग की भयावहता और कल्पना से परे डर के मारे मैंने अपनी आँखें बंद कर लीं। लेकिन वह आग न तो बुझी और न ही जलना बंद हुआ।

मैं फिर सो गया। ऐसी गहरी नींद, जो मेरी पत्नी की मृत्यु के बाद से मुझसे दूर रही थी और मुझे परेशान करती रही थी। ओह! मुझे फिर से ऐसी ही गहरी नींद आई। लेकिन इस बार यह गहरी नींद नहीं थी और बाहरी दृश्य सपनों का रूप ले चुके थे। मेरे भीतर लगातार चटकती हुई आग जल रही थी, वही मेरे सपने का रूप था। वहाँ कोई नहीं था। उस आग में कोई नहीं जल रहा था। केवल मैं ही जल रहा था। लेकिन कोई दर्द नहीं था। कोई कराह नहीं थी, कोई चीख नहीं थी। सपने के गायब होने या टूटने का कोई डर या चिंता नहीं थी। यह सच है कि नींद की अवधि और सपने की अवधि अलग-अलग होती है। लेकिन मेरी पूरी नींद के दौरान, मैं सपना देख रहा था। वह भी शायद सटीक न हो। सोने से पहले, मैं धरती और आकाश को आग की लपटों में जलते हुए देख रहा था। लेकिन सोने से पहले, मैं खुद उस आग में नहीं जल रहा था। यही मुख्य अंतर था।

जब मैं जागा, तो दोपहर हो चुकी थी। चेहरे, आँखों और शरीर को झुलसा देने वाली भीषण गर्मी के बावजूद मैं इतनी देर तक सोता रहा। मेरे आस-पास तीन कुत्ते थे और पंद्रह-बीस कौवे पास ही ज़मीन पर फुदक रहे थे, अपने मौके का इंतज़ार कर रहे थे। इस तरफ बरगद के पेड़ की चोटी पर दो गिद्ध बैठे थे। लेकिन सौभाग्य से, सोते समय कोई भी जानवर या पक्षी मेरे पास नहीं आया और न ही मुझे चोंच मारी या काटा। क्या वे समझ गए थे कि मैं अभी मरा नहीं हूँ या वे मेरे मरने का इंतज़ार कर रहे थे? मैं उठा और बैठ गया। कुत्ते और कौवे निराश होकर धीरे-धीरे चले

गए। लेकिन दूरदर्शी गिद्ध अभी भी डाल पर बैठे थे। मुझे भूख लग रही थी। मैंने सोचा कि उठकर किसी गाँव में जाऊँ और अगर कोई नारियल का बाग हो तो दो कच्चे नारियल माँग लूँ। मुझे कच्चे नारियल का पानी पीने और उसका गूदा खाने का मन कर रहा था। जब मैंने चारों ओर देखा, तो मुझे कुछ दूरी पर एक गाँव दिखाई दिया। सूरज सिर के ठीक ऊपर चमक रहा था, इसलिए मैं गाँव की दिशा नहीं जान सका। लेकिन जब मैंने चलना शुरू किया, तो मुझे रामकृष्ण, सावित्री और वकील के प्रति अपने गुस्से की याद आई और मुझे दुख हुआ। अगर मैंने झूठ बोलने से साफ इनकार कर दिया होता, तो क्या वे बल प्रयोग करके मुझसे झूठ बुलवाते? हालांकि मैंने झूठ सिर्फ दूसरों की खातिर बोला था, लेकिन झूठ तो मैंने ही बोला था। ऐसा सोचकर मेरा मन शांत हुआ। मुझे आत्मनिरीक्षण से शांति मिली। अगर हमारा मन दूसरों पर दोष मढ़ने और उनसे नाराज़ होने से मुक्त हो जाए, तो हमें शांति मिल सकती है। हालांकि मैंने अपने दोष का बोझ उठाया, लेकिन उससे खोई हुई अपनी मूल शक्ति और अच्छाई के गुण को वापस पाना संभव नहीं था। उसे वापस पाने का कोई रास्ता भी नहीं था।

मैं हसन से पश्चिम की ओर आठ मील पैदल चला, गाँव के भीतरी रास्तों से होते हुए। वह गाँव दक्षिण दिशा में था। मैं पहले घर गया और खाना माँगा। उन्होंने मुझे दो मुट्ठी आटा दिया। मैंने चार रोटियाँ बनाईं, दो खाईं और बाकी रोटियों को तौलिए में लपेटकर बाँधा और अपने गाँव की ओर चल पड़ा। मुझे पैदल चलने में दो दिन लगे। रामकृष्ण गाँव पहुँच चुके थे। मेरे घर लौटने में देरी से वे चिंतित थे। वे बस से जल्दी से चन्नरायपट्टाना वापस गए और फिर हसन गए, वकील के घर में पूछताछ की, हसन में पढ़ रहे अपने बेटे गणेश को अपने दादाजी को ढूंढने का निर्देश दिया, घर लौटे और बेचैन हो गए। जैसे ही उन्होंने मुझे देखा, वे मुझसे पूछने ही वाले थे कि "तुम कहाँ चले गए थे?" लेकिन अपनी ज़बान पर काबू रखते हुए बीच में ही रुक गए। मुझे नहीं पता मेरे चेहरे पर क्या भाव थे।

सड़क पर चलते समय इधर-उधर देखना मेरी आदत नहीं थी। मेरी आदत थी कि मैं बाग में जाता और वहाँ से सिर झुकाए, पैरों पर नज़र गड़ाए वापस आता। मैं इस बात पर ध्यान नहीं देता था कि सड़क पर कौन चल रहा है, कौन खड़ा है या कौन किसके घर के चबूतरे पर बैठा है। लेकिन हसन से लौटने के अगले दिन, जब मैं बाग की ओर जा रहा था, तो मुझे ऐसा लगा जैसे सड़क पर भीड़ की आवाज़ आ रही हो, मानो सारे ग्रामीण सड़क के दोनों ओर कतार बनाकर आपस में कह रहे

हों, 'देखो, झूठा परमेश्वरय्या जा रहा है, वही परमेश्वरय्या जिसने झूठी कसम खाई थी।' कई बार मैं अपना सिर उठाकर चारों ओर देखता। पर कोई नहीं होता। यह सोचकर कि यह महज़ एक भ्रम है, मैं अपनी नज़रें फेर लेता और चलता रहता। उस संदर्भ में, नियान्त्रु के साथ, मैंने अपने अंतर्मन को खोलकर यह गहनता से परखने का प्रयास किया कि क्या मैं परमेश्वरय्या के झूठ बोलने के बारे में लोगों की राय से डर रहा था या अपनी अंतरात्मा से। ऐसा नहीं था कि मुझे लोगों की राय की ज़रा भी परवाह नहीं थी। कई लोग मुझसे सहानुभूति जताते हुए कहते थे, "बेचारा, उसे भी अपनी बेटी के लिए झूठ बोलना पड़ा।" खासकर गांव की वरिष्ठ महिलाओं को, जिन्हें मैं जानता था, मेरा यह काम पसंद आया, उन्होंने इसे सही ठहराया और मेरे प्रति सहानुभूति दिखाई, और कई पुरुषों ने भी मेरा साथ दिया। लेकिन क्या दूसरों की स्वीकृति या अस्वीकृति के आधार पर हमारे कर्मों के सही-गलत का फैसला करना संभव है? मुख्य रूप से, सत्य मेरे जीवन की मजबूत नींव और सहारा था; मेरे भाव, विचार और दूसरों के साथ व्यवहार में झूठ का कोई अंश नहीं था। मैं अपने हर कार्य को इसी कसौटी पर तौलता और निर्णय लेता था। मैं इस बात का ध्यान रखता था कि मेरी अंतरात्मा दिन-प्रतिदिन प्रखर होती जाए, और वह कालिख से धूमिल या धुंधली न हो जाए। जैसे-जैसे महीने और साल बीतते गए, मैं बिना किसी आंतरिक संघर्ष के ऐसे काम करता रहा जिससे उसकी चमक बढ़ती गई। मैं उन सभी कार्यों को नकार देता था जो उसकी चमक को कम करते थे। यही मेरी शांति का आश्रय था। अगर ऐसा नहीं होता, तो मेरी पत्नी की मृत्यु के बाद जीवन में मेरा सहारा क्या होता? बच्चों का पालन-पोषण और उनकी प्रगति के लिए काम जैसी दिनचर्या से प्रेरणा तो मिल सकती है, लेकिन वे मेरे जीवन को उचित नहीं ठहरातीं। मुझे जिसकी आवश्यकता थी, वह किसी से प्राप्त नहीं हो सकता था, न ही किसी को सौंपा जा सकता था, उसे केवल मेरे अंतर्मन के प्रकाश को ही सौंपना था; यह महज शारीरिक भावनाओं से जुड़ा मकसद नहीं था। अब, अदालत में जाकर, झूठी गवाही देकर, मैंने खुद ही उस औचित्य को नष्ट कर दिया है। मैंने अपने जीवन की नींव ही तोड़ दी है। अब, जीने की क्या ज़रूरत थी? मुझे क्यों जीना चाहिए? अपने जीवन को समाप्त करने से बेहतर कुछ नहीं था; और आत्महत्या का विचार स्पष्ट रूप से सामने आ गया।

'निआंत्रु, इस दौरान मेरी भूख नहीं मिटी और मुझे नींद न आने की समस्या भी नहीं हुई। मुझे पहले जैसी ही नींद आने लगी। जज ने मुझसे कहा, "तुम जा सकते हो।"

मैं गवाह के कटघरे से बाहर भागा, अदालत परिसर से बाहर निकला, भागता रहा और एक बड़े बरगद के पेड़ के नीचे सो गया; ऐसी गहरी, लंबी नींद मुझे तीस साल से नहीं आई थी। अब मुझे इतनी शांति से नींद आती थी कि सूर्योदय के बाद भी मेरी नींद नहीं खुलती थी। मुझे आंतरिक शांति केवल सोते समय ही मिलती थी। जैसे ही मैं जागता, निरर्थक जीवन का बोझ मेरे कंधों पर आ जाता था। खाने के साथ भी ऐसा ही हुआ। मेरा संतुलन बिगड़ गया – मुझे यह समझ नहीं आ रहा था कि मैंने जो खाया वह मेरे लिए पर्याप्त है या मुझे और चाहिए। दोपहर में शिवालय जाकर यह देखने की दैनिक रस्म कि कोई मेहमान आया है या नहीं, अर्थहीन हो गई थी। मैं दोपहर के भोजन के समय सीधे घर लौट आता था। रामकृष्ण ने यह देखा और उन्होंने स्वयं भी इस परंपरा को जारी रखा। इतना सोने और अच्छा खाने के बावजूद, मैं दिन-ब-दिन कमजोर और दुबला होता जा रहा था। रामकृष्ण मुझे बिलिकेरे अस्पताल ले गए। एक हफ्ते में मेरा चार किलो वजन कम हो गया था। अगले हफ्ते तक मेरा वजन चार किलो और कम हो गया। डॉक्टर समस्या का पता नहीं लगा पाए, लेकिन उन्होंने एक टॉनिक दे दिया। एक शाम, जब मैं बाग में कुएँ के पास बैठा था, आत्महत्या का विचार एकदम स्पष्ट हो गया। मुझे बहुत नींद आई। नींद में कोई दुविधा या उदासी नहीं थी और न ही किसी औचित्य की आवश्यकता थी। लेकिन जब मैं जागा, तो औचित्य की कमी मुझे सताती रही। इस सताने वाले खालीपन का एकमात्र उपाय था वापस सो जाना। तो, मैं उस अंतिम नींद में क्यों न चला जाऊं जहाँ जागने का कोई विकल्प ही न हो। जैसे ही यह संकल्प मेरे मन में आया, मैंने तरीका भी सोच लिया। चूंकि हम किसान थे, हमारे घर में बहुत सारी रस्सी थी। मैंने एक चिकनी और चमकदार जूट की रस्सी चुनी जो आसानी से फंदा बन सकती थी और उसे अपने तकिए के नीचे रख दिया। चूंकि मैं सुबह खुद ही अपना बिस्तर समेट लेता था, इसलिए किसी को रस्सी की मौजूदगी का शक नहीं होता। लेकिन हैरानी की बात यह थी कि आत्महत्या करने और रस्सी छिपाने के मेरे फैसले के बाद, मेरी नींद उड़ गई। पहले की तरह, मुझे रात में दो घंटे भी नींद नहीं आती थी। तब तक, गहरी नींद में मुझे किसी बात का एहसास नहीं होता था। अब, पूरी रात जागते रहने का दर्द मुझे सता रहा था। मौत से डर लगने लगा था। आत्महत्या करना एक बेहद हिंसक कदम लग रहा था। एक दिन, मैं उठा, रस्सी का बंडल बगल में दबाया, शॉल ओढ़ा, गाँव के सामने स्थित शिवालय गया, वहाँ पत्थर की शिला पर दो घंटे चुपचाप बैठा रहा और घर लौट आया। वापस आकर

लेटते ही मुझे एक पल के लिए शांति का अनुभव हुआ। मुझे हल्कापन महसूस हुआ, यह सोचकर कि खतरा टल गया है। लेकिन यह सिर्फ एक पल के लिए ही था। फिर से मुझे जीवन एक बोझ लगने लगा, यह याद करके कि मुझे अपने किए का कोई औचित्य नहीं मिला। मैंने खुद को कायर समझा और खुद से घृणा करने लगा। हालांकि मैंने तुरंत वापस जाने का फैसला किया था, लेकिन गांव की सीमा पर किसी गली में मुझे मुर्गे की बांग सुनाई दी और मुझे पता था कि लोग उठेंगे, अपने खेतों और बागों में काम पर जाएंगे, इसलिए मैंने वह विचार छोड़ दिया। थोड़ी देर बाद, मैंने सोचा: आत्महत्या छुपकर क्यों की जाती है? आत्महत्या करने वाले लोग सुनसान और वीरान जगह पर ही क्यों करते हैं? शायद इस सावधानी से कि दूसरे लोग उन्हें ऐसा करने से रोक सकते हैं। लेकिन मुझे रोकने और बिना किसी सहारे या औचित्य के जीने के लिए मजबूर करने का अधिकार किसे है? कुछ और समय इसी सोच में बीता। कौवे कांव-कांव करने लगे। कौवे की आवाज सुनते ही मुझे मौत का आभास हो गया। मैं उठा, रस्सी को तकिए के नीचे रखा, अपना बिस्तर समेटा और बाग की ओर चल पड़ा। मेरा मन पूरे दिन बिल्कुल शांत और स्थिर था। यह मेरे जीवन का, मेरे शरीर का और इस दुनिया का आखिरी दिन था। लेकिन मुझे इन सब चीजों को आखिरी बार याद करके पुरानी यादों में खोने का मन नहीं कर रहा था – वह बाग, लहराते नारियल के पेड़, वह तालाब का किनारा जहाँ मैं रोज़ बैठता था, बाड़ के पास उगने वाले सुगंधित पीले फूल या चाँद जो पूरब से निकलता है, ऊपर चढ़ता है और पश्चिम की घाटी में अपनी शांत चमक के साथ डूब जाता है। हालाँकि यह मेरा आखिरी भोजन था, फिर भी खाने में कोई खास स्वाद नहीं था। हमेशा की तरह मैंने अपना भोजन समाप्त किया। मैंने एक कागज पर लिखा: "क्योंकि मैंने जीवन का अर्थ खो दिया है, इसलिए मैंने आत्महत्या कर ली है। इस कृत्य के लिए कोई और जिम्मेदार नहीं है।" मैंने उस कागज के टुकड़े को अपनी धोती के किनारे से बाँध दिया। मैंने हॉल में अपना बिस्तर बिछाया और लेट गया। मैं एक यात्री की तरह अपने प्रस्थान समय का इंतजार कर रहा था। जैसे ही मुझे लगा कि आधी रात हो चुकी है, मैं चुपचाप उठा, रस्सी को अपनी बगल में दबाया, शॉल ओढ़ा, चुपचाप दरवाजा खोला, बाहर आया और दरवाजा बंद कर दिया। दरबार से लौटने के बाद से रामकृष्ण के खर्राटों की आवाज बहुत धीमी हो गई थी। रास्ते में मुझे कोई आवारा कुत्ता भौंका नहीं। मैंने मध्य गली पार की, गाँव के सामने वाली गली से होते हुए किले की गली के बाद गाँव के बाहर

स्थित शिवालय पहुँचा। मंदिर के सामने बरगद का पेड़ धुंधली रोशनी में एक टीले की तरह खड़ा था। बिना देर किए मैं पेड़ पर चढ़ने लगा। अभ्यास की कमी के कारण मेरी साँस फूलने लगी और मुझे चक्कर आने लगे। मैं शिवालय की ओर फैली मोटी शाखा पर रेंगता हुआ गया और रस्सी का एक सिरा शाखा से कसकर बाँध दिया, दूसरे सिरे से फंदा बनाया, उसे अपने गले में डाला, शॉल को दोनों हाथों में बाँधा और शाखा से नीचे कूद गया। जैसा मैंने अनुमान लगाया था, फंदा कस गया। हालाँकि, सहज प्रतिक्रिया के रूप में, पहले कुछ ही सेकंड में मेरे हाथ गाँठ खोलने लगे, लेकिन कसकर बंधी गाँठ ने उन्हें रोक दिया। घुटन महसूस होने और जीवन-मृत्यु के दो किनारों के बीच डगमगाने के बावजूद भी मुझे न तो कोई दुख हुआ और न ही कोई शोक। मैंने किसी को दोष देने या कोसने के लिए भी क्रोध नहीं किया। यह सच था कि कुछ सेकंड के लिए मेरा शरीर और पैर दर्द से तड़प रहे थे, और यह बिल्कुल स्वाभाविक था। लेकिन मैंने दृढ़ निश्चय के साथ जीवन के इस निरर्थक बुलबुले को समाप्त कर दिया। मुझे नहीं पता कि उसके बाद क्या हुआ। 'निआंतु, मैंने तुम्हारे प्रश्न का उत्तर दे दिया है।' अंगूठे के आकार का प्रेत चुप हो गया।

सन्नाटा छा गया, गहरा सन्नाटा, ठोस, ऐसा सन्नाटा जो गहरी से गहरी गुफा में भी नहीं मिलता। यह वही घिरा हुआ सन्नाटा था, जिसमें प्रेत की बात की पुष्टि हो सकती थी और सत्य और असत्य के क्रिस्टल में अंतर किया जा सकता था। थोड़ी देर बाद एक आवाज़ आई:

'निआंत्रु, यह रिपोर्ट केवल उस प्रेत के कथन तक ही सत्य है। परन्तु यह अपूर्ण है। अपूर्ण सत्य असत्य का प्रभाव उत्पन्न करेगा। यह व्यक्ति न्यायालय में उपस्थित होकर उसके बाद की घटनाओं से अवगत होने का प्रयास करने के बजाय भाग गया। वास्तव में, मंजय्या को इस व्यक्ति की गवाही से बरी नहीं किया गया था। बल्कि, उसकी गवाही ने मंजय्या की रिहाई में थोड़ी बाधा उत्पन्न की।' प्रेत ने तुरंत पहचान लिया कि यह यमधर्म, निआंत्रु की वाणी नहीं थी। यम की वाणी सर्वव्यापी और परम शक्ति की थी, जिसके आगे कोई विनती नहीं थी; वह भावहीन और संयमित थी। परन्तु जो वाणी अब सुनाई दे रही थी, उसमें न तो वह सर्वव्यापकता थी और न ही वह अधिकारपूर्ण गुण। वह कोमल, विनम्र और आज्ञाकारी थी। वह इस बात का ध्यान रख रही थी कि कोई भी भावना रिपोर्टिंग के संतुलन को भंग न करे। अंगूठे के आकार के प्रेत ने समझ लिया कि यह चित्रगुप्तों का समर्पण था।

लेकिन प्रेत बड़ी सावधानी से सुनने के बावजूद यह समझ नहीं पाया कि यह चित्रा की आवाज़ है या गुप्ता की या दोनों की। आगे निवेदन हुआ: 'फिर भी, उसे इस बात का अफसोस है कि केवल उसकी झूठी गवाही के कारण ही मंजय्या बरी हो गया।'

एक बार फिर सन्नाटा छा गया, मानो किसी बात के होने का आभास हो रहा हो। अंगूठे के आकार का प्रेत यह नहीं समझ पा रहा था कि इस आरोप का खंडन करे या और स्पष्टीकरण दे। कुछ देर बाद, यमधर्म की आवाज़ सुनाई दी, जो अब प्रेत के लिए जानी-पहचानी थी:

तीस वर्षों तक आपने एकांत और अंतर्मुखी जीवन व्यतीत किया। गवाही देने और अदालत से बाहर आने के बाद, मंजय्या की रिहाई की खबर जानने के अलावा, आपने यह जानने की कोई उत्सुकता या जिज्ञासा नहीं दिखाई कि उसे कैसे और क्यों बरी किया गया। यहां तक कि आपके पुत्र रामकृष्ण के शब्द भी आपके मन को छू नहीं पाए। क्या ऐसा ही नहीं है?

प्रेत ने कुछ देर सोचा और अंत में इस बात से सहमत हो गया कि यह सच है।

"किसी भी कार्य में अनेक लोग शामिल होते हैं। उन लोगों के विचार जाने बिना उस कार्य को समझा नहीं जा सकता। हमें कारण और परिणाम, पूर्व और पश्चिम दोनों को ध्यान में रखे बिना कोई निर्णय नहीं लेना चाहिए और न ही किसी कार्य का मूल्यांकन करना चाहिए। चित्रगुप्त कहते हैं कि मंजय्या को आपकी गवाही के कारण बरी नहीं किया गया था। उनका कथन ही अंतिम सत्य है। मैं आपको एक अवसर देता हूँ। क्या आप पूर्ण सत्य जानना चाहते हैं?" नियान्त्रु ने पूछा।

अंगूठे के आकार का प्रेत कुछ सोच नहीं पा रहा था। नियान्त्रु ने जो कहा था, वह सच था। यह भी सच था कि मैं सत्य जानने की कोई इच्छा रखे बिना ही जीवन व्यतीत कर रहा था। अब मुझे पूरा सत्य क्यों जानना चाहिए? प्रेत ने कहा, 'नियान्त्रु, इन सभी घिनौनी और गंदी बातों को जानकर मुझे क्या लाभ होगा? मैंने ये सब इसलिए बताया क्योंकि आपने मुझे चित्रगुप्तों के बजाय जो कुछ भी मुझे पता था, उसे बताने का आदेश दिया था। चित्रगुप्त की रिपोर्ट की सहायता से, कृपया मेरे सही-गलत का न्याय करें, फैसला सुनाएं और इस मामले को यहीं समाप्त करें।'

नियन्त्रु ने कहा, 'चित्रगुप्त साक्षी होते हैं, परम साक्षी। आत्महत्या से पहले, आपने शुद्ध साक्षी बनने के लिए संघर्ष किया। पत्नी की मृत्यु के बाद आपने पूर्ण वैराग्य के साथ जीवन व्यतीत करने का प्रयास किया। आपने कर्म से विमुख होकर केवल

साक्षी के रूप में जीने का विचार किया। अब मैं आपको कर्म से संपर्क किए बिना सभी के अंतर्मन के विचार जानने की विशेष शक्ति प्रदान करता हूँ। यही शक्ति चित्रगुप्तों के पास होती है। क्या आप इस शक्ति को प्राप्त करके सत्य को एकत्रित करेंगे और फिर उसकी सूचना देंगे? यह एक विशेष अवसर है जो सभी को प्राप्त नहीं होता। इस पर विचार करें और मुझे बताएं।'

कुछ देर तक सन्नाटा छाया रहा। अंत में, प्रेत ने प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। नियान्त्रु ने कहा, 'मैं तुम्हें अंगूठे के आकार के इस प्रेत रूप में तुम्हारे पूर्वलोक में वापस भेज रहा हूँ। वहाँ तुम अनेक व्यक्तियों के मन में प्रवेश कर सकते हो और उनके विचारों के साक्षी बन सकते हो। परन्तु तुम उनके विचारों और भावनाओं को प्रभावित या परिवर्तित नहीं कर सकते। साक्षी का कार्य केवल जानना है। किसी को भी तुम्हारे मन में तुम्हारी उपस्थिति का ज्ञान नहीं होगा। इसलिए तुम्हें भय, लज्जा या झिझक महसूस करने की आवश्यकता नहीं है। मेरे चित्रगुप्त भी इसी प्रकार कार्य करते हैं। परन्तु, क्योंकि वे पात्रों से संबंधित नहीं हैं, इसलिए वे आत्मनिरीक्षण के बोझ से मुक्त हैं। क्योंकि तुम्हें अपने निकट संबंधियों के विचारों और कर्मों की रिपोर्ट देनी है, इसलिए यदि तुम्हारे मन में आत्मनिरीक्षण और तुलनाएँ उठें तो कोई हानि नहीं है। अब तुम जा सकते हो। अपनी यात्रा के अंत में वापस आकर मुझे रिपोर्ट देना।'

आवाज बंद हो गई।

टिप्पुर नामक एक छोटे से कस्बे के होटल के कमरे में लक्कू बिस्तर पर लेटी हुई थी और उसका सिर मंजय्या की बाईं बांह पर टिका हुआ था। उसके शरीर पर अभी भी मैसूर चंदन साबुन की खुशबू बसी हुई थी। उसने मंजय्या द्वारा दिए गए साबुन से तीन बार खुद को रगड़कर धोया था। उसने मंजय्या द्वारा लाई गई नई साड़ी पहनी हुई थी। मंजय्या ने कमरे में दो भरपेट भोजन मंगवाए थे। दोपहर का भोजन समाप्त करने के बाद, उन्होंने शारीरिक संबंध बनाए और अब वे चुपचाप

एक-दूसरे के बगल में लेटे हुए थे। लक्कू ने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि पुरुष और स्त्री का मिलन इतना आनंददायक और सुखद होगा, मीठी बातों के साथ, बिल्कुल फिल्मों की तरह। हालांकि वह कभी-कभी शर्मीली और अंतर्मुखी स्वभाव की थी, उसने मंजय्या से अपनी झिझक दूर करने की इच्छा व्यक्त की थी। उसने सोचा था कि यह सुख उसकी मृत्यु तक जारी रहेगा। इसके बाद, यह उसका सौभाग्य था कि वह इसका आनंद ले सके। लेकिन इस सुख की इच्छा के साथ-साथ, एक पल के लिए उसके मन में अपराधबोध भी उठा: क्या वह जो कर रही थी वह सही था? उसे याद आया: यह दूसरी बार है जब मैं इस आदमी के साथ सोई हूँ। उस पहली बार की याद आते ही, ओह माँ, मेरा दिल ज़ोर से धड़कने लगता है। मुझे अचानक से पकड़ कर, इस आदमी ने मुझ पर जादू कर दिया। उसके पास क्या जादुई शक्ति है, वह एक औरत को मदमस्त कुतिया बना देता है जो उसके पीछे दौड़ती है। एक बार मैंने फोर्ट-स्ट्रीट की नागी से पूछा था, 'इस आदमी में आपको ऐसा क्या मिला है कि आपने खुद को उससे इतनी मजबूती से बाँध लिया है?' उन्होंने कहा था, 'ओह अक्का, तुम्हें नहीं पता। अगर तुम एक बार उसके साथ सो जाओगी, तो तुम्हें सात जन्मों तक लगातार उसके साथ रहने का मन करेगा, चाहे तुम्हें बंधुआ मज़दूर बनकर ही क्यों न रहना पड़े।' तब मुझे नहीं पता था कि यह इतना मोहक होगा। मुझे उसे अपने साथ बाँधे रखना चाहिए और देखना चाहिए कि वह भटक न जाए। अगर किसी स्त्री से बंधा हुआ आदमी दूसरों के साथ सुख की तलाश करे, तो वह कैसे सहन कर सकती है? इस प्रकार लक्कू ने मंजय्या को अपने साथ बाँधे रखने का फैसला किया।

पीठ के बल लेटे हुए मंजय्या लक्कू की कामुकता की तुलना उन दूसरी स्त्रियों से कर रहे थे जिनके साथ उन्होंने संबंध बनाए थे। वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे थे कि लक्कू का शरीर आकर्षक तो था, लेकिन उसमें वो कामुकता नहीं थी जिसकी एक पुरुष को चाह होती है। वर्षों पहले अपने अनुभव से उन्होंने यह जान लिया था कि कामुकता सिखाई या विकसित नहीं की जा सकती, बल्कि एक ऐसी सहज सुगंध होती है जो अपने आप उठती और फैलती है। फिर उन्होंने सोचा, मैं उसे आज यहाँ क्यों लाया? इसलिए नहीं कि वह नई थी। नहीं, उस रात किले के पीछे भारतीय बीच के पेड़ के नीचे, जब मैंने उसे अँधेरे में देखा था... नहीं, नहीं, मैंने डर और घबराहट में उसे ठीक से नहीं देखा था। मैंने तो बस अपनी ताकत दिखाई थी। हाँ, यह सच है कि जिज्ञासा थी और किसी नए व्यक्ति के साथ संबंध बनाने की इच्छा

थी; इसके अलावा, क्या मुझे उस महिला के प्रति कृतज्ञता नहीं दिखानी चाहिए जिसने मुझे बरी होने में मदद की? यह मंजय्या कभी कृतघ्न नहीं होता। इस तर्क के साथ-साथ, उन्हें यह भी समझ आया कि इसका एक बड़ा कारण उस व्यक्ति की पत्नी को इस तरह से वश में करना था जिसकी उन्होंने हत्या की थी। वह पहले ही जीत ली गई थी, उसके वश में आ चुकी थी। वह जानता था कि अब से वह आँख बंद करके उसकी आज्ञा मानेगी। ऐसा सोचते हुए ही वह बाईं ओर मुड़ा और अपनी जीभ से उसके होंठ खोलकर उसे गहराई से चूमा, उसके कानों में तीन बार फुसफुसाया, 'ओह, मेरी रानी, मेरी रानी, मेरी रानी।' लक्कू मदहोश हो गई। अचानक उसे अपने पति कांची की याद आ गई। वह कांची और इस मंजय्या के बीच का अंतर समझ गई। 'कांस्य' कांची का उपनाम था, उसकी उपाधि थी। अगर आप उसकी जांघों या बाहों पर मारते, तो कांसे जैसी आवाज आती। उसका शरीर शिकारी कुत्ते जैसा था, लंबी भुजाएँ और टांगें, एकदम सीधा शरीर। वह घोड़े से भी तेज दौड़ सकता था, नारियल के पेड़ पर बंदर की तरह फुर्ती से चढ़ सकता था। पेड़ चाहे कितना भी ऊँचा हो, वह एक ही साँस में उस पर चढ़ जाता, नारियल तोड़ता, हाथों में नारियल लिए नीचे उतरता, घर आता और खर्राटे लेता। लेकिन मंजय्या अलग था।

वह पानी में फिसलकर उतरता, तरह-तरह के खेल खेलता, लहरों के साथ तैरता, गहराई नापता, और गहरा गोता लगाता, और वहीं खेलता रहता... ओह, वह बलवान था, पर रेत की तरह खुरदुरा नहीं। एक आदमी के कंधे ऐसे ही होने चाहिए - सख्त और मजबूत, लेकिन चिकने; उसमें सहनशक्ति होनी चाहिए: नारियल के गुच्छे ढोने से खुरदुरे और बेजान हो चुके कंधों में भला क्या आनंद होगा? जब लक्कू कांची की तुलना मंजय्या से कर रही थी, तो अचानक डर उसके मन में घर कर गया - कहीं कांची का भूत उस पर हमला न कर दे? उसे अब तक यह एहसास नहीं हुआ था कि उसी ने उसे मौत के मुंह में धकेला था। कांची कभी भी रात में बिना बताए बाहर नहीं जाता था कि वह किस बाग में नारियल चुराने जाएगा। लेकिन उस दिन, कांची, जो कभी मंजय्या के बाग में नहीं गया था, बिना बताए वहां चला गया और तीन गुच्छे ले आया। लक्कू को भी उससे सवाल करने का मन नहीं हुआ। वह चुप रही, यह सोचकर कि उसे हर रात चोरी के बारे में क्यों पूछना चाहिए? यह उसके पति की निगरानी थी। वह और क्या कर सकती थी? जब चोरी हुई तब मंजय्या गाँव में नहीं था। चौथे दिन दोपहर को वह लक्कू के घर आया।

लक्कू ने चटाई बिछाई और पीतल की थाली में पान के पत्ते, सुपारी, चूना और तंबाकू लाकर दिए। कांची भैंसों को नहलाने बाहर गई हुई थी। मंजय्या ने थाली को देखकर कहा, "ओह पान के पत्ते! मुझे ये बहुत पसंद हैं, लेकिन मुझे नहीं पता कि डंठल कैसे निकालते हैं और चूना कैसे लगाते हैं। लक्कू, मैं क्या करूँ?" उसने लक्कू की आँखों में ऐसे देखा मानो वह अपनी आँखों से उसके मन की गहराई में उतरकर अपना बीज बो रहा हो। तब तक कांची भैंसों को गौशाला में बाँध चुकी थी। वह अंदर आया और खंभे से टेक लगाकर बैठ गया। जब लक्कू को यह याद आया, तो कांची की आकृति और उसके शरीर की बनावट उसकी आँखों के सामने स्पष्ट हो गई। वह शिकारी कुत्ते की तरह बैठा था जो झपटने के लिए तैयार हो। उसके शरीर की बनावट ही नुकीली थी। नाक, भौंहों के घुमावदार किनारे, आँखें, मुँह और नुकीली मूंछें, सब तीर की तरह तेज थे।

मंजय्या ने पूछा, "तुम्हारी हिम्मत कैसे हुई मेरे बाग में घुसने की?" कांची का शरीर तो फुर्तीला और चुस्त था, पर उसका दिमाग सुस्त और मंदबुद्धि था। अगर उसमें कांची की बुद्धि का एक चौथाई हिस्सा भी होता, तो वह मंजय्या के प्यार में क्यों पड़ जाती? उसे समझ नहीं आ रहा था कि क्या जवाब दे और वह कुत्ते की तरह घूरता बैठा रहा। मंजय्या ने ज़ोर देकर कहा, "बोल दो।" उसे समझ नहीं आ रहा था कि क्या जवाब दे, अपना बचाव कैसे करे, इसलिए उसने झट से कहा, "अच्छा, कम से कम मैं गाँव की हर औरत को अपने बाग में बनी झोपड़ी में तो नहीं बुलाता।" यह आदमी बिना सोचे-समझे इतनी बेतुकी बातें क्यों कर रहा था? क्या उसे किसी तरह पता था कि मंजय्या उससे टिप्पुर में मिला था और उससे बात की थी? उसने यह बात किसी को नहीं बताई थी। क्या मंजय्या ने उसे बताया था? लेकिन फिर हुआ क्या था? वह टिप्पुर खोपरा बेचने गई थी। धंधा खत्म होने के बाद वह एक होटल में डोसा खाने जा रही थी और वहीं उसकी मुलाकात मंजय्या से हुई। उसने उसे पुकारा, 'चलो लक्कू, कुछ नाश्ता साथ में करते हैं,' और उसे अपने सामने कुर्सी पर बैठा दिया। उसे शर्म आ रही थी, वो भी उसके सामने बैठकर डोसा खाने में। हालाँकि उसने मना कर दिया और कहा कि उसे डोसा नहीं चाहिए, फिर भी उसने मैसूर-पाक, नारियल बर्फी, वड़ा, मसाला डोसा मंगवाया और उसे सब खिला दिया। होटल से बाहर आने के बाद मंजय्या ने कहा, 'देखो लक्कू, अगर तुम्हें गलतफहमी न हो, तो मैं तुमसे एक बात पूछना चाहता हूँ।' जिस तरह से उसने उसे देखा था, उससे उसका मतलब साफ था। फिर भी जैसे कि वह समझी ही न हो, उसने कहा,

'मुझसे पूछिए।' उसने कहा, 'सुनो लक्कू, जब से तुम्हारी शादी के बाद तुम हमारे गाँव आई हो, मुझे एक पल भी नींद नहीं आई है। भगवान को तुम्हें मेरी पत्नी बनाना चाहिए था। लेकिन हम अपनी किस्मत नहीं बदल सकते। खैर, तुम आज रात टिपटूर में ही रुक जाओ, मैं होटल में एक कमरा बुक करवा दूँगा।' किसी को पता नहीं चलेगा।' वह क्रोधित होकर बोली, 'क्या, तुम मुझे समझते क्या हो? शादी के बाद से मैंने किसी पुरुष की ओर नहीं देखा है और न ही कभी देखूंगी। मैं एक पवित्र स्त्री हूँ।' तब उसने पूछा, 'शादी से पहले क्या?' इस व्यक्ति को कैसे पता चला कि वह सत्रह साल पहले हसन में क्या कर रही थी? क्या वह कभी उसके पास ग्राहक बनकर आया था? वह शादी के बाद बिलिकेरे आई थी और उसे एक पवित्र स्त्री माना जाता था। अगर वह ज़रा भी भटक जाती, तो कांची उसे कभी चैन से नहीं रहने देती। वह मंजय्या पर लगभग चिल्ला रही थी, 'शादी से पहले की बात क्या कर रहे हो? तुम्हारे मन में क्या चल रहा है? तुमने मुझे कहाँ देखा है?' तभी चन्नेनहल्ली का पुट्टेगौड़ा वहाँ आया और उसने उस आदमी से खोपरे की नीलामी के बारे में पूछा और लक्कू वहाँ से चली गई। उस दिन से मंजय्या ने उससे बात नहीं की। लेकिन वह उसे हवस भरी निगाहों से देखता और पूछता, 'कैसी हो?' लेकिन अब, जब कांची ने अचानक कहा, 'मैं गाँव की हर तरह की औरत को अपनी कुटिया में नहीं लाती,' तो मंजय्या ने तुरंत कहा, 'लक्कू, तुम गवाह हो। क्या मैंने कभी उसकी पत्नी पर बुरी नज़र डाली है? क्या मैंने उससे बात की है? बताओ, बताओ।' मेरा चेहरा गुड़हल के फूल की तरह लाल हो गया। मैंने मंजय्या को कठोर निगाहों से देखा। उसने भी मुझे ऐसे घूरा जैसे मेरी आँखों में भेद रहा हो। मेरी आँखों में जो चमक उसने देखी, उसे देखकर उसने कहा, 'एक बात अच्छी तरह समझ लो! यह आदमी कभी मेरे बगीचे पर नज़र न डाले और न ही मेरी कोई चीज़ ले। मेरे साथ आँख के बदले आँख का नियम है। अपने पति को न्याय का सबक सिखाओ। तुम बड़ी समझदार हो। समझ लो।' यह धमकी देकर वह चला गया। लेकिन उसका पति, जो गधा जैसा था, कुछ नहीं समझ पाया। अगर उसने कांची को न भेजा होता, तो वह उस दिन मंजय्या के बगीचे में कदम न रखता। लक्कू क्रोधित हो उठी। उसके पति ने मनजय्या के बाग में घुसपैठ की थी, और उसे धक्का दिया था, और यह आदमी उसके बाग में घुसपैठ करने और धक्का देने की बात कर रहा था, जिससे वह और भी क्रोधित हो गई। उसका मूर्ख पति समझ नहीं पा रहा था। जब मनजय्या ने पूछा, 'तुम मेरे बाग में क्यों आए?', तो इस मूर्ख ने

जवाब क्यों दिया, 'मैं हर तरह की औरत को अपने बाग में नहीं लाता?' उन दोनों के बीच क्या संबंध था? रात के खाने के बाद, जब वे सोने गए, तो लक्कू के मन में एक तरह की ज़िद जाग उठी। उस आदमी ने अचानक कैसे कह दिया, 'मैं तुम्हारी पत्नी को लेने नहीं आया हूँ।' लक्कू ने ठान लिया कि वह किसी भी कीमत पर अपने पति को मनजय्या के बाग में ले जाएगी। यह मूर्ख कांची तकिया पर सिर रखते ही सो जाता था और आधी रात को नारियल चुराने के लिए उठता था। वह भी उसी समय सोती थी। लेकिन उस दिन उसने अपनी आँखें बंद नहीं कीं। उसने मंजय्या को लक्कू की असलियत दिखाने का निश्चय किया और कांची से मंजय्या के बाग में घुसपैठ करने को कहा। आधी रात हो चुकी थी और कांची अचानक उठ खड़ा हुआ। लक्कू ने पूछा, 'अच्छा, आज तुम किस बाग में जा रहे हो?' उसने कहा, 'रेत के गड्ढे के पास वडेरा सिद्धलिंगय्या के बाग में।' उसने कहा, 'नहीं, मंजय्या के बाग में जाओ।' कांची ने जवाब दिया, 'मैं चार दिन पहले वहाँ गया था। और वो आदमी यहाँ आकर धमकी भी दे चुका था। मैंने उसके बाग में पेड़ों पर निशान नहीं लगाए हैं, जबकि सिद्धलिंगय्या के बाग में निशान लगाए हैं!' लेकिन उसने उसे उकसाते हुए कहा, 'अगर पके नारियल के गुच्छे न हों, तो कुछ कच्चे नारियल तोड़ लो। मंजय्या के बाग में जाओ, मंजय्या को दिखाओ कि कांची कैसा आदमी है।' कांची का मन नहीं हुआ। फिर भी, वह मान गया और एक रस्सी, एक मशाल और एक दरांती लेकर चल पड़ा।

लक्कू और मंजय्या ने शादी करने के बजाय साथ रहने का फैसला किया था और अब लक्कू कांची की मौत के बारे में मंजय्या से ही सच सुनना चाहती थी। वह जानती थी कि उसकी मौत को बदला नहीं जा सकता, फिर भी एक अनसुलझी जिज्ञासा उसे सता रही थी। वह दाईं ओर मुड़ी, अपना बायां हाथ उसकी छाती पर रखा और बोली: 'मुझे कुछ बताओ। ईश्वर की कसम खाकर कहो, मुझे सच बताओ।'

मुझे भगवान की कसम क्यों खानी चाहिए?

'मैंने ईश्वर के नाम पर शपथ ली और अदालत में गवाही दी कि कांची गलती से फिसलकर नारियल के पेड़ से गिर गया और उसकी मृत्यु हो गई। चाहे यह पाप हो या पुण्य, मैंने शपथ इसलिए ली क्योंकि मैं तुम्हें बचाना चाहती थी और तुम्हारे साथ रहना चाहती थी। कम से कम अब मुझे सच बताओ, उसकी मृत्यु कैसे हुई? चाहे उसकी मृत्यु किसी भी तरह से हुई हो, अब वह मेरा पति नहीं है, तुम मेरे पति हो।'

लक्कू ने मंजय्या की छाती पर रखे अपने हाथ को बढ़ाया, टटोला और उसका हाथ थाम लिया।

'सुनो लक्कू, मंजय्या की एक ही ज़बान है। कसम से, उस दिन मैं अपने घर में सोया था। लेकिन अगर मैंने सच कह दिया होता कि मैं उस दिन गाँव में था, तो वो कमीने पुलिसवाले बात को तोड़-मरोड़ देते। इसलिए मैंने कहा कि मैं तिपपुर में था, समझ लो।' फिर उसने लक्कू के हाथ दबाए और बोला: 'देखो लक्कू, अगर ये सच नहीं होता कि कांची सचमुच पेड़ से फिसलकर गिरी थी, तो क्या जज को पता नहीं चलता? तुम्हें जजों के बारे में क्या पता? उनके पास तो सर्वज्ञानी दिव्य दृष्टि होती है, ठीक वैसे ही जैसे शिव के माथे पर तीसरी आँख होती है।'

लक्कू ने उसकी बात पर यकीन किया हो या न किया हो, उसका सवाल अब शांत हो चुका था। फिर मंजय्या ने उसके गुप्तांगों को सहलाना शुरू किया, उसे उत्तेजित करते हुए कहा, 'लक्कू, थोड़ी देर सो जाओ।' पिछले पंद्रह सालों से उसे जल्दी सोने, आधी रात तक उठने और कांची के चोरी किए नारियल के गुच्छे लेकर लौटने तक जागते रहने की आदत हो गई थी। कांची चुपचाप दरवाजा खोलती और गुच्छे नीचे रखने के बाद फिर सो जाती थी। अब उसे नींद आने लगी और थोड़ी देर में ही वह गहरी नींद में सो गई और मुंह से सांस लेने लगी। मंजय्या का दिमाग घटनाओं को याद करने लगा। यह सच था कि उसने कांची को मारा था। उसने हत्या के बारे में सारी जानकारी सिर्फ वकील वेंकटरामय्या को ही दी थी। हालांकि उसने यह बात टिप्पुर के नागप्पा और बिलिकेरे के परमेश्वरय्या को बताई थी, लेकिन उसने सारी जानकारी नहीं दी थी। और शुक्र है कि उन्होंने उससे पूछा भी नहीं। अपनी उलझन, चिंता और जल्दबाजी में वह खुद भी बाद में हत्या की हर बात याद नहीं रख पाया था। जेल में रहते हुए भी उसका मन केवल भविष्य की योजनाओं और अटकलों में ही लगा रहता था। हत्या कैसे हुई, इस बात की याद उसके मन में नहीं आती थी। जब वह अपने उस नियम को याद कर रहा था कि जो व्यक्ति यादों में डूबा रहता है, वह कभी अपने काम में सफल नहीं होता, तभी कांची की हत्या की सारी बातें उसके दिमाग में आ गईं। मंजय्या को अपनी उपलब्धि का आनंद तब मिला जब उसे हत्या के आरोप से बरी होने के लिए अपनाए गए हथकंडे और कांची को मारने का रोमांच याद आया, वह भी तब जब कांची की पत्नी उसके बगल में सो रही थी और उसकी गर्दन पर उसका बायां हाथ थामे हुए थी। मंजय्या को याद आया: वह कांची के घर गया, उस भाषा में बात की जो कम से कम लक्कू

समझ सके, घर लौटा और खाना खाया। रात के दस बजे के बाद उसने अपने नौकर पुत्तेल्लैया को दरवाजा बंद करने और उसके लौटने का इंतजार करने को कहा। उसने अपनी कमर में हंसिया बाँधी, एक हाथ में मशाल और दूसरे हाथ में मोटा डंडा लिया और अपने बाग की ओर चल पड़ा। वह बाँस के झुरमुट के बीच, बाँस के द्वार के पास उकड़ू बैठ गया। उस मुद्रा को याद करके अब वह हँस पड़ा, क्योंकि वह उसे शौच करने की मुद्रा की याद दिला रही थी। सौभाग्य से लक्कू नहीं जागा। गाँव और बाँह के बीच दो फर्लांग की दूरी थी, और गाँव के तालाब के पहले नाले का पानी पार करना पड़ता था। चारों ओर घना अँधेरा था और आकाश में टिमटिमाते तारे थे। कहा जाता है कि जब कांची ने नारियल के गुच्छे चुराना शुरू किया था, तो वह अपने कुत्ते को साथ लाता था। लेकिन कुत्ता मेंढकों, खरगोशों और अन्य छोटे जानवरों को देखकर भौंकता था। इसलिए वह अकेले आने लगा और यह बात पूरे गाँव को पता थी। मंजय्या ने सोचा, अगर आज कोई कुत्ता होता, तो वह उसे सूंघकर ज़रूर भौंकता। अगर कांची सचमुच मर्द होता और मेरी बातें समझ गया होता, तो वह आज मेरे बाँह पर ज़रूर आता। अगर वह नहीं समझ पाया, तो उसकी पत्नी ने मेरा संदेश उसे समझाया होगा। क्या वह अपने पति को इसका अर्थ समझाएगी या अपने तक ही रखेगी? अगर ऐसा होता, तो भी यह बेहतर सौदा होता। मंजय्या को ऐसा सोचकर एक तरह की तसल्ली मिली; जैसे उस कमीने ने मेरे बगीचे में घुसकर फूलों की गुच्छियाँ नीचे गिरा दीं, वैसे ही वह भी घुसकर उस कमीने की पत्नी के पास जाएगा और बीज बोएगा। अगर उस मूर्ख को समझ आ गई होती, तो वह आज आ जाता। अगर नहीं, तो वह कभी मेरे बगीचे में कदम नहीं रखेगा। उसने लक्कू का कहीं इंतज़ार करने और उससे बात करने का फैसला किया।

उसे इतना आत्मविश्वास था कि देवताओं के लिए भी उसके तर्क पर अविश्वास करना असंभव था, और वह इतना प्रसन्न था कि उसे सिगरेट पीने का मन हुआ। लेकिन वह सावधान हो गया कि अगर उसने सिगरेट जलाई तो उसके बगल में लेटी वह कुतिया जाग जाएगी और उसकी यादें चकनाचूर हो जाएंगी। मंजय्या को याद आया कि उसने अपने बगीचे में घुस आई कांची को कैसे मारा था, और वह उस याद को संजोने के लिए सिगरेट पीने का सुख त्यागने का फैसला कर लिया।

कुछ देर बाद मंजय्या को लगा कि यहाँ बैठे रहना ठीक नहीं है। कांची अस्सी-सौ नारियलों के गुच्छे लेकर आएगा और वह बाग के फाटक से ही बाहर जाएगा।

हालाँकि मंजय्या को शक था कि नई बिछाई गई कंटीली बाड़ से निकलना मुश्किल होगा, फिर भी उसने सोचा कि कांची जैसे फुर्तीले शरीर वाले आदमी के लिए कंटीली बाँस की बाड़ में छेद करना मुश्किल नहीं होगा। मंजय्या ने सोचा कि कांची बाग के फाटक से अंदर नहीं आएगा, और वह कंटीले बबूल के पेड़ के पीछे खड़ा हो गया, ताकि उसे नारियल के पेड़ों की चोटियों का जायजा लेने में आसानी हो। गाँव में सभी जानते थे कि कांची के पास एक लंबी और शक्तिशाली मशाल है, जिसकी रोशनी फैलती नहीं और सिर्फ गुच्छों पर ही पड़ती है। मंजय्या को पूरा यकीन था कि कांची उस मशाल के बिना नहीं आएगा। वह तीन घंटे से ज़्यादा इंतज़ार करता रहा। कांची का कोई अता-पता नहीं था। न सिर्फ मंजय्या की घड़ी, बल्कि आसमान के तारे भी बता रहे थे कि आधी रात हो चुकी है। कांची अभी तक नहीं आया था। उसने सोचा, शायद उस कमीने में मंजय्या की ज़मीन में घुसने की हिम्मत नहीं थी। लेकिन मंजय्या थोड़ा और इंतज़ार करना चाहता था। क्योंकि उसके इस तर्क पर शक करने का कोई कारण नहीं था कि अगर उसे आना ही था, तो उसी दिन आना था। लगभग एक घंटे बाद, उसने एक नारियल का पेड़ देखा जो ऊपर से नीचे तक प्रकाश से नहाया हुआ लग रहा था और फिर प्रकाश गायब हो गया। हाँ, उसका अनुमान सही था। डर नहीं, उत्साह के कारण उसके हाथ-पैर हल्के से काँप रहे थे। यह मंजय्या कभी डरता नहीं था और किसी भी परिस्थिति में हिम्मत नहीं हारता था। मंजय्या एक निडर पुरुष है। हाँ, उस कमीने ने मंजय्या के शब्दों को समझ लिया था। ऐसा सोचते हुए, वह कंटीले बबूल के पेड़ से होकर बाग के द्वार तक आया और दूसरे बाँस के जंगल में घुस गया। कुछ भी दिखाई नहीं दिया। कांची को अपनी टॉर्च दोबारा जलाने की ज़रूरत नहीं पड़ी। उसकी नज़र इतनी तेज़ थी कि वह हर चीज़ को पलक झपकते ही बहुत बारीकी से देख लेता था। ऐसा सोचते हुए, मंजय्या ने अपनी कमर में बंधी दरांती को छुआ और राहत महसूस की। फिर उसने लाठी को मजबूती से पकड़ लिया। मंजय्या सोचने लगा कि इतने ऊँचे पेड़ पर चढ़ने, गुच्छे काटने, उन्हें नीचे उतारने, बाँधने और कंधे पर लादने में उसे कितना समय लगेगा? क्या उसे एक ही पेड़ से अपनी ज़रूरत के नारियल मिल जाएँगे? या उसे दो पेड़ चढ़ने पड़ेंगे? जब मंजय्या घूर रहा था, तभी एक और नारियल का पेड़ पहले पेड़ की तरह ही प्रकाश से जगमगा उठा। मंजय्या समझ गया कि कांची ने पहले पेड़ का काम पूरा कर लिया है। वह पेड़ कटहल के पेड़ के बगल में था। हर गुच्छे में कम से कम पचास नारियल थे। किसी भी आदमी

के लिए सौ से ज़्यादा नारियल उठाना मुमकिन नहीं था। इसलिए, मंजय्या ने हिसाब लगाया कि यह आखिरी पेड़ होगा जिस पर वह चढ़ेगा और अनुमान लगाया कि उसके पास सिर्फ़ दस से पंद्रह मिनट बचे हैं। उसने मशाल नहीं जलाई और अपनी घड़ी देखी। जब वह समय गिन रहा था, तभी उसने उस आदमी की हाँफने और साँस फूलने की आवाज़ सुनी जो दो पेड़ नीचे उतरकर अपने कंधे पर सौ नारियल का भार ढो रहा था, हालाँकि वह बिल्ली की तरह चुपचाप चल रहा था। मंजय्या यह जानता था और बिना साँस लिए वहीं खड़ा रहा। कांची नारियल के गुच्छों को अपने बाएं कंधे पर आगे-पीछे करके ढो रहा था और खुद को घसीटते हुए बाग के द्वार तक जा रहा था। मंजय्या ने जानबूझकर द्वार आधा खुला रखा था। कांची के द्वार पार करने से पहले ही मंजय्या उसके पीछे आ गया। मंजय्या के कदमों की आहट सुनकर कांची को एहसास हुआ कि कोई उसके पीछे है और वह मुड़ा। लेकिन वजन के कारण वह धीरे-धीरे पीछे हट रहा था। इसी बीच मंजय्या ने अपना डंडा उठाया और कांची के सिर पर वार किया, जिससे कांची गिर पड़ा। तुरंत मंजय्या ने अपनी टॉर्च जला ली। कांची के सिर के ऊपरी हिस्से से खून बह रहा था, जो बीच से फट गया था। नारियल के गुच्छे कंधे से फिसलकर ढेर हो गए। वह कराह रहा था और अपने हाथों और पैरों को हिलाने के लिए संघर्ष कर रहा था। मंजय्या ने फिर से अपनी टॉर्च जला ली और एक मिनट तक लगातार कांची को देखता रहा। चोट से खून तेजी से बह रहा था। कराहना कम हो गया था, लेकिन हाथों और पैरों का छटपटाना जारी था। मंजय्या ने समय बर्बाद न करने का निश्चय किया, कांची को अपने कंधों पर उठाया और उपवन में स्थित झोपड़ी की ओर चल पड़ा। कांची दुबला-पतला दिखने के बावजूद भारी-भरकम था। मंजय्या को आश्चर्य हुआ कि यह कमीना उसी दिन उसके उपवन में घुसने के लिए इतना अड़ियल क्यों है! जब तक मंजय्या कांची को उपवन के बीचोंबीच एक पेड़ के नीचे लाकर रखा, तब तक कांची मर चुका था। फिर मंजय्या झोपड़ी के पास गया, नींव के पत्थर के रूप में इस्तेमाल होने वाला एक पत्थर ढूंढा, उसे लाया और थोड़ा सा ज़मीन में गाड़ दिया, ताकि वह ज़मीन से चार इंच ऊपर रहे। फिर उसने शव का सिर उस पर रखा, सिर उठाया और फिर से पत्थर पर पटक दिया। फिर वह उपवन के द्वार पर लौटा, कांची द्वारा पेड़ पर चढ़ने के लिए लाई गई रस्सी ली और एक पेड़ के पास आया। मंजय्या ने अपनी कमीज और धोती उतार दी, रस्सी को अपने पैरों में बांधा और पेड़ पर चढ़ गया। सौभाग्य से वहाँ दो पके हुए नारियल के गुच्छे थे। उसने गुच्छों

को काटा और नारियल नीचे गिर गए। नीचे उतरते समय उसे ख्याल आया कि नारियल शव पर न गिरें। सौभाग्य से, ऐसा नहीं हुआ था। फिर उसने अपने पैरों से रस्सी उतारी, उसे पेड़ की जड़ के पास फेंका, वहाँ से चल पड़ा, बाग के द्वार तक आया, कांची की मशाल, लंबी रस्सी और दरांती लाया, उसे शव के पास मेड़ पर रखा, बंधे हुए नारियलों के गुच्छों को अपने कंधे पर उठाया, बाग का द्वार आधा बंद किया और सीधे अपने घर चला गया। पुट्तेल्लैया, जो इंतज़ार कर रहा था, ने दरवाजा खोला। उसकी मदद से मंजय्या ने नारियल खोपरा रखने की जगह पर रख दिए। उसने अपने कपड़ों पर नज़र डाली। वे खून से सने हुए थे। उसने जल्दी से कपड़े बदले और उन्हें एक थैले में रख दिया। उसने पुट्तेल्लैया का हाथ पकड़कर कहा, 'देखो पुट्तेल्लैया, तुम हमारे घर में पले-बढ़े हो, हमारा खाना खाकर। इन नारियलों के बारे में किसी को मत बताना जो मैं अभी लाया हूँ। कल सुबह इनके छिलके उतार कर इन्हें कहीं ले जाना। जो भी तुमसे पूछे, उसे बताना कि मैं दो दिन पहले यहाँ से चला गया था।' आज रात जो कुछ हुआ, उसके बारे में किसी को मत बताना।' मंजय्या ने नौकर से उसकी माँ की कसम खिलवाई। वह अंधेरे में गाँव छोड़कर चला गया।

मंजय्या ने इस दृश्य को अपने मन में बार-बार दोहराया – एक-दो बार नहीं, बल्कि तीन बार, शुरू से अंत तक; उसने उसे क्यों मार डाला? उसके सिर पर वार करने के बजाय, वह उसके पैर तोड़ सकता था, और फिर पुलिस के पास जाकर कांची को गिरफ्तार करवा सकता था या गाँव के बुजुर्गों की सभा बुला सकता था। अगर घुटने टूट जाते, तो पेड़ पर चढ़ना तो दूर, कांची अपने लंगड़े पैरों से नारियल के गुच्छे भी नहीं उठा पाता। फिर भी, मंजय्या कांची को क्यों मारना चाहता था? अगर कांची जैसा चोर मंजय्या के बाग में घुस जाता, तो गाँव में उसकी प्रतिष्ठा और मान-सम्मान का क्या होता? उसने खुद को यह कहकर सही ठहराया कि उसने जो किया वह सबसे बुद्धिमानी भरा और उचित कार्य था, क्योंकि अब आसपास के सभी छप्पन गाँव जानते थे कि अगर कोई कमीना मंजय्या के बाग में घुसने की हिम्मत करेगा तो वह ज़िंदा नहीं बचेगा। अचानक लक्कू ने खर्राटे लेना बंद कर दिया। उसने मंजय्या के कंधे पर धक्का देकर उसे जगाने की कोशिश की और बड़बड़ाते हुए बोली, 'उठो, चाँद डूब गया है। अँधेरा हो गया है, उठो।' मंजय्या को कुछ समझ नहीं आया। उसने पूछा, 'क्यों, क्या बात है?' लक्कू ने कहा, 'तुमने कहा था कि आज रंगाशेट्टी के बाग में जाओगे। उठो, वरना देर हो जाएगी।' इतना

कहकर वह अचानक उठ बैठी। आधे मिनट बाद ही उसे अपनी स्थिति का एहसास हुआ, एक बार हल्की सी हंसी, जम्हाई ली और फिर सो गई। मंजय्या मन ही मन मुस्कुराया। उसे याद आया कि कैसे उसने उसी रात परमेश्वरय्या से बात करते हुए लक्कू से मिलने का फैसला किया था, क्योंकि उसने सोचा था कि अगर वह लक्कू को अपने पक्ष में गवाही देने के लिए मना ले, तो वह निश्चित रूप से बरी हो जाएगा। उसे परमेश्वरय्या को अपने पक्ष में करने का भरोसा नहीं था। अगर वह अपने प्रयास में सफल भी हो जाता, तो परमेश्वरय्या उसके ससुर थे। मंजय्या को कांची की पत्नी को बहला-फुसलाकर, फुसलाकर और अपनी यौन शक्ति का एहसास कराकर अपने वश में करने के अपने 'वीरतापूर्ण कार्य' पर गर्व हो रहा था। यह बात वकील वेंकटरामय्या के सपने में भी नहीं आई थी। जब उसने वकील को हत्या किए गए व्यक्ति की विधवा को अपने पक्ष में करने का अपना कारनामा सुनाया, तो वकील ठहाका लगाकर हँसा और उंगली चटकाते हुए बोला, 'चलिए, न्यायाधीश से पुलिस को अनुशासित करने के लिए कहें।' अब मंजय्या कांची की हत्या करने की बात कहने से ज़्यादा इस बात पर विचार करने लगा कि उसने लक्कू को कैसे वश में किया और उससे अपने पक्ष में गवाही दिलवाई। यह गुरुवार का दिन था, मंजय्या द्वारा कांची की हत्या किए जाने के बाद पाँचवीं रात। रात के आठ बज रहे थे, अमावस्या की काली रात। लक्कू की बड़ी बहन और उसके दो बच्चे हसन से उसके घर आए थे। हसन में पढ़ रही उसकी बेटी भी आई थी। अपने पिता की हत्या से दुखी होकर वह अपनी माँ को सांत्वना देना चाहती थी। लड़की सोलह वर्ष की थी। लक्कू का जीजा हसन में एक आरा मिल में कुली का काम करता था और उसकी बहन कॉफी सुखाने के कारखाने में काम करती थी। रात के आठ बज रहे थे। लक्कू घर के पीछे बने गौशाला में भैंसों का दूध दुह रही थी और जब मंजय्या गौशाला में दाखिल हुआ तो वह अकेली थी। लालटेन की रोशनी से दीवार पर परछाई पड़ी और वह पीछे मुड़ी। उसे देखते ही उसका चेहरा पीला पड़ गया और वह डर से कांपने लगी। लेकिन इससे पहले कि वह चिल्लाने के लिए मुंह खोल पाती, मंजय्या उसके पास आया, उसे पकड़ लिया और उसका मुंह दबाकर उसके कानों में फुसफुसाया, 'सुनो लक्कू, मुझे पता है तुम मुझसे नाराज़ हो। तुम मुझे जितना चाहो गाली दो। मुझे चप्पलों से मारो। मैं यहां तुमसे बात करने आया हूं। तुम्हारी बहन और बेटी घर पर हैं और हम वहां बात नहीं कर सकते और मैं तुम्हें अपने घर आने के लिए नहीं कह सकता क्योंकि सबको पता चल जाएगा।' मैं देवी

मारम्मा के चरणों को छूकर, हृदय पर हाथ रखकर शपथ लेता हूँ कि मैंने कांची को नहीं मारा। वह फिसलकर पेड़ से गिर गया और उसकी मृत्यु हो गई। पुलिस मेरी जासूसी कर रही है और मुझे पकड़ने का इंतज़ार कर रही है, क्योंकि वे मुझसे नफरत करते हैं। मैं यहाँ इसी बारे में बात करने आया हूँ। तुम यह बात किसी को मत बताना। मेरा विश्वास करो लक्कू। दूध अंदर ले जाने के बाद, शौचालय जाने का बहाना बनाकर बाहर आना, उस कैक्टस वाली गली में जो भारतीय बीच के पेड़ के पास है। मेरी बात सुनने के बाद, तुम जो चाहो कर सकती हो। तुम यह जानती हो: मंजय्या कभी अपना वादा नहीं तोड़ता। मैंने कुछ भी गलत नहीं किया है। मेरा चेहरा देखो, तुम्हें पता चल जाएगा।' यह कहकर उसने लक्कू के कंधों को थाम लिया। वह उसे घूर रही थी। उसकी आँखों में चिंता, भय और अनिश्चितता भरी हुई थी। मंजय्या ने उसकी आँखों में देखा, और इससे उसके मन में उलझन पैदा हो गई। उसने उस पर अपना जादू कर दिया था। फिर उसने उसके हाथ पकड़े और विनती की, 'लक्कू, तुम्हें आना ही होगा, मेरे हाथ पकड़ो और 'हाँ' कहो।' उसने उसके हाथों को कसकर दबाया और कहा, 'मैं यहाँ और नहीं रुक सकता। जो कुछ मेरे पास है, वह तुम्हारा है। इसीलिए भगवान ने हम दोनों के साथ ऐसा किया है। उन्होंने मेरी पत्नी को मुझसे अलग कर दिया है और तुम्हारे पति को मुझसे छीन लिया है। मैं यहाँ ये बातें करने आया हूँ।' उसने फिर से उसके हाथों को दबाया, गौशाला से बाहर निकला, पिछवाड़े में गया और इतनी खामोशी से दीवार से नीचे उतर गया कि कुत्तों को भी सुनाई नहीं दिया। किले के गड्ढे से नीचे उतरते हुए, जब मंजय्या पेड़ के पीछे कैक्टस की गली में इंतजार कर रहा था, तो उसके मन में यह ख्याल आया कि लक्कू जरूर आएगी। ऐसे मामलों में उसका मन कब गलत अनुमान लगाता था या गलत समझता था? आज तक कौन सी स्त्री उसके कहने पर, उस समय और उस जगह पर आने से चूक गई थी? क्या उसकी यह उम्मीद गलत थी कि कांची जरूर उसके बगीचे में आएगी और लक्कू उसे जरूर भेजेगी? लेकिन जब लक्कू नहीं आई, तो मनजय्या बेचैन हो गया। ऐसी स्थिति में भला कौन मनजय्या जैसा साहस दिखा सकता था? वह वहीं बैठकर इंतज़ार करता रहा। लक्कू को भैंसों का दूध दुहना था, रागी के गोले तैयार होने पर खाना खत्म करना था, और उसके बाद ही वह शौचालय जाने के बहाने बाहर आ सकती थी। इसके अलावा, अगर उसकी बड़ी बहन उसके साथ आना चाहती, तो अंधेरा होने के कारण लक्कू को उसे भी रोकना पड़ता। मनजय्या ने सोचा, समय लगेगा, उसने

टॉर्च जलाई, अपनी कलाई घड़ी देखी, और सिगरेट जलाए बिना ही अंधेरे में अकेला इंतज़ार करने लगा, इस डर से कि कहीं सिगरेट की गंध न फैल जाए। अचानक उसे शक हुआ। यह जानते हुए कि मैं यहाँ इंतज़ार कर रहा हूँ, इस औरत ने शायद गाँव में डेरा डाले पुलिस को सूचना दे दी होगी और मुझे फँसाने की साज़िश रची होगी। मनजय्या इंतज़ार करता रहा, उसे अपनी कमर में बंधी हंसिया को छूने का मन कर रहा था। तभी, चप्पलों की आवाज़ आई। एक औरत के कदमों की आहट। वह खड़ा हो गया। वह दूर से ही समझ गया था, यह लक्कू ही थी। वह उसके पास गया और बोला, 'आओ, लक्कू, उस बीच के पेड़ के पास चलते हैं। यहाँ कोई शौच करने आ सकता है और हमें देख सकता है।' वह तुरंत क्रोधित हो उठी, 'तू व्यभिचारी हरामखोर, तूने मेरे पति को मार डाला, अब मुझे भी मारने आया है?' ऐसा कहते हुए उसने अपना दाहिना हाथ उठा लिया। अगर वह एक पल के लिए भी लापरवाह होता, तो वहीं उसकी हंसिया से मारा जाता। वह झट से मुड़ा, उसका हाथ पकड़ा, हंसिया छीन ली और लक्कू चीखने लगी, 'अय्यो, अय्यो,' लेकिन मंजय्या ने उसका मुँह बंद कर दिया और बोला, 'चलो, यहाँ बात न करें। मैं तुम्हें कुछ बताने आया हूँ। उस बीच के पेड़ के पास आओ। अगर मैं तुम्हें मारने आया होता, तो गौशाला में ही मार डालता। क्रोध में बोलने पर सच कभी नहीं निकलता। आओ लक्कू,' उसने कहा और उसे गले लगाते हुए आगे बढ़ गया। मंजय्या ने सोचा, यह कभी झूठ नहीं था कि शरीर के संपर्क में आने से मन और हृदय में ऐसा परिवर्तन होता है मानो उनमें बिजली का करंट दौड़ गया हो। जब मंजय्या ने लक्कू को धीरे-धीरे अपनी गोद में बिठाया, तो उसने उससे दूर भागने की कोशिश नहीं की। वह रो रही थी, सिसक रही थी, लेकिन उसके साथ चलती रही। जब वे बीच के पेड़ के नीचे पहुँचे, तो उसने उसके कंधे पर हाथ रखकर उसे बैठने को कहा। लक्कू अब भी अड़ी रही और बोली, 'नहीं, मैं नहीं बैठूँगी। क्यों बैठूँ? मुझे आपसे क्या बात करनी है? मुझे मेरा हंसिया दो। मैं तुम्हारा गला काट दूँगी, तुम्हारा खून बहा दूँगी और उसे अपने पति की आत्मा को अर्पित कर दूँगी।'
मंजय्या ने शांत भाव से कहा, "रुको, मैं लाता हूँ। यह कहीं खेत के पास, एक फर्लांग दूर गिर गया है। तुम यहीं रुको। मैं लाता हूँ। मैं तुम्हारे सामने सिर झुकाता हूँ और बलि देने के लिए देवी मारम्मा के सामने बकरे के बच्चे की तरह खड़ा होता हूँ। हाँ, तुम मेरा सिर काट सकती हो। उसके बाद क्या करोगी?" लक्कू ने अपने हाथ में पकड़े पानी के घड़े को मंजय्या के सिर पर दे मारा, लेकिन वह उसके कंधे

पर गिरा और ज़मीन पर लुढ़क गया। पानी बह गया। फिर वह लगातार उसे पीटने लगी और बोली, "तेरा वंश नष्ट हो जाए। कमीने। मैं लक्कू नहीं हूँ, अगर मैं तुझे फाँसी पर न लटकाऊँ।" मंजय्या को अब याद आया, कितना बुद्धिमानी का काम था, इतनी शांति से उसके हाथों पिटना! शारीरिक श्रम से सख्त हुए हाथों के वो तेज़ वार थे। उसकी पसलियों में दर्द होने लगा, लेकिन उसने किसी तरह खुद को संभाला। लक्कू और भी क्रोधित हो गई, नीचे झुकी, अपने बाएं पैर से चमड़े की चप्पल उतारी और उसके सिर, पीठ, बगल और कंधों पर लगातार मारने लगी। दर्द सहन न कर पाने पर जब वह कराह उठा, तो उसने उसे और भी मारा। जब चप्पल उसके हाथ से फिसल गई, तो वह समझ नहीं पा रही थी कि क्या करे, और रोने लगी। जब अंधेरे में केवल उसकी सिसकियाँ ही सुनाई दे रही थीं, तब मंजय्या ने कहा, 'अंधेरे में चप्पल तुम्हारे हाथ से गिर गई। तुम्हारे दाहिने पैर में दूसरी चप्पल है। उसे उठाओ और उससे भी मुझे मारो। तुम चाहे जितना भी मारो, मैं तुम पर हाथ नहीं उठाऊंगा। नहीं, मेरे हाथ तुम्हें मारने के लिए कभी नहीं उठेंगे, कभी नहीं, समझ लो।' जब मंजय्या ने ये शब्द कहे, तब लक्कू व्याकुल थी और कुछ समझ नहीं पा रही थी। मंजय्या जानता था कि उसकी आँखों में आँसू हैं। थोड़ी देर बाद उसने कहा, 'मैं टॉर्च जलाता हूँ, हंसिया ढूंढता हूँ और लाता हूँ। मैंने तुम्हें पहले ही बता दिया था।' मैं आपके सामने बकरे के बच्चे की तरह सिर झुकाती हूँ, और आप मेरा सिर काट देते हैं। मैं आपसे कभी नाराज़ नहीं होऊँगी, चाहे आप मुझे मार ही क्यों न डालें। लेकिन मरने से पहले, मैं आपसे कुछ बात करना चाहती हूँ, इसलिए आई हूँ। पहले आप यहाँ बैठिए और मेरे सवाल का जवाब दीजिए, फिर मैं आपके लिए हंसिया लाऊँगी।' यह कहकर मंजय्या ने उसकी बाहें दबाकर उसे जोती हुई ज़मीन पर बिठा दिया। कीचड़ उस पानी से गीला था जो उसने मंजय्या के सिर पर कलश फोड़कर बहाया था। उसके बैठने के बाद, उसने अपनी जेब से एक रुमाल निकाला और उसकी आँखें पोंछीं और पूछा, 'क्या तुम जानती हो कि मैंने तुम्हारी आँखें क्यों पोंछीं? ताकि तुम मेरा चेहरा साफ़ देख सको। मुझे देखो, शायद तुम्हें पता चल जाए कि मेरे मन में क्या है।' उसने उसका हाथ पकड़ने के लिए हाथ बढ़ाया, लेकिन उसने अपना हाथ छुड़ाने की कोशिश की। लेकिन मंजय्या ने हार नहीं मानी। उसने उसका हाथ कसकर पकड़ा और दबाया और थोड़ी देर बाद उससे पूछा, 'तुमने उसी रात कांची को क्यों भेजा था, जिस रात मैं तुम्हारे घर आया था?'

लक्कू ने कोई जवाब नहीं दिया। वह समझ गया कि उसकी आँखें उसे घूर रही हैं। उसने फिर पूछा, 'बताओ, तुमने उसे क्यों भेजा? मुझे पक्का पता है कि वह अपनी मर्जी से नहीं आया।' फिर भी वह कुछ नहीं बोली। उसने कहा, 'सिर्फ यही जानने के लिए मैंने तुम्हें यहाँ बुलाया था। बताओ, तुमने उसे क्यों भेजा?'
'तुम्हारी हिम्मत कैसे हुई ऐसे अपमानजनक शब्द बोलने की जो मुझे अंदर तक चोट पहुंचाते हैं?'
'कांची को मेरी बात समझ नहीं आई, लेकिन तुम तो समझदार और होशियार हो, समझ गए। मुझे पता था वो बेवकूफ है। अगर समझ गए थे तो चुप रहना चाहिए था। बाद में हम दोनों कहीं ऐसी ही जगह मिल सकते थे और बात कर सकते थे।'
'मुझे आपसे क्या बात करनी थी?'
'हम उन चीजों के बारे में बात कर सकते थे जो थीं ही नहीं। लेकिन उसे भेजना आपकी गलती थी। ठीक है... लगता है आपने पुलिस को बता दिया है कि मैंने कांची की हत्या की है। क्या आपने मुझे उसे मारते हुए देखा था? क्या कोई कमजोर होकर अंधेरे में पेड़ से गिरकर मर नहीं जाता? क्या यह सही है कि आप अपनी गलती छुपाएं और सारा दोष मुझ पर डालें और मुझ पर आरोप लगाएं?'
मैंने क्या गलती की है?
'ठीक है, तुमने कोई गलती नहीं की है, लेकिन मैंने भी नहीं की है। मैं तुम्हें कुछ बताता हूँ। क्या तुम सुनना चाहोगे?'
'जल्दी करो। मेरी बहन इंतजार कर रही होगी। मेरी बेटी भी परेशान होगी कि मुझे इतनी देर क्यों हो गई।'
'अपना हाथ मेरे हाथ पर रखो और कसम खाओ,' उसने कहा और उसके करीब आ गया। वह इतना करीब बैठ गया कि उसकी जांघ उसकी जांघ से छू गई, उसने उसका हाथ पकड़ा, उसे दबाया और बोला, 'लोग कहते हैं कि यह मंजय्या लंपट और दुष्ट है। क्या तुम इस पर विश्वास करती हो?' लक्कू ने कोई जवाब नहीं दिया। मंजय्या ने कहा, 'चाहे तुम मानो या न मानो, मैं सच बताऊंगा। लोग मुझे बुरा आदमी क्यों कहते हैं? क्योंकि मैंने अपनी पत्नी को त्याग दिया। क्या तुम जानती हो कि मैंने उसे क्यों छोड़ा? मैं एक जमींदार और किसान हूँ। जो स्त्री मेरी पत्नी बनकर आई, उसने भैंसों की देखभाल नहीं की और न ही उनका दूध दुहा। वह अपने पति के लिए बाग में अनाज नहीं लाती थी। क्या घर तब समृद्ध होता है जब गृहिणी मेले में बिकने वाली फिल्मी गुड़िया जैसी हो? जब मैंने उसे काम करने को कहा, तो

उसने कहा कि वह अपने पिता के घर जाएगी। मैंने कहा, जाओ। सचमुच, यह सच है कि मैंने तुम्हें वासना भरी निगाहों से देखा। अभी भी मैं तुम्हें देखता हूँ और भविष्य में भी मैं तुम्हें वासना भरी निगाहों से देखूंगा।' काश मुझे तुम्हारे जैसी पत्नी मिल पाती। तुम कितनी भैंसें पालती हो, कितना दूध निकालती हो? कितना मक्खन बेचती हो? अगर मेरे जैसे जमींदार को तुम्हारे जैसी पत्नी मिल जाए, तो मैं कितना समृद्ध हो सकता था! मैं इन सब बातों से तंग आ चुका हूँ। अब मैं तुम्हें एक बात बताता हूँ, क्या तुम सुनोगी?' जब मंजय्या ने यह कहकर बोलना बंद किया, तो लक्कू के मन में 'हाँ' कहने का ख्याल भी नहीं आया। मंजय्या ने खुद कहा, 'अगर तुम हाँ कहोगी, तो मैं तुम्हें बताऊँगा।' तब लक्कू ने 'हाँ' कह दिया। तब तक मंजय्या समझ चुके थे कि उसका दिल उनके लिए पिघल चुका है। वह और करीब आए, अपनी जांघ लक्कू की जांघ से सटाकर बैठ गए और बोले, 'मुझे अदालत में बरी कर दिया जाएगा। पुलिस कुछ नहीं कर पाएगी। तुम्हें किसी बात की चिंता करने की जरूरत नहीं है। जेल से बाहर आने के बाद, हम साथ रहेंगे। तुम मेरी पत्नी हो और मैं तुम्हारा पति। तुम्हारी बेटी मेरी बेटी भी है।' भविष्य में हमारे जितने भी बच्चे होंगे, उन सबकी बड़ी बहन वही होगी। लेकिन अभी के लिए, यह बात किसी को मत बताना, अपनी बहन को भी नहीं। इसे राज़ ही रहने दो। मुझे जातिगत रूढ़ियों की परवाह नहीं। मैं पूरे गाँव को बता दूँगा कि लक्कू मेरी पत्नी है। देखो, यह बीच का पेड़ जो दीपक को तेल देता है, गवाह है। तुम्हें इसे स्वीकार करना ही होगा।

उसने झटके से अपना हाथ छुड़ा लिया और बोली, 'तुम क्या कह रहे हो? तुम्हारी हिम्मत कैसे हुई?'

'क्यों? क्या गलत है? अगर गलत है तो बता दो। क्या तुम्हारे साथ रहना अच्छा लगता है, यह कहना गलत है? अगर तुम्हें पसंद नहीं है, तो चलो बांसुरी और ढोल बजाने वालों के साथ विधिपूर्वक विवाह करते हैं। मैं तुम्हारे लिए सोने के हार, चेन, झुमके, चूड़ियाँ, कंगन और बालों के लिए गहने लाऊँगा। वैसे भी तुम दुल्हन जैसी लग रही हो। अब, मेरा चेहरा देखो।' मंजय्या ने टॉर्च जलाई, लक्कू का चेहरा ऊपर उठाया ताकि दोनों के चेहरे दिख सकें और कहा, 'मेरा चेहरा ठीक से देखो। अगर हम शादी करते हैं, तो तुम्हें मेरे जैसा बेटा मिलेगा।' ये शब्द सुनकर लक्कू पूरी तरह से मोहित हो गई और मंजय्या यह जानता था। लक्कू की आँखें धरती पर टिकी थीं। मंजय्या ने तीन लड़ियों वाली सोने की चेन का एक पैकेट निकाला, उस

पर टॉर्च की रोशनी डाली, उसे दिखाते हुए कहा, 'देखो, मैंने इसे परमेश्वरय्या की बेटी, मेरी पत्नी सावित्री को देने के लिए बनवाया था। उसने मुझे यह कहकर छोड़ दिया कि वह मेरे घर का कृषि कार्य नहीं करेगी।' इसलिए मैंने इसे संभाल कर रखा था। इसे विवाह में बंधी हुई "ताली" समझो। मैं इस बीच के पेड़ की, गाँव की देवी मारम्मा की, तुम्हारी और अपनी कसम खाता हूँ,' मंजय्या ने कहा और लक्कू के गले में जंजीर डाल दी, उसे अपने करीब खींचा और कसकर गले लगा लिया। जब वह असमंजस में थी और ज़ोर-ज़ोर से साँस ले रही थी, तब उसने कहा, 'लक्कू, आज तुम मेरी पत्नी बन गई और मैं तुम्हारा पति।' इससे पहले कि वह समझ पाती कि क्या हो रहा है, मंजय्या ने उसे गले लगाया, उसे पलटा, उसके ऊपर चढ़ गया और बिना कुछ कहे या विरोध किए सीधे उसके भीतर प्रवेश कर गया। 'नहीं, नहीं, ऐसा मत करो। मैं अभी भी अपने पति की मृत्यु से अपवित्र हूँ।' लेकिन मंजय्या ने उसका मुँह अपने मुँह से बंद कर दिया था। जब मंजय्या को यह याद आया, तो वह अपनी बाईं ओर मुड़ा और अपनी बाईं भुजा पर सो रही और खर्राटे ले रही लक्कू को देखा और मन ही मन कहा, 'अगर तुम किसी स्त्री के साथ यह काम पूरा कर लेते हो, तो वह कभी सौदेबाजी नहीं करेगी या तुमसे भागने की कोशिश नहीं करेगी।' यही एक दवा है जिससे वे आज्ञाकारी बने रहेंगे। वह गर्व से फूल गया, मानो यह उसकी कोई महान खोज हो। मंजय्या के मन में सारी बातें घूम रही थीं। शुरुआत में उसके लिए अपने नीचे दबी लक्कू के संघर्ष को नियंत्रित करना आसान नहीं था। वह उससे भागने की कोशिश कर रही थी। लेकिन धीरे-धीरे उसने अपना संघर्ष छोड़ दिया, खुद को ढीला छोड़ दिया, आराम किया और खुद को सौंप दिया। उसने इस बदलाव को भांप लिया, उसकी नब्ज़ें देखीं, अपनी कुशलता का प्रयोग किया और जब वह भी उत्तेजित होकर कराहने लगी, तो उसने अपने होंठ उसके कानों में रखे और कहा, 'लक्कू, मैं तुम्हारी कसम खाता हूँ, सच में कांची फिसल गई, पेड़ से गिर गई और मर गई। पुलिस ने मुझ पर आरोप लगाया है क्योंकि मैंने उन्हें रिश्वत नहीं दी। तुम मेरी पत्नी हो, क्या तुम्हें सच नहीं पता?' मंजय्या ने बार-बार उसके कान में फुसफुसाते हुए यह बात कही और जब वह अपने चरम पर थी, तब उसे यह बात उसके दिमाग में बिठा दी। अब उसे यकीन था कि लक्कू की गवाही सिर्फ उसके पक्ष में ही होगी। वह जानता था कि पुलिस इंस्पेक्टर बी.एस. नारायण मूर्ति, जो एक बेहद सख्त अधिकारी माने जाते थे, पूरी तरह नाकाम हो जाएंगे और उन्हें अदालत में अपनी गलती माननी पड़ेगी। इसी के

साथ, मंजय्या को अदालत का फैसला याद आया, 'पुलिस ने अपना कर्तव्य ठीक से नहीं निभाया है। अभियोजन पक्ष निर्णायक सबूत पेश करने में विफल रहा है और यह निश्चित रूप से तय करना संभव नहीं है कि मृत व्यक्ति कांची अंधेरी रात में नारियल चुराते समय पेड़ से गिर गया था या उसकी हत्या की गई थी। अगर हम यह मान भी लें कि उसकी हत्या हुई थी, तो मृतक की विधवा की गवाही को ध्यान में रखते हुए, यह तर्क कि मंजय्या ने यह हत्या की है, स्वीकार नहीं किया जा सकता। मृतक की विधवा की गवाही के बिना भी, आरोपी पर हत्या का आरोप संदेह से परे साबित नहीं किया जा सकता। पुलिस ने खुद स्वीकार किया है कि मृत व्यक्ति कांची सबके बागों से नारियल चुराता था। पुलिस को इस संभावना की जांच करनी चाहिए थी कि किसी ने कांची की हत्या करके शव को मंजय्या के बाग में रख दिया हो।' जब मंजय्या को अदालत का यह फैसला याद आया, तो वह विजयी हंसी हंस पड़ा। इस आवाज से लक्कू जाग गया। जैसे चौंककर वह उठ बैठी और चारों ओर देखने लगी, उसे समझ नहीं आ रहा था कि वह कहाँ है। मंजय्या ने पूछा, 'अरे लक्कू, क्या तुम रोज़ आधी रात को उठती हो?'

'हाँ, मैं अब भी आधी रात को जाग जाती हूँ,' और अब उसे अपनी स्थिति का एहसास हुआ। उसे नींद नहीं आ रही थी। वह जानती थी कि कम से कम अगले दो घंटे तक उसे नींद नहीं आएगी। उसे वहाँ बैठे देखकर मंजय्या की वासना जागृत हो गई। लेकिन वह सतर्क रहा और उसने सोचा कि उसे अपनी इच्छा का ज्यादा प्रदर्शन नहीं करना चाहिए। उसने आँखें बंद कर लीं जैसे उसे नींद आ रही हो। वास्तव में उसे नींद आ रही थी, लेकिन वह जागती रही और ऊब गई। मंजय्या की रिहाई के बाद यह पहली बार था जब वे साथ थे। यह पहला मौका था जब उन्हें एक-दूसरे से आराम से बात करने का अवसर मिला था। उसने एक महत्वपूर्ण मुद्दे को उठाने और उसे अभी सुलझाने का फैसला किया और कहा, 'मैं हसन के पास जा रही हूँ अपनी लड़की और अपनी बड़ी बहन को हमारे बारे में बताने।'

आप क्या कहने वाले हैं?

हम या तो शादी करने वाले हैं या फिर साथ रहने लगेंगे।

मंजय्या ने उसकी ओर मुड़कर पूछा, 'क्यों? इतनी जल्दी क्या है?'

क्या यह सच नहीं है कि हमारी शादी उस बीच के पेड़ के नीचे हुई थी? क्या तुमने ही मेरे गले में यह जंजीर नहीं डाली थी? फिर तुम्हें डर क्यों लगता है और तुम छुपकर मेरे घर क्यों आते हो, मुझे तुम्हारे घर आने में हिचकिचाहट क्यों होती है?

पति-पत्नी को एक ही बिस्तर पर ऐसे ही होना चाहिए। मुझे तुम्हारे लिए खाना बनाना चाहिए, तुम्हारी सेवा करनी चाहिए, तुम्हारा ख्याल रखना चाहिए। क्या यही जीने का तरीका है? टिपटूर आना, होटल में कमरा लेना, वहाँ छुपकर रहना, लोगों से डरना?

मंजय्या ने उत्तर दिया, "हाँ, मैं भी यही सोच रहा हूँ। लेकिन क्या आप जानते हैं कि लोग क्या कह रहे हैं? मैंने उन्हें कहते सुना है कि हम दोनों साथ रहना चाहते थे, इसलिए हमने कांची की रस्म पूरी कर ली। अब अगर हम साथ रहने लगें, यानी तुरंत शादी कर लें, तो यह इस बात को सच मान लेने के बराबर होगा। इसके अलावा, यह भी कहा जाता है कि कांची की वार्षिक रस्म पूरी होने से पहले शादी करना उचित नहीं है। मैंने शास्त्रों का अध्ययन कर लिया है। हालाँकि, अगर आप शास्त्रों या रीति-रिवाजों में विश्वास नहीं करते या उनका पालन नहीं करना चाहते, तो मैं तैयार हूँ।"

लक्कू का दिल धीरे-धीरे धड़कने लगा। उसे डर था कि लोग क्या कहेंगे, लेकिन उसके डर का असली कारण यह था: कहते हैं कि प्रेत सब कुछ जानता है, अगर कांची का प्रेत यह जानता है, तो क्या होगा... उसने पूछा, 'मृत्यु के बाद यह प्रेत कब तक जीवित रहता है?'

मंजय्या ने कहा, 'वार्षिक सामुदायिक भोज और अनुष्ठान संपन्न होने के बाद यह रवाना हो जाएगा।'

क्या इसे सब कुछ पता है?

'सब कुछ से आपका क्या मतलब है?'

लक्कू ने उसे घूरकर देखा और आँखों से इशारा किया। 'अहा, तुम मूर्ख स्त्री, मृत्यु के बाद यह सब कैसे जान सकती हो? मैंने जो कहा वह केवल रीति-रिवाज, शास्त्र है, यानी जब तक मृतकों का वार्षिक संस्कार पूरा नहीं हो जाता, तब तक हमें विवाह नहीं करना चाहिए – यानी तुम मृत पुरुष की पत्नी हो। प्रेत के बारे में ये सब बातें बकवास हैं। तुम यह जानती हो,' मंजय्या ने कहा। लेकिन लक्कू का मन उलझन में पड़ गया। यदि प्रेत का अस्तित्व ही निष्फल है, तो वह वार्षिक संस्कार में भोजन करने के लिए कैसे रुक सकता है? यदि वह पुरुष है, तो वह अपनी पत्नी की मृत्यु के एक महीने के भीतर विवाह कर सकता है। उसने ऐसी स्त्रियाँ नहीं देखी थीं जो अपने पति की मृत्यु के इतने कम समय में साथ रहने लगें या विवाह कर लें। इसलिए उसने इस मामले में जल्दबाजी न करने का सोचा। तभी मंजय्या बोला,

'अगर हम तुरंत विवाह कर लें या साथ रहने लगें, तो तुम्हारी बेटी लता हमारे बारे में क्या सोचेगी? तुमने अभी-अभी उसे हाई स्कूल में दाखिला दिलाया है। पहले से ही कुछ लोग बातें कर रहे हैं कि मंजय्या और लक्कू ने मिलकर कांची को नष्ट कर दिया है।' हाँ, ये सब अफवाहें हैं। पर कोई खुलकर नहीं बोलता। लेकिन लता को इन अफवाहों पर यकीन नहीं करना चाहिए। हमें इसका ध्यान रखना होगा। लक्कू, तुम एक काम करो, अपनी बेटी को ये बात विश्वास दिलाने वाले अंदाज़ में कहो। 'मंजय्या और तुम्हारे पिता बहुत पुराने दोस्त थे। उस रात तुम्हारे पिता गलती से मंजय्या के बगीचे में चले गए। उनका पैर फिसल गया, वे पेड़ से गिर गए और उनकी मृत्यु हो गई। लेकिन इंस्पेक्टर नारायण मूर्ति ने मंजय्या से नफरत के चलते उनके खिलाफ केस दर्ज कर दिया। अदालत ने मंजय्या को बरी कर दिया क्योंकि वह ईमानदार और सच्चा था। और अब, तुम्हारे पिता की मृत्यु के बाद, मंजय्या मेरी रोजी-रोटी कमाने में मेरी मदद करने के लिए तैयार हो गया है। तुम उसे ये बातें बताओ और उसका मन मेरे प्रति दयालु बनाओ और उससे दोस्ती रखो। कुछ समय इंतजार करते हैं और फिर शादी करते हैं। अगर हम जल्दबाजी में शादी कर लेते हैं, तो तुम्हारी बेटी तुम्हारे खिलाफ हो सकती है। मैं नहीं चाहता कि तुम अपनी बेटी का प्यार खो दो, क्या तुम ऐसा चाहोगे?'

लक्कू को लगा कि मंजय्या की बात काफी तर्कसंगत है। उसने लता को पहले ही बता दिया था कि उसके पिता का पैर फिसल गया, वे पेड़ से गिर गए और उनकी मृत्यु हो गई, उनकी हत्या नहीं हुई थी। फिर भी, लक्कू ने सोचा कि जब लता हसन में अपनी बेटी से मिलने जाएगी, तो वह उसे यह बात अच्छे से समझाएगी। उसने अपनी बेटी को यह विश्वास दिलाने का फैसला किया कि मंजय्या उसके पिता की तरह होगा और उसकी देखभाल करेगा। इससे पहले, लक्कू को उससे अपनी आजीविका के बारे में बात करनी थी। किले के पीछे आधे एकड़ सूखी ज़मीन और गाँव के सामने दस नारियल के पेड़ों के एक छोटे से बाग के अलावा, कांची के पास कोई और ज़मीन नहीं थी। लेकिन कोई नहीं जानता था कि वह उन दस नारियल के पेड़ों से सालाना कितना खोपरा बेचता था। यहाँ तक कि कांची को भी नहीं पता था। वह बस इतना जानता था कि अंधेरी रात में घर से निकलकर साठ से अस्सी या कभी-कभी सौ पके नारियलों के गुच्छे घर लाता था। नारियलों को मचान पर रखना, हिसाब-किताब करना, सूखने के बाद उनके छिलके उतारना, नारियल के बोरे ठेले में भरकर टिपटूर ले जाना, गोदामों में बेचना, पैसा लाना और उसे उधार देने और

गहनों आदि में निवेश करना – यह सब लक्कू की ज़िम्मेदारी थी। कांची ने बिना कुछ कहे यह मान लिया था कि उसकी पत्नी उससे ज़्यादा बुद्धिमान है और सारा कारोबार उसी पर छोड़ दिया था। उसके पास ज़मीन का बहुत छोटा टुकड़ा था, इसलिए वह कभी खेतों में काम नहीं करता था, न ही उसके पास बैल-गाड़ी थी। लक्कू खुद भैंसों की देखभाल करती थी। इस तरह वह रात के अंधेरे में नारियल के पेड़ों पर चढ़कर नारियल चुराने के अलावा कोई और काम नहीं करता था। वह पेड़ों पर चढ़कर, नारियल तोड़कर और हर पेड़ से एक नारियल लेकर पैसे कमा सकता था। लेकिन वह दिन में चालीस-पचास पेड़ों पर चढ़कर खुद को थकाना नहीं चाहता था। वह दिन में खाने, सोने या तालाब में तैरने के अलावा कोई काम नहीं करता था। गाँव में किसी के पास इतनी ताकत या हिम्मत नहीं थी कि चोरी करने जाने पर उसे रोक सके, पकड़ सके या पीट सके। उसके पास इतनी ताकत और मजबूत शरीर था कि चार लोगों के पकड़े जाने पर भी वह भाग निकला। उनमें से अधिकतर लोग बेबसी से उससे विनती करते, मानो यह कोई अलिखित समझौता हो: 'हे भाई कंचन्ना, हमें पता था कि तुम कल हमारे बाग में आए थे। कृपया अगले छह महीने तक दोबारा मत आना। हम गरीब लोग हैं।' मंजय्या ने न केवल कांची को हमेशा के लिए मार डाला, बल्कि सख्त पुलिस इंस्पेक्टर बी.एस. नारायण मूर्ति को भी चकमा देकर अदालत से बाहर आ गया। मंजय्या जानता था कि वह अपने गांव वालों के साथ-साथ आसपास के छप्पन गांवों में भी हीरो बन गया है। बी.एस. नारायण मूर्ति के चन्नरायपट्टाना में इंस्पेक्टर का पदभार संभालने के बाद, उसे 'टाइगर' उपनाम मिल गया था। वह कभी रिश्वत नहीं लेता था। जब भी उसे सरकारी काम से किसी गांव जाना होता, वह अपने नौकर से कुएं से पानी भरवाकर पीता था, लेकिन किसी के घर से एक कच्चा नारियल भी नहीं लेता था। उन्हें जो भी मामला सौंपा जाता, वे उसे तार्किक और न्यायसंगत अंजाम तक पहुंचाते थे। अगर मंजय्या का मामला किसी और दफेदार या इंस्पेक्टर को सौंपा जाता, तो वे उसे महजर स्तर पर ही पूरी तरह से तोड़-मरोड़ कर बंद कर देते। अब मामला नारायण मूर्ति के पास था। इसलिए ग्रामीणों को पूरा यकीन था कि मंजय्या को या तो फांसी होगी या उम्रकैद। लेकिन नारायण मूर्ति जैसे व्यक्ति को खुद जज से यह टिप्पणी करवानी पड़ी कि उन्होंने ठीक से जांच नहीं की। मंजय्या और उनके वकील मलाली वेंकटरामय्या की ताकत के बारे में क्या ही कहा जाए! इन सबके साथ-साथ लोगों में जिज्ञासा भी थी – कांची की विधवा द्वारा अदालत में

सबूतों को तोड़-मरोड़ कर पेश करने के पीछे क्या राज था? कुछ भावुक लोगों ने एक कहानी गढ़ी: लक्कू ने जैसे ही गवाह के कटघरे में मंजय्या का चेहरा देखा, उसे उससे प्यार हो गया। उसने सोचा, वैसे भी मेरा आदमी तो मर चुका है। अगर मैं इस आदमी को बरी करवाने में मदद कर सकूं, तो आज-कल वह मेरा ख्याल रखेगा। इसी इरादे या इच्छा से लक्कू ने सबूतों को तोड़-मरोड़ कर पेश किया। यह कहानी गाँव में फैल गई। यह अफवाह मंजय्या के संपर्क में आने वाली कई महिलाओं तक पहुँची और इन महिलाओं को गर्व के साथ-साथ ईर्ष्या भी महसूस हुई। यहाँ तक कि कुछ पवित्र महिलाएं, जो मंजय्या को अय्याश और नीच समझती थीं, इस कहानी को सुनने के बाद उसे उत्सुकता भरी निगाहों से देखने लगीं। उसके दुश्मनों को भी मानना पड़ा कि मंजय्या सुंदर और आकर्षक था। लेकिन किसी पुरुष के गुणों का वर्णन और विश्लेषण करते समय मतभेद होना स्वाभाविक है। ऐसा नहीं है कि किसी के पास वैसा शारीरिक गठन, रंग-रूप या चेहरे की बनावट नहीं होती। लेकिन किसके पास इतनी शक्ति और दृढ़ संकल्प होता है कि वह अपने शरीर, चेहरे की बनावट, हाव-भाव और रूप-रंग को सटीक लक्ष्य पर केंद्रित कर सके? उपलब्धि, सफलता और प्रतिष्ठा से उत्पन्न जनमत किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व का आधे से अधिक हिस्सा होता है, उसके शारीरिक गुणों से कहीं अधिक। प्रसिद्धि और बदनामी जनमत नामक सिक्के के दो पहलू मात्र हैं।

अदालती मुकदमा जीतने के बाद, मंजय्या खुलेआम लक्कू के घर जाना चाहता था और गाँव वालों, विशेषकर युवाओं की नज़र में अपनी इज़्ज़त बढ़ाना चाहता था। लेकिन वह लिव-इन रिलेशनशिप या शादी जैसे किसी बंधन में नहीं बंधना चाहता था। लक्कू एक साहसी और दृढ़ निश्चयी महिला थी। इसलिए मंजय्या ने सोच-समझकर फैसला किया कि अगर वह उसे सामाजिक रूप से पत्नी का दर्जा दे देगा, तो वह उसकी सारी आज़ादी छीन लेगी और उसे अपने कब्ज़े में रखेगी। लेकिन लोगों को यह पता होना चाहिए कि लक्कू उससे प्यार करती है, उसके वश में है और उसकी ताकत और दबदबे का प्रचार होना चाहिए, लेकिन लक्कू को किसी भी तरह की शक्ति या अधिकार नहीं मिलना चाहिए। यही उसकी योजना की पेचीदगी थी। सत्ता का संतुलन हमेशा उसके पक्ष में रहना चाहिए। उसने पहले से ही सोच लिया था कि लक्कू किन-किन बातों को उठाएगी, उसे क्या जवाब देने होंगे, क्योंकि रिहाई के बाद यह उनकी पहली मुलाकात होने वाली थी।

लक्कू ने पूछा, 'अब मैं जीविका के लिए क्या करूंगा?'

मंजय्या ने कहा, 'आधा एकड़ सूखा खेत है और दस नारियल के पेड़ हैं। कितनी भैंसें दूध दुह रही हैं?'
लक्कू ने कहा, 'अगर सिर्फ मैं होती तो मुझे चिंता नहीं होती। मेरी बेटी स्कूल में पढ़ रही है। वह हर हाल में अपनी पढ़ाई जारी रखना चाहती है। मैंने उसे अपनी बहन के घर छोड़ दिया है। मेरी बहन की आर्थिक स्थिति भी अच्छी नहीं है। हम उसे नारियल, मिर्च, दाल, रागी आदि भेजा करते थे। मैं उसे फीस, किताबें, साबुन और अन्य चीजों के लिए हर महीने बीस रुपये भेजती थी। वह कहती है कि वह अपनी पढ़ाई नहीं छोड़ेगी।'
मंजय्या ने इस पहलू पर पहले ही विचार कर लिया था और पूछा, 'आपने अब तक कितना पैसा बचाया है? आपने ब्याज पर कितना पैसा उधार दिया है?'
'अरे, क्या कहती हो? मैंने ब्याज के लिए पैसे कहाँ बचाए हैं?' हालाँकि वह उसके चेहरे का पीला पड़ना नहीं देख सका, लेकिन अंधेरे में उसने उसकी आवाज़ में आई दरार को महसूस किया।
मंजय्या ने कहा: 'देखो, मुझसे झूठ मत बोलो। मुझे ठीक-ठीक बताओ कि तुम्हारे पास कितना पैसा है। अगर यह पर्याप्त नहीं होगा, तो मैं तुम्हें और दूंगा और तुम्हें यह भी बताऊंगा कि इसे बुद्धिमानी से कैसे निवेश करना है।'
लक्कू ने याद करने का नाटक किया और सोचा कि उसे मंजय्या को अपनी आर्थिक स्थिति का खुलासा नहीं करना चाहिए, इसलिए उसने कहा, 'मुझे लगता है, लगभग दो से तीन हजार, शायद। बस इतना ही।'
मंजय्या ने कहा, "लक्कू, एक काम करो। मुझे वह सोने की चेन दे दो। मैं या तो उसे बेच दूँगा या गिरवी रख दूँगा और तुम्हें पैसे ला दूँगा। तुम्हें तीन हज़ार रुपये मिल सकते हैं। इस पूंजी से तुम गाँव के सामने लगने वाले साप्ताहिक बाज़ार में एक छोटी सी किराने की दुकान खोल सकते हो। मैं चन्नरायपट्टाना या हसन से तुम्हारे लिए सस्ते दामों पर राशन मंगवा दूँगा। अगर तुम मुझे बताओगे कि क्या सामान उपलब्ध नहीं है, तो मैं वह सामान मंगवा दूँगा। मैं वहाँ अक्सर आता रहूँगा। तुम आराम से बैठे-बैठे पैसे कमा सकते हो। इसके अलावा, अगर तुम पके हुए नारियल खरीदोगे, वो भी उन किसानों से जो अग्रिम भुगतान लेते हैं, तो तुम्हें और भी ज़्यादा मुनाफा होगा। अगर तुम उन्हें टिपटूर के गोदाम में थोक भाव से बेचोगे, तो बहुत मुनाफा होगा।"

लक्कू किराने की दुकान खोलने के विचार से उत्साहित थी। उसे जरूरतमंदों से नारियल खरीदना भी लाभदायक लग रहा था। लेकिन, मंजय्या द्वारा पूंजी के बदले उसके गले में पहनी सोने की चेन मांगने पर उसे गुस्सा आ रहा था। उसने अपनी आवाज में असंतोष व्यक्त करते हुए कहा, 'क्या मैं ये चेन उतारकर गिरवी रख दूं, जबकि तुम अभी भी जीवित हो?'

'कौन कहता है इसे ताली? ये तो बस एक गहना है। मैंने तुम्हें उस रात यही कहा था कि इसे ताली समझो, क्योंकि उस समय मैं सुनार को कहाँ और कैसे ढूंढ सकती थी? एक साल बाद मैं असली ताली बनवाकर शादी कर लूंगी। अब, क्योंकि तुमने कहा था कि तुम्हारे पास पैसे नहीं हैं, इसलिए मैंने ये सुझाव दिया था।' मंजय्या ने उपेक्षा, दिलासा और समझाने-बुझाने के मिले-जुले भावों के साथ जम्हाई ली।

जब तक लक्कू ने 'यदि पूंजी की आवश्यकता हो' कहा, तब तक वह जोर-जोर से सांस ले रहा था और सो गया था। वह चुप रही।

यद्यपि परमेश्वरय्या का अंगूठे के आकार का प्रेत यमधर्म की उपस्थिति में नहीं था, फिर भी उसमें यम-चेतना सदा जागृत थी। वह अपनी हर बात उस चेतना के माध्यम से नियन्त्रु को बता रही थी। 'हे नियन्त्रु, यह सत्य है कि जो मन अंतर्मुखी हो जाता है, वह कुछ भी नहीं जान पाता। मुझे मंजय्या की रिहाई की खबर सरसरी तौर पर ही पता चली थी, पर मैं फैसले की बारीकियों को जानना नहीं चाहता था। मुझे लगता है कि रामकृष्ण या कोई और व्यक्ति मेरे चेहरे को देखकर मुझे विस्तार से समझाने के लिए मेरे पास नहीं आया। शायद मंजय्या उसी रात लक्कू से मिलने और उसे अपने पक्ष में करने की योजना बना रहा था, जिस रात वह मुझसे उपवन में बात कर रहा था। मैं कैसे जान सकता था कि यह हत्या प्रतिशोध या शत्रुता से प्रेरित नहीं थी? तीस वर्षों में ही वह इस मामले में माहिर हो गया है। अब मैं मंजय्या के मन में लक्कू और उसके रिश्ते को लेकर चल रहे अनेक विचारों को देख पा

रहा हूँ। मुझे दुख और अफसोस है, क्योंकि ये विचार भविष्य में घोर अन्याय का कारण बनेंगे।' लेकिन, आपने मुझ पर एक बंधन, एक सीमा लगा दी है क्योंकि मैं साक्षी हूँ। मुझमें किसी भी चीज़ को रोकने, टालने या किसी को चेतावनी देने की शक्ति नहीं है। सहभागिता करना शुद्ध साक्षी का गुण नहीं है। फिर भी, मैं जिज्ञासु हो गई हूँ। आगे क्या होगा, यह जानने की अतृप्त जिज्ञासा ने मुझे घेर लिया है। आपके चित्रगुप्त शायद इस प्रकार की जिज्ञासा से भी मुक्त हों। लेकिन यह जीवन कथा मुझसे संबंधित है। इसलिए, मुझे लगता है, मैं शुद्ध और विरक्त साक्षी नहीं बन पाई हूँ।

परमेश्वरय्या के वैकुंठ समाराधना समारोह में चौदहवें दिन बड़ी संख्या में आमंत्रित और अनामंत्रित लोग आए थे। लोगों को किसी न किसी तरह उनकी आत्महत्या की खबर मिल गई थी या उन्होंने अखबारों में इसके बारे में पढ़ा था। एक झूठ बोलने पर आत्महत्या करना अखबारों के लिए एक दिलचस्प खबर थी और स्वाभाविक रूप से इसे प्रकाशित और प्रचारित किया गया। परमेश्वरय्या के घर में भोजन करने वाले राहगीर और यात्री, यह खबर सुनकर विभिन्न जिलों और गांवों से आए थे। परमेश्वरय्या अपने दैनिक अन्नदान में जाति और धर्म का कोई भेद नहीं करते थे और न ही वे अपने आतिथ्य को सीमित करते थे। जैन, लिंगायत और अन्य लोग जो उनके घर में भोजन नहीं करते थे, उन्हें चावल, दाल, खाना पकाने के बर्तन और कुएं से पानी निकालने के लिए एक घड़ा और रस्सी दी जाती थी और वे यह सुनिश्चित करते थे कि उन्हें भोजन मिले। ऐसे लोग भी एकत्र हुए और वैकुंठ समाराधना के अवसर पर एक विशाल सामुदायिक भोज का आयोजन किया गया। रामकृष्ण का दृढ़ विश्वास था कि उनके परिवार की महानता और विशिष्टता अन्नदान में निहित है। उन्होंने चन्नरायपट्टाना के चालपति शेट्टी से ऋण लिया और शिवालय परिसर में सभी जातियों और धर्मों के लोगों के लिए बड़े पैमाने पर भोजन और खाना पकाने की व्यवस्था की। परमेश्वरय्या ने शिवालय के सामने स्थित बरगद के

वृक्ष की शाखा पर ही स्वयं को फांसी लगाई थी। सभी ने उस शाखा को देखा और सम्मानपूर्वक हाथ जोड़े। उनके सबसे बड़े दामाद मट्टिकेरे के सत्यनारायण और उनके सहयोगी नागप्पा, जो तिपत्तूर में खोपरा गोदाम के मालिक थे, नौवें दिन ही आ गए थे। उन्होंने धर्मोदक अर्पित किया और वैकुंठ-समाराधना समाप्त होने तक वहीं रहे। सत्यनारायण बहुत समय बाद बिलिकेरे आ रहे थे। उनकी पत्नी की प्रसव के दौरान मृत्यु हो जाने के बाद, जब उनकी सास भी मर चुकी थीं, तो उनके ससुर के घर से उनका क्या संबंध रह गया था? इसके अलावा, वे अलग-अलग तालुकों से थे और उनके व्यापार केंद्र भी अलग-अलग थे। वैसे तो आपस में ज्यादा संवाद नहीं होता था, लेकिन आपसी स्नेह बहुत था। सत्यनारायण अपने ससुर और साले का आदर करते थे। परमेश्वरय्या भी अपने बड़े दामाद का आदर करते थे। इस परिवार से उनका रिश्ता आपसी आदर के कारण ही बना था। सत्याप्पा (सत्यनारायण) अपने विद्यार्थी जीवन से ही गांधीजी के कट्टर अनुयायी थे। उन्होंने देश के स्वतंत्रता संग्राम में भाग लिया था और कारागार का जीवन भी जिया था। वे चरखा चलाते थे और केवल खादी के वस्त्र पहनते थे। आज भी वे खादी के अलावा मिलों में बनी चादरें इस्तेमाल नहीं करते। खादी की धोती, जुब्बा और गांव में बनी गाय की खाल की चप्पलें पहनकर वे गांवों में गांधीजी के सिद्धांतों और शिक्षाओं का प्रचार करते थे। युवावस्था में उन्हें काम के सिलसिले में तीन बार बिलिकेरे आना पड़ा था। वे परमेश्वरय्या के घर भोजन करते थे। सत्याप्पा ने दूसरों से सुना था कि परमेश्वरय्या ने अपनी पत्नी की मृत्यु के बाद भी अन्नदान किया और कभी झूठ नहीं बोला। परमेश्वरय्या के चेहरे पर ऐसी ईमानदारी और धार्मिकता झलकती थी कि सत्यप्पा को वे साबरमती आश्रम के महात्मा गांधी के समान लगे। जब वे तीसरी बार परमेश्वरय्या के घर आए, तो संयोगवश उनकी मुलाकात परमेश्वरय्या की सबसे बड़ी बेटी सीता से हुई। उस समय तक सत्यप्पा भी गृहस्थ बनने की इच्छा कर चुके थे। उन्होंने सोचा कि अगर उन्हें विवाह करना ही है, तो परमेश्वरय्या के घर की इसी लड़की से करना चाहिए। वे अपने गाँव से निकले और नीलकुंड राज्य वन, मेलेनाहल्ली ताड़ के बागों से होते हुए रंगनाबेट्टा पर्वत पर चढ़े और मट्टिकेरे से चौदह मील दूर चन्नरायपट्टाना तालुक के बिलिकेरे पहुँचे। सत्यनारायण ने सोचा कि जिस घर में कितने भी मेहमानों के लिए भोजन पकाने और उनकी सेवा करने की परंपरा हो, मानो यह उनका धर्म हो, उस घर की बेटी में अधिक धैर्य और कम स्वार्थ होगा; संस्कृति की ऐसी परिष्कृतता के साथ उसे गांधीवादी सिद्धांतों का

पालन कराना कठिन नहीं होगा। उस लड़की के लंबे कद-काठी, रंग-रूप और चेहरे की विशेषताओं ने सत्यनारायण के मन पर जादू कर दिया था। जब सत्यनारायण परमेश्वरय्या के घर पहुँचे, तो वहाँ पहले से ही चार अन्य मेहमान दोपहर के भोजन के लिए मौजूद थे। चूंकि वे पहले तीन बार वहाँ आ चुके थे, इसलिए परमेश्वरय्या ने उन्हें आसानी से पहचान लिया और कहा, 'कृपया बैठिए' और उस चटाई की ओर इशारा किया जहाँ अन्य मेहमान बैठते थे। सत्यनारायण वहाँ दस मिनट तक बैठे रहे और रसोई से आती आवाज़ें और स्वादिष्ट सुगंध महसूस करते रहे। उनके मन में आया कि सीता खाना बना रही हैं और वे एक अच्छी रसोइया हैं। वे उठे, स्नानघर गए, हाथ-पैर धोए, खादी के तौलिये से पोंछा, हॉल में आए और परमेश्वरय्या से कहा, 'मैं आपसे अकेले में बात करना चाहता हूँ। इसीलिए मैं आया हूँ।' परमेश्वरय्या ने अन्य मेहमानों को थोड़ा इंतजार करने को कहा और सत्यनारायण को पिछवाड़े में तुलसी के पौधे के पास ले गए और उन्हें चमेली की लताओं की छाँव में पत्थर की बेंच पर बैठने को कहा। सत्यनारायण झुके, परमेश्वरय्या के चरणों को छुआ, प्रणाम किया और फिर परमेश्वरय्या से थोड़ी दूरी पर स्थित बेंच पर बैठ गए और बोले।

'रोजाना चार-पाँच मेहमान आपके घर दोपहर का भोजन करने आते हैं और चले जाते हैं। शायद आपको सिर्फ मेरा चेहरा ही याद हो। अगर मैंने आपको अपने बारे में कुछ बताया भी होता, तो शायद आप भूल गए होते। मैं तिपत्तूर तालुका के मट्टिकेरे का रहने वाला हूँ। मैंने बहुत कम उम्र में ही अपने माता-पिता को खो दिया था। तलकेरे सुब्रमण्य हमारे दूर के रिश्तेदार हैं। दरअसल, उन्हीं के माध्यम से मैं गांधीजी और उनके सत्याग्रह आंदोलन की ओर आकर्षित हुआ। कुछ समय तक मैंने केंगेरी के गुरुकुल में अध्ययन किया। मैं वहाँ लेखक गोरुरु रामास्वामी अयंगर का शिष्य था। लेकिन मैं वहाँ ज्यादा समय तक अध्ययन नहीं कर सका। मेरे अनुपस्थित रहने पर गाँव में मेरी ज़मीनों की देखभाल नहीं हो पाती थी। इसलिए मैं वापस आ गया और अपनी ज़मीनों की देखभाल करने लगा। लेकिन मेरा मन गांधीजी के सत्याग्रह और स्वतंत्रता आंदोलन से नहीं हट सका। मैं गांधीजी और उनकी शिक्षाओं से संबंधित किताबें और स्वराज्य अखबार पढ़ता था। इसी दौरान मैं दो बार साबरमती आश्रम गया, एक बार वर्धा गया, वहाँ कुछ महीने रहा, वहाँ के कामकाज के तरीके को समझा और लौट आया।' अब मैं गांवों में घूम-घूम कर इन विचारों का प्रचार और क्रियान्वयन कर रहा हूँ, ताकि हमारे ग्रामीण क्षेत्रों का सुधार

और संरक्षण हो सके। मैंने अपने गाँव और आसपास के गाँवों में इन नए विचारों को लोकप्रिय बनाने का प्रयास किया है। मैं जानता हूँ कि हर कोई महात्मा गांधी नहीं बन सकता। लेकिन मेरा मानना है कि जन्म लेने के बाद, यदि कोई व्यक्ति समाज के उत्थान के लिए काम नहीं करता, तो उसका जीवन व्यर्थ है। और अब मैंने गृहस्थ जीवन जीने का निश्चय किया है। मेरे पास तीन सौ पेड़ हैं जिनसे प्रति वर्ष पच्चीस हजार से तीस हजार नारियल मिलते हैं, साथ ही सवा चार एकड़ सूखी भूमि भी है। हालाँकि मेरे पास दो एकड़ गीली भूमि है, लेकिन तालाब भरने पर धान की फसल होती है। यदि तालाब भरा न हो, तो उड़द, हरी उड़द और कुलथी मिलती है। मेरे गाँव आइए, स्वयं देखिए, वहाँ पूछताछ कीजिए और इन बातों की पुष्टि कीजिए। मैं अब छब्बीस वर्ष का हूँ, आप मेरे गाँव में मेरे चरित्र के बारे में पूछताछ कर सकते हैं या आप तलकेरे सुब्रमण्य, गोरुरु रामस्वामी अयंगर या केंगेरी गुरुकुल में किसी से भी पूछ सकते हैं। पिछली बार जब मैं यहाँ आया था तो मैंने आपकी बेटी को देखा था। तब से मैं सोच रहा हूँ कि आपके परिवार की कोई लड़की, जो आतिथ्य सत्कार और दैनिक अन्नदान की परंपरा का पालन करती हो, मेरी पत्नी बनने के लिए उपयुक्त रहेगी। इसलिए मैं स्वयं आपसे उसका विवाह कराने का अनुरोध करने आया हूँ। मेरी बातों में कोई झूठ नहीं है। कृपया इस पर विचार करें, सारी जानकारी जुटाएँ और यदि यह आपको और आपकी बेटी को स्वीकार्य हो, तो कृपया मेरा प्रस्ताव स्वीकार करें।

इस प्रकार सत्यनारायण इस परिवार के सबसे बड़े दामाद बने। उनकी इच्छा के अनुरूप, सीता एक आदर्श पत्नी बनीं और अपने पति के पदचिन्हों पर चलीं। चूंकि मट्टिकेरे सड़क के पास स्थित नहीं था, इसलिए सत्यप्पा के घर में रोज़ाना मेहमान नहीं आते थे। फिर भी, सत्यप्पा के गाँव उत्थान के कार्यक्रमों और गतिविधियों से जुड़े कई लोग वहाँ आते थे। उनके घर के सामने बने चबूतरे पर कई ग्राम परिषदों के समूह एकत्रित होते थे। इसलिए, अन्य स्थानों से ग्राम परिषद के लिए आने वाले लोग उनके घर पर भोजन करते थे। अपने पिता के घर में रोज़ाना अन्नदान की तुलना में सीता के लिए यह आतिथ्य सत्कार संभालना कठिन नहीं था। यद्यपि पहले तो वह अपने पति के व्यवहार से थोड़ी असमंजस में थीं, क्योंकि वे आसपास के गाँवों के सुधार के आदर्श में अपनी ज़मीनों की उपेक्षा कर रहे थे, लेकिन उन्होंने जल्द ही अपने पति को समझ लिया। कन्नड़ में लिखी या अनुवादित गांधीजी और उनकी शिक्षाओं पर पुस्तकें पढ़ने के बाद, उन्हें अपने पति के आदर्श, उद्देश्य और

दृष्टिकोण और भी अधिक पसंद आने लगे और वे उनकी सराहना करने लगीं। सत्यप्पा खादी पहनते थे, लेकिन उन्होंने अपनी पत्नी को कभी खादी पहनने के लिए मजबूर नहीं किया। हालांकि, उन्होंने एक-दो बार उन्हें खादी के पीछे का नैतिक कारण समझाया था। गांधीजी की पुस्तकें पढ़ने के बाद सीता भी चरखे पर सूत कातने लगीं। सत्यप्पा ने उनसे पूछा, 'क्या, तुमने भी सूत कातना शुरू कर दिया?' सीता ने कहा, 'अरे, यह तो अच्छा समय बिताने का तरीका है' और हंस पड़ीं। दस ऊन के गोले कातने के बाद उन्होंने अपने पति से कहा, 'कृपया इसे बुनकर को दे दीजिए और मेरे लिए एक खादी की साड़ी ले आइए। मुझे देखने दीजिए कि यह कैसी लगती है।' यह कहते समय उनकी आंखें चमक उठीं। सीता, जो शादी से पहले ठीक से बोल नहीं पाती थीं, धीरे-धीरे अपने पति का मजाक उड़ाने और उन्हें चिढ़ाने लगीं। उनके खुरदुरे, धोने में मुश्किल कपड़ों का मजाक उड़ाते हुए, वह भी खुद सूत कातकर वैसी ही खुरदुरी खादी की साड़ियां पहनने लगीं। लेकिन उन्होंने अपनी सभी पुरानी साड़ियां और अन्य कपड़े नहीं जलाए। उन्होंने उन्हें कुछ कपूर की गोलियों के साथ एक डिब्बे में रख दिया। सत्यप्पा के काम के लिए लोगों से संवाद करना आवश्यक था, इसलिए वे एक कुशल वक्ता बन गए। विषय चाहे जो भी हो, वे सामाजिक उत्थान के आयाम पर गंभीरता से, हास्य और बुद्धि का पर्याप्त प्रयोग करते हुए बोलते थे। सीता को इतना वाक्पटु और बुद्धिवान देखकर सत्यप्पा समझ गए कि सही अवसर मिलने पर उनकी पत्नी में उनसे कहीं अधिक बुद्धि और वाक्पटुता है। ऐसी ही पत्नी ने ढाई साल के वैवाहिक जीवन के बाद एक बेटे को जन्म दिया और त्रिपतुर अस्पताल में प्रसव के दौरान ही उनकी मृत्यु हो गई। बच्चा बच गया। विवाह के बाद जब सीता अपने पति के घर गईं, तो उन्होंने अपने पति से अपनी छोटी बहन सावित्री को साथ ले जाने की इच्छा व्यक्त की। सत्यप्पा ने सीता से भी अधिक उत्साह से अपने ससुर से सावित्री को साथ भेजने का अनुरोध किया। बड़ी बहन के पति के घर जाने के बाद, परमेश्वरय्या के घर में सात वर्षीय बच्ची की देखभाल करने वाली कोई महिला नहीं थी। रामकृष्ण को सुबह जल्दी खेतों में काम करने के लिए घर से निकलना पड़ता था और परमेश्वरय्या बाग में जाते थे। दोपहर के भोजन के बाद भी उन्हें खेतों और बाग में काम करना पड़ता था। स्कूल जाने के बावजूद, सावित्री बाकी समय अकेली रहती थी। इसलिए परमेश्वरय्या और रामकृष्ण सावित्री को उसकी बहन के साथ भेजने के लिए सहमत हो गए। इसके अलावा, माताजी की मृत्यु के बाद सावित्री अपनी बहन से अधिक लगाव रखती थी। अब वह

अपने पिता और भाई की तुलना में अपने देवर के साथ अधिक सहज हो गई थी। उसके पिता गंभीर स्वभाव के थे और बहुत कम बोलते थे। जब उसकी माताजी जीवित थीं, तब सब ठीक था, वे अपनी छोटी बेटी से बातें करते थे और उसके साथ हंसी-मजाक भी करते थे। लेकिन माताजी की मृत्यु के बाद, सावित्री ने अपने पिता को हंसते हुए नहीं देखा था। यहां तक कि उसका भाई रामकृष्ण भी शांत स्वभाव का था। फिर भी, वह उसे नहलाता था, उसके कपड़े धोता था क्योंकि वह उसकी छोटी बहन थी। जब भी वह फल काटता था, तो उसे अपने हिस्से में से भी खिलाता था। कभी-कभी वह उसे 'अम्मा' कहकर पुकारता था, लेकिन बहुत कम बोलता था। लेकिन यह देवर ऐसा नहीं था। अपनी शादी के बाद भी, वह चुपके से अपनी छोटी साली के पीछे जाता, उसकी चोटी खींचता, उसके कान दबाता, उसकी बांहों पर चुटकी काटता और उसके पलटने से पहले ही अपना हाथ झट से हटा लेता। वह उसे मनमोहक परियों की कहानियां सुनाता। कहानी ऐसे शुरू करता जैसे कोई छोटी बच्ची खेत में चरते घोड़े पर बैठी हो। और अचानक उसके बगल में दो पंख निकल आते। ओह, वह उड़ता चला जाता, आसमान में पहाड़ियों, जंगलों, नदियों और समुद्रों को पार करता, टिमटिमाते तारों तक पहुँचता और उनसे भी आगे निकल जाता। अंत में, घोड़ा उनके घर के सामने उतर आता। तब तक, बड़ी बहन मिठाई और तले हुए नाश्ते लेकर छोटी बच्ची का इंतज़ार कर रही होती। सावित्री के अपने देवर के घर आने के बाद, कभी-कभी सत्यप्पा उसे अपनी पीठ पर बिठाकर घुमाता, उसे अपनी थाली से खाना खिलाता। उसकी बहन और देवर ने सावित्री को अपने कमरे में सोने दिया, क्योंकि वह छोटी बच्ची थी और उसके लिए वह एक नई जगह थी। सावित्री को यह बात आज भी याद है। सीता की मृत्यु के समय तक रामकृष्ण का विवाह हो चुका था और उनकी एक भाभी भी आ गई थीं। परमेश्वरय्या ने उनसे कहा कि वे अपनी बहू से सीता के अनाथ पुत्र रामचंद्र का पालन-पोषण करने के लिए कहेंगे। लेकिन सत्यप्पा इस प्रस्ताव से सहमत नहीं हुए। उन्होंने एक दासी की सहायता से अपने पुत्र का पालन-पोषण किया। सावित्री, जो अब साढ़े नौ वर्ष की हो चुकी थी, अपने पिता के घर लौट आई। उसकी भाभी सुकन्या बुरी स्त्री नहीं थी, लेकिन उसने कभी भी सावित्री को सीता की तरह अपने कमरे में सोने नहीं दिया।

अपने पिता की आत्महत्या के बारे में पता चलते ही रामकृष्ण को लगा कि वे ही इसके मूल कारण हैं और उनका मन निराशा में डूब गया। शुरू से ही उन्हें यह एहसास था कि अगर उन्होंने अपने पिता को झूठी गवाही देने के लिए ज़बरदस्ती न की होती, तो वे ऐसा करने को तैयार न होते। रामकृष्ण की अंतरात्मा ने उनके पिता के भीतर छिपी असहनीय पीड़ा और व्यथा को महसूस किया। लेकिन उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि वे अपने पिता को कैसे सांत्वना दें। सत्य पर रामकृष्ण का विश्वास और भी गहरा और दृढ़ हो गया; जब कांची की विधवा लक्कू ने स्वयं मंजय्या के पक्ष में गवाही दी, तो झूठ का नग्न रूप देखकर उनका मन स्तब्ध रह गया। जब उनका मन उनके द्वारा कहे गए हर शब्द को नीच समझकर अस्वीकार कर रहा था, तो वे अपने पिता को सांत्वना का एक शब्द भी कैसे कह पाते? स्वभाव से वे कम बोलने वाले थे। अब ऐसी स्थिति में ऐसा लग रहा था मानो उनकी ज़बान सुन्न पड़ गई हो। क्या वे वही नहीं थे जिन्होंने सावित्री और मंजय्या के विवाह का ज़ोरदार विरोध किया था? परमेश्वरय्या ने एक शब्द में स्पष्ट कर दिया था कि मंजय्या को दामाद के रूप में स्वीकार करना उनके लिए असंभव था। अंततः रामकृष्ण ने ही विवाह के लिए सहमति दी, यह सोचकर कि यह मंजय्या का भाग्य था और वे उसकी हठधर्मिता को सहन नहीं कर पा रहे थे। जब उन्हें यह बात याद आई, तो उन्हें यह एहसास सताने लगा कि वे अपने पिता की आत्महत्या के लिए नैतिक रूप से जिम्मेदार हैं। यदि उन्हें पहले से पता होता कि उनके पिता आत्महत्या करेंगे, तो क्या वे इसे रोक सकते थे? वे क्या कारण या तर्क दे सकते थे? नहीं, उनके मन में कुछ भी नहीं आता। वे इस प्रकार सोचते थे; यदि मैं उनके पैर कसकर पकड़ लेता, सीधे उनके पास जाकर कहता, यदि आप ऐसा करेंगे, तो मेरा पूरा जीवन, मेरी मृत्यु तक, जलती हुई नरक तृष्णा बन जाएगा। देखिए, मैं भी कष्ट भोग रहा हूँ। कृपया, मुझे इससे अधिक कठोर दंड न दीजिए। आपको यहीं रहना होगा और हमारे साथ रहना होगा, और चाहे कितनी भी तीव्र पीड़ा हो, उसे सहन करना होगा। जब तक आप ऐसा करने का वादा नहीं करते, मैं आपके चरणों को नहीं छोड़ूंगा। यदि ऐसा कहकर मैं प्रणाम कर देता, तो शायद वे अपना निर्णय बदल लेते! अपने पिता के विचारों का कोई सुराग न मिलने के शोक में रामकृष्ण और भी अधिक मौन और अंतर्मुखी हो गए। उनके चेहरे पर सन्नाटा पसरा हुआ था, जिसमें कोई भाव प्रकट नहीं हो रहा था।

सावित्री का मन और हृदय आग की लपटों में जल रहा था। उसके पिता ने उसके लिए झूठी गवाही दी थी और आत्महत्या कर ली थी। खबर मिलते ही वह बिलिकेरे आ गई। महाजर के लिए आए पुलिसकर्मियों और बरगद के पेड़ की शाखा से लटके अपने पिता के शव को देखकर उसने उसी रस्सी से और उसी शाखा पर लटककर आत्महत्या करने का निश्चय कर लिया था। जब उसका भाई उसके पास आया और उसका हाथ थामकर खड़ा हो गया, तो उसे थोड़ी राहत मिली। वह सोच रही थी कि रामकृष्ण उसका हाथ सहारा देने के लिए थामे खड़े थे या अपने लिए? लेकिन अगर उन्होंने उसे इस तरह सहारा न भी दिया होता, तो भी फांसी लगाकर आत्महत्या करने की उसकी इच्छा कम नहीं होती! पूरी रात उसकी भाभी जागती रही, सावित्री के पास सोई, उसकी रक्षा करती रही और उसे सांत्वना देने की कोशिश करती रही। महाजर समाप्त होने और शव सौंपे जाने के बाद उसी रात उसके भाई और गणेश ने अंतिम संस्कार की व्यवस्था में खुद को व्यस्त कर लिया था। सावित्री पुरानी यादों में खो गई। उसके पिता के दुःख और आत्महत्या का मूल कारण केवल अदालती मामले ही नहीं थे, बल्कि उस नीच व्यक्ति से विवाह करने की उसकी हठधर्मिता भी थी। उसके पिता, जिन्होंने कभी किसी को नहीं पीटा था, यहाँ तक कि किसी आवारा पशु पर भी हाथ नहीं उठाया था, उन्होंने उसे बेरहमी से पीटा और लात मारी थी। फिर भी, वह इतनी हठी क्यों थी? उसे क्या हो गया था? क्या यह महज़ मोह, अंधा जुनून, अशुभ ग्रह या केवल हठधर्मिता थी? उस रात, जब वह गहरे दुःख से व्याकुल थी, उसे एहसास हुआ कि हठधर्मिता या हठधर्मिता अहंकार का ही एक रूप है। कुछ देर बाद उसे याद आया कि उसके पिता ने यही बात समझाई थी, जब उन्होंने उसे मंजय्या से विवाह न करने की सलाह दी थी, और अब उसे लगा कि यह बात सच है। हठी होकर उसने मंजय्या से विवाह कर लिया था। उसकी हरकतों, कारनामों और रात के कारनामों को अपनी आँखों से देखने के बाद, वह उसी हठधर्मिता के साथ उसका घर छोड़कर चली गई थी और अपमान और चोट से जल रही थी। फिर भी, न तो उसके पिता और न ही उसके भाई ने कभी उसे दोषी ठहराया या यह कहा कि उसकी हठधर्मिता के कारण ही यह सब हुआ है। हाँ, उसकी भाभी ने उसे दोषी ठहराया था। हालाँकि उसके पिता और भाई ने आपत्ति जताई थी, फिर भी वह अकेले चन्नरायपट्टाना नौकरी की तलाश में चली गई, न केवल खुद से बल्कि अपने पिता और भाई से भी बदला लेने के लिए, जिनके प्रति वह इतनी जिद्दी थी। लेकिन अब जब उसके पिता

ने आत्महत्या कर ली, तो उसे लगा कि बदला लेने की बुनियाद ही हिल गई है, न केवल उनसे बल्कि खुद से भी, और वह पूरी तरह से खोई हुई, दिशाहीन महसूस कर रही थी। उसका मन कर रहा था कि वह फूट-फूटकर रोए, अपना सिर किसी बहुत करीबी व्यक्ति के कंधे पर रख दे, शायद अपनी माँ के कंधे पर। उसकी माँ जीवित होनी चाहिए थी। भले ही वह अपने देवदूत पति के खोने के गम में डूबी होती, फिर भी वह अपनी बेटी को सांत्वना देती और उसके दुख को कम करती। काश सीताक्का वहाँ होती! सावित्री को अपना बचपन याद आ गया। हाँ, सीताक्का मर चुकी थी, लेकिन उसके देवर का क्या हुआ? वह क्यों नहीं आया? क्या उसे लगा कि पत्नी और सास की मृत्यु के बाद उसके ससुर के घर में कुछ भी महत्वपूर्ण नहीं रह गया था? क्या उसका मेरे प्रति स्नेह केवल उसकी पत्नी के कारण ही था? क्या वह अपना स्नेह जारी नहीं रख सकता था? उसे इतना गुस्सा आया कि वह तुरंत मट्टिकेरे जाकर उससे सवाल करना चाहती थी।

नौवें दिन सत्यप्पा अपने ससुर के अंतिम संस्कार में शामिल होने के लिए बिलिकेरे आए, लेकिन सावित्री ने उन्हें देखा फिर भी उनसे बात नहीं की। पच्चीस वर्षों के अंतराल के बाद वे उस घर में आए थे और थोड़ा असहज महसूस कर रहे थे। वे हॉल में खंभे से टेक लगाकर अकेले बैठे थे। उन्होंने सफेद खादी की धोती और सफेद खादी की कमीज पहनी हुई थी; उनके घने सफेद बाल पीछे की ओर कंघी किए हुए थे। घर में कोई और पुरुष नहीं था। रामकृष्ण श्मशान घाट गए थे जहाँ नौवें दिन के अनुष्ठान उसी गली के जोई सुब्बन्नय्या और हिरियन्नय्या के साथ किए जाने थे। गणेश समारोह के लिए राशन और आवश्यक सामान लाने के लिए चन्नरायपट्टाना गए थे। सुकन्या बाहर आईं, सत्यप्पा से बात की और अंदर चली गईं। एक रसोइया दो बार हॉल में आया और रसोई में चला गया। उसने सत्यप्पा से यह नहीं पूछा कि वे कौन हैं या कहाँ से आए हैं। सत्यप्पा जानते थे कि उनके ससुर ने या तो झूठी गवाही के पश्चाताप में या झूठी गवाही देना असहनीय हो जाने के कारण आत्महत्या की थी। अपने घर जाते समय, उसी गाँव के लक्कप्पा गौड़ा ने उन्हें पहचान लिया और उनसे कहा, 'तुम हमारे गाँव के लिए अजनबी हो गए हो,' और परमेश्वरय्या की सत्यनिष्ठा का वर्णन किया। उन्होंने कहा, 'अब से हमें अच्छी और समय पर बारिश और फसल नहीं मिलेगी।' हालाँकि गौड़ा ने ईश्वर के क्रोध और धर्म के दंड के बारे में बताया, सत्यप्पा, जिन्होंने इतने वर्षों तक गाँवों में गांधीजी के सिद्धांतों का प्रचार किया था और गाँव के उत्थान के लिए काम किया

था, इस बात पर विश्वास नहीं कर सके। वे अपने ससुर की ईमानदारी और सत्यनिष्ठा को व्यक्तिगत अनुभव से जानते थे। उन्होंने गांधीजी को देखा था। इसलिए, उन्हें अपने ससुर के इस निर्णय और आत्म-दंड पर आश्चर्य नहीं हुआ। लेकिन, अगर लक्कप्पा गौड़ा या कोई और व्यक्ति ईश्वरीय प्रकोप या भविष्य में अच्छी बारिश और फसल न होने की बात करता, तो सत्यप्पा को घृणा होती। उन्हें पूरा विश्वास था कि देश को आजादी मिलने के बाद अंधविश्वास का युग बीत चुका है। अब, जब वे खंभे पर टेक लगाकर इस बारे में सोच रहे थे, तभी सावित्री तेजी से आईं और बोलीं, 'कृपया गौशाला में आइए। मैं आपसे बात करना चाहती हूँ।' सत्यप्पा उठे और उनके पीछे-पीछे गए। वह उन्हें पिछवाड़े में बने टाइल वाले स्नानघर में ले गईं, जहाँ एक कुआँ, एक बड़ा तांबे का घड़ा और साल भर के लिए पर्याप्त लकड़ियों का ढेर था। उन्होंने सत्यप्पा को रस्सियों, घड़ों आदि के कुंडल रखने के लिए बनी पत्थर की बेंच पर बैठने को कहा। वह उनके सामने खड़ी होकर बोलीं, 'आपने यह कहावत सिद्ध कर दी है कि पत्नी की मृत्यु के बाद ससुर के घर से कोई संबंध नहीं रहता।' सत्यप्पा ने उनके चेहरे की ओर देखा। वे जानते थे कि सावित्री का चेहरा दुख, क्रोध या उपेक्षा, हर स्थिति में चमक उठता था। जब उसने उसके चेहरे पर अपराधबोध के भाव देखे, तो उसने पूछा, 'क्या तुम्हें पता है कि मैंने ही पिता को मारा था?' वह बस उसके चेहरे को देखता रहा। उसकी आँखों में आँसू भर आए, मानो अब तक हुए सारे अन्याय की ज़िम्मेदारी वह अकेले सहन नहीं कर पा रही हो। सत्यप्पा के देखते ही देखते उसकी आँखों से आँसू बहने लगे। उसे सात साल की सावित्री याद आ गई, जिसे वह दुलारता, कंधे पर उठाता और प्यार करता था। वह उठा, अपना दाहिना हाथ उसके सिर पर रखा और चुपचाप खड़ा रहा। वह उसे सांत्वना देने के लिए कुछ नहीं कह सका। वह बेकाबू होकर रोने लगी। वह वहीं खड़ा रहा, यह जानते हुए कि अब वह पैंतीस साल की एक बड़ी महिला है। उसे वे दिन याद आ गए जब वह छोटी बच्ची थी और ऐसे ही रोती थी। कई बार उसने उसे गले लगाया था, चूमा था और उसके कान में कुछ फुसफुसाया था जिससे वह हँसने लगी थी। तब उसे लगा कि उसके दुख का कारण उसकी बड़ी बहन थी, जो हर बात में उसे टोकती थी – बोलने, व्यवहार आदि में। जब भी वह छोटी बच्ची अपनी बहन की शिकायत जीजा से करती, तो जीजा उसके कान में फुसफुसाते, 'चिंता मत करो, हम दोनों मिलकर उसे सबक सिखाते हैं।' इतना ही उसके लिए काफी था। इसके बाद जीजा भी वही बात कहते जो उसकी

बहन ने कही थी और उसे प्यार से सुधारते। जीजा के टोकने पर वह कभी गुस्सा नहीं होती थी और न ही रोने लगती थी। सत्यप्पा को ये सब याद आया और उन्हें लगा कि ऐसी बच्ची के साथ ये सब नहीं होना चाहिए था। उन्होंने सोचा कि मंजय्या जैसे अय्याश से प्यार करने के कारण सावित्री पारिवारिक सुख से वंचित हो गई थी और अब उसे इस अपराधबोध से पीड़ित नहीं होना चाहिए कि वह अपने पिता की आत्महत्या का कारण बनी। लेकिन उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि इस अपराधबोध को कैसे दूर किया जाए। हालांकि, यह सोचकर कि शायद कोई उपाय सूझ जाए, उन्होंने उससे कहा, 'ये सारी रस्में खत्म होने के बाद मेरे साथ मत्तिकेरे चलो और कुछ दिन वहीं रहो।' 'चलो इन सब बातों पर चर्चा करते हैं।' वह चुप रही और सिसकती रही। सत्यप्पा ने उसका हाथ पकड़ा, उसे अपने पास पत्थर की बेंच पर बिठाया, उसका सिर झुकाया, अपने कंधे पर रखा और धीरे से सहलाया। वह थोड़ी देर रोई और फिर चेहरा ऊपर उठाया। सत्यप्पा ने कहा, 'क्या तुम भूल गई हो कि अगर तुम इस सफेद खादी की कमीज को अपने आंसुओं से भिगो दोगी, तो इस पर दाग लग जाएगा?' ये उसकी बड़ी बहन के शब्द थे। जब भी वह रोती, उसका देवर अपनी कमीज के किनारे से उसके आंसू पोंछता था और सीताक्का यही कहती थी। अपनी बहन को चुनौती देते हुए, छोटी सावित्री अपने देवर से कमीज उतरवाकर उसे ताजे पानी में धुलवाती और कहती, 'देखो अब दाग कहां है?' इस याद से उसके चेहरे पर दुख का बोझ थोड़ा कम हो गया था।

सत्यप्पा ने हर हाल में सावित्री के दुःख को कम करने का निश्चय किया। पर कैसे? उसका यह सोचना कि वह अप्रत्यक्ष रूप से अपने पिता की आत्महत्या का कारण थी, काफी हद तक तर्कसंगत था। लेकिन जो हो चुका था उसे नकारना या बदलना संभव नहीं था। सत्यप्पा को ऐसा सोचने में कुछ आशा और सांत्वना मिली। किसी तरह, अगर वह मंजय्या का मन बदल सके और उसे उसकी गलतियों का एहसास करा सके, अगर उसे सत्य और असत्य के बीच का अंतर कम से कम थोड़ा सा भी समझ आ जाए, तो वह अपनी पत्नी को स्वीकार कर लेगा और पारिवारिक जीवन व्यतीत करेगा। सावित्री के गौशाला से बाहर आकर अंदर आने के बाद, वह वापस हॉल में जाकर बैठ गया। जब वह इस बारे में सोचने लगा, तो सत्यप्पा को लगा कि अपने इस प्रयास से वह न केवल सावित्री को एक साथी और जीवन का मार्गदर्शन दे रहा है, बल्कि मंजय्या जैसे व्यक्ति को सुधारने के लिए उसे प्रसिद्धि भी मिलेगी। उसे महात्मा गांधी का सत्याग्रह के बारे में कहा गया वचन याद आया, "क्रूर और

पापी व्यक्ति में भी, भीतरी गहराई में आत्मा, अंतरात्मा का वास होता है और वहीं ईश्वर, परमात्मा का निवास होता है।" उन्हें जगाना हमारा मूलभूत कर्तव्य है। सत्याग्रह का यही अर्थ है। परमेश्वरय्या के आत्महत्या के संदर्भ को देखकर मंजय्या जैसा व्यक्ति भी थोड़ा-बहुत पिघल जाता। सत्यप्पा को पूरा विश्वास था कि यदि मंजय्या को अब पकड़कर प्रेम और मित्रता का भाव दिखाया जाए, तो वह अवश्य सुधर जाएगा। सत्यप्पा का सुधारवादी मन, जो दस-पंद्रह वर्षों से निष्क्रिय पड़ा था, इस नए प्रोत्साहन के अवसर को देखकर जागृत हो उठा और वे उत्साहित हो गए। उन्होंने निश्चय किया कि वे रामकृष्ण के अंतिम संस्कार संपन्न होने के बाद उनसे सारी जानकारी लेंगे और फिर मंजय्या से मिलेंगे। वास्तव में, उन्हें लगा कि वे मंजय्या को रामकृष्ण और परमेश्वरय्या से भी बेहतर जानते हैं। सत्यप्पा इस तथ्य से भलीभांति परिचित थे कि मंजय्या झूठा और व्यभिचारी था। यद्यपि छल-कपट उसकी मुख्य प्रवृत्ति नहीं थी, जैसे झूठ बोलना और व्यभिचार करना, फिर भी आवश्यकता पड़ने पर वह आसानी से और बिना किसी संकोच के छल भी कर देता था। परन्तु तुलनात्मक रूप से उसकी छल करने की प्रवृत्ति कम थी। सत्यप्पा का मन कुछ देर तक इस बात पर विचार करता रहा कि क्या ये तीनों, यानी झूठ, व्यभिचार और छल, एक ही प्रवृत्ति के अलग-अलग रूप हैं। व्यभिचार झूठ के बिना नहीं होता। लेकिन सभी झूठे व्यभिचारी नहीं होते। व्यभिचारी भी ईमानदारी से और बिना छल के ऐसा कर सकते हैं। व्यभिचार का थोड़ा सा भी ज्ञान न रखने वाला व्यक्ति भी छलकारी हो सकता है। यह आवश्यक नहीं है कि झूठ और छल के बीच जो घनिष्ठ संबंध है, वही दूसरे मामले में भी हो। जब सत्यप्पा ने इस तरह विश्लेषण किया, तो उन्हें कुछ ऐसे झूठे लोगों के उदाहरण याद आए जिनका छल करने का उद्देश्य नहीं था। इसलिए, जब उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि छल अधिक मौलिक है, झूठ नहीं, तो उनका मन यह निर्धारित करने का प्रयास करने लगा कि मंजय्या किस श्रेणी में आता है। सत्यप्पा ने सोचा कि मंजय्या से बात करना आसान था; शायद वह झूठा था, लेकिन वह बहुत बोलता था। वे व्यावहारिक अनुभवों, किस्सों और कहानियों से परिपूर्ण एक वक्ता थे, मनोरंजक थे और हास्य एवं गंभीरता से अपने श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर देते थे। इसलिए, यदि वे आते, तो कोई ऊब नहीं होती। मंजय्या बहुत समय से नहीं आए हैं। वे हमारे गाँव भी आते थे, लेकिन आजकल नहीं आते। रामचंद्र के विवाह के बाद से वे हमारे यहाँ नहीं आए हैं। यदि वे आते, तो मुझे सुशीला को यह संकेत देना पड़ता कि जब मंजय्या घर पर हों, तो

वह बाहर न निकले। इन सब बातों को याद करते हुए सत्यप्पा के मन में अचानक एक बात आई। उन्होंने बिलिकेरे आना इसलिए नहीं छोड़ा था क्योंकि उनकी पत्नी का निधन हो चुका था और अब उनके ससुर के घर से कोई संबंध नहीं रह गया था। सीता की स्मृति से व्याकुल होकर वे तीन बार बिलिकेरे आए थे। लेकिन उस घर में बात करने वाला कोई नहीं था। उनके ससुर हमेशा गंभीर और अंतर्मुखी रहते थे। रामकृष्ण भी आमतौर पर मौन रहते थे। निश्चित रूप से, जो लोग प्रतिदिन अन्नदान करते थे, उन्हें विनम्र होना ही चाहिए था। लेकिन जब तक यह आत्मीयता वाणी से ज़ाहिर न हो, तब तक कैसे पता चले? 'क्या आप अभी-अभी आए हैं? कृपया बैठिए!' – क्या जीजा-साले के बीच इस तरह की मित्रता और आत्मीयता काफ़ी थी? फिर एक घंटे बाद, एक और सवाल होता। 'आपके यहाँ खेती कैसी चल रही है?' सत्यप्पा को लगा, ऐसे चुप लोगों से मिलने का क्या फ़ायदा? अगर कभी बोलना ही पड़ता, तो सावित्री से। वह स्कूल जाने वाली लड़की थी। उससे कितनी और क्या बातें हो सकती थीं। उन्हें याद आया, कैसे बिलिकेरे से उनका संपर्क कम और फिर बहुत कम हो गया था। इसके साथ ही, उन्हें याद आया कि कैसे मंजय्या, जो हमेशा जगहों पर घूमते रहते थे, सत्यप्पा के घर भी आते, रसोई में जाते, स्वादिष्ट खाना बनाते, सत्यप्पा को परोसते और खुद भी दोपहर का भोजन करते और अपनी बातों से सबका मनोरंजन करते। सावित्री के विवाह से सत्यप्पा के जीजा बनने से पहले भी, मंजय्या उन्हें अन्नय्या कहकर बुलाते थे। वह हमेशा अपनी बातों से लोगों का दिल जीत लेते थे। इसके अलावा, उनके काम का दायरा भी बहुत व्यापक था और केवल चन्नरायपट्टाना तालुक तक ही सीमित नहीं था। सत्यप्पा को दस साल पहले अरसिकेरे तालुक के बीरागुंडा में मंजय्या द्वारा किए गए घोटाले की एक घटना याद आई। यह बात गंडासी गुरुनंजय्या ने बताई थी। अरसिकेरे तालुक के बीरागुंडा में मंजुनाथय्या नाम का एक मूर्ख शनभोग रहता था। सत्यप्पा भी उसे जानते थे। कोई भी जानता होगा कि वह शनभोग मूर्ख था। उसने कोई गलती की, और शायद उसी मूर्खता के कारण उसे निलंबित कर दिया गया। हालांकि उसे केवल दो महीने के लिए निलंबित किया गया था, लेकिन उसने उच्च अधिकारियों से मुलाकात नहीं की, न ही कार्यालय में उन्हें रिश्वत दी, और न ही अपना पक्ष ठीक से रखा। निलंबन छह महीने से अधिक समय तक चला। यह मूर्ख मंजुनाथय्या घर पर बैठा अपने बैलों की देखभाल करते हुए समय बिताता रहा। हालांकि, हमारे बिलिकेरे मंजय्या इस स्थिति से भली-भांति परिचित थे। वह सीधे हसन जिला

कार्यालय गया, कुछ चाल चली, वहां के अधिकारियों को धोखा दिया, बीरागुंडा चला गया, वहां शन्भोग का पदभार संभाला और खुद को बीरागुंडा का शन्भोग घोषित कर दिया। हर जगह की तरह यहां भी कुछ लोग थे जिन्होंने इसका विरोध किया। वे उस मूर्ख मंजुनाथय्या को जिला आयुक्त के पास ले गए और उनकी ओर से अपील प्रस्तुत की। जिला आयुक्त ने अपने अधीनस्थों को जांच का आदेश दिया। अंत में, राजस्व निरीक्षक ने, ऐसा प्रतीत होता है, इस प्रकार रिपोर्ट लिखी: 'यह सच है कि मंजुनाथय्या को कर्तव्य में लापरवाही के कारण निलंबित किया गया था। उसके बाद उसे उचित चेतावनी दी गई, और उसी मंजुनाथय्या को कार्यभार सौंप दिया गया है और अब वह वर्तमान शन्भोग है। मंजुनाथय्या नाम के एक अन्य व्यक्ति ने जिला आयुक्त साहब से अपील की है, जो अब कुछ छल कर रहा है। जब जांच की गई तो पता चला कि यह याचिकाकर्ता मानसिक रूप से विक्षिप्त था।' अक्सर वह दावा करता था कि वह मैसूर राज्य का महाराजा है, वह धर्मस्थल का भगवान मंजुनाथ है। बिलिकेरे मंजय्या ने राजस्व निरीक्षक को रिश्वत देकर खुद को असली मंजुनाथय्या साबित कर दिया और बीरागुंडा का शन्भोग बन गया। मंजय्या ने अपनी शक्ति का प्रदर्शन करके असली मंजुनाथय्या की पत्नी को अपने वश में कर लिया। तीन महीने उसके साथ रहने के बाद वह ऊब गया। फिर उसने उसी राजस्व निरीक्षक को रिश्वत दी, शन्भोग का पद असली मंजुनाथय्या को सौंप दिया, उस गाँव को छोड़कर अपने स्थान लौट गया। शन्भोग के रूप में अपने शासनकाल के दौरान, कहा जाता है कि उसने झगड़े, गुटबंदी, विवाद और विभाजन पैदा किए और गाँव में भ्रम और परेशानी का कारण बना। दो महीने बाद सत्यप्पा को इस बात का पता चला। एक बार मंजय्या सत्यप्पा के गाँव आया था। जब उससे इस बारे में पूछा गया, तो मंजय्या ने गर्व से आँखों के इशारे से 'हाँ' कहा। सत्यप्पा को आज भी यह बात याद है। अपने बाग में नारियल पानी पीते हुए उन्होंने मंजय्या से पूछा, 'देखो मंजय्या, तुम तो बड़े भाग्यशाली हो। खाने-पीने और जीवन की सुख-सुविधाओं की कोई कमी नहीं है। तुम्हारे पास बहुत ज़मीन है। उस मूर्ख को धोखा देने और ठगने की बात छोड़ो। लेकिन क्या उसकी पत्नी की पवित्रता भंग करना उचित था?' इस प्रश्न का मंजय्या का उत्तर क्या होता? उन्होंने कहा, 'अन्नय्या, अगर वह इतना मूर्ख होता तो मैं उसके साथ ऐसा नहीं करता। मैं तो पूरी सरकार को, राजस्व निरीक्षक, शिरस्तेदार, अमलदार, सहायक आयुक्त, जिला आयुक्त, यहाँ तक कि स्वतंत्र भारत की इस खादी सरकार को भी धोखा देना चाहता था, जिसे

तुम्हारे गांधीजी लाए थे। क्या इन लोगों को बंदरों की तरह नचाना रोमांचकारी नहीं है? और उस बेचारे आदमी की पत्नी की पवित्रता की बात करें तो मैंने उसकी पवित्रता को कोई नुकसान नहीं पहुँचाया। तुम जैसे लोग स्त्री को पवित्रता की मूर्ति मानते हो। लेकिन एक बात समझ लो, स्त्रियों की भी इच्छाएँ होती हैं। जब वे किसी सुंदर पुरुष को देखती हैं, तो उनके मन में भी वासना जागती है।' कई पुरुष इसे नहीं समझते, लेकिन मैं इसे अच्छी तरह समझता हूँ। आप एक बात जानते हैं। मैंने कभी किसी स्त्री को विवश नहीं किया। मंजुनाथय्या की पत्नी ने मुझसे गिड़गिड़ाकर विनती की थी कि मैं उसे और उस गाँव को न छोड़ूँ।' मंजय्या इतने आकर्षक वक्ता थे कि वे जो कुछ भी कहते, सुनने वाला उसे सच मान लेता था। सत्यप्पा को भी मंजय्या जैसे व्यक्ति को सत्य और झूठ की सूक्ष्मता समझाना आसान नहीं लगता था। फिर भी उन्हें उम्मीद थी कि अब उन्हें एक अवसर मिला है। अगर वे मंजय्या के विवेक को थोड़ा सा भी जगाने की कोशिश करते, तो उनके वर्षों के निष्क्रिय जीवन को एक नई दिशा मिल जाती।

रामकृष्ण दोपहर 3:30 बजे उस उपवन से लौटे जहाँ धार्मिक अनुष्ठान हुए थे। सुब्बन्नय्या, हिरियन्नय्या और नाग जोइस उनके साथ थे। सत्यप्पा उनसे परिचित थे। रामकृष्ण ने रामचंद्र, उनकी पत्नी और बच्चों के बारे में पूछा। बस इतना ही। उन्होंने और कुछ नहीं कहा। रामकृष्ण पहले भी कम बोलते थे। अब तो उनके चेहरे पर मृत्यु के बोझ की गंभीरता साफ झलक रही थी। ऐसा लग रहा था मानो उन्होंने सभी मृतकों का अनुभव अपने ऊपर ले लिया हो। उन्हें देखकर सत्यप्पा अपने ससुर की मनस्थिति को समझने की कोशिश करने लगे, जिन्होंने आत्महत्या में मोक्ष पाया था। दोपहर के भोजन के समय सुब्बन्नय्या और हिरियन्नय्या ही बातचीत कर रहे थे। उन्होंने बताया कि धर्मोदक अनुष्ठान में कम से कम सौ लोग आएंगे। नाग जोइस ने अगले दिन की तैयारियों के बारे में बताया। सत्यप्पा को याद आया कि ये वही नाग जोइस थे जिन्होंने इसी घर में, इसी गाँव में सीता से उनका विवाह कराया था। दोपहर के भोजन के बाद, सत्यप्पा सुब्बन्नय्या के घर गए और हिरियन्नय्या भी उनके साथ गए। दोनों ने करुणा और सौहार्द के साथ परमेश्वरय्या की आत्महत्या की पृष्ठभूमि, जहाँ तक उन्हें पता थी, समझाई। सुब्बन्नय्या की पत्नी विशालाम्मा, जो परमेश्वरय्या की पत्नी की ही उम्र की थीं, भी इस बातचीत में शामिल हुईं और बोलीं, "इन सब की जड़ सावित्री का उस मंजय्या से शादी करना है, इतनी हठपूर्वक, जबकि उसके पिता और भाई ने उसे रोकने की पूरी कोशिश

की थी। उसने उसकी प्रतिष्ठा के बारे में अच्छी तरह जानते हुए भी उससे शादी की। कम से कम उसे उसके साथ चुपचाप रहना चाहिए था, यह सोचकर कि बाहर जो चाहे करे, लेकिन अगर वह घर पर अच्छा और सही है, तो इतना ही काफी है। लेकिन वह अपने पति के मामलों को अनदेखा नहीं कर सकी और अपने पिता के घर लौट आई। उसे अपने पिता के घर में रहने में बुरा और थोड़ा शर्मिंदगी महसूस हुई, उसने नौकरी पाने पर जोर दिया, चन्नरायपट्टाना गई और एक स्कूल शिक्षिका की नौकरी पा ली। बस, बात यहीं खत्म हो गई।" और अब, अगर वह दृढ़ थी, यह सोचकर कि उसका मंजय्या से कोई संबंध नहीं है और उसे फांसी की सजा भी हो जाए तो उसे कोई फर्क नहीं पड़ता, तो यह आदमी झूठी गवाही देने क्यों गया? ऐसा क्यों हुआ? क्या उसे यह एहसास नहीं था कि एक झूठ बोलने के बाद उसके पिता का जीना नामुमकिन हो जाएगा?' विशालाम्मा ने गलती का सारा बोझ सावित्री पर डाल दिया। सत्यप्पा सावित्री की शादी में शामिल होने के लिए बिलिकेरे आए थे। उसके बाद वे यहाँ नहीं आए। उन्होंने सावित्री के पति का घर छोड़कर अपने पिता के घर लौटने और चन्नारायपट्टाना में शिक्षिका के रूप में नौकरी करने की खबर दूर-दूर से ही सुनी थी, लेकिन उन्हें पूरी जानकारी नहीं थी। इसलिए सत्यप्पा ने मंजय्या से मिलने और उनसे बात करने से पहले सारी जानकारी जुटाने का फैसला किया।

जब सत्यप्पा घर लौटे, तब तक रामकृष्ण के ससुर, नागप्पा, जो टिप्पुर के नारियल गोदाम के मालिक थे, आ चुके थे। उन्होंने सफेद रंग की धोती और बिना कॉलर वाली, लंबी आस्तीन की सफेद कमीज पहनी हुई थी, जिसमें अंदर और बाहर तीन-तीन जेबें थीं। वे चटाई पर बैठे थे। उनके बगल में एक काली टोपी और कालीन के कपड़े का एक पर्स रखा था। सत्यप्पा उन्हें तब से जानते थे जब वे टिप्पुर के गोदाम या मंडी में नारियल और खोपरा बेचा करते थे। अब उन्होंने टिप्पुर जाना बंद कर दिया था। लेकिन शुरू से ही उनका कारोबार चन्नवीरप्पा के गोदाम से ही था। इसलिए, रिश्तेदार होने के बावजूद, उनके और नागप्पा के बीच कोई खास सौहार्दपूर्ण संबंध नहीं थे। स्वभाव में अंतर भी एक कारण था। नागप्पा भी धर्मोदक अर्पित करने आए थे। यदि दिवंगत परमेश्वरय्या के स्वयं के कर्मों से परलोक में वैतरानी नदी पार करना संभव न हो, तो इस व्यक्ति के कर्म भी दिवंगत परमेश्वर के कर्मों में जुड़ जाएंगे और उनका प्रेत अगले लोक में पहुंच जाएगा! सत्यप्पा को सुब्बन्नय्या के घर में सुनी हुई बात याद आ गई। नागप्पा मुख्य गवाहों में से एक था,

जिसने बताया था कि हत्या की रात मंजय्या उसके साथ तिपपुर में था। नागप्पा को अदालत में झूठी गवाही देने से पहले ही मंजय्या से एक हजार रुपये इनाम के तौर पर मिले थे। और अब यही आदमी अपने अच्छे कर्मों का फल परमेश्वरय्या को अर्पित करेगा! सत्यप्पा को घृणा हुई। फिर भी वह चुपचाप चटाई पर बैठा रहा। नागप्पा ने स्वयं चुप्पी तोड़ी। उसने सत्यप्पा से पूछा, 'आपके यहाँ एक एकड़ गीली, सूखी या बाग की कीमत कितनी है?' सत्यप्पा ने उसे चुप कराने की कोशिश की और कहा, 'क्षमा कीजिए, मुझे नहीं पता। मेरा बेटा व्यापार का काम देख रहा है।' लेकिन नागप्पा इतनी आसानी से चुप होने वाला व्यक्ति नहीं था। सौभाग्य से बैलगाड़ी की आवाज सुनाई दी। रामकृष्ण बाहर गए। उनके पुत्र गणेश चन्नरायपट्टाना से बैलगाड़ी में रसद और समारोह के लिए आवश्यक सभी सामान लादकर लाए थे। रामकृष्ण, गणेश और बैलगाड़ी का सेवक थैले घर के अंदर ले जा रहे थे। सत्यप्पा भी उठकर थैले उठाने में उनकी मदद करने लगे, हालांकि रामकृष्ण ने आपत्ति जताई। नागप्पा उठकर बाहर चले गए। चलते हुए सत्यप्पा ने उनकी दाहिनी पिंडली पर एक सफेद पट्टी देखी। उन्होंने सोचा कि यह कोई छोटा-मोटा कट या घाव होगा।

सावित्री पिछवाड़े में कुएँ के पास पत्थर की पटिया पर कपड़े धो रही थी। उसने अपने देवर को आते और अपने पीछे खड़े होते हुए नहीं देखा। जब उन्होंने उसे 'साती' कहकर पुकारा, तो वह आश्चर्य से पीछे मुड़ी। उसे कोई 'साती' कहकर नहीं बुलाता था। जब वह ढाई साल तक अपने देवर के घर में रही थी और छोटी बच्ची थी, तब सत्यप्पा उसे इसी नाम से पुकारते थे। एक पल के लिए वह असमंजस में खड़ी रही, लेकिन उस याद से उसे सुकून मिला और उसका चेहरा खिल उठा।

सत्यप्पा ने कहा, 'मुझे तुमसे बहुत कुछ कहना है। मैं सब कुछ जानना चाहता हूँ, इसलिए आ जाओ। सिर्फ हम दोनों, तुम कब खाली हो?'

सावित्री ने उत्तर दिया, "सब लोग खाना खत्म कर लें। नौकरानियाँ अभी लाए गए चावल और दाल साफ करने आ रही हैं। वे पूरी रात काम करती हैं, हम बिना किसी रुकावट के बातें कर सकते हैं।" एक मिनट बाद उसने कहा, "लेकिन भाव के बारे में बात करने के लिए क्या बचा है? सब कुछ खामोशी में समाप्त हो गया है।"

'मैं सब कुछ जानना चाहता हूँ। आपको खुद ही बताना होगा। मुझे किसी तीसरे व्यक्ति से आपके बारे में सुनना पसंद नहीं है।'

उसने कोई जवाब नहीं दिया। वह कपड़े निचोड़ने लगी। सत्यप्पा अभी भी वहीं खड़ा था। सावित्री ने पूछा, 'क्या रामचंद्र और उनकी पत्नी नहीं आ रहे हैं?'
'उनकी पत्नी का यह दूसरा प्रसव है। बच्चा अभी सिर्फ दो महीने का है। वह वैकुंठ समारोह के लिए साइकिल से आएंगे और शाम को लौट जाएंगे। उनकी सास वहीं रहती हैं, लेकिन छोटे बच्चे और स्तनपान कराने वाली मां के साथ घर में पुरुष के न होने से उन्हें अकेलापन और चिंता महसूस होती है।'
नागप्पा बाहर गए थे और देर से लौटे, जिससे भोजन में देरी हो गई। मधुमेह रोगी होने के कारण उन्होंने केवल रागी की लोई को सांभर में लपेटकर खाया और छाछ पी। बाकी सबने चावल खाए। रागी की लोई खाते हुए नागप्पा ने मैसूर के दार्शनिक राजा राजर्षि कृष्णराज वोडेयार चतुर्थ की कहानी सुनाई। यह राजा रागी की लोई खाया करते थे, इसीलिए रागी की लोई का नाम कृष्णराज वोडेयारु पड़ा। जो भी नियमित रूप से रागी की लोई खाता है, उसका मन भी इसी तरह संतुलित रहता है। नागप्पा ने रागी के गुणों का वर्णन किया, जो सर्वविदित थे। हालांकि, इस कहानी से माहौल थोड़ा हल्का हो गया। सत्यप्पा ने अनुमान लगाया कि गणेश को अपने दादा के प्रति न तो प्रेम है और न ही सम्मान। उन्हें पता था कि गणेश ने उच्च शिक्षा के दौरान अपने नाना के घर में रहकर पढ़ाई की थी और अब वे वहां से निकलकर हसन में अध्ययन कर रहे हैं। रामकृष्ण तो असहनीय रूप से चुप रहे।
जब सब लोग रात को सोने ही वाले थे, तभी तीन नौकरानियाँ अंदर आईं। रसोई के सामने वाले भोजन कक्ष में, उन्होंने वैकुंठ-समाराधना के लिए आवश्यक धनिया, चावल, दाल और अन्य सभी चीजों के थैले और पैकेट खोलने शुरू किए और सफाई करने लगीं। सत्यप्पा, जो हॉल में सो रहे थे, सावित्री के बुलावे पर उठे, शेड में गए और उसी पत्थर की बेंच पर बैठ गए जिस पर वे दोपहर में बैठे थे। धुएँ से सना हुआ एक बिजली का बल्ब मंद-मंद जल रहा था। सावित्री सत्यप्पा के चरणों के पास नारियल के पत्तों से बनी चटाई पर बैठी और बोली, 'भाव, मैं जानती हूँ कि तुम मुझसे क्या पूछना चाहते हो। आज तक मैंने किसी से भी अपने मन की बात नहीं कही है। मैंने किसी को भी यह नहीं बताया है कि घटनाएँ कैसे और क्यों घटीं। मैं क्यों बताऊँ? जो लोग तुम्हारी बात सुनते हैं, वे केवल जिज्ञासावश सुनते हैं। क्या उनमें यह सब सहने और समझने की हिम्मत है? अगर मेरी माँ जीवित होतीं, तो मैं उन्हें बता देती। अगर सीताक्का जीवित होतीं, तो मैं उन्हें बता देती। और तुम, तुम तो यहाँ आए ही नहीं।' आज ही तो तुम आई और 'साती' कहकर पुकारा।

सत्यप्पा को याद आया कि वह छोटी सावित्री को 'साती, घमंडी' कहकर पुकारते थे। अब उन्हें एहसास हुआ कि आत्मसम्मान व्यक्तित्व का एक अंतर्निहित गुण है। उन्हें लगा कि वह उससे खुलकर बात कर सकते हैं, क्योंकि उसने भी पुराने दिनों की आत्मीयता का संकेत दिया था। उन्होंने पूछा, 'पूरा गाँव मंजय्या की बदनामी के बारे में जानता था, सबको पता था कि वह अय्याश है। तुम भी दृढ़ इच्छाशक्ति वाली महिला थीं। फिर भी, तुम इतनी जिद्दी क्यों थीं कि उससे शादी करने पर अड़ी रहीं?'

जैसे कि उसके पास जवाब तैयार हो, उसने कहा, 'मैंने ऐसा क्यों किया?' उसके चेहरे से आत्म-निंदा वाली उदास मुस्कान गायब हो गई और उसने आगे कहा, 'मैं इस सवाल पर करीब एक लाख बार सोच चुकी हूँ; नहीं, नहीं, सोच नहीं चुकी, सोच रही थी। अब नहीं, अब मैंने सोचना बंद कर दिया है। अगर मैं प्रारब्ध या कर्म कहूँ, तो यह मेरे कर्म की ज़िम्मेदारी से बचने की कोशिश है। इसलिए, उस रास्ते पर न चलें। चलिए इसे शुद्ध जुनून, साधारण मोह कहें। मैं उस घिनौनी पकड़ में आ गई थी और हद तो यह थी कि सत्रह साल की लड़कियों में पैदा होने वाले अहंकार ने इसे और भड़का दिया। चलिए मैं आपको बताती हूँ कि यह कैसे हुआ। आप कल्पना कर सकते हैं, आप समझ जाएँगे। आपने गांधीजी की शिक्षाओं को आत्मसात किया है, वेदांत का अध्ययन किया है और उनका अभ्यास किया है। आपको याद है ना, हमारे गाँव के तालाब में वह चट्टान, ऊँट के कूबड़ जैसी, वह ऊँची वाली। उस चट्टान के चारों ओर पानी गहरा बहता है, वहाँ एक भंवर भी है।' वह चट्टान फिसलन भरी है और उसकी बनावट ऐसी है कि अगर आप फिसल गए तो वापस चढ़ने के लिए पैर जमाने की जगह नहीं मिलेगी। जो भी अपना संतुलन खो देता, उसकी निश्चित मौत हो जाती। गांव की कोई भी महिला वहां कपड़े धोने नहीं जाती। याद है ना, मां वहां कपड़े धोने गई थीं और फिसलकर डूब गई थीं?

सत्यप्पा ने सहमति जताते हुए कहा, "हां, हां। मुझे याद है। एक बार मैं उस चट्टान से कूदा और तैरने लगा। पास ही बने तालाब की सीढ़ियों पर कपड़े धो रही सीता ने मुझे देख लिया। वह तुरंत रोते-चिल्लाते उस तरफ दौड़ती हुई आई। मैं पीछे मुड़ा यह देखने के लिए कि वह क्यों चीख रही है और मैंने कहा, "चिंता मत करो, मैं अच्छा तैराक हूं। गहरे पानी में तैराक को ज्यादा खुशी मिलती है।" लेकिन उसने मेरी बात नहीं मानी और कहा, "मुझसे वादा करो, वादा करो कि तुम उस चट्टान के

पास कभी नहीं जाओगे; भगवान की कसम खाओ, वह एक बुरी चट्टान है," और मुझसे वादा ले लिया।"
हां, वही चट्टान। मुझे तैरना नहीं आता था। फिर भी मैं उस चट्टान पर कपड़े धोने जाया करती थी। क्यों? मुझे नहीं पता, समझ नहीं आता था। लेकिन अब सोचती हूं तो लगता है शायद वह चट्टान मुझे अपनी ओर खींच रही थी क्योंकि वहीं मेरी मां की मृत्यु हुई थी!
सीताक्का की मृत्यु के बाद जब मैं गाँव लौटी, तो मुझे अंदर ही अंदर बहुत तकलीफ हो रही थी कि मैं माँ-बाप के बिना अनाथ हो गई थी। मुझे अपनी माँ की मृत्यु का इतना गहरा दुख हुआ था कि मेरा हृदय और मन उनसे जुड़ी किसी भी चीज़ की ओर खिंचा चला जाता था। जिस चट्टान ने मेरी माँ को मारा था, उसका आकर्षण भी वैसा ही था, या शायद अनजाने में ही मेरे मन में अपनी माँ के भाग्य का अनुसरण करने की इच्छा थी। जब मैं उस चट्टान पर अकेली बैठकर कपड़े धो रही थी, तो हवाएँ कितनी तेज़ थीं, लहरें कितनी उग्र थीं! दूर स्थित अरलिहल्ली वनों की कतारों से उठती हुई, पूरी झील हज़ारों-हज़ारों, नहीं लाखों विशाल लहरों से भर जाती थी, जो एक के बाद एक आती थीं, तेज़ी से चट्टान से टकराती थीं, न केवल मेरे धोए हुए कपड़ों को बल्कि मुझे भी घुटनों तक भिगो देती थीं। ओह, मेरा मन तड़पता था कि अपनी दृष्टि को फैलाऊँ, उस झील की पूरी लंबाई और चौड़ाई पर अपनी नज़रें गड़ा दूँ, जिसने मेरे भीतर इतनी उलझन पैदा कर दी थी। और मेरे भीतर ऐसा रोमांच उमड़ता था कि मुझे आकाश में पहुँचने का आनंद मिलता था। जब उस तरफ से हवा चलती है, तो दोपहर ढलते ही हमारे तालाब में लहरें उठने लगती हैं। मैं हमेशा से यह देखने के लिए तरसती थी, खासकर उस खतरनाक ऊंट चट्टान पर खड़े होकर पानी को चीरती लहरों को देखने की मेरी तीव्र इच्छा थी। मैं इस इच्छा को रोक नहीं पाई। एक दिन जब मैं कपड़े धो रही थी, मंजय्या तैरते हुए चट्टान तक आया। लेकिन वह चट्टान के पास नहीं आया और उस पर चढ़ा नहीं। वह गहरे पानी के उस भंवर में तैरता हुआ आया। वह चट्टान के पास वाले रास्ते से तैरता हुआ चला गया। मैंने पानी के अंदर उसका शरीर देखा। 'मुझे यह बताने में शर्म आ रही है, भावा,' सावित्री रुक गई।
आपको शर्म या झिझक क्यों महसूस होनी चाहिए? मुझे बताएं।
छलनी और छन्नी में चावल और दाल धोने की लगातार आवाज़ आ रही थी। सावित्री धुएँ से सने बल्ब को देखती बैठी रही। सत्यप्पा चुपचाप इंतज़ार करते रहे। कुछ

मिनट बाद, उसने बोलना शुरू किया, "उन दिनों की सावित्री अलग थी। जो आपके सामने बैठकर यह कहानी सुना रही है, वह बिलकुल अलग है। उस सावित्री को बहुत पहले आग में जलाकर राख कर दिया गया था। और अप्पा की मृत्यु के बाद, सब कुछ नष्ट हो गया है और उस पुरानी सावित्री के बस कुछ निशान ही बचे हैं। तो मुझे शर्म क्यों आनी चाहिए?" जब सावित्री ने ये शब्द कहे, तो उसकी आवाज़ में एक शुद्ध साक्षी का तटस्थ भाव था। उसने कहा, "हाँ, मंजय्या सुंदर था, बहुत आकर्षक था। उसकी त्वचा गुलाबी रंग की थी, लाल और सफेद का मिश्रण। क्योंकि वह अक्सर तेज़ धूप में बाहर रहता था, इसलिए उसका चेहरा, गर्दन और कोहनी टैन हो गई थीं और काली पड़ गई थीं। लेकिन साफ पानी की पारदर्शी चादर के नीचे उसका शरीर बेहद आकर्षक था। उस दिन मैंने इसका अनुभव किया।" उस दिन लहरें इतनी तेज़ और शक्तिशाली नहीं थीं। अगर लहरें हमेशा की तरह तेज़ और उग्र होतीं, तो तैराक का चेहरा इतना साफ़ दिखाई नहीं देता। लेकिन लहरों की कोमल और धीमी लय ने नए रूप गढ़े, जिससे आकृति कभी दिखती तो कभी गायब हो जाती, और एक जादू सा पैदा हो गया। जब मैंने उस दिन मंजय्या को देखा, तो उसकी छवि मेरे मन में बस गई। हमारे घर के बगल वाली गली में रंगमणि नाम की एक लड़की रहती थी। वह मेरी ही उम्र की थी। एक युवक उससे शादी करने के इरादे से उनके घर आया था। औपचारिकताएं पूरी हो चुकी थीं, उसे लड़की पसंद आ गई थी और शादी तय हो गई थी। उस लड़की ने मुझे चार-पांच बार कहा था, 'हर तरह के युवक मुझसे मिलने आते हैं और दिलचस्पी दिखाते हैं। लेकिन मंजय्या जैसा लड़का क्यों नहीं आता?' सुब्बी नाम की एक और लड़की ने भी मंजय्या की खूब तारीफ की थी, उसके आकर्षक और सुंदर चेहरे की। कई लड़कियां उसकी तरफ आकर्षित थीं, बल्कि चुपके से उससे प्यार करती थीं। उस दिन, चट्टानों पर खड़े होकर, मुझे भी प्रेम की भावना जागृत हुई। मैं उस पर मोहित हो गई, जो गहरे पानी में तैरता हुआ चला गया, या यूँ कहूँ कि उसके शरीर पर मोहित हो गई। उसके बाद वह सात-आठ दिनों तक चट्टान पर वापस नहीं आया। मुझे नहीं पता कि वह तैरने आया ही नहीं, या उस तरफ आया ही नहीं, या जब मैं वहाँ थी तब आया ही नहीं। लेकिन अब मुझे लगभग यकीन है कि वह जानबूझकर दूर रहा। मैं वहाँ चट्टान पर खड़ी होकर पानी को देखती रहती थी। 'वह क्यों नहीं आया? वह क्यों नहीं आया?' मेरा मन चिंता करने लगा। फिर एक दिन वह आया, अगले दिन भी, और उसके अगले दिन भी। वह लगातार चार

दिनों तक आया और मेरी चट्टान के पास तैरता हुआ चला गया, बिल्कुल अकेला, बिना मुझे देखे। पाँचवें दिन, तेज़ हवाएँ चल रही थीं, पानी उबड़-खाबड़ था और लहरें बहुत थीं। मैंने सोचा कि वह उस दिन नहीं आएगा। हालाँकि ऐसी उबड़-खाबड़ लहरों में भी तैरा जा सकता है, लेकिन उसमें क्या आनंद होगा? लेकिन जब मैं इस निराशा से कपड़े निचोड़ रही थी कि मुझे उसे तैरते हुए देखे बिना घर जाना पड़ेगा, तभी मुझे उसकी आवाज़ सुनाई दी, जो मुझे 'सावित्री' कहकर पुकार रही थी। यह आवाज़ तालाब के गहरे पानी से आ रही थी। मैं पीछे मुड़ी। हाँ, वही था! वह चट्टान की ओर तैरता हुआ आया। मैंने तुम्हें बताया था कि उस ऊँटनुमा चट्टान पर गहरे पानी से पैर जमाना बहुत मुश्किल था। उसका भी पैर फिसल रहा था और लहरें उसे धकेल रही थीं। किसी तरह उसने पैर जमाया और खुद को चट्टान पर आधा ऊपर खींच लिया। उसकी धारीदार शॉर्ट्स पानी के अंदर दिखाई दे रही थीं। मैं डर गई। किसी और बात से नहीं। बस अचानक हुई इस घटना से। वह भी ज़ोर-ज़ोर से साँस ले रहा था, लेकिन एक मिनट में उसने अपनी साँसों पर काबू पा लिया और चट्टान से टकराती लहरों की आवाज़ के बीच उसने कहा: 'काफी समय से तुमसे बात करना चाहता था। मैंने शादी की उम्र की कई लड़कियाँ देखी हैं। उन्होंने मुझे बहुत अमीर परिवारों की लड़कियाँ भी दिखाईं। लेकिन तुम्हारी तस्वीर मेरी आँखों के सामने हमेशा रहती है, मैं जहाँ भी जाता हूँ।' अगर इस तालाब में लहरें न होतीं, तो मैं तुम्हें दिखाता कि इन गहरे पानी में तुम्हारी छवि कैसी दिखती है। बताओ, क्या तुम मुझसे शादी करोगी?’ यह कहते हुए, जब उन्होंने मेरे चेहरे की ओर देखा, तो मैं शर्म से लाल हो गई और अपनी नज़रें झुका लीं। मुझे ऐसा लगा जैसे मैं तेज़ लहरों में बह रही हूँ। वे एक मिनट चुप रहे और बोले, ‘लोग मेरे बारे में तरह-तरह की बातें कह सकते हैं। तुम्हारे पिता कह सकते हैं, मंजय्या अय्याश है, उससे शादी मत करो। खैर, सच कहूँ तो, मैं सोने की तरह पवित्र नहीं रहा हूँ, न ही मैं कोई फ़रिश्ता हूँ। लेकिन मैं उतना बुरा भी नहीं हूँ जितना लोग मुझे बताते हैं। क्या मुझे नहीं पता कि शादी के बाद और घर बसाने के बाद मुझे कैसा व्यवहार करना चाहिए? अगर तुम मेरी पत्नी बनकर मेरे घर आओगी, तो तुम मेरे घर की रानी बनोगी। देखो, मैं जल की देवी गंगा की कसम खाता हूँ,’ और उन्होंने अपनी हथेलियों को जोड़कर पानी से भर लिया और आहुति के रूप में बहा दिया। लहरें उठ रही थीं और चट्टान से टकरा रही थीं। लेकिन मैं कुछ भी सुनने की हालत में नहीं थी। उस मानसिक स्थिति में भी मैंने उसे कहते सुना, ‘तुम सोच लो। मैं तुम्हारे

फैसले के अनुसार ही काम करूंगा।' फिर वह तेज़ी से सिर के बल पानी में कूद गया। हालांकि मुझे पता था कि वह पानी के अंदर तैर रहा है, लेकिन जब वह काफी देर तक ऊपर नहीं आया, तो मैं थोड़ा चिंतित हो गया। फिर मैंने उसे दूर से सतह पर आते और केंद्र की ओर तैरते हुए देखा। मैं वहीं खड़ा रहा, कुछ भी महसूस नहीं कर पा रहा था। मेरा मन बाहरी चीजों से दूर, अंदर की ओर, तलहटी में चला गया था। मुझे अपने सामने के टैंक, हवा और लहरों का कोई आभास नहीं था। हालांकि मैं घुटनों तक भीगा हुआ था, फिर भी मुझे पसीना आ रहा था। मैंने फिर से टैंक के बीचोंबीच देखा। लहरें ऊंची उठ रही थीं और उग्र रूप ले रही थीं। वह कहीं भी दिखाई नहीं दे रहा था। अंत में एक छोटा सा काला धब्बा सिर की तरह दिखाई दिया। मैं गुस्से से भर गया। इतनी भयंकर लहरें उठ रही थीं, ऐसे में उसे इतनी दूर तैरने की क्या ज़रूरत थी?

वह रुक गई। सत्यप्पा भोजन कक्ष से आ रही अनाज फटकने और छानने की आवाज़ के बीच सारी बातों और पृष्ठभूमि को समझने की कोशिश करते हुए वहीं बैठे रहे। सावित्री ने कहा, 'मैंने आपको बताया है कि यह मोह कैसे शुरू हुआ। कोई भी बता सकता है कि यह कैसे शुरू होता है। लेकिन केवल ब्रह्मा ही जानते हैं कि यह क्यों होता है। क्या ऐसा नहीं है?'

सत्यप्पा ने पूछा, 'क्या मंजय्या ने बाद में तुमसे मिलने की कोशिश नहीं की? क्या उसने तुमसे बात नहीं की? क्या उसने तुम्हारे पिता से तुम्हारा हाथ मांगा या तुमने खुद अपने पिता से मंजय्या से तुम्हारी शादी करवाने के लिए कहा?'

'इस घटना के तीन दिन बाद, वह मुझसे मिला। जी हाँ, उसी जगह पर, उस ऊँट चट्टान के गहरे पानी में। वह चट्टान के पास तैरता हुआ आया। "अगर तुम मुझसे शादी करने के लिए राज़ी हो जाओ, तो अपने भाई से कहना कि वह तुम्हारा विवाह मुझसे करवा दे। मुझे पता है तुम्हारे परिवार वाले आसानी से राज़ी नहीं होंगे। वे कहते हैं कि मंजय्या एक दुष्ट व्यक्ति है। वे तुम्हें मुझसे शादी न करने की सलाह देंगे। वे अड़े रहेंगे। लेकिन अगर तुम दृढ़ रहो और उतनी ही जिद्दी बनो, तो हमारा विवाह हो जाएगा। तुम्हें ही इसका प्रबंध करना होगा। मैं इस जीवन में तुम्हारे सिवा किसी और लड़की से शादी नहीं करने वाला हूँ," उसने कहा और पानी में कूदकर तैरकर चला गया।'

इसलिए, परिवार की ओर से कोई विरोध नहीं हुआ।

विरोध! कड़ा विरोध हुआ। क्या अप्पा ने कभी मुझ पर आवाज़ उठाई थी, मुझे डांटा था? या मुझ पर हाथ उठाया था? उन्होंने धैर्यपूर्वक मुझे मामले की सच्चाई समझाने की कोशिश की। लेकिन जब मैं टस से मस नहीं हुई, तो उन्होंने मुझे बेरहमी से पीटा। उनका गुस्सा शांत नहीं हुआ। फिर उन्होंने मुझे लगातार लात मारी, मेरी कमर और पीठ पर लगातार लातें मारते रहे। दर्द में मैं गिन भी नहीं पाई कि उन्होंने मुझे कितनी लात मारी। मंजय्या को पता होगा कि मेरे पिता इस शादी के लिए कभी राजी नहीं होंगे। वह इंसानी फितरत से भली-भांति वाकिफ थे। वह समझते थे कि किस तरह के लोग कुछ आदर्शों को अहमियत देते हैं और कौन कुछ बातों पर कभी राजी नहीं होता। शायद इसीलिए उन्होंने मुझे अपने भाई से पूछने को कहा था। आखिर में, मेरे भाई ने ही मेरे लिए सब कुछ किया। अप्पा लंबे समय से अलग-थलग रहे थे। मेरी शादी के बाद तो वे और भी अलग-थलग हो गए। उन्हें पता था कि मंजय्या जैसी इंसान को बदलना नामुमकिन है और उन्हें लगा कि अगर वह उनसे शादी करने के लिए इतनी जिद्दी है, तो उसके भाग्य में दुख और तकलीफ लिखी है, यही उसकी किस्मत है। विरोध करना या चिंता करना व्यर्थ था। इस लड़की की मूर्खता का एकमात्र उत्तर वैराग्य ही था। जब मैं मंजय्या के घर से चली गई और वापस आई, तब भी अप्पा ने शोक व्यक्त नहीं किया। उन्होंने पूर्ण वैराग्य प्राप्त कर लिया था।

सत्यप्पा को अपने ससुर की याद आ गई। जहाँ तक उन्हें याद था, उनके ससुर हमेशा उदासीन और उदासीन रहते थे। अचानक उन्हें एक तरह की संतुष्टि और संतोष का अनुभव हुआ। मंजय्या की तरह सत्यप्पा भी इसी घर के दामाद थे। सत्यप्पा ने स्वयं परमेश्वरय्या की पुत्री का हाथ अपने विवाह के लिए मांगा था। परमेश्वरय्या ने सत्यप्पा के बारे में पूछताछ करने के बाद तुरंत सहमति दे दी थी। अपनी पुत्री को उसके पति के घर भेजते समय उनकी आँखों में आँसू भर आए थे। विवाह के बाद सत्यप्पा ने सीता को कभी दुख नहीं पहुँचाया। वह खुश थी और जब वह अपने पिता के घर गई, तो उसने उन्हें अपनी संतुष्टि के बारे में बताकर खुश कर दिया। यह छोटी बच्ची सावित्री भी उनके साथ रहती थी। इन सब बातों को याद करके सत्यप्पा को मंजय्या से अपनी तुलना करने और खुद को श्रेष्ठ समझने पर शर्म महसूस हुई। मानो इस आंतरिक तुलना से बचने के लिए उन्होंने पूछा, 'अच्छा, तो तुमने उससे विवाह किया। क्या उसने तुम्हें कम से कम वैवाहिक जीवन की

शुरुआत में खुश रखा? क्या उसने तुम्हारे साथ अच्छा व्यवहार किया?' आपने वह जगह कैसे और क्यों छोड़ी?
सावित्री ने तुरंत कोई जवाब नहीं दिया, चुपचाप सिर झुकाए बैठी रही। सत्यप्पा ने भी कोई दबाव नहीं डाला। थोड़ी देर बाद, मानो उसने कोई फैसला कर लिया हो, वह बोली। लेकिन उसने न तो अपना सिर उठाया और न ही सत्यप्पा की आँखों में देखा। कालिख से ढके विशाल बर्तन को देखते हुए, उसने धीमी आवाज़ में कहा, "मैंने आपको पहले भी बताया है कि मैं अब साक्षी की तरह बोलती हूँ। अगर वह सावित्री जीवित होती, तो उसके लिए वह कहना संभव नहीं होता जो मैं अब बता रही हूँ। जो मैं बता रही हूँ, वह यह समझने के लिए बहुत ज़रूरी है कि मंजय्या किस तरह का इंसान है। जब मैं उसके घर गई, तो उसने मुझे यह एहसास दिलाया कि कोई भी स्त्री मेरे जितनी भाग्यशाली नहीं है। उसने अपने दिल की बात खुलकर बताई और मुझे ऐसी खुशियाँ दिखाईं जिनके बारे में मैंने कभी सुना या जाना नहीं था। उसने हमारी शादी की पहली रात को ही शयनकक्ष में मेरा दिल जीत लिया। मैं अपने पिता और भाई के विपरीत बातूनी हूँ। आधे घंटे के भीतर ही उसने मेरी नई दुल्हन वाली झिझक और शर्म को दूर कर दिया। उसने बताया कि कैसे उसे मुझसे प्यार हो गया।" उन्होंने मेरी सुंदरता, रंग-रूप, कद-काठी, चेहरे की बनावट की तारीफ की, मेरे बालों को संवारा, बालों में लगे फूलों की खुशबू की सराहना की और कहा कि मेरा शरीर कितना प्यारा है। उन्होंने ज़रा भी जल्दबाजी नहीं दिखाई। उन्होंने मेरी चिंता दूर की, मेरा हाथ थामा और कहा, "अगर तुम मान जाओ तो..." इस तरह उन्होंने अगले कदम की ज़िम्मेदारी मेरे कंधों पर डाल दी। उन्होंने मुझे यह एहसास दिलाया कि अगर मैं पहली ही रात ऐसे पति को निराश कर दूं, तो मैं कैसी पत्नी हूं, और इस तरह उन्होंने मेरा दिल जीत लिया। तीसरे दिन हम उनके घर में चले गए। उनके बड़े से घर में कोई और नहीं था। वह पूरा घर हमारा था! कितना रोमांटिक लग रहा था! बिस्तर के बगल में दो बड़े शीशे थे। तीन महीने पहले, मैं कभी सोच भी नहीं सकती थी कि यह इतना रोमांचक और आनंददायक होगा और मैं बिना झिझक या संकोच के ये सब कर पाऊंगी। न ही मैं यह सोच सकती थी कि मेरा रूप-रंग, रंग-रूप और मेरा शरीर इतना आनंद दे सकता है। मैं खुशी से फूल गई, खुद को सचमुच भाग्यशाली महसूस कर रही थी। मुझे अपने ऐसे खूबसूरत शरीर वाले पति पर गर्व था। इसके अलावा, मुझे कपड़े धोने, कुएँ से पानी लाने जैसे घरेलू काम नहीं करने पड़ते थे। यह ईंट और सीमेंट का बना हुआ घर

था। हमारे यहाँ ज़्यादा मेहमान नहीं आते थे। नौकर आज्ञाकारी थे। वे तब तक नहीं बोलते थे जब तक उनसे बात न की जाए।
सावित्री कुछ देर रुकी और अपने भीतर उमड़ रही शर्म और घृणा को दबाकर उसने अपना चेहरा ऊपर उठाया और अपने देवर की आँखों में देखते हुए बोली, "छह महीने बीत गए। बाहर क्या हो रहा था, मुझे बिल्कुल भी पता नहीं था, क्योंकि मैं उस खुशी में डूबी हुई थी जो किसी नई दुल्हन को नहीं मिलती। क्या आपने मिडिल स्ट्रीट की डोड्डमत्ते को देखा है? वह छोटी कद की महिला, गोल-मटोल सुंदर चेहरे वाली, जो हमेशा अपने गालों पर खूब हल्दी लगाती थी?" सावित्री ने उसके चेहरे की ओर देखा। उसे याद नहीं आया। उसने आगे कहा, "कोई बात नहीं। वह बहुत बातूनी है। एक शाम वह हमारे घर अरिसिना-कुमकुम के लिए आई थी। मैं अकेली थी। उसने मेरा हालचाल पूछा और पूछा कि मैं अभी तक गर्भवती क्यों नहीं हुई। आप जानते हैं, इस तरह के सवाल बूढ़ी औरतें नई शादीशुदा लड़कियों से पूछती हैं। मैं क्या जवाब देती? मैंने भी इस बारे में सोचा था। लेकिन एक और विचार भी था।" अगर मैं गर्भवती हो जाती, तो पति के साथ साझा किया जा रहा यह अद्भुत सुख रुक जाता, कम से कम प्रसव और बच्चे को दूध पिलाने की अवधि तक। डोड्डम्मत्ते यहीं नहीं रुकीं। उन्होंने बात को फिर से उछाला और सवाल किया, "बताओ प्यारी बच्ची, क्या तुम्हारा पति तुम्हारे साथ सोता है या नहीं?" अपने पति की बिस्तर पर शक्ति और पौरुष को याद करके मैं मुस्कुरा दी। डोड्डम्मत्ते ने फिर जोर देकर कहा, "अरे, बताओ ना, तुम इतनी शर्मा क्यों रही हो? क्या मुझे नहीं पता कि मंजय्या किस तरह का इंसान है?"
'तुम्हारा मतलब क्या है, डोडमेट?'
"तुम उसे बहुत पसंद करती थी, ज़िद करके उससे शादी कर ली, जबकि बहुत से लोग इसके खिलाफ थे। लेकिन तुमसे शादी करने के बाद भी, लगता है मंजय्या ने अपनी पुरानी आदतें नहीं छोड़ी हैं। रोज़ शाम को वह अपने बगीचे में बनी झोपड़ी में अलग-अलग स्त्रियों के साथ मौज-मस्ती करता है। इसीलिए मैंने तुमसे पूछा था कि क्या वह तुम्हारे साथ सोता है या नहीं। वैसे भी, तुम अभी तक गर्भवती नहीं हुई हो। ओह, मेरी प्यारी बच्ची, तुम इतनी खूबसूरत हो कि तुम्हें छूने से पहले हाथ धोने का मन करता है। ऐसी पत्नी घर में होते हुए भी वह उन वेश्याओं और कुत्तियों के पीछे क्यों भागता है?"

डोड्डम्मत्ते ने शक का बीज बोया और चली गई। क्या मुझे उस पर विश्वास करना चाहिए? वह, जो मुझे हर रात प्रेम के सुख में डुबो देता था, उसके लिए हर शाम दूसरी महिलाओं के साथ जाना कैसे संभव था? कुछ स्त्रियाँ ऐसी होती हैं जो पति-पत्नी के बीच कलह का बीज बोती हैं। यह डोड्डम्मत्ते भी उसी श्रेणी की थी। मैं जानती थी कि उसने कई लोगों के जीवन में कलह और झगड़े पैदा किए हैं। जब मेरे पति रात आठ बजे घर आए तो मैंने उन्हें गौर से देखा। खाने के बाद भी, मैं उन पर कड़ी नज़र रखती रही। लेकिन मुझे कुछ भी नज़र नहीं आया। वह मेरे साथ प्रेम करने के लिए इतने बेताब थे मानो मेरे सिवा दुनिया में उनके लिए कोई और स्त्री ही न हो। यह पहले से कहीं बेहतर था। मुझे ऐसे पति पर शक करने का पछतावा हुआ और मैंने सोचा कि मुझे खुद को एक थप्पड़ मार लेना चाहिए। पश्चाताप की उस अवस्था में, मैंने अपने पति को वह सब बता दिया जो डोड्डम्मत्ते ने बताया था। क्या आप जानते हैं कि उन्होंने क्या कहा? 'अरे, वह नरसप्पा की बूढ़ी पत्नी पुट्टानी? इस उम्र में भी उसे मेरे जैसे कम से कम चार पुरुषों की ज़रूरत है।' इस तरह उन्होंने डोड्डम्मत्ते के चरित्र को धूमिल और बदनाम कर दिया। लेकिन डोड्डम्मत्ते उस तरह की औरत नहीं थी और मैं यह जानती थी। 'हमारे प्रेम-प्रसंग के बाद जब हम सोने ही वाले थे, वह अचानक उठा, अपने कपड़े पहने और मुझसे कहा कि एक मिनट के लिए दरवाजा बंद रखूँ, जब तक वह बाहर जाकर वापस न आ जाए। सीधे मिडिल स्ट्रीट जाकर उसने डोड्डम्मत्ते के घर का दरवाजा खटखटाया, उसके पति और सभी पड़ोसियों को जगाया, इकट्ठी भीड़ के सामने चिल्लाया और बताया कि डोड्डम्मत्ते ने उसकी पत्नी से क्या कहा था। और फिर गालियाँ बरसाने लगा, हर तरह के अश्लील शब्दों का इस्तेमाल करते हुए। "हाँ, यह सच है। हर शाम मैं अपने बगीचे में एक अलग औरत के साथ सोता हूँ। तो क्या? इससे तुम्हें क्या लेना-देना? क्या वह तुम्हारी बेटी है या तुम्हारी पोती? अगर तुम इसे कुरेद रही हो और ताने मार रही हो, तो बुढ़िया, तुम भी अंदर से खुजली कर रही होगी, मदहोश होगी, नाच रही होगी। तुम्हारा पति, नरसप्पय्या, बूढ़ा हो गया है और चबूतरे पर बाहर सोने लगा है। तो, उस खुजली की वजह से तुम्हारे अंदर हलचल मची हुई है।" वहाँ जमा हुए लोग लगातार गालियाँ सुनते हुए सिर झुकाए बैठे रहे। ऐसा लगता है कि तभी नरसप्पय्या भी चिल्लाने लगा और अपनी पत्नी पर आरोप लगाने लगा। अपनी अश्लील गालियों से डोड्डम्मत्ते को डराकर, मंजय्या घर आया और सो गया। उसने सही अनुमान लगाया था – यह घटना अगली सुबह पूरे गाँव में

फैल जाएगी और कोई भी औरत उसकी पत्नी से इस बारे में बात करने की हिम्मत नहीं करेगी। और उसके बाद किसी ने भी मुझसे इस बारे में बात नहीं की। असल में, कोई अरिसिना-कुमकुम के लिए भी नहीं आया। क्या तुम सुन रहे हो भाव?
सत्यप्पा ने कहा, 'जी हां। बिल्कुल, मैं सुन रहा हूं।' यह कहते हुए भी उनके मन में आज के उन राजनेताओं का ख्याल आ रहा था जो लोगों को धमकाने या डराने के लिए गुंडागर्दी का सहारा लेते हैं। लेकिन वे सावित्री की बातों पर भी ध्यान दे रहे थे। और उन्होंने उससे पूछा, 'लेकिन क्या तुम्हें कोई शक नहीं हुआ? क्या तुम्हें सच जानने की इच्छा नहीं हुई?'
'क्या मैं नहीं करूँगी?' मुझे लगने लगा कि वैवाहिक जीवन से बाहर सुख भोगने की प्रवृत्ति उसके खून में है। एक और संदेह मुझे सताने लगा। मैं अभी तक गर्भवती क्यों नहीं हुई? क्या उसके अय्याशी भरे संबंधों और मेरी गर्भावस्था के बीच कोई संबंध था? हमारी शादी के समय वह चौंतीस साल का था और मैं सिर्फ सत्रह साल की। लेकिन वह ऐसा दिखता नहीं था। कोई उसकी उम्र का अंदाजा नहीं लगा सकता था। वह तेईस या चौबीस साल के युवक जैसा दिखता था। आज भी वह वैसा ही है। मुझे नहीं पता, क्या आपने उसे हाल ही में देखा है? खैर, मुझे यह जानने की उत्सुकता हुई कि शादी से पहले उसने क्या किया था और क्या शरारतें की थीं। लेकिन मैं इन सब बातों के बारे में किससे पूछती? बार-बार संदेह अपना सिर उठाता, चाहे मैं खुद को कितना भी दिलासा देने की कोशिश करती। इसके अलावा, वह किसी के दरबारी काम या व्यवसाय के लिए अक्सर चन्नरायपट्टाना और हसन जाता था। यह भी मेरे संदेह का एक कारण था।'
एक बार वह किसी काम से चार दिन के लिए गाँव से बाहर गए थे। क्या अकेले में ही शक और संदेह शैतान की तरह पनपने लगते हैं? मैंने हर हाल में सच्चाई जानने का निश्चय किया। उस समय तक मुझे पता चल चुका था कि मंजय्या ने डोड्डम्मत्ते के साथ दुर्व्यवहार किया था। हमारी नौकरानी केम्पम्मा ने मुझे बताया था। केम्पम्मा एक वफादार नौकरानी थी। हम उसे सालाना पचास रुपये देते थे और रहने-खाने के साथ-साथ साड़ियाँ और अन्य कपड़े भी मुफ्त देते थे। उसे हमारे घर में ही रहना पड़ता था और सारे घरेलू काम करने पड़ते थे। वह मुझसे दोस्ताना और स्नेहपूर्ण थी। ऐसा लगता है कि वह अंदर ही अंदर सुलग रही थी क्योंकि उसके मालिक ने एक नेक इंसान की इतनी सुंदर और बुद्धिमान बेटी से शादी करने के बाद भी अपनी पुरानी आदतें नहीं छोड़ी थीं। साथ ही, वह इस बात को लेकर भी चिंतित थी

कि पुत्तनम्मा के साथ जो हुआ, वह उसके साथ न हो। उसने बताया कि उसके मालिक ने पुत्तनम्मा को सबक सिखाया था, जो परिवारों में कलह पैदा करती थी और मंजय्या के पक्ष में बोलती थी। लेकिन अनकही बात कुछ और ही इशारा कर रही थी। मैंने उस बात को भांप लिया और उससे घनिष्ठता का इजहार किया। "देखो केम्पम्मा, जब मैं तुम्हें देखती हूँ, तो मुझे अपनी मरी हुई माँ की याद आ जाती है। तुम्हारे सिवा मेरी देखभाल करने वाला और कौन है?" मैं उसके पास गई, उसका हाथ पकड़ा और एक करीबी दोस्त की तरह बोली, "देखो केम्पम्मा, मैं तुम्हारी कसम खाती हूँ कि मैं इस बारे में किसी को नहीं बताऊँगी। और मैं भगवान की कसम खाती हूँ, किसी भी हालत में मैं मंजय्या को नहीं बताऊँगी। मैं सच जानना चाहती हूँ। अफवाह है कि मेरे पति के मुझसे शादी करने से पहले कई अफेयर थे और अब भी हैं। सिर्फ़ डोड्डम्मत्ते ही नहीं, बहुत से लोग उसके बारे में बहुत कुछ कहते हैं। क्या यह सच है? कृपया मुझे बताओ।"

केम्पम्मा ने कुछ नहीं कहा, बस इतना ही बोला, "अम्मा, आप लोगों की बातों की चिंता क्यों करती हैं?" लेकिन मैं चुप नहीं रह सकी। मैंने फिर से ज़ोर देकर कहा कि हम माँ-बेटी की तरह हैं और मेरी आवाज़ में गहरा दर्द था। सच कहूँ तो, केम्पम्मा के सिवा वहाँ मेरे सबसे करीबी कौन था? आख़िरकार उन्होंने कहा: "जी अम्मा, यह सब सच है। मेरे मालिक के संबंध न केवल बिलिकेरे में थे, बल्कि चन्नारायपट्टाना और हसन में भी थे। आज भी उनके संबंध हैं। जब भी मेरे मालिक किसी स्त्री को देखते या मिलते हैं, तो उनके मन में सबसे पहला विचार यही आता है, 'मैं उसे कैसे अपने जाल में फँसाऊँ? मैं उसे कैसे पाऊँ?' वे इस मामले में माहिर हैं। किसी स्त्री का चेहरा देखकर ही वे जान जाते हैं कि वह कैसी स्त्री है, मानो उन्होंने उसकी नब्ज़ पकड़ ली हो।" केम्पम्मा ने उपवन में हुई झोपड़ी की घटना की पुष्टि की। आगे उसने कहा, "पर ये आदमी, मेरे मालिक, कभी पैसा बर्बाद नहीं करते। अगर कोई उनसे पैसे मांगता है, तो वो दे देते हैं। लेकिन ये अफवाह है कि जो औरतें एक बार उनके साथ सोती हैं और बिस्तर पर उनकी कला का आनंद लेती हैं, वे खुद ही उनके पास आती हैं और बिना किसी एहसान, यहाँ तक कि पैसे की भी माँग किए, उन्हें बुलाती हैं। कहते हैं कि वो लोगों के मन को जीतने में इतने माहिर हैं।" जब केम्पम्मा ने ये कहा, तो मेरा शक और गहरा गया और मैंने सोचा, क्या मैंने भी उनकी इस कला से मोहित होकर अपना मन उन्हें सौंप दिया था? मुझे

ऐसा लगा जैसे किसी ने मेरी पीठ में छुरा घोंप दिया हो। मैं गहरे दुःख से भर गई। मेरे आत्मसम्मान ने मुझे रोने से रोक दिया।
यह जानकारी मेरे भीतर तक पहुँच गई और मेरे अस्तित्व पर गहरा असर डाला। लेकिन इसे पचाना मेरे लिए मुश्किल था। पूरी रात मुझे ज़रा भी नींद नहीं आई। जिस पलंग पर हम दोनों सोए थे और सपने देख रहे थे, उससे मेरे मन में घृणा उत्पन्न हो गई। पलंग के बगल में लगे उन दो लंबे दर्पणों को देखकर मुझे इतना गुस्सा आया कि उन्हें तोड़-फोड़ देने का मन हुआ, क्योंकि मुझे लगा कि वे केवल छल दिखा रहे हैं। मैं उठा, उस कमरे से बाहर गया, ज़मीन पर पलंग बिछाया और वहीं सो गया। केम्पम्मा ने यह देखा और मुझ पर दया आ गई। अगली सुबह, मैंने केम्पम्मा को बुलाया और कहा, "देखो, इस बार जब तुम्हारा स्वामी घर लौटकर उस झोपड़ी में जाए, तो तुम उस पर नज़र रखना और मुझे सूचना देना।" लेकिन वह घबरा गई और बोली, "तुमने कसम खाई थी कि तुम इस बारे में किसी को नहीं बताओगे।"
"ठीक है, मैं फिर से तुम्हारा हाथ थामकर कसम खाती हूँ। मेरा नाम सावित्री है। मैं परमेश्वरय्या की पुत्री हूँ। मैं अपने पति को किसी दूसरी स्त्री के साथ रंगे हाथों पकड़ूँगी। तब चोर को चोरी करते हुए सिर झुकाना पड़ेगा। और फिर ऐसा चोर चोरी करना छोड़ देगा। खैर, जो हो गया सो हो गया। कम से कम भविष्य में तो मैं अपने पति को सिर्फ अपने लिए ही चाहती हूँ। क्या यह इच्छा गलत है? देखो केम्पम्मा, तुम माँ हो, तुम्हारी भी मुझ जैसी बेटी है। साल में एक बार तुम उसके परिवार से मिलने जाती हो। बताओ, क्या अपने पति को अपने पास रखने की मेरी इच्छा गलत है?" मैंने यह कहकर उसका हाथ थाम लिया और फिर से कहा, "मैं किसी को नहीं बताऊँगी। अगर तुम चाहो तो मैं कसम खा सकती हूँ," और कहा, "तुम्हें एक बात समझनी चाहिए, इस आदत वाले पति हमेशा अपनी पत्नियों से डरते हैं।"
उसी शाम वह हसन से लौटा। वह मेरे लिए तेज़ सुगंध वाले चंपक के फूल, बड़े लाल और पीले संतरे, मीठी खुशबू वाला स्वादिष्ट मैसूर पाक, रिबन, पाउडर का डिब्बा और सोने की बिंदी वाली कांच की चूड़ियाँ लाया। बस यात्रा के कारण उसका चेहरा लाल हो गया था और पसीना बह रहा था, फिर भी मुझे देखते ही वह मुस्कुराया। उसने नहाया, तरोताज़ा हुआ और खाना खाया। हर समय वह आँखों और शब्दों से इशारे कर रहा था। फिर उसने मेरा हाथ पकड़ा, मेरी कलाई में

चूड़ियाँ पहनाईं, मेरी चोटी में चंपक के फूल लगाए, मेरे चेहरे पर पाउडर लगाया, मुझे शयनकक्ष में ले गया और उस बड़े दर्पण में मेरा चेहरा दिखाया। मैंने भी ऐसा व्यवहार किया जैसे मुझे कुछ पता ही न हो। उसने मुझसे कहा कि मैं केम्पम्मा को उनका खाना दे दूँ और अपना खाना जल्दी खत्म करके कमरे में आ जाऊँ। और फिर, सचमुच भावा, मैं तुम्हें बिना किसी झिझक या संकोच के बता रही हूँ, दर्पण पर लगे बल्ब की तेज रोशनी में देखते हुए, हमारे शरीर इतने करीब थे, प्रेम की वो फुसफुसाहटें मेरे पूरे शरीर को घेर रही थीं, मैं खुद को भूल गई। केम्पम्मा ने जो कहा, वो झूठ ही होगा। मैंने सोचा कि वो थोड़ा बेपरवाह होकर बोलते हैं और इसीलिए लोग तरह-तरह की कहानियां गढ़ लेते हैं। मैं अब सत्रह साल की लड़की नहीं हूँ। मैं प्रेत बन गई हूँ, एक प्रेत जिसने पुरुष और स्त्री के सभी युगों और भेदों को पार कर लिया है। उन्होंने देखा कि मेरा मन कभी-कभी भटक जाता है और पूछा, 'क्यों?' मैं मुस्कुराई और बोली, 'अगर आप मुझे छोड़कर चार दिन के लिए चले जाएं तो क्या मैं ऊब नहीं जाऊंगी?' लेकिन बाद में जब वो सो गए, तो मुझे बिल्कुल नींद नहीं आई। पूरी रात मैं करवटें बदलती रही, एक पल भी नींद नहीं आई, और सच और झूठ के बीच का अंतर तय करने में उलझन में थी।

अगले दिन शाम के पाँच बज रहे थे। शुक्रवार का दिन था, मुझे अच्छी तरह याद है। वह खेतों में गए हुए थे। मवेशी चराने गई केम्पम्मा अकेले ही घर में दौड़कर आईं। वह मेरे सामने खड़ी हुईं और फुसफुसाते हुए बोलीं, “अब तुम बाग में जाओ, कोई आवाज़ मत करना, बस झोपड़ी के पास खड़े होकर सुनना। द्वार बंद होगा। यह चाबी लो। अपना हाथ छोटे द्वार में डालो। बिना आवाज़ किए ताला खोलो, अंदर जाओ, द्वार बंद करो, ताला लगाओ और बाग में चले जाओ। चाहे कुछ भी हो जाए, मेरा नाम मत लेना। अपनी माँ की कसम खाओ,” उन्होंने मेरा हाथ पकड़ा, मुझसे वादा करवाया और तेज़ी से चली गईं। क्या तुम भाव समझते हो? अब मैं मुख्य बात पर आती हूँ।’ सावित्री ने उनके चेहरे की ओर देखा।

सत्यप्पा सब कुछ ध्यान से सुन रहा था और उसने उसे याद दिलाते हुए कहा, 'हां, मैं सुन रहा हूं। तुम बगीचे में गई थी।'

मेरा दिल ज़ोर से धड़कने लगा। चिंता, उत्साह और एक अजीब सा रोमांच था कि मैं चोर को रंगे हाथों पकड़ने वाली हूँ। मैंने एक मिनट में फैसला कर लिया। मैंने अपने घर का दरवाजा बंद किया, तेज़ी से चली, छोटे से गीले खेत को पार किया और नहर से होते हुए बाग के द्वार तक पहुँची। मैंने चप्पल नहीं पहनी थी, मैंने

केम्पम्मा द्वारा दी गई चाबी से चुपचाप ताला खोला और उसी खामोशी से द्वार बंद करके अंदर चली गई। केम्पम्मा के घर आने से ठीक पहले मैंने अपना चेहरा धोया था। लेकिन मैंने कोई क्रीम या पाउडर नहीं लगाया था। मैंने कल लाए गए चंपक के फूल अपनी चोटी पर नहीं लगाए थे। इसलिए, मुझे पूरा भरोसा था कि फूलों या पाउडर की खुशबू से उसे शक नहीं होगा। मैं पहाड़ी की चोटी पार करके झोपड़ी के पास खड़ी हो गई। झोपड़ी का दरवाजा बंद था। ऐसा लग रहा था जैसे प्यार-दुलार चल रहा हो। कल हसन से लाए गए चंपक के फूलों की खुशबू झोपड़ी से बाहर आ रही थी। मुझे ऐसा लगा जैसे कोई मेरे अंदर छुरा घोंप रहा हो। झोपड़ी से एक स्त्री की आवाज़ आई, "हसन का मैसूर पाक हमारे गाँव की देवी के मेले में गंडासी बनजिगा शेट्टी द्वारा बनाए गए मैसूर पाक से कहीं ज़्यादा स्वादिष्ट होगा। अरे, तुमने तो उसे चखा ही नहीं।" वह आदमी कह रहा था, "जब तुम यहाँ हो, तो मुझे मैसूर पाक की क्या ज़रूरत है? तुम खा लो। मैं हसन की गलियों में घूम रहा था। मुझे एक मिठाई की दुकान दिखी। तुरंत मुझे अपनी मल्ली याद आ गई। मैंने सोचा, अगर बस छूट भी जाए तो भी कोई बात नहीं, मुझे उसके लिए मिठाई ज़रूर खरीदनी है। पूरी रात मैं तुम्हें यह मिठाई खिलाने का सपना देखता रहा।" उसने शरमाते हुए जवाब दिया, "अरे, अगर तुम ऐसी बातें कहोगे, तो मुझे समझ नहीं आएगा कि कैसे और क्या-क्या..." "अरे, क्या-क्या?" मुझे चटाई की सरसराहट सुनाई दी। "हे भगवान, इतना ज़ोर से मत पकड़ो, मेरी साँस फूल रही है। मुझे घुटन मत होने दो, प्लीज़...!" मैं बाहर खड़ा होकर सुनता रहा। वही जादू, चालाकी भरे शब्दों से सम्मोहन करना... शायद शरीर का भी जादू था। किसी स्त्री की प्रशंसा करके और उसे अपने वश में करने की शक्ति। घर पर वह मुझसे सभ्य और परिष्कृत भाषा में बात करता था, लेकिन यहाँ, अशिष्ट और देहाती भाषा। लेकिन अर्थ और तरीका एक ही था। अब पुरुष की आवाज़: "अरे, ठीक से करो।" और अब स्त्री की आवाज़, "मैं तुम्हें जैसे चाहो वैसे कर दूँगी। लेकिन क्या तुम मुझसे एक वादा करोगे?" "क्या है बेशर्म, बताओ क्या है। हाँ, ऐसे ही क्षणों में औरतें वादे करवाती हैं।" "कृपया मेरा हाथ पकड़ो।" "ठीक है, बताओ।" "मेरे अलावा किसी और औरत को इस झोपड़ी में मत लाना।" "अरे, तुम्हारा क्या मतलब है? मेरी पत्नी घर पर है।" "मैंने तुम्हें कब कहा कि तुम अपनी पत्नी के साथ मत रहो?" वह बोली। "वह घर तुम्हारी विवाहित पत्नी का है। यह झोपड़ी मेरी है। कोई और औरत इसमें प्रवेश नहीं कर सकती।" "अगर कोई और औरत आ भी जाए तो तुम्हें

क्या फर्क पड़ता है?" कुछ देर तक सन्नाटा छा गया। फिर उसने पूछा, "बताओ, अगर कोई दूसरी औरत यहाँ आ जाए तो तुम्हारा क्या नुकसान होगा? तुम्हारी माँ का पैसा?" "देखो अय्यानोरे, चाहे मैं सच कहूँ या झूठ, तुम्हें यकीन तो करना ही पड़ेगा। उस दिन तुम्हारे साथ जो आनंद मिला, उसके बाद मैं किसी और मर्द को नहीं चाहती। एक बार मीठा और रसीला आम चखने के बाद, क्या मैं खट्टे आमों के पीछे भागूँगी?" "वाह, कितनी समझदार लड़की है!" "अरे, मैं ये मज़ाक में नहीं कह रही। सच में, मैं अपनी माँ की कसम खाती हूँ। अगर तुम किसी और औरत को ले जाओगे, तो मुझे ऐसा लगेगा जैसे किसी ने मेरे पूरे शरीर पर मिर्च का पेस्ट मल दिया हो।"

'मुझे चक्कर आने लगे, मैं बस ज़मीन पर बैठ गई। एक सिसकी मेरे अंदर उमड़ रही थी, मानो फूट पड़ेगी। मैंने अपनी साड़ी का किनारा मुँह में ठूँस लिया। मैं चोर को रंगे हाथों पकड़ने आई थी। मुझे रोना नहीं चाहिए। दो मिनट के भीतर मेरा चक्कर उतर गया। मैं बस वहीं बैठी रही। उस धुंधलके में नारियल के पेड़ों की चोटियाँ आग की लपटों जैसी लाल हो गई थीं, लेकिन ज़मीन पर अँधेरा छा रहा था। झोपड़ी के अंदर की बातचीत। बिना किसी वाणी का सन्नाटा।' सावित्री यह सब सुनाते हुए अपने देवर के अस्तित्व को पूरी तरह भूल चुकी थी, जो उसके सामने पत्थर की बेंच पर बैठा था। वह बस खुद से बातें कर रही थी, मानो पुरानी यादों को खंगाल रही हो और ज़बान अपने आप बोल रही हो, "हे भगवान, बस करो, मैं बर्दाश्त नहीं कर सकती, मैं सहन नहीं कर सकती," मल्ली का सिसकना, सरकंडे की चटाई की सरसराहट। ओह, यह तो अंतहीन अश्लील खेल है, वही जो वह मेरे साथ बड़ी चारपाई पर खेल रहा था। अगर ऐसे ही चलता रहा, तो शायद अँधेरा हो जाएगा। अगर वह खेतों की तरफ जाता है, तो शाम साढ़े सात या आठ बजे के बाद लौटता है। मैंने उठकर चुपचाप घर वापस जाने का सोचा। मैं बाहर जाकर गेट बंद कर सकती थी, बिना कोई सुराग छोड़े। मैं कल्पना कर सकती थी कि अगर मैं वापस गई तो क्या होगा। वह करीब आठ बजे वापस आएगा। मुस्कुराहटें होंगी, खाना होगा, और बड़ी नरमी से मुझे भी खाना खाने के लिए कहेगा। फिर वह मेरे दिए हुए पान के पत्ते खाएगा और ठीक वैसे ही जैसे यहाँ, आधी रात तक बिजली की बत्ती जलाकर, पलंग पर, दर्पणों के सामने, वही प्यार भरी बातें, अंतरंग खेल और मटका जारी रखेगा। वह उस दर्पण में शुद्ध भेंट का नाटक रचता है, बिना किसी अशुद्धि के, मानो उसमें किसी तरह की गंदगी न हो। मुझे एक तरह का

एकांत भाव महसूस हुआ; हालाँकि यह दर्पण में बनी रचना थी, यह रोज़ होती थी। कोई झगड़ा नहीं होगा, कोई लड़ाई नहीं होगी। वैसे भी यह झोपड़ी अलग है। और वह घर अलग है। कोई भी उस घर में प्रवेश नहीं करेगा। वह किसी भी औरत को घर में नहीं लाएगा। यह सिर्फ एक मिनट के लिए था। हाँ, सिर्फ एक मिनट के लिए। मुझे वहां आने का अपना फैसला याद आ गया। अगर चोर रंगे हाथों पकड़ा गया, तो चोरी करने की उसकी हिम्मत टूट जाएगी। हां, मुझे इसे काबू में करना ही होगा। इतना ही नहीं, इस झोपड़ी को भी जलाकर राख कर देना होगा। इसी बीच फिर से कुछ बातचीत सुनाई दी। "ओह अय्यानोरे, मुझे छोड़ दो, अंधेरा हो गया है, मुझे छोड़ दो, मुझे जाना है।" "ठीक है, जाओ, क्या मैंने तुम्हें बांध रखा है? तुम जा सकती हो।" "अगर मुझे लंबी रस्सी से बांधा होता, तो मैं खोलकर चली जाती। लेकिन, जब तुमने मुझे पकड़ रखा है, तो चाहकर भी क्या मैं खुद को छुड़ा सकती हूं? अगर तुम चाहो, तो मैं कल दोपहर ही आऊंगी और तुम मुझे शाम तक पकड़ कर रख सकते हो। अब, कृपया, मुझे जाने दो।" मैं सोचने लगी, काश मैं अपने साथ माचिस की डिब्बी लाई होती, तो मैं झोपड़ी को उन दोनों के साथ अंदर ही जला देती और उठ जाती। थोड़ी देर में वे दोनों बाहर आ जाएंगे। उन्हें पकड़ने का पल नजदीक आ रहा है। ओह! मेरा दिल ज़ोर से धड़कने लगा। फिर से चक्कर आने लगे, नहीं, नहीं, मुझे ऐसा नहीं होने देना चाहिए। ढलते सूरज में नारियल के पेड़ों की चोटियाँ आग की तरह जलती हुई प्रतीत हो रही थीं, लेकिन चारों ओर और नीचे अँधेरा था। सन्नाटा। चारों ओर सन्नाटा। लेकिन झोपड़ी के अंदर? छी, मुझे वह आवाज़ नहीं सुननी चाहिए थी। मुझे घिन आ रही थी। जी मिचला रहा था। उल्टी जैसा महसूस हो रहा था। इस हालत में मैं चोर और चोरी की चीज़ को कैसे पकड़ सकता था? लेकिन मैंने हिम्मत नहीं हारी। इस मामले में चोर ज़्यादा अनुभवी था, लेकिन परिवार के मुखिया के लिए यह पहली बार था। फिर भी मैं दृढ़ निश्चय के साथ खड़ा रहा, मानो मैं भी एक नारियल का पेड़ हूँ, ताकि मैं उन्हें बता सकूँ कि मैंने अपनी आँखों से देखा है और मुझे सच्चाई पता है। मुझे लगा कि वे बस बाहर आ जाएँगे। मैं और साहसी हो गया। मैं उस झोपड़ी की ओर बढ़ा और झोपड़ी के दरवाज़े पर, जो बस पाँच कदम दूर था, सीधा खड़ा हो गया। दो मिनट के भीतर दरवाज़ा खुल गया। मल्ली सबसे पहले बाहर आई। अँधेरे में उसके चेहरे के हाव-भाव साफ़ नहीं दिख रहे थे। वह अपनी साड़ी ठीक कर रही थी, उसने मुझे देखा और पूछा, "कौन है?" वह अकड़कर चिल्लाते हुए बाहर आया, "कौन है?" उसने

मुझे पहचान लिया और एक पल के लिए अवाक रह गया। लेकिन बस एक पल के लिए, इससे ज़्यादा नहीं। फिर वह मल्ली की ओर मुड़ा, जो असमंजस में खड़ी थी, और बोला, "तुम बेवकूफ की तरह क्यों खड़ी हो? बाहर निकलो।" वह तेज़ी से पानी के गड्ढे के पास बाड़ की ओर बढ़ गई। फिर उसने झोपड़ी का दरवाज़ा बंद किया, मेरे पास आया, मानो कुछ हुआ ही न हो, और बोला, "चलो चलते हैं," और मेरे सामने खड़ा हो गया। मैं हिला तक नहीं। उसने एक मिनट इंतज़ार किया और बोला, "अगर तुम्हें यहाँ खड़े रहने का मन है, तो ठीक है। मैं बस तुम्हें अपने साथ चलने के लिए कह रहा हूँ, क्योंकि अंधेरा हो रहा है। इस बारे में घर पर बात करेंगे।" इतना कहकर वह चला गया, उसके हाव-भाव से साफ पता चल रहा था, आना चाहो तो आओ, नहीं तो नरक में जाओ... अंधेरा तेज़ी से फैल रहा था, इसलिए मैं उसके पीछे-पीछे गया। वह बाग के गेट के पास गया, देखा कि वह बंद है, मेरे वहाँ पहुँचने तक इंतज़ार किया और बोला, "अपने पास जो चाबी है उससे ताला खोलो।" मैंने चुपचाप ताला खोला और दरवाज़ा थोड़ा सा खोल दिया। वह बाहर आया, गेट बंद किया, मुझसे चाबी ली, ताला लगाया और आगे बढ़ गया। नहर पार करते और गीले खेतों की मेड़ पर चलते हुए, वह मुझे आगे रखता था, मेरे पीछे पहरेदार की तरह चलता था और फिर मेरे साथ-साथ चलने लगता था। अगर किसी ने हमें सड़क पर इस तरह चलते देखा होता, तो वे सोचते कि खुशहाल शादी के बाद एक जोड़ा
पार्क में टहलते हुए वे घर लौट रहे थे।
जब तक हम घर पहुँचे, केम्पम्मा गायों का दूध दुह चुकी थीं और रसोई के दरवाजे पर दूध का बर्तन रख रही थीं। मैं अंदर आई और हॉल में खड़ी हो गई। उसने अधिकारिक स्वर में पुकारा, "अरे, केम्पम्मा, इधर आओ।" जब वह आई तो उसने अपने बाएँ हाथ से उसका दायाँ कंधा पकड़ा और उसके गालों पर ज़ोरदार थप्पड़ मारे। दाँत पीसते हुए उसने कहा, "जब से मैंने तुम्हें नौकरानी के रूप में रखा है, तुम्हें खाने-पीने और कपड़ों की कोई कमी नहीं हुई है। मैंने तुम्हें तयशुदा रकम से ज़्यादा पैसे दिए हैं। जब भी तुम अपनी बेटी से मिलने जाती थीं, मैं तुम्हें खोपरा, गुड़, मिर्च, पुराने कपड़े और न जाने क्या-क्या देता था। मैं चुप रहा, जबकि मुझे पता था कि तुम मेरे बाग के पेड़ों से गिरे नारियल चन्नाबसप्पा की दुकान पर बेच रही थीं। और आज, हे कृतघ्न, तुमने यह अक्षम्य अपराध किया है। इस गाँव से अभी इसी वक्त निकल जाओ, अपने सारे सामान के साथ, वरना मैं तुम्हें खत्म कर दूँगा!"

उसने उसे बार-बार थप्पड़ मारे। चक्कर आने के कारण केम्पामा जमीन पर गिर पड़ी।
वह उस शयनकक्ष में चला गया जिसमें दर्पण लगे थे।
कुछ देर के लिए घर में सन्नाटा छा गया। करीब आधे घंटे तक ऐसा ही रहा। फिर अचानक मैंने केम्पम्मा को जोर-जोर से मुझे कोसते और रोते हुए सुना। "तुमने कसम खाई थी कि किसी को नहीं बताओगी। पर तुमने क्या किया? जाकर अपने पति को सब कुछ बता दिया। धिक्कारहीन कुतिया। तुम्हारा नाश होगा। तुम्हारा आने वाला जीवन इस कर्म का प्रमाण होगा। मैं शाम की बयार जलने के बाद अंधेरे में तुम्हारे घर से निकल रही हूँ। बहुत जल्द तुम भी अपना घर छोड़ दोगी। बस ऐसे ही।" इतना कहकर वह घर से बाहर चली गई। हालाँकि मैं उसे बताना चाहती थी कि मैंने अपने पति को कुछ नहीं बताया, मैंने तुमसे किया वादा नहीं तोड़ा, हालाँकि मैं उसे बुलाना चाहती थी और उसके दर्द को कम करना चाहती थी, मेरे शब्द गले में अटक गए। मुझे नहीं पता ऐसा क्यों हुआ, क्या यह उस दृश्य का परिणाम था जो मैंने देखा था या केम्पम्मा को पीटते समय उसकी क्रूरता का, जो उसकी माँ की उम्र की थी। मुझे अब भी समझ नहीं आता, हालाँकि मुझे वह सब याद है।
सावित्री चुप हो गई, मानो उसके पास कहने को कुछ बचा ही न हो और वह जो कहना चाहती थी कह चुकी हो। घर के अंदर चावल धोने की आवाज़ से सन्नाटा और गहरा हो रहा था। सत्यप्पा भी, जो इस समस्या पर विचार कर रहे थे कि आखिर इन सब के बाद सावित्री को मंजय्या के साथ रहने के लिए कैसे मनाएँ, आगे कुछ पूछना नहीं चाहते थे। इसी बीच नागप्पा जाग गए और वहाँ आ गए। वे पेशाब करने आए थे और पिछवाड़े में रखे भूसे के ढेर की ओर चले गए। वापस आए, स्नानघर गए, हाथ-पैर धोए और बिस्तर पर चले गए, अपने पीछे गीले पैरों के निशान छोड़ गए। उन्हें देखकर सावित्री का मन, जो अब तक एक तटस्थ साक्षी की तरह था, सामान्य अवस्था में आ गया। सत्यप्पा बैठे-बैठे नागप्पा के दाहिने पैर की पिंडली पर सफेद कपड़े से बंधी पट्टी के बारे में सोच रहे थे। मानो अब तक जिस विषय पर वे विचार कर रहे थे, उससे बचने के लिए सावित्री ने कहा,
'आपको पता है, नागप्पा शाम को बाहर गया था, है ना? वह मंजय्या के घर गया था और वहाँ उसके साथ दो-तीन घंटे बातें करता रहा। वह दूसरा मुख्य गवाह है जिसने अदालत में शपथ लेकर कहा कि कांची की हत्या वाली रात मंजय्या उसके

साथ तिपपुर में था। उसने मंजय्या से एक हजार रुपये लेने के बाद ही झूठी गवाही देने पर सहमति जताई।'
सत्यप्पा ने कहा, 'मुझे यह तो पता था, लेकिन मुझे यह जानकारी नहीं थी कि नागप्पा आज शाम मंजय्या के घर गए थे,' और पिछली बात को आगे बढ़ाते हुए पूछा, 'हाँ, केम्पम्मा उसी दिन आपके घर से चले गए थे। क्या आपने बाद में उनसे इस बारे में बात नहीं की? क्या आपने उन्हें फटकार नहीं लगाई?'
'अरे, डांट-फटकार!?' सावित्री ने मानो कुछ याद करने की कोशिश की और फिर बोली, 'मैं दूसरे कमरे में गई और गद्दे पर लेट गई। वह अपने शयनकक्ष में अकेला था। उसने न तो खाने की माँग की और न ही मैंने खाना बनाकर परोसा। पूरी रात मैं दर्द से तड़पती रही। उससे सामना करने और सवाल पूछने की हिम्मत ही नहीं बची। अरे, केम्पम्मा को पीटने में उसकी क्रूरता! इसी गाँव में पली-बढ़ी होने के कारण मैंने लोगों को एक-दूसरे को पीटते देखा था। लेकिन केम्पम्मा के दाहिने कंधे को कसकर पकड़कर, उसे, जो शायद उसकी माँ की उम्र की थी, बार-बार पीटना, वह क्रूरता, नहीं, वह महज़ गुस्सा नहीं था, वह एक जंगली जानवर की क्रूरता थी और उसने मेरे मन में दहशत पैदा कर दी थी। देखो, मुझे ऐसा लगा जैसे मैं किसी क्रूर राजा की वासना की शिकार बनकर कैद हो गई हूँ, जैसा कि फिल्मों में जादूगरों की कहानियों में दिखाया जाता है। हाँ, केवल ऐसा हिंसक और क्रूर व्यक्ति ही हत्या कर सकता है।' मुझे यह सोचकर अपराधबोध होने लगा कि मेरी गलती की वजह से केम्पम्मा को मार खानी पड़ी और घर छोड़ना पड़ा। लेकिन असल में मैंने उसे कुछ बताया ही नहीं था। फिर उसे कैसे पता चल गया, जैसे तीर निशाने पर लगता है, कि केम्पम्मा ने मुझे इशारा दिया था? बाग के गेट की एक ही चाबी थी। क्या दूसरी चाबी केम्पम्मा के पास थी? और क्या उसे यह पता था? उसने मुझसे सीधे पूछा, "तुम्हारे पास जो चाबी है उससे गेट खोलो।" शायद वह यह पक्का करना चाहता था कि चाबी मैंने केम्पम्मा से ही ली थी। मैं किससे पूछता? केम्पम्मा मुझे गलत समझकर घर छोड़कर चली गई थी। उसे लगा कि मैंने अपना वादा तोड़ दिया है। इससे मेरा दुख और बढ़ गया।
अगले दिन केम्पम्मा नहीं आई। मुझे घर के सारे काम करने पड़े, जैसे दूध दुहना, झाड़ू लगाना, घर के सामने का हिस्सा धोना, रंगोली बनाना, खाना बनाना आदि। पहले तो मैंने सोचा कि इनमें से कोई भी काम न करूँ। उन्होंने मुझसे बात नहीं की। मानो खेतों की ओर घर से निकल गए हों। लेकिन, जैसा कि मैंने सोचा, मेरी

कोई गलती नहीं है, इसलिए मैंने सारे काम कर दिए। वे आए और नाश्ता किया। घर पर रुके, दोपहर का खाना खाया, कंधे पर तौलिया डाला और गीले खेतों में काम करने के लिए चले गए। हाँ, मल्ली ने उनसे कहा था कि वह दोपहर में ही आ जाएँगी और वे उन्हें शाम तक रोक सकते हैं! मैं समझ गई कि वे यही करने गए हैं। मुझे थोड़ी देर बाद बाग में जाकर देखने का मन हुआ, लेकिन मैं नहीं जा सकी। मुझे घिन आ रही थी और बहुत डर भी लग रहा था। और तो और, जब मैंने उन्हें आमने-सामने देखा भी, तो मैंने क्या किया? और आज भी, मान लीजिए मैं वहाँ जाऊँ, झोपड़ी का दरवाजा खोलूँ, अंदर भागूँ और वह देखूँ; छी छी। देखने के बाद मैं क्या कर सकती थी? मुझे समझ नहीं आ रहा था कि क्या करूँ, बस लेट गई, हल्की नींद आ रही थी। लेकिन सोने से पहले ही मैं चौंककर जाग गई। वह शाम को वापस आया, जब दीपक जलाने का समय हुआ था। मुझे पक्का पता था कि वह वहीं गया था। मैंने सिर नहीं उठाया और न ही उसका चेहरा देखा। उसने चेहरा धोया और अपने कमरे में चला गया। वह रात के खाने के समय बाहर आया, जो मैंने परोसा था खाया और फिर कमरे में चला गया। मुझे रोने का मन कर रहा था, यह सोचकर कि वह कमरा उसका है, मेरा उस कमरे से कोई रिश्ता नहीं है। जब मैंने पिछली रात की तरह अलग कमरे में सोने के बारे में सोचा, तो मुझे लगा कि इस मामले को हमेशा के लिए सुलझा लेना चाहिए। मैंने खुद को समझाया कि मैं कमजोर या दुर्बल स्त्री नहीं हूँ और उसके कमरे में चली गई। दरवाजा बंद नहीं था। यह सोचकर थोड़ी उम्मीद जगी कि उसने मेरे लिए दरवाजा खुला रखा होगा। मुझे बोलने की हिम्मत मिली। मैं अंदर गई और दरवाजे के पास खड़ी हो गई। बड़ा सा बिजली का बल्ब जल रहा था। मैंने उस पलंग के बगल में लगे दर्पण में अपनी छवि देखी। मैं उसकी परछाई भी देख सकती थी, क्योंकि वह अपने पलंग पर लेटा हुआ था। मेरे अंदर गुस्सा उबलने लगा। लेकिन मैंने किसी तरह खुद को संभाला। जब मैं पांच मिनट तक उसी तरह खड़ी रही, तो वह अचानक उठा, मेरा हाथ पकड़ा, मुझे बिस्तर तक ले गया और उस पर बिठा दिया।

"तुमने ऐसा कैसे किया?" मैंने पूछा। "मैंने क्या किया?" उसने पलटकर जवाब दिया, मानो कोई वकील हो और उसमें अपराधबोध का कोई अंश न हो। "तुम्हारा क्या मतलब है? क्या तुमने मुझसे झूठ नहीं बोला?" "मैंने तुमसे किस बारे में झूठ बोला? बताओ, मैंने किस बारे में झूठ बोला? मैंने तुमसे क्या झूठ बोला?"

कुछ शब्द ढूंढते-ढूंढते मैंने कहा, “घर पर एक पत्नी हो और उसके साथ एक और हो, न केवल एक, बल्कि सैकड़ों औरतें हों। मान लीजिए मैं सौ औरतों के साथ जाता हूँ। फिर भी, यह झूठ कैसे होगा?”
"क्या तुम मुझे हर दिन, इसी दर्पण में दिखाते हुए, यह नहीं कहती कि तुम्हारे जैसी खूबसूरत कोई और नहीं है, वगैरह वगैरह?"
“हाँ, यह सच है। इसमें झूठ क्या है? हाँ, मैं कसम खाता हूँ, आज भी पूरी दुनिया में तुम्हारे जितनी खूबसूरत कोई औरत नहीं है।” इतना कहते हुए उसने मुझे बाहों में भरकर चूमने की कोशिश की।
लेकिन मैंने उसे एक तरफ धकेल कर पूछा, "क्या यह झूठ नहीं है कि तुम्हारे जैसी खूबसूरत कोई और नहीं है और फिर दूसरी महिलाओं के साथ संबंध बनाए रखना?"
“नहीं, ऐसा नहीं है। इसका मतलब सिर्फ इतना है कि मैं एक ऐसी महिला के साथ गया था जो उतनी खूबसूरत नहीं थी।”
“वकील की तरह बहस मत करो, वकील वाला चोला उतार दो। तुमने मुझसे झूठ क्यों बोला? मुझे जवाब दो।”
"देखो, अगर तुम्हें ठीक से याद है, तो ध्यान से सोचो और जवाब दो: क्या मैंने तुम्हें कभी बताया था कि मैं तुम्हारे अलावा किसी और महिला को कभी नहीं देखूंगा?"
"तुम हर रोज यही कह रहे थे।"
“अरे, सच में!? बिलकुल उन्हीं शब्दों में!?”
"जब आप कहती हैं कि आपके जैसी कोई महिला नहीं है, तो इसका मतलब भी वही होता है।"
“देखो, तुम लोगों की बातों का अपनी मर्जी से मतलब नहीं निकाल सकते और न ही निकालना चाहिए। चलो, बात को घुमाते-फिराते नहीं। तुम्हें पता है, उस दिन पुत्तनम्मा ने कुछ कहा था। जब मैं गाँव से दूर था, तब उस केम्पी ने मेरे खिलाफ अफवाहें फैलाईं। कल उसने चाबियाँ दीं और तुम्हें बाग में भेज दिया। कल कोई दूसरी औरत आएगी और कोई दूसरी कहानी सुनाएगी। देखो, आज इस मामले का अंतिम फैसला होना चाहिए। जिस दिन से मैंने तुमसे शादी की है और तुम्हें घर लाया हूँ, क्या मैंने तुम्हें बिस्तर में सुख की कमी महसूस कराई है? अगर किसी दिन भी तुम्हें ऐसा लगा हो, तो मुझे बताओ। तुम्हें संतुष्ट करना मेरा कर्तव्य है, दिन में एक-दो बार नहीं, बल्कि चार बार भी अगर तुम चाहो। लेकिन एक बार तुम्हारा पेट

पूरी तरह भर जाए, तो तुम्हें मुझे किसी और औरत के साथ संबंध बनाने से रोकने का कोई अधिकार नहीं है।”
तभी मुझे उसकी बातें ठीक से समझ आईं। यह जानकर मुझे घृणा हुई कि उसने वैवाहिक संबंध को किस हद तक, किस तरह के हिसाब से गिराया है। मैंने पूछा, "तुम जैसे व्यक्ति ने शादी करने की जहमत ही क्यों उठाई?"
“हाँ, मुझे अफ़सोस है। शादी करके मैंने गलती की। अगर तुम चाहो तो अपने पिता के घर वापस जा सकती हो। अगर नहीं, या अगर तुम्हें पसंद हो, तो मैं तुम्हारे लिए एक अलग घर बनवा दूँगा या बनवा दूँगा और तुम्हें चावल, दाल और जो भी ज़रूरत हो, भेज दूँगा। या मेरी पत्नी बनकर खुश रहो। मैंने तुम्हें पहले ही बताया है, मैं तुम्हें जितना चाहो उतना खिलाऊँगा। लेकिन अगर तुमने किसी और औरत के बारे में बात की या मुझे उससे दूर रखा, तो याद रखना कि केम्पम्मा के साथ क्या हुआ था। अब जाओ और उस दूसरे कमरे में सो जाओ। मैं तुम्हें मनाने वाला नहीं हूँ। अगर तुम अपनी मर्ज़ी से इस पलंग पर आती हो, तो मुझे खुशी होगी। मैं अब सोना चाहता हूँ।” उसने ऐसा कहा, शीशे वाली दीवार की तरफ मुड़ा, खुद को ढँक लिया और पलंग की बत्ती बंद कर दी। मुझे समझ नहीं आ रहा था कि क्या बोलूँ या क्या बहस करूँ।
भावा, मैं दूसरे कमरे में जाकर सो गई। तब मुझे क्या तकलीफ हुई? क्या वह सिर्फ़ दर्द था? नहीं, वह दर्द था मेरे विश्वास की पूरी बुनियाद के पिघलकर बिखर जाने का। अप्पा, अन्नय्या, अत्तिगे, डोड्डम्मत्ते और कई अन्य लोगों ने मुझे मंजय्या से शादी न करने की चेतावनी दी थी। लेकिन मैंने उनकी सभी आपत्तियों का जवाब ढूंढ लिया और हठपूर्वक उससे शादी कर ली। और अब यह जानकर बहुत दुख हुआ कि मेरा निर्णय ही एक भ्रम था। मैंने उससे बात करना बंद कर दिया, लेकिन मैंने उसके लिए खाना बनाया, उसे परोसा और दूसरे कमरे में सो गई। उसमें कोई बदलाव नहीं आया। न तो उसे पछतावा हुआ, न ही वह मेरे पास आकर माफी मांगने आया, न ही उसने वादा किया कि वह फिर कभी ऐसा नहीं करेगा। मैं सोचती रही; काश उसने वादा किया होता, तो शायद मैं चुप रहती! लेकिन उसने ऐसा क्यों नहीं किया? क्या उसे पारिवारिक जीवन पसंद नहीं था? या एक स्त्री के प्रति वफ़ादार रहना उसके स्वभाव में नहीं था? क्या इस तरह के पुरुषों को स्वाभाविक रूप से वह मुस्कान, चेहरे के हाव-भाव और बोलने का तरीका मिल जाता है जो किसी भी स्त्री को मोहित कर लेता है? मुझे अपने पिता के घर, उसी

गाँव में वापस जाने में शर्म आ रही थी। आख़िरकार, मैंने ही तो मंजय्या की तारीफ़ की थी और कहा था कि मैं उसका हाथ पकड़कर उसे सुधारूँगी, अपने परिवार का निर्माण करूँगी। इतना ही नहीं, मैंने उपवास रखा था, एक बूँद पानी भी नहीं पिया था और इतनी ज़िद में उससे शादी की थी। एक दिन मेरे अन्नाय्या मुझसे मिलने आए। उन्होंने मुझसे पूछा, "तुम टीबी के मरीज़ की तरह इतनी दुबली-पतली क्यों हो गई हो?" तब मैं खुद को संभाल नहीं पाई। मैं फूट-फूटकर रोई। अपने दुख को बाँटने से रोकना कैसे मुमकिन था? कुछ सांत्वना पाने के लिए मैं अपने भाई के साथ अपने पिता के घर आ गई। उसके बाद मेरा मन उस घर में वापस जाने का विरोध करने लगा। एक दिन अन्नाय्या मंजय्या के घर गए, इन बातों पर चर्चा की और पति-पत्नी के बीच कलह का कारण पूछा। लेकिन, ओह! उस बदमाश ने कितनी आसानी से झूठ बोल दिया! उसने मेरे भाई से कहा, "देखो, तुम्हारी छोटी बहन को अपनी सुंदरता पर बहुत घमंड है; वह सोचती है कि वह तीनों लोकों में सबसे सुंदर स्त्री है। तुमने उसे हद से ज़्यादा लाड़-प्यार दिया है। उसे लगता होगा कि वह सुंदर है और उसका पति गुलाम की तरह हमेशा उससे गिड़गिड़ाता रहे, 'हे मुझे बचाओ, मेरी रक्षा करो'। भला कौन ऐसा अपमान सहन करेगा? ऊपर से वह हमेशा मुझ पर शक करती है। मैं खेतों और बाग में काम करने के लिए सिर्फ़ पुरुष मज़दूर कहाँ से लाऊँ? यह कैसे मुमकिन है जब वह ज़िद करती है कि मैं स्त्री मज़दूर न रखूँ और उनसे कभी बात न करूँ?" उसने कहा। तब मेरे भाई ने कहा, "देखो मंजय्या, मैं सब जानता हूँ। पूरा गाँव जानता है कि तुम क्या हो। क्या यह सच नहीं है कि तुम सिद्धाम्मा की बेटी मल्ली और दूसरी गली की नागी, उसकी बहन और उस झोपड़ी में कई और स्त्रियों के साथ सोते हो? मुझे बताओ!" जब मेरे भाई ने पूछा, तो मंजय्या ने बेशर्मी से कहा, "मैं लाल ओलियंडर की माला पहनकर गाँव की देवी के सामने झूठ की कसम खाने को तैयार हूँ। लेकिन क्या तुम उसी देवी के सामने, वही लाल ओलियंडर की माला पहनकर, सच की कसम खाओगे?" मेरा भाई ऐसे आदमी से कैसे बात कर सकता है? मेरा भाई यह सोचकर वापस लौटा कि मंजय्या एक बदमाश है।

तब तक नागप्पा एक बार फिर जाग गए और सत्यप्पा और सावित्री के पास से गुज़रते हुए पिछवाड़े में रखे भूसे के ढेर तक गए, शौच करने के लिए वापस आए, हाथ-पैर धोए और बिस्तर पर लेट गए। सावित्री और सत्यप्पा काफी देर तक वहीं

बैठे रहे, उस खामोशी में जो बातचीत खत्म होने या किसी खास पड़ाव पर पहुँचने पर मन में छा जाती है। चावल धोने की आवाज़ भी धीरे-धीरे कम होती जा रही थी। काफी देर बाद सत्यप्पा ने चुप्पी तोड़ी और बोले, "देखो, नागप्पा के पहली बार बिस्तर से उठने के बाद से मेरे मन में एक विचार आ रहा है। मैं मंजय्या को अच्छी तरह जानता हूँ। और मुझे यह भी अच्छी तरह पता है कि उससे बात करके सच जानना मुश्किल है। अब, अपने ससुर को सत्य के लिए प्राण त्यागते देख, उसके जैसा घिनौना इंसान भी अंदर से पिघल गया होगा। शायद उसे अपनी गलती का एहसास हो गया होगा। मेरा पहला सवाल यह है कि अगर मंजय्या अपना गुनाह कबूल कर ले और तुम्हें वापस आने के लिए कहे, तो क्या तुम उसके पास वापस जाकर उसके साथ रहोगी? और दूसरा सवाल यह है..."... सत्यप्पा के अपनी बात पूरी करने से पहले ही सावित्री ने उन्हें बीच में ही रोक दिया।

"काश मेरे अप्पा ने अपनी जान न दी होती और मंजय्या ने सचमुच पश्चाताप किया होता, तो शायद मैं मान जाती! लेकिन अब, जब अप्पा ने सिर्फ एक झूठ बोलने के लिए आत्महत्या करके खुद को सजा दी है, तो भले ही यह मंजय्या खुद असली हरिश्चंद्र ही क्यों न हो, मेरा उससे कोई रिश्ता नहीं है। कृपया इसे छोड़ दें। आपने कहा था कि दूसरा सवाल है, वह क्या है?"

सत्यप्पा ने पूछा, "तुमने कहा था कि जब मंजय्या ने केम्पम्मा को इतनी बेरहमी से पीटा था, तो तुम्हें उसकी क्रूरता से घृणा हुई थी और तुम उससे तंग आ गई थीं। कांची भले ही सबसे बड़ा चोर हो, फिर भी क्या उसकी हत्या करना कम क्रूरता है? मंजय्या ने तुम्हारे पिता से विनती की होगी और कहा होगा कि अब वह बदल गया है। लेकिन तुमने उस व्यक्ति के साथ दोबारा रहने की सहमति कैसे दे दी जिसने इतना क्रूर काम किया था? अगर तुम सहमत नहीं होतीं, तो तुम्हारे पिता झूठी गवाही देने के लिए गवाह के कटघरे में क्यों खड़े होते?"

सावित्री को लगा जैसे वह फँस गई हो। उसका चेहरा पहले पीला पड़ा, फिर लाल हो गया। उसकी आँखें झुकी हुई थीं, मानो अपने देवर से नज़रें मिलाना उसके लिए मुश्किल हो। सत्यप्पा ने अपना सवाल नहीं दोहराया। थोड़ी देर बाद उसने कहा, "ऐसा नहीं है कि मुझे जवाब नहीं पता। मुझे सही जवाब पता है। लेकिन आज मैंने बहुत ज़्यादा बोल दिया है। मुझे जवाब देने में शर्म आ रही है। कृपया मुझे मजबूर न करें।" इतना कहकर वह चुप हो गई।

कुछ और समय बीत गया। सत्यप्पा को जम्हाई आने लगी। उन्होंने अपनी घड़ी देखी। डेढ़ बज चुके थे। वे सुबह चौदह मील पैदल चल चुके थे, भोर होते ही निकल पड़े थे ताकि दिन के ठंडे समय में बिलिकेरे पहुँच सकें। सावित्री ने कहा, 'अच्छा होगा कि आप थोड़ी देर सो लें,' और उठ गईं।

नागप्पा सोच रहे थे कि उन्हें ठीक से नींद क्यों नहीं आ रही है। उन्हें दो बार शौच के लिए उठना पड़ा और खाने में भी कोई बदलाव नहीं हुआ था। उन्होंने सोचा, शायद भोजन कक्ष में चावल और दाल धोने की आवाज़ के कारण ऐसा हो रहा हो, लेकिन उन्हें लगा कि केवल यही कारण नहीं हो सकता। मंजय्या के किसी व्यापारिक प्रस्ताव का ख्याल उनके मन में बार-बार आ रहा था। वे दुविधा में थे कि मंजय्या का प्रस्ताव स्वीकार करें या नहीं। नागप्पा के अनुभव के अनुसार, मंजय्या अब तक एक ईमानदार व्यक्ति रहे थे। वे हर बात खुलकर कहते थे। जिस रात वे नागप्पा से अपने पक्ष में गवाही देने के लिए कहने आए, नागप्पा तुरंत मान गए और मंजय्या ने उन्हें एक हजार रुपये के दस सौ रुपये के नोट दिए। आजकल चाहे आप कितने भी सावधान रहें, कुछ नकली नोट मिल ही जाते हैं। उस शाम जब नागप्पा ने सौ रुपये के दो नोट लेकर मंजय्या को दिए और कहा, 'देखिए, मैं इन दोनों से संतुष्ट नहीं हूँ। क्या आप इन्हें बदल देंगे?' तभी मंजय्या उन्हें अंदर ले गए और दो नए नोट लाकर नागप्पा को दे दिए। मंजय्या ने कोई शिकायत नहीं की, एक शब्द भी नहीं कहा। फिर भी नागप्पा दुविधा में था कि उसे इस सौदे पर सहमत होना चाहिए या नहीं। ज़ाहिर है, यह मंजय्या का कोई नया प्रस्ताव नहीं था। उसने यह प्रस्ताव तब रखा था जब वह आधी रात को चुपके से नागप्पा को गवाही देने के लिए बुलाने आया था। नागप्पा मंजय्या को साहसी समझता था। अगर उसे अदालत में बरी होने का भरोसा नहीं था, तो उसने इस सौदे के बारे में कैसे सोचा और मुझे यह प्रस्ताव कैसे दिया? मंजय्या ने पूछा, 'कैसी बात है, हमारे यहाँ का खोपरा आमतौर पर अलग-अलग थोक गोदामों में बिकता है। आपके यहाँ क्यों नहीं?'

नागप्पा ने उत्तर दिया, "देखिए, जो लोग थोक गोदाम में माल बेचते हैं, उनमें कुत्तों की तरह इलाका चिह्नित करने की प्रवृत्ति होती है। वे उन्हीं जगहों पर जाते हैं जहाँ वे जाने के आदी होते हैं। अगर आप जैसे लोग आगे आकर अपना इरादा बदल लें, तो वे मेरे गोदाम में भी माल बेचेंगे।"

ब्रोकरेज का काम थोड़ा मुश्किल और जोखिम भरा है।

नागप्पा ने कहा, 'देखिए, मैं दलाल को दिए जाने वाले प्रतिशत में कभी कटौती नहीं करूंगा। नागप्पा कभी अपने वचन से पीछे नहीं हटता, आप जानते ही हैं।'
नहीं। नहीं, मेरा मतलब यह नहीं था। आप ही बताइए, क्या बिचौलिए की भूमिका निभाना मेरे दर्जे के खिलाफ नहीं है? चलिए एक बात करते हैं। हम एक समझौता कर लेते हैं कि मैं भी आपके थोक गोदाम में भागीदार हूँ। बेशक, व्यापार का सारा वैध प्रबंधन, चेक पर हस्ताक्षर करना और इस तरह के सभी काम पूरी तरह से आपके अधिकार में होंगे। मैं यह सुनिश्चित करूँगा कि आसपास के सभी गाँवों का खोपरा सिर्फ आपके गोदाम में ही आए। अगर आप इस समझौते पर सहमत हो जाते हैं, तो देखिए, मेरे पास यह कहने का कारण होगा कि यह गोदाम मेरा भी है। हालांकि, मेरी ज़िम्मेदारी है कि मैं अपनी तरफ से आपको दस लाख रुपये का खोपरा लाकर दूँ। कोई जल्दी नहीं है, इस पर सोच-विचार कर लीजिए।
आज शाम भी उन्होंने यही प्रस्ताव रखा। नागप्पा इस बात पर विचार करने लगे। अगर मंजय्या दस लाख का सामान पहुँचाने में कामयाब हो जाता है, तो एक आना की साझेदारी देने में कोई बड़ा नुकसान नहीं होगा। फिर भी, एक आना की साझेदारी भी हो, तो यह तो बस मालिकाना हक तोड़ना और किसी और के हाथ में हिस्सा देना है। कहावत है कि खेती-बाड़ी कई हाथों में होनी चाहिए, जबकि व्यापार हमेशा एक ही व्यक्ति के हाथ में होना चाहिए। फिर लिखित दस्तावेज़ों की क्या ज़रूरत है? नागप्पा को एक विचार आया। चलो इन गाँवों के ग्राहकों को बता देते हैं कि मंजय्या की व्यापार में बराबर की हिस्सेदारी है। नागप्पा ने ठान लिया कि वह मंजय्या को इसके लिए राज़ी कर लेंगे। इस तरह यह बात तय हो गई। मंजय्या ने कहा कि वह नागप्पा को साइकिल पर बिठाकर कुछ गाँवों में संभावित विक्रेताओं से मिलवाएँगे। लेकिन नागप्पा ने सोचा कि ग्राहकों को खुद उनके घर जाने के बजाय अपने गोदाम में बुलाना बेहतर होगा। इससे वे प्रभावित होंगे। खैर, उन्होंने अपने उन ग्राहकों से मिलने का फैसला किया जो शुरू से ही उनके साथ व्यापार कर रहे थे। वैसे भी, धर्मोदक के बाद और वैकुंठ तक यहाँ करने को कुछ नहीं था। इसलिए, उसने सोचा कि वह तीन दिनों के लिए बैलगाड़ी किराए पर लेकर अकेले जा सकता है। तभी उसके मन को कुछ शांति मिली।
अपने व्यापारिक मामलों के निपटारे के बाद, नागप्पा अपने दामाद के घर की अव्यवस्था के बारे में सोचने लगे। उनका दृढ़ विश्वास था कि बेटी की शादी के बाद उसके ससुराल के मामलों में दखल देना उचित नहीं है। इसीलिए उन्होंने खुद को

अलग रखा था। क्या सभी राहगीरों और यात्रियों को अन्नदान के नाम पर बुलाकर उन्हें प्रतिदिन भोजन कराना सरासर मूर्खता नहीं थी? उन्होंने सोचा, क्या उनके लिए होटल नहीं थे? उन्होंने अपनी बेटी को इस बारे में इशारों में बताया। नागप्पा ने इससे ज्यादा कुछ नहीं किया था। वे इस आम कहावत में विश्वास करते थे कि 'जैसा बोओगे वैसा काटोगे'। उनके मन में यह बात बैठी कि अदालत में झूठी गवाही देने के लिए फांसी लगाकर आत्महत्या करना ऐसी मूर्खता की पराकाष्ठा है जो दुनिया में कहीं देखी या सुनी नहीं जा सकती। लेकिन अब तक उन्होंने यह बात किसी से नहीं कही थी। उनकी सोच यह थी कि अदालतें गवाह और सबूत मांगने के लिए होती हैं। हम अपने मुवक्किलों की मदद के लिए गवाही देते हैं। इसलिए इसमें सही या गलत का कोई सवाल ही नहीं उठता। नागप्पा को आश्चर्य हुआ कि उनकी पुत्री का परिवार सही राह पर कैसे चल सकता है और उन्हें धर्मराय कहा जा सकता है? क्या धर्मराय भी झूठ नहीं बोलते थे? उन्होंने केवल 'हतः कुंजः' ही नहीं कहा था। वे राजा विराट के दरबार में गए और कहा कि उनका नाम कंकभट्ट है और वे ब्राह्मण हैं। क्या यह झूठ नहीं था? उन्हें किसी गुफा में छिपकर गुमनाम जीवन जीना चाहिए था। ऐसा सोचते हुए नागप्पा को अपने संबंधी का पागलपन याद आया और उन्हें उस पर दया आई। उन्होंने मंजय्या में भी कमियां ढूंढने की कोशिश की। जब आपका विवाह हो जाता है, आपकी पत्नी होती है, आप उसका भरण-पोषण करते हैं, उसे भोजन और वस्त्र देते हैं, तो आपको अपनी शारीरिक आवश्यकताओं को वहीं पूरा करना चाहिए। अगर आप इस स्त्री और उस स्त्री के साथ घूमते हैं और उन पर पैसा खर्च करते हैं, तो आप बचत कैसे कर सकते हैं? इसके अलावा, वीर्य की भी उतनी ही सावधानी से रक्षा करनी चाहिए, जितनी कि पैसे की। केवल खर्च करने में क्या बुद्धिमत्ता है? अपनी पत्नी की मृत्यु के बाद, नागप्पा ने किसी अन्य स्त्री की ओर नहीं देखा था, न ही उन्होंने दूसरे विवाह के बारे में सोचा था। सपने में भी वीर्यपात नहीं हुआ। अगर उनका मन इतना दृढ़ न होता, तो वे इतनी संपत्ति और धन कैसे अर्जित कर पाते? उन्होंने इन मामलों में मंजय्या को सलाह देने का सोचा। भला उनका शुभचिंतक होते हुए सलाह न देता तो क्या लाभ? उन्होंने आज सुबह ही सलाह देने का निश्चय किया।

धर्मोदक समारोह और दोपहर के भोजन के बाद जब नागप्पा घर लौटे, तब तक शाम के चार बज चुके थे। समारोह में सत्तर से अधिक लोग शामिल हुए थे और सभी अपने-अपने स्थानों के लिए रवाना हो गए थे। नागप्पा ने एक बैलगाड़ी किराए

पर ली, अपनी बेटी से कहा कि वे आठ-नौ बजे तक लौट आएंगे और कलेनहल्ली के थिम्मप्पा गौड़ा से मिलने चले गए, जो उनके गोदाम के पुराने ग्राहक थे।
सत्यप्पा, जैसा कि उन्होंने पहले तय किया था, मंजय्या से मिलने गए। मंजय्या जानते थे कि उनके ससुर के समारोह में कौन-कौन आया है और कौन-कौन आने वाला है। हालांकि, उन्होंने सोचा था कि शायद यह मत्तिकेरे सत्यनारायण स्वयं उनसे मिलने घर नहीं आएंगे। अब, अपने साले को देखकर मंजय्या को एक प्रकार का आश्वासन और आनंद दोनों महसूस हुआ। मंजय्या को अपने साले सत्यप्पा के सामने अपनी उपलब्धियों का बखान करने और सत्यप्पा द्वारा उठाए जाने वाले नैतिक और नीतिगत प्रश्नों के अधिक तर्कसंगत और उचित उत्तर देने में एक अनोखा आनंद मिला।
मंजय्या ने सत्यप्पा का प्रसन्नतापूर्वक स्वागत किया। 'ओह! अन्नाय्या, कृपया अंदर आइए। आपको इस गाँव में आए सोलह-सत्रह साल हो गए होंगे। है ना?'
सत्यप्पा ने कोट रखने वाले रैक की ओर देखा और पूछा, 'अरे ये क्या है? तुम तो हमेशा काले कोट पहनते थे। और अब खूंटी पर एक खाकी रंग का कोट भी टंगा है, ये कैसा है?'
मंजय्या ने सोफे के आकार की लकड़ी की कुर्सी से धूल झाड़ी, मानो सत्यप्पा के प्रति अपना आदर जताते हुए कहा, 'क्या आपको पता नहीं था, अब मैं वन विभाग का ठेकेदार बन गया हूँ?' मंजय्या एक तरह का फैशनेबल व्यक्ति था। वह हमेशा काले रंग का सर्ज कोट पहनता था, जिसे हसन में गौस मोहिउद्दीन ही सिलता था। जब वह काम के सिलसिले में अदालतों या दफ्तरों में जाता था, तो हमेशा काली टोपी पहनता था। उसके बाल हमेशा करीने से कंघी किए हुए होते थे। वह चौड़े कॉलर वाली, बर्फ़ जैसी सफ़ेद कमीज़ पहनता था, जिस पर चमकीले सोने के बटन लगे होते थे। तीन साल पहले, जब एक दिन वह खाकी कोट, खाकी पैंट और भारी बूट पहनकर इस गाँव में आया, तो लोग हैरान रह गए। वे चिंतित और भयभीत थे, यह सोचकर कि क्या पुलिस विभाग ने मंजय्या को कोई नई शक्ति या निगरानी का अधिकार दे दिया है। मंजय्या लोगों की अपने प्रति चिंता को दूर करने की कभी कोशिश नहीं करता था, हालाँकि यह निराधार थी। वास्तव में, ऐसा लगता था कि वह अपने द्वारा पैदा किए गए भय और रहस्य के माहौल का आनंद लेता था। उससे ज़्यादा स्पष्ट रूप से यह रहस्य कौन जान सकता था कि, "बेल का पत्ता भी उस देवता को नहीं चढ़ाया जाता जो फुफकारता नहीं है।" लोग मंजय्या से और भी

ज़्यादा भयभीत और आदरभाव करने लगे। अंततः यह पता चला कि मंजय्या का काम पुलिस विभाग से नहीं, बल्कि चंदन विभाग, यानी वन संरक्षण विभाग से संबंधित था। चन्नरायपट्टाना के लोग जंगल का अर्थ केवल उसकी तस्वीर देखकर ही समझ पाते थे। ऐसे में उनसे जंगलों और संरक्षण के बारे में समझने की अपेक्षा कैसे की जा सकती थी? इसलिए, हर कोई इसे चंदन से संबंधित कुछ कहने लगा। चंदन राज्य कहलाने वाले इस राज्य की राजधानी में सरकार ने चंदन तेल कारखाना स्थापित किया था। कारखाने को चंदन सस्ते दामों पर उपलब्ध होना चाहिए था। इसलिए, चंदन के सभी पौधे, चाहे वे कहीं भी उगते हों - निजी ज़मीनों पर, बगीचों में, घरों में रसोई के बगीचों में, कचरे के ढेरों में - सरकारी संपत्ति माने जाते थे। सरकार के आदेशानुसार, उन ज़मीनों के मालिकों की ज़िम्मेदारी थी कि वे पौधों की रक्षा करें। जब पेड़ का भीतरी भाग पक जाता है, जब तेल निकाला जा सकता है, तब विभाग के अधिकारी पेड़ को काटकर ले जाते हैं। वे किसानों को नाममात्र का दाम देते हैं। अगर एक छोटी सी शाखा भी टूट जाए, तो विभाग के अधिकारी ज़मीन मालिक के खिलाफ़ केस दर्ज कर सकते हैं। ऐसे अधिकार रखने वाले अधिकारियों की करतूतें सभी को पता हैं। इसलिए हर किसान अपनी ज़मीन से चंदन का हर पौधा उखाड़कर इस समस्या को जड़ से खत्म करने की कोशिश करता है। लोग पहले चंदन विभाग से डरते थे। लेकिन मंजय्या के ठेकेदार बनने के बाद तो वे और भी ज़्यादा डर गए। नियम के अनुसार, वनपाल या रेंज अधिकारी का काम यह था कि उन्हें यह तय करना होता था कि पेड़ का भीतरी भाग पका है या नहीं और क्या वह काटने के लिए उपयुक्त है। फिर उन्हें पेड़ को उखाड़ना होता था, किसान के सामने उसकी छाल निकालनी होती थी और वहीं जला देनी होती थी। उन्हें किसान को लकड़ी का वज़न बताना होता था और फिर उसे चंदन के ज़िला डिपो में जमा किया जाता था। सरकार चंदन के वज़न के हिसाब से कमीशन देती थी। यहां हिसाब-किताब की विधि और सरकार द्वारा दी गई धनराशि के बारे में जानना अप्रासंगिक है। लेकिन, मंजय्या के आने के बाद इस तालुक के विभाग में क्या हुआ, यह जानना महत्वपूर्ण है। यह व्यक्ति बिना किसी कानूनी योग्यता के, केवल काला कोट पहनकर वकील, न्यायाधीश, यहां तक कि उच्च न्यायालय का न्यायाधीश भी बन जाता है। चंदन विभाग का खाकी कोट पहनने के बाद वह क्या-क्या बन जाएगा? इस विभाग के जिला स्तरीय अधिकारियों को भी यह पता नहीं था कि ठेकेदार के लिए खाकी वर्दी अनिवार्य है या नहीं। क्या यह अनिवार्य होना

चाहिए? क्या ऐसा कोई नियम है? चौकीदार, गार्ड, वनपाल, रेंज अधिकारी, सहायक संरक्षक, उप संरक्षक, संरक्षक और विभाग के अन्य कर्मचारी अपने-अपने ब्रांड की खाकी वर्दी पहनते हैं। अगर ठेकेदार भी खाकी वर्दी पहने, तो क्या इससे विभाग के साथ पहचान बनाने में मदद नहीं मिलेगी? अगर मंजय्या काला कोट पहनकर अदालत के पास के मशहूर वकीलों के करीब जाए, तो ग्राहक उससे और भी ज्यादा डरेंगे और उसका सम्मान करेंगे। अब मंजय्या अपने साथ दो तरह के कपड़े रखने लगा था - एक खाकी कोट और एक काला कोट, चाहे वह हसन जा रहा हो या चन्नरायपट्टाना। वह जरूरत के हिसाब से एक कोट पहन लेता था। दूसरा कोट करीने से तह करके चमड़े के थैले में रख लेता था। उसने खाकी रंग की एक नई रैले साइकिल खरीदी और उस पर सवार होकर जाने लगा। विभाग के रेंज ऑफिसर अप्पाजप्पा, वनपाल प्रभुस्वामी, गार्ड विशकांतय्या, चौकीदार उस्मानी और मंजय्या इसी क्रम में साइकिलों पर गांवों में प्रवेश करते थे। सबसे पहले चौकीदार उस्मानी, उसके पीछे मंजय्या, फिर वनपाल प्रभुस्वामी और सबसे पीछे गार्ड विशकांतय्या।

जैसे ही मंजय्या ने वन विभाग के ठेके का ज़िक्र किया, सत्यप्पा समझ गए कि उनका काम क्या होगा। सत्यप्पा जानते थे कि मंजय्या हमेशा नए-नए क्षेत्रों में काम करने की कोशिश करते हैं और उनमें पूरी तरह से डूब जाते हैं। उन्हें उम्मीद थी कि इस विभाग से जुड़ी कुछ दिलचस्प बातें सुनने को मिलेंगी, इसलिए वे कुर्सी पर बैठ गए। लेकिन मंजय्या ने इस विषय पर कोई बात नहीं की। उन्होंने पूछा, 'धर्मोदक समारोह कैसा रहा?'

सत्यप्पा ने 'हां' में जवाब दिया और महसूस किया कि उन्हें अपनी बात कहने का मौका मिल गया है।

लेकिन मंजय्या ने आगे कहा, 'देखो अन्नाय्या, मेरा भी आधा मन था कि मैं आऊं और अगर मेरे अच्छे कर्मों का थोड़ा सा भी पुण्य होता तो उसे अपने मृत ससुर को अर्पित कर देता, ताकि इससे उनके प्रेत को यमधर्म के दरबार में पाप और पुण्य का पता लगाने में मदद मिलती। लेकिन अब तुम भली-भांति जानते होगे कि वहां जमा सभी लोग मानते हैं कि उन्होंने झूठ बोलकर हत्यारे मंजय्या को सजा से बचाने के लिए आत्महत्या कर ली। मैं वहां नहीं आया, क्योंकि अगर वह हत्यारा मंजय्या वहां जाता तो वे हंगामा खड़ा कर देते। वे सोच सकते थे कि वे जो धर्मोदक अर्पित करेंगे वह अपवित्र होकर पापोदक बन जाएगा, पाप का जल। इसलिए मैं नहीं

आया। मेरे लिए यह साबित करना मुश्किल नहीं था कि मैं निर्दोष था, जो वे सोच रहे थे वह गलत था। देखो अन्नाय्या, सच बोलने वाला व्यक्ति अकेला खड़ा रह सकता है। और सैकड़ों लोग ऐसे हो सकते हैं जिन्होंने सत्य का ज्ञान किए बिना अपने मन को अटकलों से भर रखा हो।' अगर आप सही ढंग से बात को सुलझाकर समझाएं, तो अंत में सत्य की ही जीत होती है। क्या ऐसा नहीं है अन्नाय्या? कितने ही साम्राज्यवादी अंग्रेज थे? कैसे सिर्फ एक गांधी ने उनकी आंखें खोल दीं और उन्हें अपनी गलती का एहसास कराया? क्या यह सत्य की शक्ति से नहीं हुआ? सच में, मैं इस सब बातों से तंग आ चुका हूं। लोग जो चाहें सोचें, मुझे कोई फर्क नहीं पड़ता। वैसे भी, मैं चन्नरायपट्टाना के लिए निकलने ही वाला था। अगर आप आधे घंटे बाद आते, तो आप मुझे नहीं पा पाते।

सत्यप्पा को याद आया कि मंजय्या का बोलने का यही अंदाज़ था। लेकिन मंजय्या ने पहले कभी सत्य और असत्य के दर्शन पर सत्यप्पा से बात नहीं की थी। ऐसी स्थिति अब तक नहीं आई थी। वह समझ गया कि परिस्थिति ही ऐसी थी कि मंजय्या ने इस तरह बात की। खैर, सत्यप्पा को थोड़ी राहत मिली, क्योंकि उसे अपने मनचाहे विषय पर बात करने का मौका मिल गया था, और उसने कहा, 'चलो बैठो। खड़े क्यों हो? अब बताओ कि असल में क्या हुआ था।'

"ओह, मुझे कितनी राहत मिली है; तुम मुझसे सच जानने आए हो। तुम मेरे भाई हो। लेकिन मेरे प्रति अपने स्नेह और आदर के कारण मेरी बातों को मत मानो। अगर तुम्हें सच में लगता है कि मैंने जो किया है उसमें सच्चाई है या सच्चाई का अंश है, तभी मेरी बात मानो। अगर नहीं, तो चलो बहस करते हैं, चर्चा करते हैं। चर्चा करते समय सच्चाई अपने आप सामने आ जाती है, जैसे दही मथते समय मक्खन ऊपर आ जाता है। क्या हमारे पूर्वजों ने इसी तरह सच्चाई को नहीं जाना और दुनिया को इसका उपदेश नहीं दिया?" अपनी बात कहकर मंजय्या जोर से 'पुरदम्मा' चिल्लाते हुए पिछले दरवाजे की ओर चला गया। नौकरानी की आवाज सुनकर उसने सत्यप्पा से पूछा, "अन्नय्या, आपको कॉफी पसंद है या नींबू का रस, हमारे पास नींबू भी हैं।" फिर उसने पुरदम्मा को दो कप कड़क कॉफी लाने को कहा और सत्यप्पा के पास वाली कुर्सी पर बैठकर धीमी आवाज में कहानी सुनाई।

'देखो अन्नाय्या, जो हुआ उसमें कुछ भी खास या असामान्य नहीं है। गाँव के सभी लोग सुबह से शाम तक मेहनत करते, पौधे लगाते और नारियल के बाग लगाते। लेकिन फिर एक चोर, जो बिना काम किए आराम से रहना चाहता है, हर दिन

किसी न किसी के बाग में सेंध लगाता और हर बार सैकड़ों पके नारियल चुरा ले जाता। यह सिलसिला पंद्रह साल से चल रहा था। गाँव में एक भी ऐसा आदमी पैदा नहीं हुआ था जिसमें उसे पकड़ने और उसकी टांगें तोड़ने की हिम्मत हो ताकि वह फिर कभी पेड़ पर चढ़कर नारियल न तोड़ सके। उसने मेरे बाग से भी चोरी करना शुरू कर दिया। एक रात मैं अपने बाग में उसका इंतज़ार कर रहा था। मैं अपनी लाठी से उसकी टांगें तोड़ना चाहता था। लेकिन उसके पास एक दरांती थी और उसने उसे मुझ पर फेंक दिया। तुम जानते हो कि चोरी या लूटपाट करने वाले लोग ज़रूरत पड़ने पर जान लेने को भी तैयार रहते हैं। सौभाग्य से, मैं बच गया। मेरे पास सिर्फ एक लाठी थी, न तलवार, न दरांती, न ही चाकू।' जब मेरा उसे जान से मारने का कोई इरादा ही नहीं था, तो मुझे ये सारे हथियार अपने साथ क्यों रखने चाहिए थे?

'मैं आपसे वादा करता हूँ, मैं वहाँ उसके एक पैर को घायल करने के इरादे से गया था ताकि वह आगे कभी पेड़ पर न चढ़ सके। मैं सच सिर्फ आपको बता रहा हूँ। क्योंकि आप ही इकलौते ऐसे व्यक्ति हैं जो खादी पहनते तो हैं, लेकिन गांधी जी की मृत्यु के बाद खादी की टोपी नहीं पहनते। बाकी सब खादी की टोपी पहनने वाले झूठे और धोखेबाज हैं। जहाँ तक मुझे पता है, गांधी जी भी टोपी नहीं पहनते थे। चलिए, उस घटना पर आते हैं जो उस बाग में हुई। मुझे लगता है आपने सुना होगा कि कांची कितना बलवान व्यक्ति था। जब उसने अपनी दरांती लहरानी शुरू की, तो मैंने भी आत्मरक्षा में अपनी लाठी चलानी शुरू कर दी। आपको पता है, वहाँ घना अंधेरा था। लाठी उसके सिर पर लगी। वह गिर पड़ा। यह सोचकर कि वह क्यों गिरा, मैंने उसकी टॉर्च निकाली, उसे जलाया, देखा कि क्या हुआ है, दौड़ा, ठंडा पानी लाया और उस पर छिड़का। फिर भी कोई फायदा नहीं हुआ। उसकी मृत्यु हो गई। क्या मैं यह सब चाहता था?' मेरे बगीचे में, जहाँ मैं समय बिताता हूँ, किसी आदमी की हत्या करना, दिन-रात वहाँ घूमना और उसकी आत्मा का साया झेलना? अरे! भला इन सब की क्या ज़रूरत थी? यह तो घटना का एक हिस्सा है। जी हाँ, पहला अध्याय।

अब दूसरा अध्याय शुरू होता है। अगर मुझे अदालत में बिना मुकदमा चलाए बरी होना था, तो मुझे एक कहानी गढ़नी पड़ी, और क्या वो कहानी मेरे दिमाग में कौंध रही है? मैंने हजारों-हजारों रुपये उधार लिए, अपने वकील को फीस दी और सजा से बच गया, जी हाँ, सिर्फ अपनी बाग की रखवाली करने की गलती की वजह से।

और इसी तरह, देखो अन्नाय्या, मैं आज तुम्हारे साथ बैठकर बात कर पा रहा हूँ, यह मेरा सौभाग्य है। अदालत में मुझे जिताने के लिए मेरे ससुर, तुम्हारे भी, मेरे पक्ष में गवाही देने के लिए राजी हो गए और वो आए। लेकिन उन्होंने गवाह के कटघरे में क्या कहा? वो वहाँ खड़े रहे और कुछ ऐसा बड़बड़ाया जिससे मुझे और नुकसान हुआ, मेरी रिहाई में दिक्कत खड़ी हो गई। अगर आरोपी के पक्ष में पहला गवाह ही आपको इस तरह धोखा दे दे, तो मामले का क्या हश्र होगा? खैर, भगवान की कृपा से मैं जीत गया। लेकिन मुझे नहीं पता उनके मन में क्या चल रहा था। उन्होंने दस दिन पहले फांसी लगा ली। मेरे प्रति द्वेष या शत्रुता रखने वाले लोग कहते हैं कि परमेश्वरय्या ने मंजय्या की वजह से आत्महत्या की। खैर, शुक्र है कि उन्होंने कोई मनगढ़ंत कहानी नहीं बनाई, असल में मंजय्या ने ही अपने ससुर को फांसी दी थी। अगर उन्होंने ऐसा किया होता, तो मुझे फिर से अदालत के चक्कर लगाने पड़ते।

'देखो अन्नाय्या, मैंने मावा को अदालत में आने के लिए मजबूर नहीं किया और न ही उस पर मेरे पक्ष में गवाही देने का दबाव डाला। तुम जानते हो कि उसका मुझसे कैसा रिश्ता था। खैर, यह सच है कि मैंने उससे अदालत में आकर गवाही देने के लिए कहा था। यह भी सच है कि अगर वह मेरे पक्ष में गवाही देता, तो मैं उसकी बेटी को अपने घर वापस ले आता और उसके साथ रहता, भले ही यह मेरे लिए असुविधाजनक होता और मुझे यह पसंद नहीं था। लेकिन मैंने उसे कभी मजबूर नहीं किया कि उसे आना ही है। अदालत में आना, गवाही देना जिससे जज के मन में मेरे प्रति विपरीत भावनाएँ पैदा हों और फिर मुझे दोष देना कि मैं उसकी बेटी के पैरों में गिरकर उससे माफी नहीं माँगी? क्या तुम्हें लगता है कि यह उचित या न्यायसंगत है? चलो इसे छोड़ देते हैं। उसने खुद को फांसी क्यों लगाई? वास्तव में यह मेरे लिए एक बड़ा रहस्य है जिसे सुलझाया नहीं जा सकता। उसने यह भ्रम पाल रखा था कि वह सत्य का सार है या सत्य का अवतार है। चार-पाँच लोगों ने उससे सवाल किया है। "अरे साहब, क्या आप जैसा व्यक्ति झूठ बोल सकता है?" मुझे खबर मिली है कि यह सच है। दो लोगों ने, जिन्होंने उनसे यह सवाल पूछा था, मुझे बताया है। मेरे विश्लेषण के अनुसार, इस भ्रम के टूटने को सहन न कर पाने के कारण उन्होंने आत्महत्या कर ली। जो लोग दुनिया से संपर्क नहीं रखते, लोगों से बात नहीं करते, आलोचना को स्वीकार नहीं करते और महान आदर्शवादी होते हैं, ऐसे लोगों को अपने बारे में घोर भ्रम होता है। अगर यह भ्रम जरा सा भी टूट जाए, तो उन्हें लगता है जैसे ब्रह्मांड का अंत हो गया हो और इस तरह वे अपने लिए एक

और भ्रम पैदा कर लेते हैं। देखिए, अन्नय्या, अगर मैं गलत हूँ तो कृपया मुझे सुधारें।
'ओह पुरदम्मा, क्या कॉफी तैयार है?' मंजय्या ने जोर से पूछा।
लगभग पचास वर्षीय पुरदम्मा एक थाली में कॉफी के दो बड़े गिलास लेकर उन दोनों के सामने लाईं। गिलास लेने के बाद वह चुपचाप अंदर चली गईं। कॉफी पीते हुए मंजय्या ने कहा, 'चलो, बाग में चलते हैं। मैं तुम्हें दिखाऊंगा कि चोर कहाँ से अंदर आया था और मैंने क्या किया था और बाकी सब बातें।'
सत्यप्पा उत्तेजित हो गए, क्योंकि वे यह जानने के लिए उत्सुक थे कि वास्तव में क्या हुआ था। मंजय्या ने अपनी कमर में एक हंसिया रखी हुई थी। सत्यप्पा समझ गए कि यह कच्चे नारियल तोड़ने के लिए थी, वह भी विशेष 'गंगापानी' किस्म के नारियल। मंजय्या के साथ गली में चलते हुए सत्यप्पा को शर्मिंदगी महसूस हुई और वे मानो सिकुड़ गए। इस गाँव में केवल बहुत बूढ़े लोग ही सत्यप्पा को पहचान पाते थे, वह भी ब्राह्मणों की गली में। बाकी लोग उन्हें नहीं जानते थे। फिर भी यह डर उन्हें अंदर ही अंदर जकड़ रहा था: लोग क्या सोचेंगे अगर उन्होंने परमेश्वरय्या के बड़े दामाद को अपने साले के साथ इतने करीब चलते देखा, जो परमेश्वरय्या की मृत्यु का कारण था, और वह भी तब जब सत्यप्पा अपने ससुर के अंतिम संस्कार में शामिल होने आए थे! क्या होगा अगर रामकृष्ण या गणेश जी ने उन्हें मंजय्या के साथ चलते देख लिया! हालांकि एक बार यह विचार मन में आया, सत्यप्पा को याद आया कि उन्होंने पिछली रात सावित्री से कहा था कि वे मंजय्या से मिलेंगे और उसे सुधारने की कोशिश करेंगे। हाँ, वह मंजय्या से मिलने आया था, वह दृढ़ निश्चयी था। और वह जानता था कि मंजय्या के उपवन तक जाने के लिए उसे शिव मंदिर और बरगद के पेड़ से होकर गुजरना होगा। जब मंजय्या शिव मंदिर के सामने वाले बरगद के पेड़ के पास पहुँचा, तो वह रुका और बोला, 'देखो, उस पहली शाखा को देखो, उसने उससे फांसी लगा ली। वह ऊपर चढ़ा, रस्सी को शाखा और अपने गले से बाँधा और नीचे कूद गया। वह भी एक सार्वजनिक स्थान पर जहाँ से पूरा गाँव सुबह गुजरता है। उसने सबसे अच्छी जगह चुनी है। यह मंदिर के ठीक सामने है और उसके इस कृत्य का अच्छा प्रचार भी हो रहा है।' मंजय्या ने यह सब बताया और तब तक वहीं खड़ा रहा जब तक सत्यप्पा पेड़ और शाखा को घूरने नहीं लगा। सत्यप्पा के चौंकने के बाद ही मंजय्या आगे बढ़ा। हाथों में चप्पलें लिए, वे तालाब की नाली से होकर गुजरे, गीले खेतों की मेड़ पर चले और उपवन के द्वार पर पहुँचे। फिर मंजय्या ने उस रात की घटना का वर्णन करते हुए आगे बढ़ा; वह कहाँ

खड़ा था, कांची उस घने अंधेरे में कैसे घुसी, जहाँ ऐसा लग रहा था मानो आँखों पर कपड़ा बंधा हो, और कैसे कांची की लंबी मशाल की रोशनी नारियल के पेड़ों पर चढ़ी, गुच्छे को दिखाया और गायब हो गई। सत्यप्पा का मन एकाग्र था। कल रात सावित्री ने बताया था कि कैसे उसने इसी बाग का फाटक झुकाकर बंद कर दिया था और उसी समय वह झोपड़ी के पास गई थी और उसे अपने पति के नाजायज संबंध के बारे में पता चला था और उसने दोनों की कामुक बातें सुनी थीं। सत्यप्पा के मन में यह सब स्पष्ट होता जा रहा था। मंजय्या बताता रहा कि उसका इरादा सिर्फ चोर का पैर तोड़ना था ताकि वह फिर कभी पेड़ पर न चढ़ सके, लेकिन उसने अपना असली इरादा नहीं बताया – कि वह वास्तव में कांची को हमेशा के लिए खत्म करना चाहता था। झोपड़ी के पास पहुँचकर मंजय्या तीसरे गंगापानी के पेड़ के पास गया। सत्यप्पा पहली बार इस बाग में नहीं आया था। उसे यहाँ के गंगापानी के पेड़ ठीक से याद थे और वह उन्हें पहचान भी सकता था। इसके अलावा, मंजय्या ने स्वयं सत्यप्पा को कुटिया में अपने कारनामों के बारे में बताया था। सत्यप्पा भी यह जानते थे। जब मंजय्या नारियल के पेड़ों की ओर चले गए, तो सत्यप्पा कुटिया के पास आए, दरवाजा खोला, अंदर गए और चारों ओर देखा। हाँ, वहाँ वह नरम सरकंडे की चटाई थी। अगर आप उस पर पैर रखते, तो सरसराहट की आवाज़ आती। सूखे फूल, टूटी चूड़ियों के टुकड़े, बालों की पिन और अन्य चीजें वहाँ बिखरी हुई थीं। सावित्री ने जो बताया था, वह सत्रह साल पहले की घटना थी। क्या मंजय्या अभी भी इस कुटिया का इस्तेमाल करते हैं? या उनके घर का क्या? या क्या वह किसी को भी घर में आने की छूट नहीं देते? जब सत्यप्पा इस बारे में सोच रहे थे, तभी उन्हें पेड़ से कच्चे नारियल गिरने की आवाज़ सुनाई दी। एक, दो, तीन, चार, पाँच, छह। तब सत्यप्पा कुटिया से बाहर आए, दरवाजे पर तार का हुक लगाया और उस जगह पर आ गए जहाँ वे खड़े थे। मंजय्या हमेशा ऐसे ही थे। वह आपको तीन-चार कच्चे नारियल पीने के लिए मना लेते थे। मंजय्या की तरह नारियल के पकने का ज्ञान बंदरों को भी नहीं होता। वे शाम सात बजे तक बरगद के बाग में बैठकर बातें करते रहे। लौटते समय, जब वे शिव मंदिर के सामने बरगद के पेड़ के पास पहुँचे, तो सत्यप्पा ने मंजय्या से कहा कि वह कल फिर आएगा और अपने बहनोई के घर की गली की ओर मुड़ गया। दरअसल, उसे अंतिम संस्कार में कोई काम नहीं था। वह भी जानता था कि वह और उसके सभी रिश्तेदार केवल मृतक के शोक संतप्त परिवार को सांत्वना देने आए थे।

सत्यप्पा बिस्तर पर गए और कुछ देर तक चैन से सोए। लेकिन रात के ग्यारह बजे तक उनकी नींद खुल गई। आज भी नौकरानियाँ चावल और दालें साफ़ कर रही थीं। उन्हें लगा कि उनकी नींद सिर्फ़ उस शोर की वजह से नहीं खुली। बाहर भले ही सन्नाटा था, लेकिन उनकी नींद अचानक टूट गई और वे जाग गए। शायद नारियल के बाग़ में रात को चक्कर लगाने की उनकी आदत की वजह से ऐसा हुआ था।

नागप्पा अपने पलंग पर सो रहे थे। सत्यप्पा उठे और शौच के लिए चले गए, शायद नींद न आने के कारण या शाम को तीन कच्चे नारियल का पानी पीने के कारण। सावित्री ने आज उनसे बात करने के लिए नहीं कहा था। शायद वह सो रही होंगी। लेकिन उनके चेहरे से लग रहा था कि उन्होंने रात भर नींद नहीं ली या उनके पास करने के लिए कोई और काम नहीं था और शारीरिक थकान दूर करने का कोई और तरीका न होने के कारण वह लेटी होंगी। ऐसा सोचते हुए सत्यप्पा भी बिस्तर पर चले गए। थोड़ी देर में उन्हें अपने भीतर एक बदलाव महसूस हुआ। ठीक उसी समय, कल रात जब उन्होंने गौशाला में सावित्री की कहानी सुनी थी, सत्यप्पा का मन मंजय्या के नैतिक पतन के विचार से भर गया था। वह केवल अपनी पत्नी सावित्री को ही धोखा नहीं दे रहा था। सावित्री के उसे छोड़े हुए सत्रह वर्ष हो गए थे, उसके बाद भी उसने अपने दुराचार जारी रखे थे। उसने स्वयं सत्यप्पा को अपने दुराचारों के बारे में बताया था। ये सुनकर सत्यप्पा ने उसे सलाह दी थी और कुछ नैतिक मूल्यों का उपदेश भी दिया था। लेकिन मंजय्या ने कभी भौंहें नहीं चढ़ाईं और न ही कभी क्रोधित हुए। एक-दो बार उन्होंने कहा था, बुढ़ापे में जब मेरी शक्ति जवाब दे देगी, तो मैं न केवल ब्रह्मचर्य बल्कि संन्यास भी स्वीकार करूँगा। सत्यप्पा ने अब ठान लिया था कि वे मंजय्या को उनकी चालाकी भरी बातों से बचने नहीं देंगे और किसी तरह उन्हें नैतिक जीवन की ओर ले जाने वाले शब्दों से अपनी बात मनवाएँगे। मंजय्या को यह एहसास दिलाना था कि वे अपने असीमित, अनैतिक और व्यभिचारी जीवन में केवल इंद्रिय सुख ही नहीं जी रहे थे, बल्कि यह झूठ का जीवन था जिसने उनके अंतरात्मा, उनके भीतर के साक्षी को पूरी तरह से घेर लिया था। मावा के आत्महत्या के कृत्य में अंतरात्मा का ऐसा ही प्रकाश था। यदि वे मंजय्या के मन में उस प्रकाश को एक क्षण के लिए भी प्रज्वलित कर सकें, तो सत्यप्पा को लगा कि उन्होंने कुछ हासिल कर लिया है। पिछली रात सावित्री की बातें सुनते हुए ये विचार उनके मन में स्पष्ट थे। इसी इरादे से वे आज शाम मंजय्या

से मिलने आए थे। लेकिन जब सत्यप्पा मंजय्या से मिले और उनकी बातें सुनीं, तो उन्हें लगा कि उनकी स्वतंत्र रूप से सोचने-समझने और कार्य करने की शक्ति छिन गई है और वे मंजय्या की हर बात मान लेना चाहते थे। सत्यप्पा को यह नहीं पता था कि मंजय्या की बात सच है या झूठ। केवल भगवान और मंजय्या ही जानते थे कि मंजय्या चोर को मारने या अपाहिज करने के लिए उनके बाग में गए थे। फिलहाल, मंजय्या के अलावा उस घटना के बारे में हमें बताने वाला कोई और नहीं था। चोर चाहे जो भी हो, क्या यह स्वाभाविक नहीं है कि मालिक चोर की टांग तोड़ने निकल पड़े? इसलिए, मंजय्या की बातों पर विश्वास किया जाना चाहिए। इसके अलावा, कांची एक कुख्यात चोर था और कई वर्षों से इस गाँव के सभी बागों का रात्रिकालीन स्वामित्व उसके पास था। सुब्बन्ना और हिरियन्नय्या ने भी यही कहा था। सभी इस बात से सहमत हैं। अगर ऐसा है, तो मंजय्या द्वारा कांची को अपाहिज करने के निर्णय में क्या गलत था? हाँ, कांची को रोकने का उनका अधिकार बिल्कुल सही था। जब सत्यप्पा ने सोचा कि 'क्या गड़बड़ है?' तो उन्हें अपने गाँव का नारियल का बाग याद आया। इस गाँव में केवल एक ही चोर था, जिसका नाम कांची था। लेकिन उनके गाँव में यह ठीक से पता नहीं था कि अंधेरी रातों में बाग में घुसने वाले चोरों की संख्या कितनी थी। यहाँ तक कि तीन मील दूर स्थित बंजारा बस्ती से भी चोर बाग में घुस आते थे। सत्यप्पा, जो अपने घर के सामने चबूतरे पर सोते थे, रात में कम से कम दो बार उठकर अपने बाग की रखवाली करते थे और इस तरह वे अस्सी प्रतिशत नारियल बचा लेते थे। अगर हम यह न मानें कि बाकी बीस प्रतिशत हमारा नहीं है, तो मन को शांति नहीं मिलेगी। जब भी नारियल की चोरी का पता चलता, सत्यप्पा का कई बार मन करता कि अगर उन्हें पकड़ सकें तो उनकी टांग तोड़ दें। वे न तो पेड़ पर चढ़ सकें और न ही गुच्छे ले जा सकें। लेकिन उन्हें इस बात का दुख था कि बाग की रखवाली में साथ देने वाले अपने डंडे का इस्तेमाल वे चोर को एक दिन भी अपाहिज करने के लिए नहीं कर सके! वह बस लाठी से ज़मीन पर वार करता, शोर मचाता, अपनी मशाल जलाता, उसे बाग में घुमाता और इस तरह दूर खड़े चोर को चेतावनी देकर डरा देता। सत्यप्पा को लगा कि यह उसकी कायरता का नतीजा है। काश वह मंजय्या जितना साहसी होता! वह चुपचाप छिप जाता ताकि उसकी साँसों की आवाज़ भी सुनाई न दे। चोर के पास ज़रूर दरांती होती और ज़रूरत पड़ने पर वह मारने के लिए तैयार होता... अगर वह पीछे से आता, तो चोर के पैरों और खोपड़ी पर वार कर सकता था। नहीं,

मंजय्या साहसी था, सत्यप्पा नहीं। उसके गाँव में एक भी व्यक्ति बहादुर नहीं था। उसे लगता था कि इस बिलिकेरे में हर कोई बाग का मालिक है। आज भी उसे ऐसा ही लग रहा था। सत्यप्पा दुविधा में था। अगर यही स्थिति है, तो क्या मंजय्या पर मुकदमा चलाकर उसे सज़ा दी जानी चाहिए या उसे बरी कर दिया जाना चाहिए? बिना झूठी गवाही दिए और बिना झूठे तर्क दिए, उसे कैसे रिहा किया जा सकता है? अब सत्यप्पा को लगने लगा कि परमेश्वरय्या की आत्महत्या का कोई अर्थ नहीं है। दोपहर में धर्मोदक चढ़ाने आए लोगों ने मृतक की अटूट सत्यनिष्ठा की सराहना की, साथ ही मंजय्या के साहस की भी प्रशंसा की। अगर वह अपनी कामुकता पर थोड़ा भी नियंत्रण रख पाता, तो हमारे तालु में ऐसा वीर व्यक्ति नहीं मिलता। यह बात कहने वाले लोगों ने भी मंजय्या की प्रशंसा की।

सत्यप्पा को यह सारा वाकया अजीब और विरोधाभासी लगा। ओह! तैंतीस साल पहले जब उन्होंने गांधीवादी जीवन शैली और स्वतंत्रता संग्राम को अपनाया था, तब उन्होंने आदर्श समाज का कितना बड़ा सपना देखा था! हालांकि वे युवा थे, लेकिन समाज की बुराइयों और विकारों से वे भली-भांति परिचित थे। महात्मा गांधी ने इन सभी का समाधान ढूंढ लिया था। सत्यप्पा महात्मा गांधी से तीन बार मिले थे और उनसे बातचीत की थी। उनकी पुस्तकें, लेख और हरिजन पत्रिका पढ़ने के बाद ही उन्होंने महात्मा गांधी से मिलने की अनुमति मांगी थी। जब उन्होंने महात्मा गांधी से सीधे उनके लिखे, उपदेश दिए और प्रवचन सुने, तो वे विचार उनके हृदय में पूर्ण सत्य बनकर उतरे। सत्यप्पा को कभी कोई उप-प्रश्न पूछने का मन नहीं हुआ। इसके बजाय, उन्हें अपने गांव और पूरे प्रांत में इसे फैलाने और प्रचारित करने तथा लोगों को अपने जीवन में इस सत्य का अभ्यास कराने की प्रेरणा मिली। वे साबरमती आश्रम से लौटकर समाज सेवा में जुट गए। तब भी सत्यप्पा ने सीधे राजनीति में प्रवेश नहीं किया। उनका दृढ़ विश्वास था कि जब तक गांवों का उत्थान नहीं होगा, तब तक स्वतंत्रता की सफलता पूर्ण नहीं होगी। और उन्होंने इस दृढ़ विश्वास के साथ कितना संघर्ष किया कि स्वतंत्रता की शुरुआत गांवों के उत्थान से ही होनी चाहिए? महात्मा गांधी के विचारों और सिद्धांतों का प्रसार करने के लिए वे गांव-गांव गए थे। उन्होंने कहा कि विदेशी अदालतों से ग्रामीणों को न्याय नहीं मिलता। दूर-दराज के शहरों की अदालतों में दस्तावेज़, विलेख, पत्र, गवाह, बयान, जिरह, वकील और न्यायाधीशों की आवश्यकता होती है, तो इस व्यवस्था से ग्रामीणों को क्या न्याय मिल सकता है? सत्यप्पा ने इन ग्राम अदालतों की स्थापना

के लिए कड़ी मेहनत की। सरकार में प्रचलित अधिकांश नियम विदेशी शासन के अवशेष थे। ग्रामीणों को दस्तावेज़ और स्टांप-पेपर प्राप्त करने की परेशानी से बचने के लिए, जो उन्हें आसानी से उपलब्ध नहीं होते, और वकीलों को किश्तों में नोटों के बंडल देने की परेशानी से बचने के लिए, जो उनके लिए देना मुश्किल था, उन्होंने यह व्यवस्था की। इसके बजाय, दोनों संबंधित पक्षों को ग्राम जूरी की उपस्थिति में बैठकर अपने विवाद का निपटारा करना चाहिए और उनके फैसले पर सहमति देनी चाहिए। अदालतों में तथ्यों को छिपाने या तोड़-मरोड़ करने की संभावना रहती है। लेकिन ग्रामीणों से तथ्यों को छिपाना संभव नहीं है। इतना ही काफी है कि जूरी कानून और न्याय के प्रति निष्ठावान हो। यह व्यवस्था सात-आठ गांवों में दो-तीन साल तक सफलतापूर्वक चली। लेकिन जैसे ही हमारा देश स्वतंत्र हुआ, ये सारे प्रयोग पूरी तरह विफल हो गए। गांधी युग का अंत हुआ और जन प्रतिनिधियों का युग शुरू हुआ। तब सत्यप्पा और प्रतिनिधियों के बीच मतभेद शुरू हो गए। स्वाभाविक रूप से जनता प्रतिनिधियों के पक्ष में थी। जातिगत राजनीति सभी गांवों में फैल गई। दलीय राजनीति के कारण, ग्राम अदालतों ने न्याय को तोड़-मरोड़ कर रख दिया। तब सत्यप्पा ने स्वयं अन्याय के शिकार लोगों को तिपत्तूर, तुमकुर और बैंगलोर की अदालतों में जाने को कहा। सत्यप्पा के मन में यह विचार आने लगा कि उनके क्षेत्र में पतन का युग कैसे शुरू हुआ और कैसे बढ़ा, और कैसे उनकी ग्राम अदालतें, खादी का कपड़ा, यक्षगान शैली में रामायण और महाभारत, शहरी बाजारों, वकीलों के अड्डों, होटलों के नाश्ते, बिन्नी और खटाऊ की कमीजों, फिनले की धोती और तंबू सिनेमाघरों के सामने घुटने टेक दिए। फिर भी, सत्यप्पा ने अपने बेटे को स्कूल भेजा, खाना पकाया, घर के काम-काज और खेतों की देखभाल की, और गांवों के उत्थान और स्वशासन के लिए काम करते रहे। वे सोचते रहे – आखिर मेरा जोश और उत्साह कब खत्म हो गया? उन्हें अच्छी तरह याद था कि महात्मा गांधी के निधन के बाद तो ऐसा नहीं हुआ। सत्यप्पा को यह भ्रम था कि महात्मा गांधी की आत्मा इस देश में अमर रहेगी। उन्होंने एक आशावादी दुनिया बना ली थी कि जीवित रहते हुए शरीर के छोटे से ढांचे में सिमटी महान आत्मा अपनी सीमाओं को तोड़कर देश के कोने-कोने में फैल जाएगी, और उन्होंने अपने द्वारा आयोजित शोक सभाओं में भावुक होकर ये बातें कही थीं। जब वे ग्रामीणों के सहयोग से नारियल के रेशे का कारखाना खोलने के लिए चंदा इकट्ठा कर रहे थे, तो उनका इरादा केवल चंदा इकट्ठा करना ही नहीं

था, बल्कि लोगों में यह विश्वास जगाना भी था कि आपसी सहयोग से गांवों का उत्थान संभव है, और इसके लिए उन्होंने व्यावहारिक रूप से प्रदर्शन करके दिखाया। जब एक जन प्रतिनिधि ने किसी मारवाड़ी को किसी प्रकार का कारखाना शुरू करने का समर्थन किया, तो सत्यप्पा ने सार्वजनिक रूप से गांवों को होने वाले आर्थिक नुकसान और आपदाओं के बारे में बताया। जन प्रतिनिधि ने सत्यप्पा को चेतावनी दी कि वे उनके रास्ते में न आएं। सत्यप्पा डरे नहीं और व्यापारियों के स्वामित्व वाली ऐसी फैक्ट्रियों में निहित खतरों के बारे में जागरूकता फैलाने का अपना काम जारी रखा। जब प्रतिनिधि ने सत्यप्पा को सबके सामने थप्पड़ मारा, तो किसी ने भी उनका साथ नहीं दिया। प्रतिनिधि ने पूछा, 'आप तो कह रहे थे कि पुलिस नहीं होनी चाहिए, है ना? अब मेरे खिलाफ शिकायत करने के लिए आप पुलिस स्टेशन जाएंगे या उस ग्राम अदालत को बुलाएंगे?' सत्यप्पा ने ग्राम अदालत को बुलाने की कोशिश की, लेकिन कोई आगे नहीं आया। तब वे पुलिस स्टेशन गए और उन्हें यह जवाब मिला, 'अरे सत्यप्पा साहब, आपको इसे भूल जाना होगा। हम जन प्रतिनिधियों के खिलाफ क्या कार्रवाई कर सकते हैं?' तभी सत्यप्पा का उत्साह ठंडा पड़ गया। सार्वजनिक रूप से पीटे जाने से उन्हें गहरा सदमा लगा था। उनका मानना था कि अहिंसा के सिद्धांत का पालन करने वाले व्यक्ति को ऐसी हिंसा का हिंसक जवाब नहीं देना चाहिए। अब उन्होंने सोचा, अगर उसने मुझे चार बार थप्पड़ मारा है, तो मैं कम से कम एक बार तो उसे थप्पड़ मार ही सकता था। लेकिन सत्यप्पा के हताश होने का कारण यह नहीं था। उनके दुख का कारण यह था कि अहिंसा के मार्ग पर चलने वाली सामाजिक सोच इतनी जल्दी लुप्त हो गई थी। उन्होंने सत्याग्रह शुरू करने, उस प्रतिनिधि के घर के सामने उपवास करने का विचार किया। लेकिन उन्हें लगा कि ब्रिटिश शासन के समय और महात्मा गांधी के जीवित रहते हुए जो उपवास सफल होते थे, वे अब सफल नहीं होंगे। इसी बीच, सत्यप्पा के पुत्र रामचंद्र ने टिप्पुर के एक छात्रावास में उच्च शिक्षा के लिए दाखिला लिया और उन्होंने केवल टेरीलीन और नायलॉन के कपड़े पहनने की जिद की। सत्यप्पा अपने पुत्र से बहस नहीं कर सके और न ही उन्हें समझा सके, और उन्हें सुधारने में असफल रहे।

जब सत्यप्पा दूसरी बार शौच के लिए बाहर गए, तो नौकरानियाँ चावल बोरियों में भर रही थीं। उन्हें लगा कि अब उन्हें नींद आ जाएगी। उन्हें याद आया कि यही वो समय था जब वे बाग का एक चक्कर लगाने के बाद सोने जाते थे और उन्हें जम्हाई

आने लगी। उसी समय उनके मन में एक सवाल उठा, 'कांची जैसे व्यक्ति को अगर ग्राम न्यायालय में लाया जाता तो उसे क्या सजा दी जाती? अगर वह कहता, "मुझे पचास नारियल के पौधे और सवा एकड़ जमीन भी दे दीजिए, मैं कभी किसी दूसरे के बाग में कदम नहीं रखूंगा," तो न्यायालय क्या कर सकता था? गाँव में तो बिल्कुल भी जगह नहीं थी और जिनके पास एकड़-एकड़ जमीन थी, वे एक इंच भी जमीन नहीं छोड़ते। विनोभाजी का वह भूदानयज्ञ पूरी तरह विफल हो गया था। ग्राम न्यायालय के पास कांची को सजा देने की कोई शक्ति नहीं थी। इसलिए, कुछ और समझ में न आने पर, उन्हें लगातार जम्हाई आने लगी।' उनके मन में एक और सवाल उठा – अगर प्रतिनिधि द्वारा मेरी पिटाई के समय महात्मा गांधी वहाँ मौजूद होते, या अगर प्रतिनिधि ने स्वयं महात्मा गांधी की पिटाई की होती, तो महात्मा गांधी की क्या प्रतिक्रिया होती? उन्हें इसका कोई जवाब नहीं मिला, बल्कि वे सो गए।

सत्यप्पा फिर जाग उठे। ढाई बज चुके थे, सुबह के सवेरे। बाग की दूसरी परिक्रमा शुरू करने का समय हो गया था। अब चावल साफ करने की कोई आवाज नहीं थी। पूरा घर शांत था। उन्हें शौच करने की इच्छा नहीं हुई। अंधेरे में पीठ के बल लेटे हुए, जब उन्हें नींद के पहले चरण में आए विचार याद आए, तो अचानक उनके मन में एक विचार आया। यदि किसी व्यक्ति के भीतर से निकलने वाला प्रकाश बाह्य जगत में भी फैल जाए, तो उसे सत्य माना जा सकता है। वह प्रकाश किसी भी गंभीर परिस्थिति में तुरंत समझ जाता है कि क्या करना चाहिए। महात्मा गांधी ऐसे ही थे। परमेश्वरय्याह ने भी वह परिपक्वता प्राप्त कर ली थी। लेकिन हम जैसे लोगों के लिए, ऐसी गंभीर या अपरिचित परिस्थिति में, वह केवल अंधकार ही होगा। सत्यप्पा को लगा कि यह वास्तविकता का सटीक वर्णन है, लेकिन उनका मन बेचैन हो गया और वे फिर सो नहीं पाए।

रामचंद्र ने कहा था कि वे केवल वैकुंठ के दिन ही आ पाएंगे, लेकिन वे उससे एक दिन पहले ही अपनी हरी रैले साइकिल पर सुबह ग्यारह बजे मासिका अनुष्ठान में शामिल होने के लिए आ गए। दोपहर के भोजन के तुरंत बाद वे साइकिल से निकल गए, क्योंकि उनकी पत्नी, बच्चे और सास, जो अपनी दूध पिलाने वाली बेटी की देखभाल के लिए आई थीं, घर पर अकेली थीं। इसके अलावा, सत्यप्पा के बिलिकेरे जाने के बाद से प्रतिदिन तीन से चार नारियल के गुच्छे चोरी हो जाते थे। सत्यप्पा ने कहा था कि वे वैकुंठ और अगले दिन के अनुष्ठान के बाद लौट आएंगे। लेकिन ऐसा लगता था कि रामचंद्र केवल अपने पिता को तुरंत लौटने का आदेश

देने या चेतावनी देने के लिए आए थे। इसके अलावा, सत्यप्पा का बिलिकेरे में रुकना चोरों को एक और मौका दे देता। रामचंद्र को लगा कि वे दादाजी के समारोह में एक दिन शामिल हुए और प्रसाद प्राप्त किया, इसलिए उन्हें एक और दिन रुकना आवश्यक नहीं लगा। इसके अलावा, उनके मामा रामकृष्ण हमेशा शांत स्वभाव के थे। उनकी चाची सुकन्या के प्रति उनके मन में केवल आदर का भाव था। वे अपनी मां की बहन सावित्री से थोड़ा बहुत ही मित्रवत थे। सावित्री ने वैकुंठ के बाद जाने के लिए चार बार आग्रह किया था। लेकिन हर बार वह अपनी चिंता जताते हुए कहते थे, 'सावित्री चिक्कम्मा, घर पर कोई नहीं है, बस वो दो औरतें हैं।' चूंकि ऐसे समारोह में आने वाले किसी भी व्यक्ति को विदा नहीं लेनी चाहिए या अलविदा नहीं कहना चाहिए, इसलिए रामचंद्र दोपहर के भोजन के तुरंत बाद चले गए।

सत्यप्पा अपने बाग में इतनी चोरी की खबरें सुनकर व्याकुल हो गए। चोरों को पकड़कर उनकी टांगें तोड़ने का ख्याल उनके मन में फिर आया। लेकिन इस बार उन्हें अपने इस विचार पर शर्म महसूस हुई। फिर भी, सभी चोर इसलिए चोरी नहीं करते थे क्योंकि उनके पास जीविका का कोई और साधन नहीं था और उन्हें भूखा रहना पड़ता था। सत्यप्पा को याद आया कि कुछ लोग कई उद्देश्यों से चोरी करते थे, जैसे सिनेमा देखने के लिए, शहरों के होटलों का नाश्ता चखने के लिए, साइकिल और घड़ियाँ चुराने के लिए, और बिना मेहनत किए आरामदेह जीवन जीने के लिए, साथ ही उन लोगों की मेहनत और पसीने से लथपथ मेहनत देखकर खुश होने की ईर्ष्या के कारण भी जो नारियल की तरह फले-फूले थे। सत्यप्पा ने सोचा, जिस गाँव में लोगों में एकता होती है, वहाँ ऐसी चोरियाँ नहीं होतीं, क्योंकि चोर अपनी टांगें तुड़वाने से डरते हैं। यह सोचकर उन्हें थोड़ी तसल्ली मिली कि गाँव की एकता ही एक प्रकार की ग्राम अदालत है। लेकिन वे अपने बेटे रामचंद्र, उसकी पत्नी और उसकी माँ से वास्तव में नाराज़ थे। यह रामचंद्र छब्बीस साल का एक युवक था, जो दो बच्चों का पिता था। क्या वह रात में कम से कम एक बार मशाल और लाठी लेकर वन में नहीं जा सकता था? चोर जानते थे कि सत्यप्पा गाँव में नहीं है और वे यह भी जानते थे कि यह रामचंद्र डरपोक है। इसीलिए वे हर रात वन में घुस जाते थे। रामचंद्र के पास एक और बहाना था। कि अगर वह घर की दोनों महिलाओं को अकेला छोड़कर रात में वन में चला गया तो वे डर जाएँगी। सत्यप्पा ने सोचा, अगर वह अपने गाँव में भी रहता तो चोरी तो होती ही। ऐसे में,

इस रात क्यों न रुका जाए? यह उसके दादाजी का समारोह है, वह भी इतने महान और नेक व्यक्ति का। रामचंद्र अपनी सास के स्नेह और पत्नी के प्यार का गुलाम बन गया है। वह उनके इशारों पर नाचता है। ऐसा सोचते हुए सत्यप्पा बेचैन हो गया, फिर भी उसने वैकुंठ-समाराधना समाप्त होते ही बिलिकेरे छोड़ने का फैसला कर लिया।

वैकुंठ-समाराधना में दोपहर का भोजन समाप्त हुए शाम के चार बज रहे थे। चौदह मील पैदल घर जाना संभव नहीं था, वह भी अंधेरी रात में, पहाड़ियों और झाड़ियों से भरी सड़क पर। चूंकि यह सड़क बहुत कम इस्तेमाल होती थी, इसलिए अंधेरे में ही नहीं, चांदनी रात में भी रास्ता भटकने का खतरा था। इसलिए सुब्बन्नय्या ने सुझाव दिया, 'चन्नरायपट्टाना बस से जाना बेहतर है, भले ही यह थोड़ा घुमावदार रास्ता हो। वहां से टिप्पुर के लिए एक बस है। अगर आप मट्टिकेरे गेट पर उतरते हैं, तो आप अंधेरे में भी पांच मील सीधे चलकर अपने गांव पहुंच सकते हैं। मुझे लगता है कि यह करना समझदारी होगी।' सत्यप्पा ने अपना बैग उठाया, बस स्टैंड की ओर दौड़ा और चन्नरायपट्टाना जाने वाली बस में चढ़ गया, लेकिन रास्ते में बस खराब हो गई। जब तक वह चन्नरायपट्टाना पहुंचा, टिप्पुर जाने वाली आखिरी बस निकल चुकी थी। इसलिए उसे वहीं रुकना पड़ा। चन्नरायपट्टाना उनका इलाका नहीं था, न ही वह जगह थी जहाँ वे व्यापार के लिए आते थे। बस स्टैंड पर पूछताछ करने पर उन्हें बताया गया कि वे ट्रैवलर्स बंगलो जाएँ, जहाँ वे एक रात के लिए कमरा किराए पर ले सकते हैं। किराया भी वाजिब था। वे ट्रैवलर्स बंगलो की ओर चल पड़े।

बंगले पर पहुँचते ही मंजय्या उसके ठीक सामने खड़ा हो गया। सत्यप्पा ने उसे बिलिकेरे में दो दिन से नहीं देखा था। ज़ाहिर है, उसके पास उससे बात करने के लिए कुछ नहीं था, क्योंकि पिछले दो दिनों की मुलाकात में सत्यप्पा ने जो चाहे बोल दिया था। अब मंजय्या के पास सरकारी नंबर प्लेट वाली एक जीप थी, उसके अधीन एक अधिकारी और दो साधारण अधिकारी थे। उनके पीछे कुछ निचले दर्जे के कर्मचारी थे, जिन्होंने खाकी वर्दी पहनी हुई थी। वर्दी की शैली और रंग देखकर सत्यप्पा समझ गया कि वे वन विभाग के हैं। उच्च अधिकारी अपने अधीनस्थों से अंग्रेज़ी में बात करते थे। मंजय्या वहाँ खड़ा था, आज्ञाकारिता का ऐसा भाव बिखेर रहा था जिससे स्पष्ट हो रहा था कि वह पूरी तरह से उस समूह का हिस्सा है, साथ

ही साथ एक ऐसी आज़ादी का एहसास भी दे रहा था जो एक नौकर को न तो होती है और न ही वह दिखा सकता है। थोड़ी देर बाद, जब उच्च अधिकारी उसकी ओर मुड़ा, तो मंजय्या ने कहा, 'जी महोदय, मैं आपसे मिलने ज़रूर आऊँगा, मैं सब समझ गया हूँ, मैं समझ गया हूँ।' उच्च अधिकारी जीप की आगे वाली सीट पर बैठ गया। बाकी दोनों पीछे बैठ गए और ड्राइवर ने जीप स्टार्ट कर दी। जब जीप चलने लगी, तो मंजय्या फिर से जीप के पास गया और हाथ जोड़कर खड़ा हो गया, मानो वह जान-पहचान, आत्मीयता और आज्ञाकारिता का भाव प्रदर्शित कर रहा हो।
फिर वह सत्यप्पा के पास आया और पूछा, 'अरे अन्नय्या, आप यहाँ कैसे आए? मैं कल और परसों गाँव में नहीं था। मैं सोच रहा था कि क्या आप मुझसे मिलने आएंगे। मुझे कुछ काम था और मैं तुरंत निकल पड़ा। मुझे लगता है कि आप वैकुंठ के बाद उस जगह से चले गए थे।'
जी हां, मैं टिपटूर जाने वाली बस पकड़ने आया था, लेकिन वह पहले ही जा चुकी थी। मुझे बताया गया कि मैं एक रात के लिए ट्रैवलर्स बंगलो में रुक सकता हूं। क्या आप मेरे लिए एक कमरा बुक करवा सकते हैं?
"ओह, बिल्कुल, हम आपके लिए एक कमरा दिलवा देते हैं। अगर आपको कमरा नहीं मिलेगा, तो इस सरकारी इमारत, इस घुमंतू बंगले का क्या फायदा?"
विभाग के बाकी चार लोग मंजय्या के पास आए और कहा कि बस छूटने में पहले ही देर हो चुकी है, इसलिए वे जा रहे हैं। मंजय्या ने आगे खड़े व्यक्ति को दस रुपये का नोट दिया और कहा, 'जाओ, कॉफी पी लो। मैं तुमसे हसन में मिलूंगा।' वे चले गए। इसी बीच, ट्रैवलर्स बंगले का केयरटेकर आया और मंजय्या से पूछा, 'क्या आप कमरा खाली कर रहे हैं साहब?' मंजय्या ने सत्यप्पा की ओर इशारा करते हुए कहा, 'नहीं। इधर देखिए, इन्हें एक कमरा दे दीजिए।' केयरटेकर ने कहा, 'यह संभव नहीं है साहब, मंत्री जी का कार्यक्रम है। सभी कमरे पहले से आरक्षित हैं।'
मंजय्या ने कहा, 'ना मत कहो। वह मेरा भाई है।'
चौकीदार टस से मस नहीं हुआ। 'अगर वह आपका भाई है, तो आप उसे अपने कमरे में ही ठहरा सकते हैं। वैसे भी वहाँ दो पलंग हैं, है ना?' तभी मंजय्या ने आँखों से इशारा किया। चौकीदार ने इशारा समझते हुए कहा, 'मैं क्या करूँ साहब? अगर मंत्री जी या कोई और अधिकारी आधी रात को आ गया, तो मैं मुसीबत में पड़ जाऊँगा। आपको भी पुरानी इमारत वाले कमरे में जाना पड़ेगा। वहाँ बस वही एक कमरा खाली है।'

सत्यप्पा ने कहा, "चिंता मत करो, मुझे चबूतरे पर या बरामदे में बाहर सोने में कोई आपत्ति नहीं है।" मंजय्या को थोड़ी शर्मिंदगी महसूस हुई।
'चिंता मत करो अन्नय्या, हम तालमेल बिठा लेंगे। मेरे साथ आओ,' उसने सत्यप्पा का बैग उठाया। चौकीदार उन्हें पुरानी इमारत के कमरे में ले गया। वहाँ दो पलंग थे। मंजय्या ने चौकीदार से कहा कि सात बजे तक कुछ खाना ले आए।
बिस्तर पर लेटे हुए सत्यप्पा ने पूछा, "यहाँ वन विभाग के इतने सारे अधिकारी कैसे हैं?" मंजय्या ने उत्तर दिया, "देखिए, एक भ्रष्ट रेंज अधिकारी है। रिश्वत लेने और लोगों का खून चूसने की भी कोई सीमा तो होनी चाहिए। पूरे तालुका के सैकड़ों किसानों, विशेषकर चंदन उत्पादकों ने, जो उसके उत्पीड़न को सहन नहीं कर पा रहे थे, उसके खिलाफ याचिका लिखी। इसलिए सहायक वन संरक्षक स्वयं आए, जाँच की और आगे की जाँच तक उसे निलंबित कर दिया। इसलिए मुझे परसों शाम बिलिकेरे से अचानक निकलना पड़ा।"
सत्यप्पा सोचने लगे – अगर सौ किसानों ने एक भ्रष्ट अधिकारी के खिलाफ शिकायत की है, तो वह किस तरह का बदमाश होगा? किसानों में पैदा हुई जागरूकता को देखकर उन्हें खुशी हुई। उनका मन फिर से गांधी जी के ग्राम उत्थान के विचार में डूब गया। रिश्वत लेना चोरी के बराबर है। शायद जो किसान इस तरह की चोरी का विरोध करते हैं, वे ही अपने गांवों में चोरी को मौका नहीं देते। जब सत्यप्पा इस सवाल पर विचार कर रहे थे, तभी चौकीदार दो थालियां भरकर खाना ले आया। सत्यप्पा ने कहा कि उन्हें खाना नहीं चाहिए, उन्हें सिर्फ नींद चाहिए। मंजय्या ने जोर देकर कहा, 'नहीं, नहीं, हमें खाना बर्बाद नहीं करना चाहिए, मैं भूल गया था कि आपने वैकुंठ-समाराधना का दोपहर का भोजन किया था और दो थालियां मंगवा ली थीं। चलो, मैं तुम्हारी थाली में से थोड़ा चावल खा लेता हूँ। चलो, कुछ खा लो।'
खाना खाने के बाद मंजय्या ने पूछा, 'अन्नाय्या, पास के थिएटर में एक अच्छी फिल्म "लस्ट एंड लव" चल रही है। क्या तुम इसे देखना चाहोगे?'
'अरे नहीं, मैंने तो बहुत पहले ही फिल्में देखना बंद कर दिया था।'
'अन्नाय्या, तुम्हें ये फिल्म जरूर देखनी चाहिए। चाहे तुम थके हुए ही क्यों न हो, मैं तुम्हारे लिए टिकट का इंतजाम कर दूंगा।' मंजय्या ने ज़िद की। सत्यप्पा ने साफ इनकार कर दिया। कुछ देर मोलभाव करने के बाद मंजय्या ने अपनी बात रखी, 'अन्नाय्या, मैं तुमसे कुछ क्यों छुपाऊं? मैंने तुम्हारे लिए अलग कमरा बुक करवाने

का सोचा था। वो मनहूस मंत्री जी आज ही अपना कार्यक्रम तय कर लेते हैं। अगर मंत्री जी अपने दल के साथ आ गए, तो एक भी कमरा खाली नहीं मिलेगा। मैं कहना चाहता हूं कि मैंने अपनी एक सहेली को यहां मुझसे मिलने के लिए बुलाया है। वो रात भर नहीं रुकेगी। अगर मैं उसे रात भर रोक भी लूं, तो भी मेरी उम्र उसे इस्तेमाल करने की नहीं है। जब तक तुम फिल्म देखकर वापस आओगे, मैं उसे वापस भेज दूंगा, या अगर तुम चाहो तो तुम भी उसके साथ मजे कर सकते हो। मैं उसे बता दूंगा, तुम फिल्म देखने चले जाओ और कुछ घंटों के लिए बाहर रहो।'
सत्यप्पा को घृणा हुई। वह दुविधा में फंस गया था! उसने सोचा कि किसी होटल में जाकर रात बिता ले, चाहे होटल कैसा भी हो, खटमलों से भरा हो या न हो, चलेगा। तभी चौकीदार आया और थालियाँ ले गया। मंजय्या ने अपनी कलाई घड़ी पर दो बार नजर डाली। चारों ओर सन्नाटा छाया हुआ था। लेकिन बाहर फैले अंधेरे के बावजूद, उसकी श्रवण शक्ति ने उसे बाहर कदमों की आहट सुनाई। मंजय्या उठा और दरवाजा खोला। आधे मिनट बाद उसने कहा, 'अंदर आओ' और एक महिला अंदर आई। उसने चमकदार लेस वाली रेशमी साड़ी और फूली हुई आस्तीनों वाला ब्लाउज पहना हुआ था। उसने खूब मेकअप किया हुआ था, सफेद पत्थर के झुमके और बालियाँ पहनी हुई थीं। उसका शरीर बल और यौवन का परिचय दे रहा था। मंजय्या ने उसे बैठने को कहा। नखरे दिखाते हुए वह कुर्सी पर बैठ गई। मंजय्या ने कहा, "अन्नाय्या, कृपया उसे देख लीजिए। अगर आप चाहें तो पहले उसके साथ समय बिता सकते हैं या फिल्म देखकर वापस आ सकते हैं। आपके लौटने तक मैं उसे वापस नहीं भेजूंगी। इसके अलावा, अंधेरा होने के कारण मुझे खुद उसे छोड़ने जाना पड़ेगा। आपका नाम चंद्रिका है, है ना?" लड़की मुस्कुराई। सत्यप्पा शर्मिंदा हो गया, उसने अपना बैग उठाया और जाने लगा। लेकिन मंजय्या आगे बढ़ी, सत्यप्पा के हाथ से बैग छीन लिया और बोली, "नहीं, आपको फिल्म देखनी होगी और वापस आना होगा। अगर आप अपना बैग लेकर चले गए, तो मुझे नहीं पता कि मुझे किस तरह का पाप भोगना पड़ेगा, आपको विदा करने का, आप जैसे नेक इंसान को रात बिताने के लिए जगह न देने का। फिल्म बहुत अच्छी है अन्नाय्या, इसे देखिए और वापस आइए।" मंजय्या ने सत्यप्पा की जेब में पांच रुपये का नोट ठूंस दिया, हालांकि सत्यप्पा ने इसका कड़ा विरोध किया।
सत्यप्पा ने तीस साल पहले फ़िल्में देखने की आदत छोड़ दी थी। हाई स्कूल में पढ़ते समय वो फ़िल्में देखा करते थे। उसके बाद से अब तक शायद उन्होंने दस-

पंद्रह फ़िल्में ही देखी होंगी। आज तो हालत बहुत खराब थी। उन्हें थकान और नींद आ रही थी और जम्हाई आने लगी। उन्होंने पीछे की सीट चुनी, उस पर झुक गए और ऊंघते हुए फ़िल्म देखने लगे। फ़िल्म में ऐसे कई दृश्य थे जिनमें एक युवती नायक को उकसा रही थी। उसकी पोशाक, थिरकती कमर, उभरे हुए स्तन, उसका नृत्य, सब कुछ मदहोश कर देने वाला था। सत्यप्पा ने सोचा कि शायद मंजय्या के लिए ये दृश्य 'बहुत अच्छा, सचमुच बहुत अच्छा' होगा। अंतराल खत्म होते-होते फ़िल्म उसी तरह चलती रही। अब वही दृश्य था उस लड़की के नहाने का। फिर से वही उत्तेजक शारीरिक बनावट। विवरण में ज़्यादा फ़र्क़ नहीं था। लेकिन जब फ़िल्म खत्म हुई तो आधी रात हो चुकी थी, ठीक 1:30 बज रहे थे। सवाल था कि क्या उन्हें ट्रैवलर्स बंगलो जाना चाहिए? अगर नहीं, तो वे कहाँ सोएँगे? सत्यप्पा का बैग, जिसमें उनकी धोती और शॉल थी, मंजय्या के पास था। इसलिए वे बंगले की ओर चल पड़े। चारों ओर सन्नाटा छाया हुआ था। पुरानी इमारत के पीछे कमरों के पास कई पेड़ और छोटे-छोटे पौधे थे। मंजय्या का कमरा भी अंधेरा था। सत्यप्पा के कदमों की आहट सुनकर बत्ती जला दी गई। सत्यप्पा के दस्तक देने से पहले ही दरवाजा खुल गया। लड़की पलंग पर बैठी थी। वही रेशमी साड़ी, जिस पर लेस का बॉर्डर था, और फूली हुई आस्तीनों वाला ब्लाउज। उसने अपने कपड़े ठीक कर लिए थे, मानो सब कुछ खत्म होने के बाद जाने के लिए तैयार हो। उसने सत्यप्पा को देखकर मुस्कुराया। उसने अपनी आँखों से उन्हें एक संदेश दिया। मंजय्या ने पूछा, 'अन्नाय्या फिल्म कैसी थी?' सत्यप्पा ने बेमन से जवाब दिया, 'ओह, ठीक-ठाक थी।'

मंजय्या ने कहा, 'अन्नाय्या, ये दिखावा करने वाली लड़कियों में ऐसी क्या खास बात है? मैंने तो सबको देख लिया है। ये सब मेकअप है। जब हमारी चंद्रिका यहाँ है तो उन अभिनेत्रियों को क्यों देखें? देखो, वो भी एक ड्रामा आर्टिस्ट है। अपनी आँखें ऊपर उठाओ, उसे एक बार देखो और बताओ कि कौन ज़्यादा खूबसूरत है। ये चंद्रिका या वो लड़कियाँ जो नहाने वाले सीन में दिखाई गई थीं?'

सत्यप्पा के खादी के कपड़ों को देखकर चंद्रिका ने मंजय्या से पूछा, 'क्या तुम्हारा दोस्त विधायक है?'

मंजय्या ने शरारती लहजे में कहा, "अरे, क्या? क्या तुम उससे पहले ही प्यार करने लगी हो? अन्नाय्या, तुम इस कमरे में उसके साथ आराम से रहो। मंत्री जी नहीं

आए। मैं दूसरे कमरे में जाकर सो जाती हूँ।" मंजय्या के इस इशारे पर सत्यप्पा चौंक गए और गुस्से से बोले, "तुम मुझे क्या समझती हो?"
'अरे, इतना गुस्सा क्यों कर रहे हो? अगर नहीं चाहते तो मना कर दो। आज नहीं तो किसी और दिन। हर चीज़ के लिए सही समय का इंतज़ार करना पड़ता है,' मंजय्या ने कहा, पाँच मिनट इंतज़ार किया, चप्पल पहनी और बोला, 'ठीक है। आप यहीं रुकिए। मैं उसे घर छोड़कर वापस आ जाता हूँ!'
चंद्रिका खड़ी हुई, सत्यप्पा की ओर मुड़ी और ऐसे बोली जैसे वे परिचित हों, 'तो क्या मैं आपसे विदा लूँ?' और सत्यप्पा जिस पलंग पर बैठे थे, उसके नीचे से अपनी चप्पलें निकालते हुए, अपना कंधा हल्के से उनसे छू दिया। मंजय्या ने मानो आखिरी बार कहा, 'अन्नय्या, संकोच मत करो, शर्म मत करो। अगर तुम्हारे पास पैसे नहीं हैं तो शर्मिंदा मत हो। तुम मेरे मेहमान हो। तुम तय करो। अभी भी तुम उसे पूरी रात अपने पास रख सकते हो।' वह अड़ा रहा। 'क्या तुम नहीं समझते कि मेरी इतनी विनती के बाद भी मना करना स्त्री का अपमान करने जैसा है?' फिर वह बाहर चला गया। लड़की ने भी सत्यप्पा की ओर मोहक निगाह डाली, अपनी चप्पलें पहनीं और बाहर चली गई। बाहर के अंधेरे सन्नाटे में उनकी चप्पलों की आवाज धीरे-धीरे धीमी होती चली गई।
सत्यप्पा पलंग के पास गए, अपने थैले से शॉल निकाला, लेट गए और शॉल ओढ़ ली। बत्ती अभी भी जल रही थी। दरवाज़ा अंदर से बंद नहीं था। मंजय्या दस-पंद्रह मिनट में वापस आ जाएगा। उसे दरवाज़ा खोलने के लिए फिर से उठने की क्या ज़रूरत थी? ऐसा सोचते हुए वे लेट गए, लेकिन उन्हें नींद नहीं आई क्योंकि फिल्म देखते हुए उन्हें पहले ही झपकी आ चुकी थी। उनके मन में एक सवाल उठा, 'सावित्री जैसी पत्नी होते हुए मंजय्या ऐसी हरकतें क्यों करता है?' फिर उनके विचार अपने जीवन की ओर मुड़ गए। उनकी पत्नी सीता सचमुच बहुत सुंदर थीं। सीता की मृत्यु के बाद सत्यप्पा के दूसरी बार अविवाहित रहने का एक कारण यह भी था। उन्होंने सोचा, ऐसी पत्नी को खोने के बाद कैसा विवाह होगा? बिलिकेरे में चार दिनों से सावित्री को देखने के बाद सत्यप्पा ने सोचा कि मंजय्या की पत्नी सावित्री अपनी बड़ी बहन सीता से भी ज़्यादा सुंदर थी। परमेश्वरय्या की बेटी होने के नाते, आपको उसके व्यवहार की चिंता करने की ज़रूरत नहीं है। अगर कुछ खामियां थीं भी, तो मंजय्या के पास उन्हें सुधारने की क्षमता थी। फिर भी, यह बुराई उसके खून में थी। सत्यप्पा को घृणा हुई, वह थक गया था। उसने फैसला किया कि जब मंजय्या वापस

आएगा, तो वह बिना किसी औपचारिकता या लाग-लपेट के उससे बात करेगा। उसे कुछ अजीब सा महसूस हुआ। गहरी सांस लेते ही उसे कमरे में सिगरेट की गंध का एहसास हुआ।

पंद्रह मिनट के भीतर मंजय्या वापस आ गया। उसने एक और सिगरेट जलाई, उसे बुझाया और लेट गया। उसने सत्यप्पा से पूछा, 'क्या तुम्हें नींद नहीं आ रही?' सत्यप्पा ने उत्तर दिया, 'नहीं, मुझे नींद नहीं आ रही।' और फिर मंजय्या ने मानो खुद को कुछ समझाते हुए कहा, 'अच्छा, चंद्रिका जैसी इतनी सुंदर लड़की को ठुकराकर वापस भेजने के बाद तुम्हें नींद कैसे आ सकती है? देखो, अन्नय्या, ये इच्छाएँ और लालसाएँ जब भी उत्पन्न हों, उन्हें संतुष्ट करना चाहिए। तुम्हें इनके आगे झुकना सीखना चाहिए। अगर नहीं, तो ये दबी रहने पर अशांति पैदा करती हैं। देखो, यह ऐसा है: जब तुम्हें सर्दी-जुकाम होता है और तुम्हारी नाक बंद होती है, तो तुम क्या करते हो? तुम बस बलगम बाहर निकाल देते हो। क्या तुम बलगम को अंदर ही रहने देते हो?'

'अच्छा, मंजय्या, क्या यही तुम्हारी एकमात्र आदत है या और भी आदतें हैं? मेरा मतलब है, क्या तुम शराब पीते हो?'

जब मंजय्या ने अंधेरे कमरे में धुआँ खींचा, तो उसकी सिगरेट का जलता हुआ सिरा चमकने लगा। सिगरेट की तेज़ गंध सत्यप्पा की नाक तक पहुँची। "नहीं, अन्नाय्या, मुझे बस सिगरेट पीने की बुरी आदत है। मैं इसे छोड़ने की सोच रहा हूँ। इस मंजय्या को, तुम्हें पता है, कोई और बुरी आदत नहीं है। शराब तो सारे सुखों को नष्ट कर देती है। एक बार इसका स्वाद चखने और अनुभव करने के बाद, मैंने उसी दिन इसे छोड़ दिया और तब से कभी इसे छुआ तक नहीं। ओह, वह कैसा अनुभव था!"

हसन में एक घर था, जिसमें चार-पाँच लड़कियाँ रहती थीं, जो बहुत प्यारी और खूबसूरत थीं। उनमें से एक, अन्नाय्या, मैंने अपनी पूरी ज़िंदगी में ऐसा सुडौल शरीर कभी नहीं देखा था। वहाँ एक अलग कमरा था और सब कुछ बहुत साफ़-सुथरा था। मच्छरदानी भी थी। हाँ, मैंने उसे चुना, वह शायद उन्नीस या बीस साल की होगी। जानते हो, अन्नाय्या, वह कितनी चतुराई से बातें करती थी? फिल्मों का पटकथा लेखक भी ऐसी रोचक बातें नहीं लिख सकता। थोड़ी देर बात करने के बाद, उसने मुझसे पूछा, 'क्या तुम शराब पीते हो?' मैंने पलटकर पूछा, 'क्या तुम पीती हो?' उसने कहा, 'अगर तुम्हें अच्छा लगे तो मैं तुम्हारे साथ चल सकती हूँ,

अगर नहीं तो मैं भी नहीं पीना चाहती।' सच में अन्नाय्या, वह बहुत मनोरंजक बातें करती थी। हम दोनों ने थोड़ी-थोड़ी शराब पी। मुझे याद नहीं कि मैंने क्या किया और क्या नहीं। जब मैं उठा तो सुबह हो चुकी थी और वह जा चुकी थी। पूरे दिन मैं इसी बारे में सोचता रहा और इस नतीजे पर पहुँचा: शराब सच में बहुत बुरी चीज़ है। यह दिमाग पर से नियंत्रण छीन लेती है। जब तुम इसे पीते हो, तो तुम किसी और सुख का आनंद नहीं ले सकते। कुछ लोग कहते हैं कि थोड़ी मात्रा में इसका सेवन करने से स्फूर्ति मिलती है। लेकिन ऐसा केवल शक्तिहीन लोग ही कहते हैं। मैं किसी भी डॉक्टर या वकील के सामने उदाहरण देकर साबित कर सकता हूँ कि शराब से शक्ति कम होती है। बस, यही आखिरी बात है। मैं इस जीवन में शराब को हाथ नहीं लगाऊँगा। मुझे वैसी लड़की दोबारा नहीं मिली। उस मनहूस शराब की वजह से मैं उसका आनंद नहीं ले पाया।

मंजय्या मजाक नहीं कर रहा था। उसकी आवाज और चेहरे पर सच्ची पश्चाताप और ईमानदारी झलक रही थी। सत्यप्पा को लगा कि भले ही विषय मामूली था, लेकिन मंजय्या के शब्दों में जो खुलापन और चिंता थी, उससे उसके मन में विश्वास पैदा हो गया। हालांकि मंजय्या ने शराब पीने को बुरा साबित करने के लिए जो उदाहरण दिया, उस पर सत्यप्पा मुस्कुराए बिना नहीं रह सका, लेकिन उसने अपनी हंसी रोक ली। सावित्री का मुद्दा उठाने और मंजय्या को बांधने का सत्यप्पा का इरादा जाग उठा था। लेकिन उसे समझ नहीं आ रहा था कि बात कैसे शुरू करे। वह अच्छी तरह जानता था कि मंजय्या बातों को घुमा-फिराकर कहने में माहिर है और किसी न किसी तरह मुद्दे से बच निकलेगा। इसलिए सत्यप्पा ने घुमा-फिराकर, बड़े ही सहजता से उससे सवाल किया। 'देखो, मंजय्या, तुम इतनी सारी स्त्रियों के साथ सोते हो। क्या वे गर्भवती नहीं हो जाएंगी?'

वे ऐसा कर सकते हैं। यह उनकी जिम्मेदारी है।

ठीक है, कोई बात नहीं। मान लीजिए एक महिला गर्भवती होती है और बच्चे को जन्म देती है। उस बच्चे का क्या होता है? वह उन लोगों के पेशे के अनुसार बड़ा होता है, खुजली, फोड़े, जूँ, बलगम से ग्रस्त रहता है और उसे कोई शिक्षा नहीं मिलती। बच्चे का कोई भविष्य नहीं। क्या आपको ऐसे बच्चे को देखकर दुख नहीं होगा? क्या आपने कभी इसके बारे में सोचा है?

मानो मंजय्या ने अपना जवाब पहले से तैयार रखा हो, उसने तुरंत कहा, 'देखो, अन्नाय्या, अगर हम तुम्हारी बातों के अनुसार सोचने लगें, तो कोई भी कभी सुख का

अनुभव नहीं कर पाएगा। जैसा तुम्हारे गांधी जी ने कहा था, धोती को कसकर बांधना चाहिए। अगर नहीं, तो तुम आश्रम धर्म, गृहस्थ जीवन आदि जैसे धर्मशास्त्रों का उपदेश देने लगोगे। क्या तुम्हें पता है एक बार क्या हुआ था? एक बार मैं हुबली गया था... तुम्हें पता है ना, कट्टेपुरा जो तुम्हारे घर के पास है? मैं उस बोरेगौड़ा के लिए एक बड़ी लोहे की तिजोरी खरीदने गया था। हुबली शहर के बीचोंबीच एक बड़ा रेड लाइट एरिया था। बिल्कुल वैसा ही जैसा तुमने अभी बताया। बच्चे बाहर खेल रहे थे। मैं एक घर में गया। मैंने वहाँ की औरत को पैसे दिए। उसने मुझे बाहर खेल रहे लड़के को पैसे देने को कहा। मैंने पूछा, "मैं उसे पैसे क्यों दूं?" उसने कहा, "क्या वह तुम्हारा बेटा नहीं है?" वह सिर्फ बीस या बाईस साल की थी। मैंने कहा, "वह मेरा बेटा कैसे हो सकता है?" और उसने पलटकर कहा, "क्यों नहीं? तुम खुद भी पहले मेरे पास आ सकती थी। वह तुम्हारा बेटा क्यों नहीं हो सकता था?" ओह, कितनी चतुर औरत है! लेकिन मैंने कहा, "देखो, मैं पहली बार हुबली आई हूँ। मान लो कि वह मेरा बेटा होता, तब भी वह मेरा बेटा नहीं होता। क्योंकि जब हमारा संबंध बना, मैंने तुम्हें पैसे दिए और तुमने ले लिए, तो बात खत्म।" वह औरत अवाक रह गई। मैंने उस लड़के पर एक रुपये का सिक्का फेंका। वह उसे अपनी माँ के पास ले गया, उसे दिया और खेलने चला गया। वे लोग अपने बच्चों को इसी तरह पालते-पोसते होंगे। उसके बाद उसने दरवाजा बंद किया और मेरे पास आई।

सत्यप्पा को लगा कि किसी भी तर्क से मंजय्या को मनाना नामुमकिन है। इसके अलावा, वे यह भी भली-भांति जानते थे कि केवल तर्क से किसी को बदलना असंभव है। ऐसे लोग तभी बदल सकते हैं जब गांधीजी या आध्यात्मिक ऊंचाइयों को प्राप्त महात्मा जैसे कोई व्यक्ति उन्हें प्रभावित करें। लेकिन ऐसे महात्मा अब कहाँ मिलते हैं? ऐसा सोचते हुए सत्यप्पा खुद को झकझोर बैठे, उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि मंजय्या से बात कैसे शुरू करें। उन्हें लगा कि मंजय्या एक नीच और क्रूर व्यक्ति है। लेकिन इन सबके बावजूद सत्यप्पा का मन उसके प्रति कठोर नहीं हुआ था। उनके लिए मंजय्या को पूरी तरह से नकारना और त्याग देना संभव नहीं था। उन्होंने दो बार अपना पक्ष बदला, यह सोचते हुए कि वे मंजय्या के तौर-तरीकों को क्यों नहीं समझ पा रहे हैं। उन्होंने खुद से सवाल किया कि क्या इसी कारण मंजय्या ने कांची जैसे नारियल चोर को मार डाला था?

मंजय्या ने पूछा, 'क्या आपको नींद नहीं आ रही है?'

सत्यप्पा ने आधे मन से कहा, 'हां और ना।'
मंजय्या ने कहा, "मुझे भी नींद नहीं आ रही। मुझे चंद्रिका को नहीं भेजना चाहिए था। मुझे उसे पूरी रात अपने पास रखना चाहिए था। अभी भी मैं जाकर उसे वापस ला सकता हूँ। लेकिन जब मैं उसे भेजने गया, तो हम दोनों फिल्म के सीन से निकले दो लोगों की तरह चल रहे थे। अब अगर मैं अकेला जाऊँगा, तो कुत्ते भौंकेंगे और अपने घरों के बाहर चबूतरे पर सो रहे लोग जाग जाएँगे। ठीक है अन्नाय्या, बात यहीं खत्म करते हैं। मैं तुमसे एक सवाल पूछता हूँ। क्या तुम ईमानदारी से जवाब दोगे? तुम्हारी पत्नी का निधन तब हुआ जब तुम अभी जवान थे। तुम कहते हो कि उस दिन से तुमने किसी औरत को छुआ तक नहीं और न ही किसी के साथ सोए हो। मैं तुम्हारी बात पर यकीन करता हूँ। लेकिन इससे तुम्हें क्या मिला? तुमने अपने बेटे की शादी करवा दी। यह तो तब भी हो सकता था जब तुम किसी और औरत के साथ सोते। इसका तुम्हारे बेटे की शादी से क्या संबंध है? सत्यनारायणप्पा को महात्मा गांधी का सच्चा अनुयायी कहने के अलावा तुम्हें और क्या मिला? वैसे, क्या तुम्हें कभी भी ऐसी इच्छा या लालसा महसूस नहीं होती?" ये सब क्या बकवास है, संन्यासियों की तरह खान-पान पर नियंत्रण रखना, शरीर को सुखा देना ताकि कोई इच्छा ही न जागे, ये सब क्या है अन्नय्या? कृपया मेरी बात सुनिए। इस मंजय्या ने कभी मित्रता में विश्वासघात नहीं किया। मैं किसी को नहीं बताऊंगा। मैं आपके हाथ पर हाथ रखकर कसम खाता हूँ। चाहे कल हो या कोई और दिन, आप मेरे पास आइएगा। कहीं भी, बिलिकेरे, चन्नारायपट्टाना, हसन या किसी और शहर में। मैं आपके लिए आपकी पसंद की एक स्त्री को चुपके से, किसी और को बिना बताए, बुलाऊंगा। आप उसके साथ आनंद लीजिएगा और अगर आपको पसंद नहीं आया तो कोई बात नहीं। उस रात से पहले अपना वजन कीजिएगा और उस रात के बाद भी अपना वजन कीजिएगा। सच में आपका वजन कम नहीं होगा। बल्कि बढ़ जाएगा। आप बस भ्रम की दुनिया में जी रहे हैं, उस चीज की कल्पना कर रहे हैं जो है ही नहीं। ये तो बिना नमक के खाना खाने जैसा है, है ना?' मंजय्या ने कहा और चुप हो गया। सत्यप्पा सुन रहा था। थोड़ी देर में सत्यप्पा सो गया और धीरे-धीरे खर्राटे लेने लगा। उनकी आदत थी कि वे रात में दो बार उठकर अपने बगीचे का चक्कर लगाते, वापस आते, फिर सो जाते और सुबह होते ही उठ जाते। यहाँ भी वे सुबह जल्दी उठे और सीधे बस स्टेशन जाकर टिपटूर की ओर जाने वाली पहली बस पकड़ने का सोचा। उन्होंने सोचा कि चूंकि रात यहीं

बीत गई है, इसलिए सुबह जल्दी गाँव पहुँचने का कोई फायदा नहीं है, क्योंकि बगीचे की रखवाली का काम तो रात में ही शुरू होना था। इसलिए सत्यप्पा ने मंजय्या से खुलकर बात करने और उन्हें अपनी बात बताने का फैसला किया। मंजय्या अभी भी सो रहे थे। सत्यप्पा उन्हें जगाना नहीं चाहते थे क्योंकि नींद में खलल पड़ने पर मंजय्या उनकी बात ध्यान से नहीं सुन पाते। इसलिए उन्होंने चुपचाप दरवाजा खोला, होलेनारसिपुरा रोड पर दो मील चलकर वापस आ गए। मंजय्या अभी भी सो रहे थे। सत्यप्पा स्नानघर में गए, ठंडे पानी से नहाए, अपने अंतर्वस्त्र धोए और उन्हें अच्छी तरह निचोड़ा। जब तक वे स्नानघर से बाहर आए, मंजय्या जाग चुके थे। इसी बीच चौकीदार दो कप कॉफी ले आया। मंजय्या ने उसे नाश्ता लाने को कहा और खुद बाथरूम में चला गया। वहाँ उसने जल्दी से दाढ़ी बनाई और नहाया और बाहर आया। दो बड़ी थालियों में केसरी भात, मसाला डोसा, उपित्तु और उदिन्ना वड़ा के साथ दूध लाया गया। नाश्ता करते समय सत्यप्पा ने कहा, 'देखो मंजय्या, सावित्री छोड़े हुए सत्रह साल हो गए हैं...'

मंजय्या ने तीखी आवाज में बीच में दखल देते हुए कहा, 'रुको, मैंने उसे नहीं छोड़ा। वह खुद मुझे छोड़कर चली गई।'

ठीक है। चलिए इसे ऐसे समझते हैं। देखिए मंजय्या, मात्र तर्क-वितर्क से कुछ तय नहीं होता। आपने बहुत पहले मुझसे कहा था कि वह अपनी सुंदरता को लेकर घमंडी और अभिमानी थी; उसके साथ रहना संभव नहीं था। लेकिन कोई भी केवल इसी कारण से अपनी पत्नी को नहीं छोड़ता और न ही कोई पत्नी केवल इसी कारण से अपने पति को छोड़ती है। मैं आपसे कहना चाहती हूँ कि हमारे ससुर की आत्महत्या हम सभी को आत्मनिरीक्षण करने के लिए प्रेरित करनी चाहिए। इसने मुझे सचमुच व्याकुल कर दिया है। कम से कम इस संदर्भ में, यदि आप सावित्री को वापस बुला लें, अन्य स्त्रियों के साथ सोने की आदत छोड़ दें और एक सलीकेदार गृहस्थ बन जाएँ, तो मावा की आत्महत्या व्यर्थ नहीं जाएगी। सचमुच, मंजय्या, मैं इस मामले पर आपसे विनती करना चाहती हूँ। इसीलिए मैंने सावित्री से इस विषय पर बात की थी। सत्रह वर्षों के घोर अकेलेपन, ऊब और क्रोध के बाद किसी का भी मन उसी तरह नहीं रह सकता। मेरा इरादा उसके मन की बात जानना था और फिर आपसे बात करना था। उसने कहा, "शायद मैं यह प्रस्ताव स्वीकार कर लेती अगर अप्पा ने आत्महत्या न की होती! अब अप्पा की आत्महत्या

ने सच्चाई उजागर कर दी है। उनके साथ रहने का ख्याल ही घिनौना लगता है। प्लीज़, इसे छोड़ दो, इसे ऐसे ही रहने दो।"

खैर, अभी इस बारे में बात नहीं करते। वैसे भी, सिर्फ गृहस्थ बनकर ही सब कुछ हासिल नहीं किया जा सकता। कई मामलों में तो परिवार ही उच्च उपलब्धि में बाधा बनता है। खैर, मावा की आत्महत्या के कारण आपको कम से कम थोड़ा आत्मनिरीक्षण तो करना ही चाहिए। अगर स्थायी और क्षणिक का ज्ञान जागृत हो जाए तो परिवर्तन अपने आप हो जाता है। कल मावा की मृत्यु को सिर्फ चौदह दिन हुए थे, फिर भी आप चंद्रिका के साथ यहीं सोए। अगर ऐसा है तो...

"नहीं, नहीं। मावा की मृत्यु के दूसरे दिन, और उसी दिन जब तुम मुझसे मिलने आए थे। जब मैं नारियल के पेड़ पर कच्चे नारियल तोड़ने चढ़ा था और तुमने मेरे बगीचे में बनी झोपड़ी का दरवाजा खोलकर अंदर देखा था, उसी दिन मैंने बगीचे में बनी अपनी झोपड़ी में सिद्दी नाम की एक स्त्री के साथ समय बिताया था। जानते हो, उसका शरीर कितना सुगठित था? अरे, यह चंद्रिका तो उन चमकीले कपड़ों में सिर्फ दिखावा कर रही थी। सच है, सिद्दी ऐसे कपड़े नहीं पहनती थी। लेकिन जब कपड़े उतर जाते हैं और हम एक हो जाते हैं, तो मैं तुम्हें बताता हूँ, चंद्रिका सिद्दी के सामने कुछ भी नहीं है।" मंजय्या ने बीच में कहा।

'मुझे पता है कि जब मैं कच्चे नारियल तोड़ने के लिए पेड़ पर चढ़ा था, तब तुमने दरवाजा खोला, झोपड़ी के अंदर गए और उसकी छानबीन की।' ये शब्द सुनकर सत्यप्पा का मनोबल टूटता चला गया। यह सच था कि वह मंजय्या की जानकारी के बिना झोपड़ी में घुस गया था और छानबीन कर रहा था। यानी यह एक गुप्त कार्य था। उसे इतनी सटीक जानकारी कैसे हो सकती थी? वह एक दूर के पेड़ पर चढ़ा था, उसे मेरी छानबीन के बारे में कैसे पता चला? क्या उसके भीतर चित्रगुप्तों की शक्ति है? सत्यप्पा के मन में ये विचार आते ही उसे पसीना आने लगा। उसकी शॉर्ट्स और बनियान उसके शरीर से चिपक गई थीं।

मंजय्या ने आगे कहा, "अगर परमेश्वरय्या ने आत्मनिरीक्षण किया होता, तो उन्होंने आत्महत्या न की होती। पत्नी की मृत्यु के बाद, उन्होंने अपना सारा ध्यान अंतर्मन में लगा लिया, जैसा कि आप लोग कहते हैं, उस आत्मा में जो भीतर है। और तब उनकी उम्र केवल चालीस वर्ष थी। हालांकि, अगर उन्हें मेरी तरह नए प्रकार के सुखों की खोज करने में शर्म आती, तो कम से कम अगर उन्होंने दोबारा शादी कर ली होती, तो आप देखिए, हमेशा अंतर्मन में खोए रहने की यह बीमारी टल सकती

थी। देखिए अन्नाय्या, जिन्होंने अपना जीवन कठोर ब्रह्मचर्य पर व्यतीत किया है, उनके लिए आत्महत्या के अलावा और क्या उपाय है? यही बात आप पर भी लागू होती है। जब आपकी पत्नी का निधन हुआ, तब आपकी आयु साढ़े अट्ठाईस वर्ष थी। आपने ब्रह्मचर्य का मार्ग चुना क्योंकि आपके गांधी जी ने इसकी सलाह दी थी। ठीक है, आपको शादी करने की आवश्यकता नहीं थी, लेकिन अगर आप जीवन व्यतीत करते रहते तो आपको कितना सुख मिलता! आपने कुछ नहीं किया। आपने क्या हासिल किया? केवल स्वार्थ। आपने अपने बेटे की शादी करवा दी, उसे सब कुछ दे दिया और उसके घर में अवैतनिक नौकर की तरह काम कर रहे हैं। आपने और क्या किया?" न तो प्रतिज्ञाओं की पूर्ति होती है और न ही सुख का आनंद मिलता है। भले ही प्रतिज्ञाएँ हों, यदि तुम उन्हें गहराई से समझोगे तो पाओगे कि वे सब झूठी हैं। मेरी बात सुनो, अन्नय्या, जो पुरुष इस सुख का भरपूर आनंद लेता है, वह उदार होगा। जो पुरुष ब्रह्मचर्य का पालन करता है और उस पर अडिग रहता है, वह भीतर से कठोर हो जाएगा। इसीलिए मैं तुम्हें बता रही हूँ। तुम अपने गाँव लौट जाओ और शांति से इस पर विचार करो। जब भी तुम्हारे मन में यह इच्छा जागे, तुम मुझे ढूँढ़ने आना। तुमने कल रात चंद्रिका को देखा था। मैं तुम्हारे लिए उससे भी अधिक युवा, अधिक सुंदर लड़की ढूँढ़ दूँगी, जिसे देखकर तुम्हारी जवानी बाईस साल की हो जाएगी। और वह लड़की पूर्ण श्रद्धा के साथ तुम्हें स्वयं को समर्पित कर देगी। मैं यह बात किसी को नहीं बताऊँगी। मैं तुम्हारी कसम खाती हूँ। मंजय्या ने इस मामले में कभी किसी से अपना वादा नहीं तोड़ा है। और एक और बात समझ लो। जो मित्र इस बात को साझा करते हैं, वे कभी एक-दूसरे को धोखा नहीं देते। खैर, केसरी भात ठंडा होने पर स्वादिष्ट नहीं रहेगा। इसे गरम रहते ही खा लो,' यह कहते हुए वह जोर से हंसने लगा।

जब सत्यप्पा रवाना हुए, तो मंजय्या ने भी अपना सामान पैक कर लिया। उसने खूंटी से वन विभाग का खाकी कोट निकाला, उसे मोड़ा और अपने चमड़े के थैले में रख लिया। उसने थैले से वकील का काला कोट निकाला और पहन लिया। उसने चौकीदार को बुलाया, कमरे के किराए और खाने-पीने के खर्च के साथ दस रुपये टिप के तौर पर दिए। फिर वह चमड़े का थैला पकड़े बस स्टेशन की ओर चल पड़ा। सत्यप्पा के मना करने के बावजूद, मंजय्या ने मट्टीकेरे गेट का टिकट लिया और जबरदस्ती सत्यप्पा को देते हुए कहा, 'कृपया मेरे यहाँ आते रहिएगा। एक ही जगह बैठे-बैठे क्या करोगे?' फिर उसने अपना चेहरा सत्यप्पा के कान के पास

लाकर फुसफुसाया, 'मैंने आपको यह सब इसलिए बताया क्योंकि मुझे आपकी परवाह है। ऐसा करना आपके लिए कोई मजबूरी नहीं है। देखिए, मैं अपने जीजा को अपने बड़े भाई की तरह मानता हूँ। इसलिए मैंने आपसे खुलकर बात की है।'

कलेनहल्ली थिम्मप्पा गौड़ा एकमात्र ऐसे व्यक्ति थे जिनकी तुलना परमेश्वरय्या से की जा सकती थी। वे परमेश्वरय्या की ही उम्र के थे और उन्हीं की तरह धार्मिक थे, लेकिन परमेश्वरय्या की तरह मौन नहीं थे। थिम्मप्पा गौड़ा को अच्छी बातचीत पसंद थी, लेकिन वे कभी भी लापरवाही या जल्दबाजी में बात नहीं करते थे। अपनी उम्र के लोगों या युवाओं से बातचीत करते समय वे चुटकुले सुनाते थे।

परमेश्वरय्या को किसी प्रकार की लत नहीं थी, लेकिन थिम्मप्पा गौड़ा हमेशा अपने साथ पान और तंबाकू रखते थे। वे नारियल के पेड़ों से पूरे गुच्छे तोड़ने के पक्ष में नहीं थे। उनका मानना था कि अगर कच्चे नारियल तोड़े जाएं तो पेड़ सूख जाएगा, और अगर पेड़ से गिरे पके नारियल इस्तेमाल किए जाएं तो पेड़ को कोई नुकसान नहीं होगा। लेकिन चोरी बढ़ने के बाद, उन्होंने यह कहते हुए सीधे पेड़ से पके नारियल तोड़ने की अनुमति दे दी कि यह कलियुग है। हालांकि गोदाम का हिसाब-किताब उनके नाम पर था, उन्होंने कृषि व्यवसाय अपने बेटों को सौंप दिया था।

ऐसा नहीं था कि उन्होंने जीवन में कोई ऐसी गलती नहीं की थी जिसके लिए उन्हें पछतावा हो। लेकिन उन्होंने खुद को यह कहकर दिलासा दिया कि ये गलतियाँ जानबूझकर नहीं की गई थीं। चूंकि उन्होंने इसे सत्य मानकर किया था, इसलिए उन कार्यों को पाप नहीं माना जा सकता। सुकन्या और रामकृष्ण के विवाह का प्रस्ताव थिम्मप्पा गौड़ा ने रखा था। परमेश्वरय्या हमेशा थिम्मप्पा गौड़ा की राय का सम्मान करते थे और उन्होंने इस विवाह के लिए सहमति दे दी थी। विवाह के बाद भी परमेश्वरय्या ने थिम्मप्पा गौड़ा को दिलासा देते हुए कहा, "देखिए, थिम्मप्पा। आपने तथ्यों या सच्चाई को जानते हुए भी जानबूझकर हमसे झूठ नहीं बोला। आपने यह विवाह इसलिए सुझाया था ताकि हमें एक अच्छी बहू मिले और

रामकृष्ण को एक अच्छी पत्नी मिले। अब क्या हुआ? हमारे घर में एक गुणी कन्या बहू बनकर आ गई, यही काफी है।" हमें उसके पिता के स्वभाव की चिंता क्यों करनी चाहिए?' थिम्मप्पा गौड़ा अपने नारियल के बाग में भरपूर फल लगने के दिन से ही अपना खोपरा एस. नागप्पा एंड कंपनी के गोदाम में बेचते आ रहे थे। उनका व्यवसाय शुरू से लेकर आज तक केवल नागप्पा के साथ ही चलता रहा, क्योंकि नागप्पा हिसाब-किताब बहुत सावधानी से रखते थे, उनके थोक तोलने के तराजू कभी खराब नहीं होते थे और ऋण पर ब्याज दर भी उचित थी। नागप्पा के पहनावे और रहन-सहन को देखकर थिम्मप्पा गौड़ा को लगता था कि यही उनकी सादगी है। नागप्पा की पत्नी का निधन हो चुका था और उनकी एक ही बेटी थी। थिम्मप्पा गौड़ा ने परमेश्वरय्या के पुत्र को नागप्पा की बेटी की पुरजोर सिफारिश की, इस नेक इरादे से कि अगर यह रिश्ता कायम हो जाता है तो नागप्पा की सारी संपत्ति बाद में इन लोगों को मिल जाएगी। आज भी, साल में एक बार खोपरे से भरी बैलगाड़ियाँ लेकर तिपतुर जाने के बाद, वे परमेश्वरय्या के घर आते, सुकन्या से कुछ देर बात करते और उसके पिता के स्वास्थ्य के बारे में जानकारी देते।

अंत्येष्टि के बाद, परमेश्वरय्या का वैकुंठ और कैमंडे संपन्न हो जाने पर, सावित्री भी चन्नरायपट्टाना लौट गईं। गणेश हसन लौट गए, क्योंकि वे अपनी कक्षाएँ छोड़ना नहीं चाहते थे। रामकृष्ण, जो अपने पिता की अस्थियों को विसर्जित करने के लिए होलेनारसिपुरा गए थे, 'अध्यात्म प्रकाशन' से वेदांत की पुस्तकों का एक बड़ा गट्ठा लेकर आए। खेतों और उपवन में काम करने के बाद, वे उपवन में बैठकर उन्हें पढ़ते थे। पहले वे दोपहर के भोजन के बाद शाम तक घर पर ही रहते थे। अब अपने पिता की मृत्यु के बाद, उपवन की रखवाली का दायित्व भी रामकृष्ण पर आ गया था। एक दोपहर, लगभग चार बजे, थिम्मप्पा गौड़ा रामकृष्ण के घर आए। परमेश्वरय्या की आत्महत्या की खबर मिलते ही वे तुरंत आ गए थे और उन्होंने वैकुंठ के दिन दोपहर का भोजन किया था। लेकिन इन दोनों मौकों पर वे सुकन्या से बात नहीं कर पाए थे। आज वह घर पर अकेली थी और थिम्मप्पा गौड़ा को देखकर प्रसन्न हुई। उसने उनके लिए चटाई बिछाई। थिम्मप्पा गौड़ा को देखकर सुकन्या को ऐसा लगा मानो उसके पिता के नगर तिप्पुर से कोई मिलने आया हो। थिम्मप्पा गौड़ा ने परमेश्वरय्या की दिल खोलकर प्रशंसा की और कहा,

"देखो सुकन्याव्वा, परमेश्वरय्या एक देवता तुल्य व्यक्ति हैं। ऐसा व्यक्ति हमारे क्षेत्र में आगे कभी जन्म नहीं लेगा।" उन्होंने आगे कहा, "सुनो सुकन्याव्वा, मैं तुम्हें कुछ

बताने आया हूँ। लेकिन मुझे धर्म की बारीकियों का ज्ञान नहीं है और मुझे यह भी नहीं पता कि मुझे तुम्हें बताना चाहिए या नहीं। तुम ही बताओ कि मुझे क्या करना चाहिए," उन्होंने उदास चेहरा बनाते हुए कहा।
'मैं आपको कैसे बताऊं, जब आप खुद ही निश्चित नहीं हैं, गौदारे। वैसे भी, आप इतनी दूर चलकर आ गए हैं, संकोच क्यों कर रहे हैं? जो भी बात हो, बेझिझक बताइए,' सुकन्या ने कहा और कुछ फीट दूर खंभे पर टेक लगाकर उनके सामने बैठ गई।
'आपके अप्पाजी बूढ़े हो रहे हैं। उनकी मानसिक स्थिति भी थोड़ी कमजोर हो गई है।'
सुकन्या ने ध्यान केंद्रित किया। 'क्या उसने हमारे बारे में कुछ कहा?'
मैंने सोचा था कि मुझे तुम्हें नहीं बताना चाहिए। लेकिन मैं इसे अपने तक भी नहीं रख सकती।
'गौडारे, कृपया मुझे बताएं। आप मुझसे बातें क्यों छिपा रहे हैं?'
आप तो जानती ही हैं कि उनका दिमाग कैसे चलता है। वे आपके ससुर के अंतिम संस्कार में आए थे और आपको पता है कि वे यहाँ चार-पाँच दिन रुके थे। अपने प्रवास के दौरान, वे आस-पास के गाँवों में नारियल के बागान खरीदने के इरादे से घूमे, अगर कोई अच्छा सौदा मिल जाए तो। उन्हें खरीदने दीजिए, ये उनका पैसा है और अगर वे इससे कुछ खरीदते हैं तो इसमें क्या गलत है? लेकिन मैं आपको इसके बारे में नहीं बताना चाहती थी। वे हमारे घर भी आए थे। आप जानती हैं, वे हिसाब-किताब रखने में बहुत ही सजग और सतर्क हैं। क्या आपने अपने बेटे को वहाँ तीन साल पढ़ने के लिए नहीं छोड़ा था? लगता है आपके अप्पाजी ने एक लॉग बुक में आपके बेटे पर हुए खर्च का हिसाब रखा है। कितना चावल, कितनी दाल, बैंगन जैसी सब्जी किस दिन खरीदी गई, तड़का लगाने के लिए कितना तेल, नहाने और कपड़े धोने के लिए कितने साबुन, कितनी किताबें, आदि। आपके बेटे को पढ़ाई के लिए किताबें उधार लेनी पड़ती थीं और आपके अप्पाजी उसे एक बार में सिर्फ दो किताबें ही उधार देते थे। जब वह उन्हें पढ़कर लौटा देता था, तभी वह दो और किताबें उधार ले सकता था। समय पर लौटाने के लिए, आपके बेटे को आधी रात के बाद भी उन्हें पढ़ना पड़ता था। और बत्तियाँ जलती रहती थीं। इस वजह से बिजली के बिल में बढ़ोतरी देखी गई थी। उसने हर चीज़ का हिसाब-किताब रखा है। जिस दिन आपने अपने बेटे को भेजा था, तब से लेकर आज तक, उसने हर

रुपये, आने और पैसे का हिसाब ब्याज समेत रखा है। उसने कुछ रकम बताई, सुकन्याव्वा। यह सुनकर मुझे उल्टी जैसा महसूस हुआ और मैं उसकी बातों पर ध्यान नहीं दे पाई। अगर ऐसा न होता, तो मुझे याद होता और मैं आपको सही रकम बता देती। उसने कहा कि यह 2300 के आसपास या 2400 के करीब थी। क्या यह पागलपन नहीं है?' थिम्मप्पा गौड़ा हँसे।

लेकिन सुकन्या को हंसी नहीं आई। वह जानती थी कि जब उसने अपने बेटे को तीन साल के लिए अपने पिता के घर छोड़ा था, तब से ही उसके पिता हिसाब-किताब रखते थे। उसने सोचा कि यह उनकी हर बात का हिसाब रखने की आदत के अनुसार ही था। लेकिन जब उसे पता चला कि उसके पिता ने यह बात गोदाम के ग्राहकों को भी बता दी है, तो उसे दुख और गुस्सा दोनों आया। उसने पूछा, 'गौदारे, क्या अप्पाजी ने सिर्फ आपको यह बताया है या उन्होंने आपको हमें भी बताने के लिए कहा है?'

थिम्मप्पा गौड़ा तुरंत इस सूक्ष्म अंतर को समझ नहीं पाए। क्या नागप्पा ने उन्हें सीधे-सीधे बताया था या उनके माध्यम से कोई संदेश भेजा था? उन्होंने एक पल सोचा और कहा, 'ठीक है, आप जानते हैं, उन्होंने सीधे तौर पर यह नहीं कहा, "आप जाकर उन्हें यह बात बता दें।" लेकिन अगर उन्होंने मुझे यह सब इतनी विस्तार से बताया है, तो क्या यह उनकी इच्छा या कम से कम उनका विचार नहीं है कि मैं यह बात आपको बताऊँ?' वे कुछ देर रुके। 'यह बात मुझे अंदर ही अंदर चुभने लगी, सुकन्याव्वा। यह घर और यह परिवार परमेश्वरय्या के पूर्वजों के समय से ही प्रतिदिन अन्नदान करता आ रहा है। अब रामकृष्णय्या भी इसे जारी रख रहे हैं। मुझे गुस्सा आया, क्योंकि अब उन्हें किसी का ऋणी होना पड़ेगा क्योंकि उन्होंने अपने बेटे को तीन साल तक उनके घर में छोड़ा, उनका खाना खिलाया।' कुछ देर बाद थिम्मप्पा गौड़ा ने कहा, 'मुझे नहीं पता कि वह और संपत्ति क्यों हासिल करना चाहते हैं।' आपके अप्पाजी ने मुझसे पूछा, “थिमप्पा, क्या आपके यहाँ कोई नारियल का बाग़ बिक रहा है? अगर आपको पता हो तो मुझे बता दीजिए। मैं उसे खरीदना चाहता हूँ।” तब मैंने कहा, “देखिए, नागप्पा, मेरे यहाँ ज़मीन में निवेश करने का क्या फ़ायदा? आप बिलिकेरे में ज़मीन खरीद लीजिए। कम से कम आपकी बेटी तो उसका आनंद ले पाएगी।” जब मैंने ऐसा कहा, तो आपके अप्पाजी ने फिर कभी इस बारे में बात नहीं की। थिमप्पा गौड़ा ने पान के पत्तों, तंबाकू और

चूने की थैली खोली। उन्होंने अपने मज़बूत दाँतों के बीच एक सुपारी पकड़ी और पान के पत्तों पर चूना मलने लगे।

'एक मिनट रुको, पान चबाने से पहले थोड़ी कॉफ़ी पी लो,' सुकन्या ने कहा और अंदर चली गई। वह अपमान और गुस्से से जल रही थी। यह सिर्फ़ उसके पिता के शब्दों और रवैये के कारण ही नहीं था, बल्कि इसलिए भी था कि उसने ही गणेश को उसके दादा के घर पढ़ने भेजने की ज़िद की थी। हालाँकि बिलिकेरे में एक हाई स्कूल था, लेकिन उसने ही कहना शुरू कर दिया था कि यह गाँव का स्कूल है, कक्षाएँ नियमित रूप से नहीं लगेंगी, आदि। रामकृष्ण ने कहा था, अगर ऐसा है तो गणेश को चन्नरायपट्टाना भेज देते हैं। सावित्री वहाँ है और वह उसका ख्याल रखेगी। लेकिन सुकन्या अपनी आपत्ति ज़ाहिर नहीं कर पाई और इसके बजाय बोली, 'मुझे लगता है कि एक स्त्री के लिए एक लड़के को संभालना मुश्किल होगा। इसके अलावा, वह अपनी चाची के साथ ज़्यादा मनमानी करेगा।' अगर हम उसे तिप्तूर में उसके दादा के घर छोड़ दें, तो उसकी अच्छी देखभाल होगी और स्कूल भी बढ़िया होगा।' जब रामकृष्ण ने कहा, 'अगर तुम्हारे पिता ने हमें लड़के को वहाँ पढ़ने के लिए भेजने को नहीं कहा है, तो हम अपने बेटे को उनके घर क्यों छोड़ें?' सुकन्या सही जवाब खोजने के लिए संघर्ष करने लगी। उसे याद आया कि शादी के बाद रामकृष्ण अपने ससुर के घर कभी नहीं गए थे। जब सुकन्या बिना बुलाए अपने पिता के घर गई थी, तो रामकृष्ण उसके साथ नहीं गए थे। नागप्पा ने भी कभी अपने दामाद को आमंत्रित नहीं किया था। लेकिन आज तक रामकृष्ण ने उसके पिता के बारे में कभी व्यंग्य नहीं किया था। यह याद करके वह अपने प्रस्ताव से डर गई, लेकिन वह इस मामले को टाल नहीं सकी और अगले दिन उसने फिर से इस विषय को उठाया। 'क्या हमें उसे उसके दादा के घर छोड़ने का कोई अधिकार नहीं है? गणेश ने परीक्षा पास कर ली है। अगर मेरे पिता को पता होता कि इस गाँव का हाई स्कूल अच्छा नहीं है, तो वे गणेश को वहाँ भेजने के लिए ज़रूर लिखते।' देखिए, कुछ लोग खुलकर बोलते हैं और कुछ अपने विचार मन में ही रखते हैं। आपकी तरह, वह भी स्वभाव से शांत हैं। लेकिन मैं जानता हूँ कि वह अपने पोते से बहुत प्यार करते हैं।

रामकृष्ण कुछ नहीं बोले। सुकन्या को लगा कि उन्होंने प्रस्ताव मान लिया है। लेकिन इससे पहले कि वह कुछ बोल पाती, रामकृष्ण ने कहा, "उसे चन्नरायपट्टाना में ही रहने दो। गणेश अभी किशोर है। अगर उसे वहाँ छोड़ने से उसमें अपने दादा

का स्वभाव आ गया, तो हमारा पुत्र हमारे परिवार की परंपरा से विमुख हो सकता है। उसे चन्नरायपट्टाना में ही अध्ययन करने दो।"
उसके शब्दों को समझने में उसे कुछ मिनट लगे। जब उसने उन्हें समझ लिया, तो वह अवाक रह गई। उसे गुस्सा आया, क्योंकि उसके पति ने, जिसने उसके पिता के स्वभाव के बारे में कभी एक शब्द भी नहीं कहा था, आज इस ओर इशारा कर दिया था। वह पूरे दिन चुप रही। शाम तक उसे एहसास हुआ कि रामकृष्ण का इरादा उसके पिता को बदनाम करना या उन पर लांछन लगाना नहीं था। हाँ, अगर हम अपने बेटे को उनके पास छोड़ दें, तो क्या पता वह भी अपने दादा के गुण अपना ले? उसे भी डर लगा, लेकिन पूरी रात सोचने के बाद उसे तसल्ली मिली। गणेश दिखने में अपने दादा से मिलते-जुलते हैं। हम उन्हें कहीं भी रखें, उनका स्वभाव नहीं बदलेगा। वैसे भी, अगर लड़का थोड़ा मितव्ययी होना और अपनी चादर के अनुसार पैर फैलाना सीख जाए, तो इसमें क्या बुराई है? इसके अलावा, उसके पिता में कौन सी बुरी आदत थी? बीड़ी, सिगरेट, जुआ, शराब, स्त्रियाँ - नहीं, उनमें ऐसी कोई आदत नहीं थी। तो फिर उन्हें बदनाम क्यों किया जाए? अगली सुबह, उसने फिर अपने पति से इस विषय पर बात की, फूट-फूटकर रोई, ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाई और तीखे शब्दों में बोली, "हाँ, मैंने उसे जन्म नहीं दिया, न ही उसे दूध पिलाया, न ही उसका पालन-पोषण किया। वह पूरी तरह से आपका बेटा है। मुझे उसकी शिक्षा के बारे में कुछ कहने की ज़रूरत नहीं है। अगर आप उसे उसके दादा से अलग कर दें, तो आपको खुशी होगी।" शादी के बाद यह पहली बार था जब उसने अपने पति के सामने आँसुओं के साथ बहस और विरोध किया था। रामकृष्ण ने कहा, "अगर यही तुम सोचती और महसूस करती हो, तो मुझे और कुछ नहीं कहना। जैसा चाहो वैसा करो।" फिर उन्होंने गणेश को बुलाया और उसके सामने उनसे पूछा, "देखो बेटा, तुम्हारी माँ कहती है कि यहाँ का हाई स्कूल अच्छा नहीं है। तुम्हें पता है तुम्हारी चाची ने इसी स्कूल में पढ़ाई की थी और उन्होंने अच्छी पढ़ाई की थी। अब, यह सच है कि इस स्कूल का स्तर गिर गया है। मैं जानना चाहता हूँ कि क्या तुम चन्नरायपट्टाना में अपनी चाची के साथ रहकर पढ़ाई करना चाहोगे या तुम तिपत्तूर में अपने दादा के साथ रहकर पढ़ाई करना पसंद करोगे?" मुझे बताओ।' सुकन्या ने पहले अपने पति को राजी करने और फिर अपने बेटे से बात करने की योजना बनाई थी। लेकिन सुकन्या के गणेश को अपनी बात मनवाने से पहले ही रामकृष्ण ने उनसे पूछ लिया, जिससे उसकी योजना विफल हो

गई। उसके बेटे ने झट से कहा, 'मैं चन्नारायपट्टाना में अत्ते के साथ रहूंगा!' उसके पति ने कहा, 'क्या तुमने सुना उसने क्या कहा,' और खेतों की ओर चले गए। अंत में, वह अड़ियल हो गई, रोने लगी और गुस्से से बोली, 'तुम दोनों, बाप-बेटे, ने मिलकर मुझे मूर्ख, निकम्मी औरत साबित करने की साजिश रची है।' उसके नखरों के आगे झुककर, गणेश तिप्तूर में पढ़ने के लिए राजी हो गए।

स्कूल से प्रमाण पत्र और अन्य दस्तावेज़ मिलने के बाद, सुकन्या गणेश के साथ बैलगाड़ी में होन्ना और उसकी पत्नी बोराव्वा के साथ तिपतुर के लिए रवाना हुई, क्योंकि उस समय बिलिकेरे से तिपतुर के लिए कोई सीधी बस सेवा नहीं थी। रामकृष्ण उनके साथ नहीं गए। उसने यात्रा और अपने पिता के घर के लिए पर्याप्त मात्रा में चावल के प्याले, भुना हुआ रागी का आटा, कोडुबाले और तंबित्तु तैयार कर रखे थे। यह बीस मील की यात्रा थी। जब वह घर में दाखिल हुई, तो वहाँ न तो गुड़ का एक टुकड़ा था और न ही एक चम्मच चीनी। यहाँ तक कि मुट्ठी भर चावल भी नहीं थे। एक टिन में आधा सेर दाल थी और गोबर से पुती टोकरी में पाँच से छह सेर रागी का आटा था। उसके पिता मधुमेह रोगी थे। डॉक्टर ने उन्हें चावल, आलू, गुड़, केला, आम, खरबूजा और चीनी युक्त कोई भी अन्य चीज़ न खाने की सलाह दी थी। उन्हें गेहूँ या रागी खाना था। गेहूँ यहाँ नहीं उगाया जाता था। यह उत्तर भारत के क्षेत्रों में उगाया जाता था और वहाँ से लाने के कारण महंगा होता था। लेकिन रागी स्थानीय स्तर पर उगाया जाता था और सस्ता था। इसलिए, उसके पिता केवल रागी की रोटी और रागी के गोले ही खाते थे।

सुकन्या अपने पिता को अंदर ले गई और उनसे बोली, 'देखिए पापा, आप यहाँ अकेले हैं। हमारे यहाँ उस स्कूल में पढ़ाई का स्तर बहुत अच्छा नहीं है। गणेश जी आप पर कभी बोझ नहीं बनेंगे। लेकिन किसी तरह उन्हें रागी पसंद नहीं है। शुरू से ही उन्हें ऐसा लगता है। ऐसा नहीं है कि उन्हें घमंड है या कुछ और। लेकिन वो रागी के लड्डू पके केले की तरह नरम बना सकते हैं। वो रोटियाँ बहुत अच्छे से बनाते हैं। उन्हें नरम और फूलने वाली रोटियाँ बनाना आता है। आप खाना बनाने की ज़िम्मेदारी उन पर छोड़ दीजिए। वो आपके कपड़े धो देंगे और खरीदारी भी कर देंगे। वो ईमानदार हैं, कभी चोरी नहीं करते और एक पैसे के लिए भी झूठ नहीं बोलते। वो अपना काम चुपचाप करेंगे और आपका साथ देंगे।'

इसलिए उसने गणेश जी को वहीं छोड़ने का फैसला किया। अगले दिन उसने सांभर और रसम पाउडर तैयार किया। उसके अगले दिन सुबह-सुबह वह उसी

बैलगाड़ी में बैठकर वापस चल पड़ी। जाने से पहले उसने गणेश जी को पिछवाड़े में बुलाया, उनका हाथ पकड़ा और उनसे शपथ ली। 'देखो बेटा, तुम्हें अपने दादा की पूरी श्रद्धा से सेवा करनी चाहिए और उनका ख्याल रखना चाहिए। उनसे कभी झगड़ा नहीं करना। बेकार की चीजें लेकर इधर-उधर मत घूमना। तुम्हें खूब पढ़ाई करनी चाहिए और प्रथम श्रेणी लानी चाहिए।'

सुकन्या ने कॉफ़ी के लिए पानी उबालने के लिए जिस नारियल के पत्ते को जलाया था, वह तेज़ी से धधक रहा था और पानी से भाप धीरे-धीरे उठ रही थी। उसकी यादें उस धधकती आग से भी तेज़ी से उसके सामने अतीत की सभी घटनाओं को ला रही थीं।

गणेश अपनी स्कूली शिक्षा पूरी करने तक केवल तीन साल अपने दादा के घर में रहे। जब उनका कॉलेज में दाखिला लेने का समय आया, तो वे अड़े रहे और बोले: 'देखो अम्मा, अगर तुम मुझे दादा के घर रहने के लिए मजबूर करोगी, तो मैं घर से भाग जाऊंगा,' और हसन के एक कॉलेज में दाखिला ले लिया।

नवरात्रि की छुट्टियों में चार महीने अपने दादा के घर तिप्तूर में रहने के बाद जब वो घर लौटे, तो चुपचाप और उदास बैठे थे, मानो उनसे नाराज़ हों। जब सुकन्या ने पूछा, 'आप इतने चुप क्यों हैं?' तो उन्होंने जवाब दिया, 'बात करने को है क्या?' जब सुकन्या ने ज़ोर दिया, तो उन्होंने विषय बदल दिया और कहा, 'वो स्कूल बहुत अच्छा है।' जब सुकन्या ने उनके दादा के बारे में पूछा, तो उनका जवाब रहस्यमय था, 'वो ठीक हैं।' सुकन्या ने पूछा, 'क्या वो आपसे प्यार नहीं करते? आपके अलावा, उनके पोते, उनका प्यार करने वाला और कौन है?' गणेश ने कहा, 'क्या तुम्हें सब पता नहीं?' और कुएँ से पानी भरने के बहाने बाहर चले गए। छुट्टियों के बाद जब उन्हें तिप्तूर के लिए निकलना था, तो उन्होंने बैलगाड़ी में चावल के प्याले, भुना हुआ रागी का आटा और सांभर पाउडर रखा, फिर सुकन्या के पास आकर बोले, 'अम्मा, हमें बाज़ार से चावल खरीदने हैं। अगर आपके पास हमारी ज़मीन से धान है, तो चार क्विंटल धान गाड़ी में रख दीजिए।' इसे ले जाने में कोई दिक्कत नहीं है।' सुकन्या को लगा कि उसका बेटा अपनी औकात से ज़्यादा ही अकड़ रहा है। उसने उसे डांटते हुए कहा, 'देखो गणेश, अगर तुम भुना हुआ आटा, चावल के प्याले वगैरह ले जा रहे हो तो कोई बात नहीं। अगर चावल ले जाओगे तो तुम्हारे दादाजी क्या सोचेंगे?' गणेश बिना कुछ कहे रथ में बैठ गया।

जब वह अगली बार गर्मियों की छुट्टियों में घर आया, तो उसने कहा, 'देखो अम्मा, जब मैं नवरात्रि की छुट्टियों में यहाँ आया था, तो मैंने आपसे चार क्विंटल धान भेजने के लिए कहा था और आपने मुँह बना लिया था। आपको समझ नहीं आया कि मैंने आपसे ऐसा क्यों कहा था।'

उसने अपने बेटे के चेहरे की ओर देखा। उसे लगा कि वह परिपक्व हो गया है, अपनी उम्र के हिसाब से बहुत समझदार हो गया है। उसने तुरंत उससे कारण नहीं पूछा। स्वाभाविक रूप से, उसके मन में यह बात कौंध गई कि शायद दादाजी अपने पोते को चावल खिलाने पर ताना मार रहे होंगे। अगर उन्होंने ऐसा कहा होता तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं थी। उसे उसके स्वभाव को दोबारा परखने की ज़रूरत नहीं थी। लेकिन अगर ऐसी कोई बात थी, तो इस लड़के को इसे नज़रअंदाज़ कर चुप रहना चाहिए था, मानो उसे कुछ पता ही न हो। अगर वह अपने दादाजी के शब्दों को इतनी बारीकी से समझ सकता है, तो अपनी माँ के इरादों को समझने की उतनी ही बारीकी उसमें क्यों नहीं है? सुकन्या का मन हुआ कि वह अपने बेटे से पूछे, 'तुम्हारे दादाजी ने क्या कहा? मुझे खुलकर बताओ।' उसे डर था कि अगर उसने अपने बेटे को बोलने का मौका दिया, तो उसे उसे तिप्तूर छोड़ने के लिए राज़ी करना पड़ेगा। इसलिए वह चुप रही। गणेश अपनी माँ के बोलने का इंतज़ार करता रहा। उसे चुप देखकर वह खुद को रोक नहीं पाया और बोल पड़ा, 'देखो माँ, मैं चावल को बिल्कुल नहीं छू सकता।' दादाजी कहते हैं कि उन्हें चावल सिर्फ मेरे लिए ही खरीदना पड़ता है, चीनी और गुड़ भी। वे कहते हैं, 'तुम्हें तो कोयले के पाउडर से दांत साफ करना पसंद नहीं है, इसलिए मुझे तुम्हारे लिए टूथपाउडर खरीदना पड़ता है। तुम्हें पता है कि मुझे तुम्हारे लिए महीने में कितना खर्च करना पड़ता है? देखो अम्मा, वो यही बात बार-बार दोहराते रहते हैं। मैं तुम्हारे अलावा और क्या कर सकता हूँ, सिवाय धान भेजने के लिए कहने के?'

सुकन्या कुछ नहीं बोली। जब तालाब का द्वार बंद होता है तो पानी का तेज़ी से बाहर निकलना मुश्किल होता है। लेकिन एक बार द्वार खुल जाए तो पानी नहर में तेज़ी से बहने लगता है। इसी तरह, गणेश ने अपने मन में दबी हर बात कह दी। दादाजी उनसे एक बार में केवल दो किलो चावल खरीदने को कहते थे; यानी, वे लड़के के सामने एक रुपया फेंककर उसे उतने में चावल खरीदने को कहते थे या फिर कहते थे, 'देखो, मेरे साथ गोदाम चलो। मैं तुम्हारे लिए खरीद लाऊंगा।' लड़के को अपने दादाजी के पीछे-पीछे थैला लेकर जाना पड़ता था। दादाजी पंचाक्षरप्पा

की दुकान में चार-पाँच किस्म के चावल देखते और सबसे सस्ता चावल चुनकर उसे थैले में डालने को कहते थे। एक बार में केवल दो किलो। जब वह चावल खत्म हो जाता, तो लड़के को फिर से बड़े दुख के साथ अपने दादाजी को बताना पड़ता था। लड़के को सबसे सस्ता चावल खाने में घिन आती थी। लेकिन दादाजी कोई भेदभाव नहीं करते थे। वह रागी का चुनाव एक ही तरीके से करते थे, एक बार में सबसे सस्ती किस्म की दो किलो रागी। उनकी दो किलो रागी छह से सात दिन चलती थी। लेकिन गणेश जी का चावल चार दिन में ही खत्म हो जाता था। चावल खरीदने से पहले वह मन ही मन बहुत परेशान होते थे। तब दादाजी कहते, 'अरे, तुमने क्या किया? क्या तुमने चावल बर्बाद कर दिया? क्या तुमने चूहों को खाने दिया? क्या तुमने डिब्बे का ढक्कन ठीक से बंद किया था?' दालों के साथ भी ऐसा ही होता था। वह नहाते समय साबुन का इस्तेमाल नहीं करते थे। वह अपने शरीर को एक चिकने क्वार्ट्ज़ पत्थर से रगड़कर गंदगी साफ करते थे। गणेश जी नहाते समय साबुन का इस्तेमाल करते थे। उनके दादाजी उन्हें हमेशा बचत करने की सलाह देते रहते थे। गणेश जी कहते, 'अम्मा, चावल, दाल और साबुन का खर्च कम से कम उतना तो होना चाहिए जितना मैं उनके लिए काम करता हूँ - उनके घर की सफाई, कपड़े धोना और खाना बनाना, लेकिन फिर भी यह बचत की सलाह। आखिर उन नोटों के बंडलों का क्या होता है जो वह बचाते हैं?' अम्मा, उस घर में रहना सचमुच एक यातना है। यह इतनी यातना है कि मेरा मन करता है कि मैं भाग जाऊं। ओह! आपने मुझे वहां क्यों कैद कर रखा है?’ गणेश ने वही दोहराया जो उनके दादाजी कहा करते थे, ‘देखो गणेश, नदी में पत्थर फेंकते समय भी उन्हें गिनना चाहिए। नहीं तो क्या मनुष्य समृद्ध होगा? तुम मेरे पोते हो। मुझे तुम्हारे खाने-पीने से कोई आपत्ति नहीं है। लेकिन, हिसाब-किताब लिखो, तब तुम्हें पता चलेगा कि तुम्हारे यहां रहने से मुझे हर महीने कितना खर्च करना पड़ता है।’ यह कोई सामान्य टिप्पणी या गुस्से में कही गई बात नहीं थी। वे अक्सर अपने पोते से हिसाब-किताब लाने को कहते थे। वे अक्सर पूछते थे कि लड़का हिसाब-किताब लिख रहा है या नहीं। जब तक वे दीवार पर लगी बंद लकड़ी की अलमारी में रखी अपनी मोटी डायरी में दिन भर का खर्च नहीं लिख लेते, तब तक उन्हें नींद नहीं आती थी। सुकन्या को याद आया, न केवल अब, बल्कि बचपन में भी ऐसा ही होता था। अगर करी बनाने के लिए एक नारियल तोड़ा जाता था, तो दूसरा आधा अगले दिन के लिए रख दिया जाता था। दादाजी पूछते, ‘नमक कितने का आया?’ वो

कहते, 'चार आने।' 'बाकी पैसे कहाँ हैं?' 'मैंने ताक में पचास पैसे रखे हैं, क्योंकि मैं पच्चीस पैसे की माचिस भी लाया था।' 'अरे, माचिस की डिब्बी? रुको, मुझे देखने दो!' वो अपनी डायरी में देखते और कहते, 'देखो गणेश, तुमने पाँच तारीख को, यानी दस दिन पहले, माचिस की डिब्बी खरीदी थी, उसमें चालीस तीलियाँ थीं, तुम माचिस की तीलियाँ यूँ ही क्यों बर्बाद करते हो? तुम एक माचिस की तीली से स्नानघर का चूल्हा जला सकते हो और उससे रसोई के चूल्हे में आग जलाकर नाश्ता और दोपहर का खाना बना सकते हो। फिर एक माचिस की तीली शाम के लिए। मतलब, एक डिब्बी बीस दिन चलनी चाहिए, है ना?' अगर गणेशजी जवाब नहीं देते, तो वो कहते, 'क्या आप बहरे हैं?' तब गणेशजी दोष दूसरों पर डालने की कोशिश करते और कहते, 'नहीं दादाजी, कुछ डिब्बियों में चालीस तीलियाँ नहीं होतीं। कुछ तीलियाँ जलाते ही बुझ जाती हैं। मैं क्या करूँ?' अगर मैं मिट्टी के तेल की एक बूंद भी डालूँ तो चूल्हा तुरंत जल उठेगा। लेकिन आप तो कहती हैं कि चूल्हा जलाने के लिए मिट्टी का तेल बर्बाद नहीं करना चाहिए।' तब उनके दादाजी ने कहा, 'तुम्हें कमाई की कठिनाई का एहसास अनुभव होने के बाद ही होगा।' गणेश ने अपनी माँ से पूछा, 'माँ, बताइए, मुझे ये सब परेशानियाँ क्यों सहनी चाहिए?' लेकिन सुकन्या अपने बेटे के सामने छिपे हुए इरादे को कैसे उजागर कर सकती थी? ऐसा नहीं था कि उसे इसके बारे में पता न हो। उसके अलावा और किसे पता होना चाहिए? फिर भी उसे खुलकर बताने में शर्म आ रही थी और उसने बस इतना ही कहा, 'देखो, गणेश, ये उसका स्वभाव है। तुम्हें ये सब सहना ही होगा, मेरे बेटे। पोते होने के नाते उसे तुमसे प्यार होना चाहिए। तुम्हारे सिवा उसका और कौन है? उसकी एक ही बेटी है और तुम उसके बेटे हो। क्या हमें सिर्फ इसलिए उससे दूर रहना चाहिए क्योंकि वह ऐसा व्यवहार करता है?' ये शब्द कहते-कहते सुकन्या को शर्म महसूस हुई, लेकिन उस उम्र का लड़का कैसे समझ सकता था? फिर भी, वह अपने फैसले पर अड़ा रहा और हाई स्कूल की पढ़ाई पूरी करने के तुरंत बाद अपने दादा का घर छोड़ दिया।

सुकन्या एक कप कॉफी लेकर आई और थिम्मप्पा गौड़ा के सामने रख दी। एक-दो घूंट पीने के बाद, उसने गिड़गिड़ाते हुए स्वर में कहा, 'गौड़ा, आपने मुझे जो बताया है, वह मेरे पति को मत बताइए। आप मेरे पिता के स्वभाव को भली-भांति जानते हैं। अगर ये बातें मेरे पति तक पहुँच गईं, तो वे बहुत नाराज़ हो जाएँगे। कृपया उन्हें कुछ मत बताइए।'

थिम्मप्पा गौड़ा ने उसे आश्वासन दिया, 'ठीक है, मैं उसे नहीं बताऊंगा सुकन्याव्वा।'

दो सप्ताह बाद, एक दोपहर, रामकृष्णय्या घर आए, हाथ-पैर धोए और संध्यावंदन किया। जब सुकन्या उन्हें दोपहर का भोजन परोस रही थी, तब रामकृष्णय्या ने उससे कहा, "देखो, गणेश त्रिपतुर् में रुके थे। लगता है तुम्हारे पिता को हमारे बेटे को उनके घर में रखने के लिए दो हज़ार तीन सौ पचासी रुपये खर्च करने पड़े। मैंने फैसला किया है कि मैं उस राशि में कुछ और जोड़कर उसे दो हज़ार पाँच सौ रुपये कर दूंगा और उन्हें लौटा दूंगा, ताकि मैं इस कर्ज से मुक्त हो जाऊं।"
उसने तुरंत ही झट से कहा, 'ओह, क्या थिम्मप्पा गौदारू ने पहले ही ये बातें फैला दी हैं?'
उसने पूछा, 'कौन से थिम्मप्पा गौदारू?' लेकिन उसने कोई जवाब नहीं दिया। एक मिनट के भीतर ही वह समझ गया। 'तो, उसने थिम्मप्पा गौदारू को भी बताया और गौदारू ने तुम्हें बताया। और तुमने मुझे बताना उचित नहीं समझा। दरअसल, मुझे यह बात गोविंदहल्ली हनुमंथप्पा, चिक्केनहल्ली मरप्पा और ब्यालदकेरे चेन्ने गौदारू ने बताई थी। जब वह पिता के अंतिम संस्कार में आए थे, तब तुम्हारे पिता इन गांवों में घूम-घूमकर सबको यह बात बता रहे थे। मुझे इस बारे में करीब दस-बारह दिन पहले पता चला। मुझे इस चालपति शेट्टी को ढाई हजार रुपये देने हैं और टिपटूर वाले को भी ढाई हजार रुपये देने हैं। तेरिनमने सिद्दैया का कहना है कि वह हमारी जलसंधि आठ हजार रुपये में खरीद लेंगे। चलो इसे बेचकर ये दोनों रकम चुका देते हैं। बचे हुए तीन हजार रुपये में से हम हर महीने गणेश जी को दान करने का इंतजाम करेंगे। घर से बाहर पढ़ाई कर रहे लड़के के लिए हर महीने पैसे न मिलने पर मुश्किल होगी।' इतना कहने के बाद, रामकृष्णय्या ने परिषेचन करना शुरू कर दिया, 'चित्राय नम:, चित्रगुप्ताय नम:, यमाय नम:, यमधर्माय नम:, सर्वभूते-ह्यो नम:।' यह जप करने के बाद, उन्होंने स्नान किया।
सुकन्या को एहसास हुआ कि उसके पिता ने यह बात न केवल थिम्मप्पा गौड़ा को बताई थी, बल्कि आसपास के उन ग्राहकों को भी बताई थी जो उनके गोदाम में आते थे। हालांकि, वह अपने पति के पैसे वापस करने के फैसले से नाराज़ थी। लेकिन उसने अपना गुस्सा ज़ाहिर करने की हिम्मत नहीं की। क्या उसके पिता के स्वभाव में कुछ नया आया था? अगर उन्होंने ऐसा कहा था, तो उसके पति को जाकर एक साथ सारे पैसे वापस क्यों करने चाहिए थे? उन्होंने तो वो पैसा अपने

पोते के लिए ही खर्च किया था और अभी-अभी जो कहा था, वो कहा था। ये बातें तो वहीं भुला देनी चाहिए थीं। मेरे पति में बहुत ज़्यादा अहंकार, बहुत ज़्यादा घमंड और बहुत ज़्यादा ज़िद्दीपन है। ऐसा सोचते हुए सुकन्या अंदर ही अंदर उबलने लगी। लेकिन उसमें बोलने की हिम्मत नहीं थी। खैर, चूंकि उसे लगा कि अगर वह नहीं बोली तो इसका मतलब होगा कि वह उनकी बात मान रही है, इसलिए उसने ताना मारा, 'अगर तुम ये गीली ज़मीनें बेच दोगे, तो हम खाने का क्या करेंगे?'

रामकृष्णय्या बोलने में हमेशा धीमे थे। यह लगभग उनकी आदत बन गई थी कि पूछे गए प्रश्न और उनके उत्तर के बीच लगभग दो से तीन मिनट का मौन रहता था, चाहे वह कोई सामान्य उत्तर हो या कोई गंभीर विषय। लेकिन इस बार उन्होंने बिना रुके उत्तर दिया, मानो उन्होंने पहले ही इस पर विचार कर लिया हो। 'हमारे सूखे खेतों से मिलने वाली रागी हमारे दैनिक भोजन के लिए पर्याप्त है। हमें जितने चावल की आवश्यकता होती है, हम उसे खरीद सकते हैं।'

सुकन्या का क्रोध शांत नहीं हुआ। उसका मन यह समझने की कोशिश कर रहा था कि अगर उसके पिता ने ऐसा कहा भी है, तो उसके पति को एहसान क्यों चुकाना चाहिए? किसी तरह वह हिम्मत नहीं जुटा पा रही थी। अंत में उसके मन में कुछ शब्द कौंधे और उसे लगा कि ये शब्द उसके पति को चुभने के लिए एकदम सही हैं। 'इस घर में सदियों से अनेकों लोगों के लिए अन्नदान व्रत रखा गया है। तुममें इतना अहंकार है कि तुम अपने ससुर के भी ऋणी नहीं बनना चाहते।'

रामकृष्णय्या ने कोई जवाब नहीं दिया। वे दो-तीन या पाँच मिनट तक नहीं बोले, बल्कि दस मिनट बाद भी चुप रहे। सुकन्या ने अपने पति के चेहरे को देखकर खुद को आश्वस्त किया कि अब वे पैसे लौटाने की बात नहीं करेंगे। हमेशा की तरह, रामकृष्णय्या चुपचाप भोजन करते रहे, लेकिन सुकन्या को लगा कि उनकी चुप्पी में एक बोझ है जो उन्हें नीचे खींच रहा है। उसे एहसास हुआ कि उसने भी अब तक इतनी तीखी बात नहीं कही थी और उसे पछतावा हुआ। लेकिन जो कहा गया सो कहा गया। जो पत्थर फेंका गया था, वह अपने लक्ष्य तक पहुँच चुका था। उसे वापस नहीं लिया जा सकता था। फिर भी उसे लगा कि वह पूरी तरह गलत नहीं थी। उन्हें इसका भी जवाब देने दीजिए। मैं एक और तर्क देती हूँ, 'आइए गणेश जी को बुलाकर उनसे पूछें कि क्या दादा जी को पैसे लौटाना उचित है। दादा जी ने वे शब्द कहे थे और पोते ने भोजन किया था। इसलिए, निर्णय गणेश जी को ही लेना चाहिए।' सुकन्या को यह तर्क समझदारी भरा लगा और इससे उसका आत्मविश्वास

बढ़ा। वह देखना चाहती थी कि उसके पति इस पर क्या कहेंगे। दोपहर के भोजन के बाद, उसके पति थोड़ी देर के लिए लेट गए। ऐसा नहीं था कि उसे नींद आ रही थी। सुकन्या जानती थी कि पिता द्वारा अदालत में झूठी गवाही देने के बाद बेटे को नींद नहीं आती थी और पिता की आत्महत्या के बाद तो नींद पूरी तरह गायब हो गई थी। रसोई के काम निपटाकर वह भी लेट गई और थोड़ी देर सो गई। जब तक वह उठी, उसके पति बाहर जा चुके थे। उसने सोचा कि वह होलेनारसिपुरा से लाई हुई वेदांत की किताबें लेकर वन में गए होंगे। जब वह घर में अकेली थी, तो उसके मन में एक विचार कौंधा। 'अगर उसके ससुर परमेश्वरय्या जीवित होते, तो क्या वह पैसे लौटा देते?' सावित्री की शादी को सत्रह साल हो गए थे। तब से उन्होंने घर के किसी भी काम में दखल नहीं दिया था। उन्होंने गणेश जी को तिप्तूर भेजने के बारे में भी कोई राय नहीं दी थी। जब रामकृष्णय्या ने अपने पिता से पूछा, तो उन्होंने कहा था, 'यह तुम दोनों को तय करना है।' अब, अगर उसके पति पैसे लौटाना चाहते, तो उसके ससुर क्या कहते? यह अनुमान लगाना उसके लिए मुश्किल था। लेकिन, अगर उसके ससुर जीवित होते, तो वह अपने पति से यह कहने की हिम्मत कभी नहीं करती कि वह अहंकारी और घमंडी है क्योंकि उसके परिवार में पीढ़ियों से अन्नदान की परंपरा चली आ रही है। सुकन्या यह देखकर हैरान थी कि ससुर की मृत्यु के बाद उसका सारा भय समाप्त हो गया था। इतना ही नहीं, पूरे घर में असंतुलन का आभास हो गया था। इन असंतुलनों का स्वरूप और सार वह पूरी तरह से समझ नहीं पा रही थी, लेकिन ये अस्पष्ट, अमूर्त भावनाओं के रूप में उसके मन में उभर रहे थे।

चार दिन बीत गए। उसके पति ने एक शब्द भी नहीं बोला। लेकिन इसे क्रोध का संकेत नहीं माना जा सकता था। उनका स्वभाव ही ऐसा था। खासकर अपने पिता की मृत्यु के बाद से। वे अक्सर कम बोलने लगते थे। पाँचवें दिन, वे उठे, उससे जल्दी नाश्ता बनाने को कहा, स्नान किया, रोटी और चटनी खाई और बाहर चले गए। शाम हो चुकी थी जब वे लौटे। उन्होंने कहा, 'मैं धान के खेत की बिक्री पंजीकृत कराने चन्नरायपट्टाना गया था। कल सुबह हम दोनों बस से चन्नरायपट्टाना और फिर टिपटूर चलते हैं, पैसे वापस करते हैं और शाम की बस से चन्नरायपट्टाना पहुँच जाते हैं।'

उसे ठगा हुआ महसूस हुआ, इसलिए उसने पूछा, 'क्या आपने मुझसे पूछे बिना ही सौदा पूरा कर लिया?'

रामकृष्णय्या ने तुरंत लेकिन शांत भाव से उत्तर दिया, 'मैंने तुम्हें उस दिन बता दिया था। मुझे पता था कि अगर मैंने तुमसे पूछा भी होता तो तुम क्या कहते।'
सुकन्या ने एक कानूनी मुद्दा उठाया, 'जब एक वयस्क पुत्र मौजूद हो और उसके हस्ताक्षर न हों, तो बिक्रीनामा कैसे वैध हो सकता है?'
'हां, मुझे पता है, मैंने ही उसे चन्नारायपट्टाना आने के लिए कहा था,' उसने कहा और हाथ-पैर धोने के लिए बाथरूम में चला गया।
उसे संदेह था कि क्या गणेश जी ने भी अपने दादा जी को पैसे लौटाने पर सहमति जताई थी और वह खुद को अलग-थलग महसूस कर रही थी। जब उसके पति स्नानघर से लौटे और अपना चेहरा पोंछ रहे थे, तो उसने पूछा, 'क्या गणेश जी ने अपने दादा जी को पैसे लौटाने पर सहमति जताई?' उनका ध्यान कहीं और ही था, मानो उसका सवाल उन तक पहुंचा ही न हो। उन्होंने अपना चेहरा और गर्दन पोंछी, थोड़ी देर छत की कड़ियों को देखते रहे और फिर बोले, 'यह सवाल गणेश जी से पूछने लायक नहीं है।'
सुकन्या को और कुछ सूझ नहीं रहा था। वह गौशाला में गई और अपने भीतर के गहरे दुख को आँखों से बहा दिया। लेकिन उसने दबी हुई सिसकियों से रोया, क्योंकि अगर उसके पति को उसके रोने के बारे में पता चल जाता, तो उसे और भी शर्मिंदगी होती। फिर उसने अपना चेहरा धोया और अंदर आ गई। उसने सोचा कि वह अपने पति से कहे, 'मैं तिपतुर नहीं जाऊंगी। तुम्हें ही पैसे चुकाने हैं। अगर तुम चाहो, तो अकेले जाओ और पैसे चुका दो।' लेकिन तभी उसके मन में एक और विचार आया। अगर वह ऐसा कहती, तो उसका पति ज़रूर अकेला चला जाता और उसके पिता ज़रूर पैसे ले लेते। कम से कम, अगर वह रामकृष्णय्या के साथ होती, तो उसके पिता या तो अपनी बेटी के प्रति स्नेह के कारण या उसके सामने पैसे लेने में शर्म महसूस करने के कारण पैसे लेने से इनकार कर देते। जब यह संभावना उसके मन में कौंधी, तो उसने फैसला किया कि अपने पति के साथ जाना ही सही होगा। जब वह पूजा कक्ष में दीपक जला रही थी, तभी उसे एक और मददगार हाथ मिला। उसने पहाड़ी मंदिर के भगवान रंगस्वामी से मन्नत माँगने और तिपतुर पहुँचने से पहले रास्ते में उनके सामने प्रणाम करने का निश्चय किया। उसने भगवान से प्रार्थना करने का सोचा कि वे उसके पिता को वह पैसा ठुकराने की समझ दें। अगर उसके पिता ने मना कर दिया, तो उसके पति को सबक मिलेगा। सुकन्या को इस फैसले से कुछ उम्मीद जगी, वह बाहर आई और अपने पति से

बोली, 'बस का रास्ता भले ही घुमावदार हो, लेकिन आरामदायक है। क्या हम इस रास्ते पर बसें चलने से पहले बैलगाड़ी से नहीं जाते थे? क्या अब भी लोग खोपरा बेचने के लिए बैलगाड़ी से नहीं जाते? तुम होन्ना से कहो कि वह बैलगाड़ी को जोत दे। मैं पहाड़ी पर चढ़कर रंगस्वामी देवता को दीपक जलाना चाहती हूँ। वे हमारे कुलदेवता हैं।'

रामकृष्णय्या होन्ना के घर गए।

सुकन्या मुर्गे की बांग से पहले उठीं, स्नान किया, नारियल कसा, चटनी बनाई और रागी की रोटियाँ तैयार कीं। रामकृष्णय्या ने अपना संध्यावंदन पूरा किया। होन्ना ने रथ को मेहराबदार आवरण से जोता और भोर होते ही आ गए। उन्होंने सुब्बन्नय्या से रात भर घर और मवेशियों की देखभाल करने का अनुरोध किया, उन्हें चाबी दी और दोनों रथ में बैठ गए। सुकन्या रास्ते से भली-भांति परिचित थीं। तालाब के तटबंध को पार करने के बाद उन्होंने कहा, 'चलो रंगास्वामी पहाड़ी की तलहटी से चलते हैं।'

होन्ना ने कहा, 'नहीं, यह ठीक नहीं है, चलो दाईं ओर से चलते हैं। खड़ी और ऊबड़-खाबड़ पहाड़ी सड़क पर हमें पहाड़ी की ढलान पर चढ़ना होगा और फिर दूसरी तरफ उतरना होगा। बैल बहुत थक जाएंगे।'

लेकिन सुकन्या ने ज़िद की, 'मैं भगवान को अर्पित करने के लिए नारियल लाई हूँ।' रामकृष्णय्या ने बीच में दखल देते हुए कहा, 'देरी हो भी जाए तो कोई बात नहीं, होन्ना, उस तरफ से गाड़ी चलाओ। आखिर, यह भगवान की पूजा के लिए ही तो है।' तो होन्ना ने गाड़ी को बाईं ओर मोड़ दिया। दोनों को तीन-चार बार गाड़ी से उतरना पड़ा और रामकृष्णय्या को पहियों को गड्ढों से उठाकर धकेलना पड़ा। यह वाकई एक ऐसी सड़क थी जिससे बैल थक जाते। पहाड़ी की तलहटी के पास, होन्ना ने लगाम हटा दी, बैलों को खोल दिया और वहीं रुक गई। रामकृष्णय्या सुकन्या के साथ पहाड़ी पर चढ़े। चढ़ते समय वह हाँफ रही थी। हालाँकि वह भी थके हुए थे, फिर भी उन्होंने उसे चलने दिया और उसके पीछे-पीछे चलते रहे। उन्होंने पहाड़ी पर स्थित मंदिर के द्वार के सामने प्रणाम किया और तेज़ हवा में चुपचाप खड़े होकर चारों ओर देखते रहे, ऐसी हवा जो उन्हें गिरा सकती थी। सुकन्या ने अपना लाया हुआ नारियल तोड़ा, फूल को द्वार की दहलीज पर रखा, मंदिर की परिक्रमा की, आँखें बंद कीं और बैठ गईं। तब तक पुजारी पहाड़ी पर आ चुके थे और अपनी पूजा पूरी कर चुके थे। इसलिए सुकन्या बैठ गईं, आँखें बंद

कर लीं और गहन प्रार्थना करते हुए बोलीं, 'हे रंगनाथ भगवान, यदि आप चाहें तो आप किसी का भी मन बदल सकते हैं। कृपया मेरे पिता को इस धन को अस्वीकार करने की बुद्धि प्रदान करें। मैं आपसे प्रतिज्ञा करती हूँ, प्रतिज्ञा करती हूँ, प्रतिज्ञा करती हूँ।' उन्होंने प्रार्थना की, आँखें बंद कीं और वहीं बैठी रहीं, प्रार्थना करती रहीं। काफी देर बाद जब उन्होंने आँखें खोलीं तो देखा कि पुजारी ने देवता को फूल चढ़ाए थे। तब उन्होंने आँखें बंद कर लीं और प्रार्थना की, 'हे भगवान, यदि आपने मेरी प्रतिज्ञा स्वीकार कर ली है तो मुझे अपने दाहिनी ओर से पुष्प प्रसाद दें।' उन्होंने आँखें खोलीं और देवता को निहारती रहीं। बाहर तेज हवा चल रही थी, गरज रही थी। उस छोटे से मंदिर के अंदर इतनी शांति थी कि दीपक की जलती हुई बाती का सिरा भी नहीं हिल रहा था। वह बिल्कुल नहीं उठीं। वह अपने पति के स्वभाव से भलीभांति परिचित थीं। चाहे वह यहाँ कितना भी समय बिताए और होन्ना कितनी भी बेचैन हो जाए, उसका पति कभी बीच में दखल नहीं देगा और उसे उठने के लिए नहीं कहेगा। अंत में, भगवान के दाहिने कंधे से एक कनेर का फूल नीचे गिरा। सुकन्या की आँखें भक्ति और विश्वास के आँसुओं से भर गईं। 'हे भगवान रंगनाथ, आप ही हैं जो सबके मन को वश में कर लेते हैं और उन्हें कर्म करने के लिए प्रेरित करते हैं। अब मुझे चिंता करने की कोई बात नहीं है, क्योंकि आपने निर्णय ले लिया है।' उसने यह बात इतनी ज़ोर से कही कि भगवान भी सुन सकें और उठकर फिर से मंदिर की परिक्रमा की, प्रणाम किया और वापस चल पड़ी।

जब वह सीढ़ियों से नीचे उतरने ही वाली थी, तो रामकृष्णय्या ने उसे एक मिनट रुकने को कहा। तेज़ हवा चल रही थी और बरगद के पेड़ के सारे पत्ते ज़ोर से हिल रहे थे, इसलिए शब्द ठीक से सुनाई नहीं दे रहे थे। वे अपनी पत्नी के पास आए, उसके सामने खड़े हुए और बोले, "पिछले दिन तुम्हें याद होगा तुमने कहा था, 'अन्नदान करने वाले परिवार होने के घमंड और अहंकार में तुमने मेरे पिता को पैसे लौटाने का फैसला किया है।' देखो, उस दिन से मैं निष्पक्ष मन से इस बात की जांच कर रहा हूँ। अभी भी इस पहाड़ी की ऊँचाई पर, मैं उसी बात के बारे में सोच रहा हूँ। सुकन्या, कृपया यह समझो, मैंने यह उस घमंड या अहंकार के कारण नहीं किया है। तुम्हारे पिता को धन हानि हुई है। परिणामस्वरूप, उनकी मन की शांति भंग हो गई है। इसीलिए वे इतने लोगों को यह बात बता रहे हैं। मैं यह इसलिए कर रहा हूँ ताकि उनका मन शांत हो जाए और उनकी मन की शांति बहाल हो जाए।"

उनकी बातें उसके मन तक नहीं पहुँचीं, जो भक्ति में लीन था। 'रंगनाथस्वामी सबसे महान हैं। वे सबके मन को प्रभावित करते हैं,' ऐसा कहते हुए वह नीचे उतरने लगी। रामकृष्णय्या उसके पीछे-पीछे चले।

रामकृष्णय्या कल्पना कर सकते थे कि पहाड़ी पर स्थित मंदिर में आंखें बंद करके सुकन्या क्या प्रार्थना कर रही होंगी। उन्होंने सोचा कि एक-दूसरे के मन की बात समझना स्वाभाविक है, क्योंकि वे इतने वर्षों से पति-पत्नी के रूप में परिवार का संचालन कर रहे थे। वे सोचने लगे, जिस प्रकार वे सुकन्या के विचारों को समझते थे, क्या सुकन्या भी उनके विचारों को समझती थीं? यदि वे उनके विचारों को जानती थीं, तो उन्होंने प्रतिक्रिया क्यों नहीं दी? यह प्रश्न उनके मन में उठा। उन्हें अपना वह विचार याद आया जो उन्होंने गढ़ा था, कि परिवार, अर्थात् संसार, भी एक कर्म है, एक क्रिया है, जो वैराग्य विकसित करने का साधन है। सुकन्या उत्साह से तेजी से नीचे उतर रही थीं। रामकृष्णय्या की चाल धीमी थी। वे बार-बार अपने शब्दों को परख रहे थे कि वे अपने ससुर को धन वापस नहीं करेंगे, इस अहंकार या घमंड के साथ कि वे सबसे बड़े पुत्र हैं और अब उस घर के मुखिया हैं जिसकी पीढ़ियों से अन्नदान करने की प्रतिष्ठा रही है। उसने याद करने की कोशिश की कि जिस दिन उसने पैसे चुकाने का फैसला किया था, उस दिन से लेकर आज तक, क्या उसके मन में कभी अहंकार या घमंड के विचार आए थे? उसे लगा कि नहीं। कभी नहीं। और उसे याद आया कि उसने वेदांत की किताब में पढ़ा था कि यह समझना मुश्किल है कि अहंकार किन अदृश्य रूपों में काम करता है। यहाँ तक कि दर्द भी अहंकार के सहारे के बिना पैदा नहीं होता। श्रेष्ठता की भावना के बिना तिरस्कार नहीं होता। वह जानता था कि मंडी नागप्पा के प्रति उसके मन में तिरस्कार का भाव था, लेकिन उसने इस बारे में किसी से बात नहीं की थी, यहाँ तक कि अपनी पत्नी से भी नहीं। उसने फिर खुद से सवाल किया। क्या मंडी नागप्पा को पैसे लौटाने की उसकी इच्छा जायज़ थी? इस विचार से उसे हंसी आ गई। अगर हम कर्मों का विश्लेषण करते रहें और आत्म-परिपूर्णता पर चर्चा करते रहें, तो कोई काम संभव नहीं है। यहाँ तक कि आत्मसम्मान की रक्षा भी नहीं। वे कौन से पहलू हैं जो आत्मसम्मान और अहंकार के बीच और आत्मसम्मान और आत्मसम्मान की रक्षा के प्रयास के बीच अंतर तय करते हैं? जब तक उसे अपने सवाल का जवाब मिला, बैलगाड़ी उसके ससुर के घर पहुँच गई थी। उन्हें एक बात

का पूरा यकीन था। कि वे अपनी कोट की जेब से पैसे निकालेंगे और अपने ससुर को दे देंगे। रामकृष्णय्या उनकी मंशा समझ गए थे।
दो मील के भीतर ही बस मार्ग था। होन्ना ने सड़क के किनारे कुएँ के पास बैलों को खोला, उन्हें पानी पिलाया और तीनों ने पैक की हुई रोटियाँ और चटनी खाई, पानी पिया और होन्ना ने गाड़ी को फिर से जोत दिया। सुकन्या गाड़ी के फ्रेम पर झुककर मेहराबदार छत की छाया में चलती गाड़ी की आवाज़ के बीच सो गई। हालाँकि रामकृष्णय्या जानते थे कि उन्हें नींद नहीं आएगी, फिर भी उन्होंने अपनी आँखें बंद कर लीं। लेकिन उन्होंने सोचा, अगर वे अपने मन पर नियंत्रण पा लें, तो सो सकते हैं और अगर मन पर नियंत्रण पा लिया जाए, तो वेदांत की कोई आवश्यकता नहीं है। उन्होंने गाड़ी के पीछे से बाहर देखा। यह गाड़ी कहाँ जा रही है? तिपपुर पहुँचने में अभी कितने मील बाकी हैं? वे उत्सुक हो गए।
उसने अनुमान लगाया कि कुल दूरी का लगभग एक तिहाई हिस्सा तय हो चुका होगा। साथ ही उसे याद आया कि इस रास्ते पर आए उसे बाईस साल हो गए थे। वह अपनी शादी में बैलगाड़ी से आया था; कुल मिलाकर आठ बैलगाड़ियाँ थीं। उसके बाद उसने उस दिशा में कदम नहीं रखा। उसके मन में एक सवाल उठा: क्या यह क्रोध था, तिरस्कार था, उपेक्षा थी या वैराग्य? यह विवाह प्रस्ताव कलेनहल्ली थिम्मप्पा गौड़ा की ओर से आया था। अप्पा ने इस रिश्ते के लिए सहमति दे दी थी। वह आए और लड़की को देखा। बस इतना ही। अरे, यह कैसी शादी थी! उन्होंने अपनी बेटी की शादी एक बिल्कुल गरीब आदमी की तरह मनाई! कितना कंजूस! हमारे साथ आए लोगों के लिए पर्याप्त भोजन नहीं था। अप्पा ने राशन मंगवाया और दूल्हे के शिविर में उपिट्टू और कॉफी बनाने का निर्देश दिया। सोलह साल का एक छात्र शादी के चबूतरे में नाश्ता और दोपहर का भोजन कर रहा था। मंडी नागप्पा ने उससे पूछा, 'तुम कौन हो?' लड़के ने कहा कि वह दूल्हे के पक्ष से है। नागप्पा ने लड़के के चेहरे को ध्यान में रखते हुए तथ्यों की जाँच की, वापस आया और बोला, 'तुमने कहा था कि तुम दूल्हे के परिवार से हो। चलो, मुझे साबित करके दिखाओ कि तुम्हारा किससे और कैसे रिश्ता है। क्या तुम्हें लगता है कि मुफ्त में खाना खाना कोई कुटिया है?' इतना कहकर उसने लड़के को पकड़ा, उसे खाने वालों की कतार से खींचकर बाहर फेंक दिया। तब तक कन्यादान की दोपहर की रस्म पूरी हो चुकी थी और नवविवाहित जोड़े के लिए एक ही केले के पत्ते पर एक साथ पहला भोजन करने का समय आ गया था। परमेश्वरय्या ने कहा,

'अगर मुझे पता होता कि यह नागप्पा इतना कंजूस है, तो मैं कभी भी उसकी बेटी को अपने घर लाने के लिए राजी नहीं होता।' मैंने भी यह सब देखा, पास में खड़े पिता को बुलाया और कहा, 'देखिए, अप्पा, मुझे यह रिश्ता नहीं चाहिए। चलिए हम अपनी गाड़ियाँ जोतकर अपने गाँव लौट चलते हैं। आप कृपया हमारे लोगों को सूचित कर दीजिए।' सुकन्या, जो दो केले के पत्तों पर भोजन करने की रस्म के दौरान उनके बगल में बैठी थी, ने उनकी बातें सुन लीं। तब पिता ने कहा, 'नहीं बेटा, हमें जल्दबाजी नहीं करनी चाहिए।' मांगल्य बंधन के बाद विवाह बंधन को तोड़ना उचित नहीं है, चाहे आप कहें 'मैं नहीं चाहती'। पहले यह रस्म पूरी कर लें। उसके बाद हम इस बारे में बात करेंगे।' इस तरह उन्होंने मुझे शांत किया। बाद में वे मुझे और सुकन्या को एक कमरे में ले गए और सुकन्या से कहा, 'देखो प्यारी बच्ची, हमने दहेज का एक पैसा भी नहीं मांगा, न ही दूल्हे को दी जाने वाली कोई और वस्तु। क्योंकि बिचौलिए ने कहा कि यह एक अच्छा परिवार है और लड़की गुणी है, इसलिए मैंने तुम्हें अपनी बहू के रूप में स्वीकार कर लिया। अब मुझे तुम्हारे पिता का स्वभाव पता चल गया है। अब भी, अगर हम कहें कि हमें यह लड़की नहीं चाहिए और तुम्हें अपने घर ले जाने से मना कर दें, तो कोई हमें रोक नहीं सकता।' अप्पा की बातें सुनकर सुकन्या रोने लगी। तब अप्पा ने कहा, 'देखो, रोओ मत। यह जरूरी नहीं है कि बेटी में पिता के गुण हों। देखो, हमारे घर में रोजाना चार-पांच मेहमान दोपहर के भोजन के लिए आते हैं। यही गृहस्थ धर्म है।' यदि तुम ईश्वर के नाम पर मुझसे वादा करो कि तुम सदा इस धर्म का पालन करोगी, निष्ठापूर्वक परंपरा को आगे बढ़ाओगी और कभी भी इसके विरुद्ध विचार नहीं करोगी, तो मुझे बताओ, हम तुम्हें अपनी बहू के रूप में स्वीकार करेंगे और अपने घर ले जाएंगे। यदि नहीं, तो तुम अपने पिता के घर पर ही रहो।' तब सुकन्या ने कहा, 'जी पिताजी, मैं वादा करती हूँ।' अप्पा ने कहा, 'यदि ऐसा है, तो तुम कल से ही हमारे साथ चलना शुरू कर दो।' रामकृष्णय्या को याद आया: इतने वर्षों तक सुकन्या उनके घर में खाना बनाती रही और वहाँ आने वाले सभी मेहमानों की सेवा करती रही। वह आज्ञाकारी थी। उन्होंने सोचा कि क्या उसमें उदारता विकसित हुई थी। उन्होंने विचार किया – जब पति-पत्नी के मन को जोड़ने वाले समान गुण नहीं थे, तो क्या ये गुण वंशानुगत थे या संगति से उत्पन्न हुए थे? क्या वह अपने पिता से इन बातों के बारे में पूछ सकते थे? अपनी माता की मृत्यु के बाद, उनके पिता मौन हो गए थे। यह सच था कि उन्हें मेरी माता जैसी अच्छी पत्नी की मृत्यु का गहरा दुःख

था। फिर भी वे इस स्थिति में पहुँच गए थे कि किसी से भी बात नहीं करते थे। एक बार जब रामकृष्णय्या ने इस बारे में पूछा, तो उन्होंने ये शब्द कहकर बात समाप्त कर दी, 'देखो मेरे पुत्र, तुम्हें वैराग्य का अभ्यास करना चाहिए। तुम अभी छोटे हो। फिर भी, यदि तुम गंभीरता से वैराग्य का अभ्यास करोगे, तो तुम्हें कभी कष्ट नहीं होगा।' रामकृष्णय्या चिंतन करने लगे: क्या जीवन या परिवार में वैराग्य जैसे शब्दों का कोई सटीक अर्थ होता है? क्या वैराग्य का अर्थ निष्क्रिय रहना है, यह सोचना कि पत्नी और बच्चे जो चाहें करें, मुझे इससे कोई लेना-देना नहीं है? या फिर जो सही है उस पर दृढ़ रहना और उसके अनुसार जीवन जीना? रामकृष्णय्या ने मन में निश्चय किया, 'हाँ, मुझे जो सही है उस पर दृढ़ रहना चाहिए, मुझे दूसरों की भावनाओं पर ध्यान नहीं देना चाहिए।' उनके मन में एक प्रकार की सांत्वना उत्पन्न हुई क्योंकि सुकन्या को अब अपने पिता के घर में गणेश को छोड़ने की छल-कपट के लिए उचित दंड मिल चुका था। लेकिन इसे शब्दों में व्यक्त करना उनके वर्षों से अभ्यास किए गए आत्म-संयम के विरुद्ध था। उन्हें याद आया कि उन्होंने अपने ससुर के बारे में सुकन्या का कभी उपहास या ताना नहीं मारा था और उन्होंने भविष्य में भी ऐसा न करने का निश्चय किया। अब उन्हें एहसास हुआ कि ताना मारना तो उनका मन नहीं करेगा। नागप्पा ने अपनी बेटी का विवाह करके उसे उसके पति के घर भेज दिया था, लेकिन उन्होंने अपनी मर्ज़ी से उसे कभी आमंत्रित नहीं किया। उन्होंने अपनी बेटी को अपने घर नहीं बुलाया, यहाँ तक कि प्रसव, बच्चे की देखभाल और माँ के लिए भी नहीं, जबकि सुकन्या की केवल एक ही संतान थी। जब सुकन्या ने समझाया, तो रामकृष्णय्या चुप रहे, हालाँकि उन्होंने पूछा नहीं था: 'देखिए, उस घर में माँ नहीं है, पिता को इन सब बातों को संभालना नहीं आता।' सच तो यह है कि नागप्पा किसी से प्रेम नहीं करते थे। उनका सारा प्रेम धन के इर्द-गिर्द घूमता था। फिर भी, जब सुकन्या दो साल में एक बार अकेले अपने पिता के घर जाती थी, तो रामकृष्णय्या बिना कुछ कहे उसे भेजने के लिए तैयार हो जाते थे। सुकन्या अपने पिता के स्वभाव को भली-भांति जानती थी। एक बार जब वह तिपुर से लौटीं, तो रोते हुए अपने पति से अपने दिल की बात कही: "मेरे पिता में यह समझ क्यों नहीं है कि जब तक वे जीवित हैं, उनकी बेटी सुखी रहे, अच्छा खाए-पिए, अच्छे कपड़े, गहने आदि पहने? उनकी मृत्यु के बाद, उन्हें क्या फर्क पड़ता है कि उनका धन उनकी बेटी को मिले या नहीं? मुझे संदेह है कि क्या वे चाहते हैं कि संपत्ति उनकी बेटी को मिले। जब उनके लिए स्वेच्छा से दान या

धार्मिक कार्यों में देना असंभव है, तो अपनी बेटी के अलावा संपत्ति किसे मिलेगी? यदि ऐसा पिता लंबी आयु जीने के बजाय जल्दी मर जाए, तो कम से कम बच्चे अपनी युवावस्था में सुख और आनंद तो प्राप्त करेंगे।" तब रामकृष्णय्या ने कहा, "उनसे धन और संपत्ति की अपेक्षा करना गलत है। तुम अपने पिता की कमाई का आनंद क्यों लेना चाहती हो? समझो, यहाँ जो कुछ है, वही हमारा है। बुरे विचार मन में केवल इच्छा के कारण ही आते हैं।" जब रामकृष्णय्या ने उन्हें सांत्वना दी, तो वे अपने पति के प्रति कितनी क्रोधित हो गईं! उन्हें यह सब याद आ गया। उनका मन अचानक इस स्मृति-श्रृंखला को रोकना चाहता था। उन्होंने अपने पास रखी वेदांत की किताब उठाई, जिस पृष्ठ पर उन्होंने निशान लगाया था उसे खोला और पढ़ना शुरू कर दिया।

जब तक बैलगाड़ी तिप्तूर पहुँची, शाम हो चुकी थी और सड़कों पर बत्तियाँ जल चुकी थीं। नागप्पा अपने घर में थे। सुकन्या अंदर गई। नागप्पा अपने दामाद को देखकर आश्चर्यचकित रह गए, जो कभी अपने ससुर के घर नहीं आया था। उन्होंने दामाद का हालचाल पूछा, चटाई बिछाई और उसे बैठने को कहा। सुकन्या अंदर के दरवाजे के पास बेचैन खड़ी रही, ताकि वह अपने पिता को अंदर बुलाकर उनसे विनती कर सके कि वे उसके पति द्वारा लाए गए पैसे वापस न लें। उसके पिता अपने दामाद के पास चटाई पर ऐसे खड़े थे मानो उससे बातें कर रहे हों। नागप्पा ने पूछा, 'मेरे जाने के बाद क्या आपके यहाँ पर्याप्त बारिश हुई?' 'हाँ, आपके आशीर्वाद से कुछ बौछारें हुईं।' इतना कहकर रामकृष्णय्या उठे, झुककर अपने ससुर के पैर छुए और बोले, 'मैं यहाँ कुछ काम से आया हूँ।' नागप्पा डर गए, क्योंकि दामाद ने बोलते हुए उनके पैर छुए थे। इसी बीच दामाद ने नोटों का बंडल निकाला, उसे अपने ससुर के सामने रखा और कहा, 'मैंने गणेश जी को तीन साल तक आपके घर में रखा था। मैंने न तो साबुन, न टूथ पाउडर, न ही खाने-पीने का पैसा दिया। चूंकि मैंने उन्हें सुकन्या की इच्छा के अनुसार भेजा था, इसलिए मैंने इन चीजों के बारे में पूछताछ नहीं की। मैंने केवल किताबों और स्कूल की फीस के लिए पैसे दिए थे। कृपया इन अन्य खर्चों के साथ इस पैसे को स्वीकार कर लें और मुझे कर्ज से मुक्त कर दें।' नागप्पा आधे मिनट तक वहीं खड़े रहे। सुकन्या ने अपनी सांस रोक ली और मन ही मन जप रही थी, 'हे भगवान रंगनाथ, रंगनाथ।' तब नागप्पा ने अपना हाथ बढ़ाया, नोटों का बंडल लिया, बैंक के कैशियर की फुर्ती से गिना और कहा, 'यह ढाई हजार हैं।'

रामकृष्णय्या ने कहा, "जी हां। मुझे लगा कि आपके 2385 रुपये के खाते में शायद कुछ मदें छूट गई हों। इसलिए मुझे लगा कि पूरी रकम चुकाना बेहतर होगा। अगर आप इसे स्वीकार कर लें और कहें कि कर्ज पूरी तरह चुका दिया गया है, तो मैं आपका आभारी रहूंगा।"

'जी हाँ, बिल्कुल, बात खत्म हो गई, अब और क्या कहना बाकी है?' नागप्पा ने कहा और मानो सही निशाना साधा हो, नोटों के बंडल में से एक नोट निकालकर रामकृष्णय्या को दिखाया और बोला, 'देखिए, यह नोट मुझे असली नहीं लग रहा। क्या आप इसे बदल देंगे?'

रामकृष्णय्या ने कहा, 'मैं अपने साथ कोई अतिरिक्त नकदी नहीं लाया हूं।'

"ठीक है, मैं इसे बैंक में जमा करा देता हूँ। देखो, अब से जब भी तुम सौ रुपये का नोट लो, तो सावधान रहना। आजकल नकली नोट बढ़ रहे हैं। मैं गिनते-गिनते ही उन्हें पकड़ लेता हूँ। देखो, यह वाला। ठीक है, यह नकली नहीं है। फिर भी सावधान रहना। हालात अच्छे नहीं हैं।" इतना कहकर नागप्पा ने नोटों को मोड़कर अपनी कमीज की अंदरूनी जेब में ठूंस दिया।

पहाड़ी के भगवान रंगनाथ के बारे में सोच रही सुकन्या को दरवाजे के पास खड़े होकर यह कर्ज चुकाते हुए देखकर शर्म आ रही थी। वह जल्दी से रसोई में गई और कुछ पकाने के लिए अलमारियों में खोजने लगी। लेकिन तीन-चार मुट्ठी रागी के आटे के अलावा, जो बासी हो चुका था और बदबू दे रहा था, रसोई में कुछ भी नहीं था। न चावल, न चीनी, न गुड़, न दूध, न दही। यहाँ तक कि नारियल भी नहीं था। इसी बीच उसके पिता रसोई में आए और उससे पूछा, 'तुम्हें ये ढाई हजार रुपये कहाँ से मिले?'

'उसने गीली जमीन बेच दी। उसने मुझे बताया नहीं। न ही उसने मुझसे पूछा।'

'प्रति एकड़ किस दर से?'

'जमीन लगभग तीन एकड़ से थोड़ी कम थी। उसने इसे आठ हजार में बेच दिया।'

इसका मतलब है, तीन हजार प्रति एकड़। बेचते समय, क्या आपको दरें बढ़ाकर प्रतिस्पर्धा पैदा नहीं करनी चाहिए और फिर बेचना चाहिए? अगर मुझे पता होता कि यह इतना सस्ता है, तो मैं खुद खरीद लेता। अगर आपको अपने इलाके में कोई संपत्ति बिकने के लिए पता हो, तो मुझे लिखिएगा। मैं उसे खरीद लूंगा। कीमत चाहे जो भी हो, कोई फर्क नहीं पड़ता। खैर, उसने मुझे ढाई हजार दिए। बाकी रकम का उसने क्या किया?

उन्होंने अपने द्वारा लिए गए ऋण का कुछ हिस्सा चुका दिया है। शेष राशि उन्होंने गणेश की शिक्षा के लिए रखी है।
"यदि आप परिवार का संचालन विवेकहीनता से करते हैं और फिजूलखर्ची करते हैं, तो आपको निश्चित रूप से कर्ज लेना पड़ेगा। रुकिए, मैं उसे सलाह देता हूँ।"
'अप्पा, मैं आपसे विनती करती हूँ, कृपया ऐसा मत कीजिए,' ऐसा कहते हुए सुकन्या की आँखों में आंसू भर आए और वह फूट-फूटकर रोने लगी।
उसके पिता ने उसे समझाना शुरू किया। 'रो मत बेटा। अगर तुम थोड़ी सख्ती बरतो और खुद पर नियंत्रण रखोगी, तो वह समझदार हो जाएगा। मुझे उम्मीद है कि उसे कोई और बुरी आदत नहीं है, है ना?'
चटाई पर खड़े रामकृष्णय्या बाहर आए। बैलों को पानी चाहिए था। फिर उन्हें चारा देना था। उन्होंने होन्ना से कहा, 'होन्ना, हमारा काम यहाँ खत्म हो गया है। अब मौसम ठंडा हो गया है। चलो तुरंत वापस चलते हैं।' होन्ना ने जवाब दिया, 'लेकिन, बैल थक गए हैं, अय्या।'
'जी हां, वे हैं,' रामकृष्णय्या ने एक पल सोचा और कहा, 'देखो होन्ना, तुम एक काम करो। तुम बैलगाड़ी को फिर से जोतो। हम तीनों किसी होटल में भोजन कर लेते हैं। तुम बैलगाड़ी को धीरे-धीरे चलाओ, बैलों को प्रोत्साहित करते हुए। इस कस्बे से तीन मील आगे, क्या हमें कोई गाँव नहीं मिला था? कहीं सड़क येदगरहल्ली नाम के गाँव से अलग हो जाती है। वहाँ सड़क के किनारे एक पत्थर का मंडप है, जिसके ऊपर छत है। तुम वहाँ गाड़ी रोक दो, बैलों को चारा और पानी दो। तुम गाड़ी में सो जाओ और हम पत्थर के मंडप में सो जाएँगे। यह गाँव के पास ही है, इसलिए हमें डरने की ज़रूरत नहीं है।'
हालाँकि होन्ना को रामकृष्णय्या और सुकन्या के यहाँ आने का सही उद्देश्य नहीं पता था, लेकिन वह उनके रिश्ते की असलियत से वाकिफ था। इसलिए उसने रामकृष्णय्या के सुझाव पर तुरंत सहमति दे दी। रामकृष्णय्या अंदर आए, रसोई के दरवाजे के पास खड़े हुए और अपनी पत्नी से बोले, "देखो, होन्ना ने कहा, उसे कल अपने रिश्तेदार की शादी में जाना है। वह मुझसे तुरंत निकलने का आग्रह कर रहा है। तो चलो, हम चलते हैं।"
'क्या, तुरंत?' उसने पूछा।
'हां, इससे उसे कोई समस्या नहीं है। अगर आप रुकना चाहते हैं, तो रुक सकते हैं। लेकिन मैं अभी जा रहा हूं।'

सुकन्या ने अपने पिता की ओर देखा। उन्होंने कहा, "अरे, ये कैसा बैलगाड़ीवाला है? अभी आया है और अभी से कह रहा है कि जाना है। रात को यहाँ सोने और सुबह निकलने के लिए कोई और क्यों नहीं मिल गया?" सुकन्या ने अपने पिता के सामने सिर झुकाकर कहा, "नहीं पापा, हम उसे क्यों परेशान करें?" और पिता से विदा लेकर जाने के लिए तैयार हो गई।
उसके पिता ने कहा, 'भगवान की वेदी के पास रखे ताबूत में कुमकुम है। कुमकुम लगाओ और फिर जाओ।' यह एक पुराना लकड़ी का ताबूत था जो सुकन्या की नानी ने उसकी माँ को दिया था। सुकन्या जानती थी कि उसके पिता इसमें कुमकुम रखते थे, जिसे वे देवताओं को अगरबत्ती जलाने के बाद विभूति के ऊपर लगाते थे। उसने ढक्कन खोला, एक चुटकी कुमकुम लिया, उसे अपने माथे पर लगाया और उंगलियों में बचा हुआ कुमकुम मांगल्य पर मल दिया, बाहर आई, गाड़ी में बैठी और बैठ गई। होन्ना ने गाड़ी को जोता। नागप्पा जो बाहर आया, बोला, 'अरे हाँ, बाहर चाँदनी है। फिर भी यह रात का सफर है। ध्यान रखना!'

बिलिकेरे में परमेश्वरय्या के वैकुंठ पर्व की रात, मट्टीकेरे में सत्यप्पा के बाग से लगभग 200-250 नारियलों के छह गुच्छे चोरी हो गए। सत्यप्पा चन्नरायपट्टाना से निकले थे और जब वे मट्टीकेरे में अपने घर पहुँचे, तब तक दोपहर के एक बज चुके थे। रामचंद्र गुस्से से आग बबूला होकर नारियल चोरों को कोस रहे थे। जब उन्होंने अपने पिता को देखा, तो उनका गुस्सा उन पर भी उतर आया, क्योंकि अगर पिता पिछली रात वहीं न रुके होते, तो यह चोरी न होती। रामचंद्र ने अपने पिता से उसी लहजे में सवाल किया, जिस लहजे में वे चोरों को कोस रहे थे। "देखिए, पापा, मैं एक दिन पहले इतनी दूर साइकिल से बिलिकेरे सिर्फ आपको यह बताने आया था कि वैकुंठ पर्व समाप्त होते ही आप आ जाना। लेकिन आप आए ही नहीं। आपके गाँव से जाने के बाद, लगभग सात सौ से आठ सौ नारियल चोरी हो गए।" इसके लिए कौन ज़िम्मेदार है?' उसने सारा दोष अपने पिता पर

डाला और कमरे में चला गया, जहाँ उसकी पत्नी, साढ़े तीन महीने के बच्चे की माँ, सो रही थी। कमरे में पान के पत्तों, सुपारी, खोपरा, इलायची, लौंग, खाने में इस्तेमाल होने वाले कपूर और माँ के लिए सुगंधित लेह्या की मीठी खुशबू फैली हुई थी। पसीने से तरबतर सत्यप्पा ने ठंडे पानी से स्नान किया और चावल और सांभर तथा चावल और छाछ का दो वक्त का भोजन किया। रामचंद्र की सास ने उसे खाना परोसा था। वह बाग में गया और पेड़ों का निरीक्षण किया। उसे स्पष्ट हो गया था कि किन पेड़ों से नारियल चोरी हुए थे और चोरी हुए नारियलों की संख्या का भी उसका अनुमान सही था। लेकिन चोर का पता कैसे लगाया जाए? क्या यह सिद्दूरा था, या आलम साबी गिरोह, या बंजारा बस्ती का? अगर एक रात में छह गुच्छे तोड़े जा सकते हैं, तो यह एक आदमी के लिए असंभव था। कम से कम दो लोग दो बार आए होंगे। जब उन्हें यकीन हो गया कि मैं गाँव में नहीं हूँ, तो उन्हें दोबारा आने में कोई डर या झिझक नहीं हुई। सत्यप्पा को लगा कि कम से कम अगर वह एक चोर को पकड़कर उसकी टांग तोड़ दें, तो गाँव के सारे चोर चुप हो जाएँगे। उन्हें याद आया कि जब वे परमेश्वरय्या के धर्मोदक के लिए बिलिकेरे गए थे, तब वहाँ के लोगों ने क्या कहा था। वे कह रहे थे कि मंजय्या द्वारा कांची को हटाने के बाद, बिलिकेरे के किसी भी बाग से नारियल का पत्ता या कच्चा नारियल तक चोरी नहीं हुआ। उनके मन में एक विचार आया - अगर इस गाँव में भी किसी एक चोर को इसी तरह हटा दिया जाए तो क्या होगा? लेकिन साथ ही, उन्हें शर्म भी महसूस हुई। बागों में चोरी रोकने के लिए किसी आदमी की जान लेने का यह विचार कितना नीच और दुष्ट था। उनका सारा गुस्सा उन नेताओं पर उतर आया जो जनता के प्रतिनिधि बनने के लिए लड़ रहे थे और उन्होंने सोचा कि अगर गाँव उनके ग्रामीण उत्थान के सिद्धांत के अनुसार विकसित होते, जिसके लिए उन्होंने इतनी मेहनत की थी, तो ऐसी समस्याएँ नहीं होतीं। उन्हें लगा कि जब तक इन नेताओं को सामूहिक रूप से नष्ट नहीं किया जाता, तब तक यह देश प्रगति नहीं कर सकता और न ही बच सकता है। ये महात्मा गांधी का नाम लेते हैं, चुनावी सभाओं में उनकी तस्वीर दिखाते हैं, खादी पहनते हैं और एक विशेष नैतिक चरित्र का प्रदर्शन करते हैं। जब तक इन लोगों को कतार में खड़ा करके गोली नहीं मार दी जाती, तब तक इस देश की इस बीमारी का प्राथमिक उपचार भी संभव नहीं है। यह व्यापक समाधान उनके मन में आया। उन्हें नींद आने लगी। अगर उन्हें रात में घर आने पर नारियल चोरी होने की खबर न मिली होती, तो वे घर पर थोड़ी देर सो सकते थे और फिर

बाग में जा सकते थे। उन्होंने तीन बार जम्हाई ली। पिछली रात उन्हें ठीक से नींद नहीं आई थी। मंजय्या ने उन्हें वह फिल्म देखने भेजा था। यह याद करते हुए, उन्होंने सुगंधित फूलों वाले सुरागी के पेड़ की छाया में लेटने का सोचा और पहाड़ी की चोटी पार कर रहे थे। तभी वहां चर रही काली नाम की गाय जोर से रंभाई। सत्यप्पा गाय के पास गए और धीरे से उसकी गर्दन खुजलाई। उन्हें लगा कि छह दिनों से उनके न आने के कारण मवेशी भी उपेक्षित महसूस कर रहे हैं। वह पहाड़ी की चोटी पार करके सुरगी के पेड़ के नीचे तौलिया बिछाकर लेट गया। सूरज की गर्मी उसकी आँखों को चुभ रही थी। उसने अपनी दाहिनी बांह से अपनी आँखों को ढँक लिया और थोड़ी देर सो गया। चुभती किरणों के कारण उसकी हिम्मत नहीं हुई कि वह अपनी बांह आँखों से हटाए। उसने सोचा, अगर इस जंगल में एक छोटी सी झोपड़ी होती, तो वह उसे इस भीषण गर्मी और बारिश से भी बचा लेती। छोटी सी झोपड़ी बनाने का विचार करते-करते वह गहरी नींद में सो गया।

जब छाया हटी और सीधी धूप उसके शरीर पर पड़ी, तो वह फिर जाग गया। उसने महसूस किया कि उसका शरीर, चेहरा और आँखें सब चिपचिपी हो गई हैं। तुरंत उठा, बैठ गया और छाया में चला गया। थोड़ी देर बाद, जब उसकी नींद पूरी तरह उतर गई, तो वह उठा, कुएँ की ओर गया, चेहरे पर पानी छिड़का, गर्दन से पसीना पोंछा, वापस आया और सुरागी के पेड़ की छाया में बैठ गया। तब उसे रामचंद्र की कही बातें याद आईं। अब पच्चीस साल का युवक, उसने उसे कितना अच्छा पाला-पोसा था, क्योंकि वह माँ के बिना पला-बढ़ा था! सत्यप्पा ने अपने छोटे बेटे को दूध, दही, फल, अंगूर, बादाम खिलाए और बेटा अब घर के सामने के दरवाजे जितना लंबा और मजबूत युवक बन गया था। लेकिन वह इतना डरपोक है कि रात में बाग का चक्कर भी नहीं लगा सकता। वह बहाना बनाता था कि उसकी पत्नी अकेली होगी। लेकिन अब क्या बहाना? उसकी सास वहाँ थी! उसे अपने रिश्तेदार द्वारा दिखाया गया झूठा सम्मान याद आया। रामचंद्र की हिम्मत कैसे हुई कि वह चोर के प्रति अपना गुस्सा अपने पिता पर, अपनी सास के सामने निकाले? क्या बाग की रखवाली की ज़िम्मेदारी सिर्फ़ सत्यप्पा की थी? सत्यप्पा अंदर ही अंदर गुस्से से उबल रहे थे। हालाँकि, थोड़ी देर बाद उन्होंने खुद को समझाया – रामचंद्र अभी नासमझ था, बस एक बच्चा था। वे उठे, बाड़ के चारों ओर गए और जाँच की। उन्होंने बाड़ को और मज़बूत करने का फ़ैसला किया। सूर्यास्त के बाद, घर जाते समय, उन्होंने बाग में ही रुकने और पूरी रात पहरा देने का फ़ैसला किया, अपने

साथ एक मशाल और एक लाठी लेकर। हालाँकि उन्होंने एक दरांती भी ले जाने का सोचा, लेकिन उन्होंने ऐसा न करने का फ़ैसला किया। वे घर आए, बाड़ की मरम्मत की ज़रूरत के बारे में बताया, अपने साढ़े तीन महीने के पोते को, जिसने टोपी, मोज़े और अंगूठियाँ पहनी हुई थीं, गले लगाया और चूमा। वे भूल गए कि उनका बेटा उनसे नाराज़ था। उन्होंने अपनी पोती आशा का हाथ पकड़ा और उसके साथ खेले और उनका मन पूरी तरह शांत हो गया। रात के खाने के बाद उसने घोषणा की कि वह पूरी रात बाग में ही रहेगा और एक कंबल और एक बोरी ली, उन्हें लपेटा, अपनी बगल में दबाया और वापस बाग में चला गया।

जैसे-जैसे रात गहरी होती गई, सत्यप्पा को थोड़ा डर लगने लगा। हर रात वह दो बार उपवन में जाया करता था। वह मशाल जलाता और लाठी ज़मीन पर पटकता हुआ आता था, ताकि अगर कोई चोर हो तो वह सतर्क होकर भाग जाए। वह जानता था कि उसने चोरों से सीधे टकराव से बचने के लिए यह तरकीब अपनाई थी। लेकिन अब ऐसा नहीं होना था। वह चुपचाप इंतज़ार करता और अगर चोर की ज़रा सी भी आहट होती, तो वह चुपचाप और दबे पांव आगे बढ़ता, बिना कोई आवाज़ किए, यहाँ तक कि हवा में हिलते सूखे पत्ते की भी आवाज़ नहीं करता, जब तक कि वह चोर के घुटने न तोड़ दे। आख़िर चोर क्या नुकसान कर सकता है? ज़्यादा से ज़्यादा, वह अपनी दरांती लहराकर मेरी जान ले सकता है। सत्यप्पा ने हिम्मत जुटाते हुए सोचा, भले ही मेरी जान चली जाए, यह इसके लायक है। डर में जीने, दरवाज़ा बंद करके कंबल में दुबक कर लेटने और उपवन में रोज़ाना होने वाली चोरियों को बर्दाश्त करने के इस मूर्खतापूर्ण जीवन से तो यह बेहतर है। आधे घंटे बाद, उसका डर दूर हो गया। जब अँधेरे आकाश में टिमटिमाहट साफ़ दिखाई देने लगी, तो उसे यह काफ़ी सुखद लगा, घर के चबूतरे से कहीं बेहतर। वह कुएँ की सीढ़ी के पत्थर के तख्ते पर बैठ गया और अपनी घड़ी देखी। अभी दस ही बजे थे। वह पूरी रात तख्ते पर नहीं बैठ सकता था। अगर वह बोरी बिछाकर, कंबल ओढ़कर लेट सके, तो सुरागी के पेड़ के नीचे बेहतर होगा। खैर, उसने आधी रात के बाद सोने का फैसला किया, और फिर उसे याद आया कि मंजय्या ने उसे ज़बरदस्ती फिल्म देखने के लिए धकेला था। ओह! वह लानत मंजय्या! कुछ देर बाद सत्यप्पा ने सोचा, हालाँकि वह पूरी तरह भ्रष्ट था, फिर भी वह अद्भुत था। अगर आप उससे बहस करें, तो सही और गलत की रेखा धुंधली होकर पूरी तरह गायब हो जाती है। इतना ही नहीं, रंग अपनी जगह बदल लेते हैं और पक्ष बदल

लेते हैं। वह सफेद को काला और काले को सफेद बना सकता था। हालाँकि हम अच्छी तरह जानते हैं कि वह किसी भी हद तक जा सकता है, न ही किसी नियम का पालन करता है, फिर भी हम उसके तर्क का खंडन करने या उसकी गलतियों को स्पष्ट करने की अपनी शक्ति पूरी तरह खो देते हैं। इन सबके बावजूद, उससे नफरत करना संभव नहीं है। गाँव में हर कोई, किसी न किसी गुप्त कारण से, उसे पसंद करता है। वहीं सत्यप्पा को यह भी लगता था कि किसी को पसंद करना या उसकी प्रशंसा करना उसके चरित्र का आकलन करने का पैमाना नहीं है। वह थोड़ी देर बैठा, फिर उठा और मेड़ों पर चक्कर लगाया, कुएँ के पास वापस आया और बैठ गया। तभी उसे नींद आने लगी। उसने सोचा कि सुरगी के पेड़ की छाँव केवल दिन के समय ही ठीक है। तारों भरे आकाश में रात के लिए यह ठीक नहीं है। उसने कुएँ के किनारे पत्थर की पटिया पर बोरी बिछाई, अपने पैरों पर कंबल डाला और आकाश को देखते हुए लेट गया। उसे एक तरह का संतोष और शांति का अनुभव हुआ। उसे याद आया कि कैसे वह साबरमती आश्रम में गर्मियों में बाहर सोता था, आकाश को देखता हुआ। उसने सोचा, ओह, वे दिन कितने अच्छे थे! सपनों के, उपलब्धियों के, आदर्शों के! वह समय कहाँ चला गया? वह इस बात से सचेत होकर सो गया कि अगर कोई चोर आ जाए तो वह ज़रूर जाग जाएगा।
अगली बार जब उसने आँखें खोलीं, तो साढ़े तीन बज रहे थे। नींद में उसके मन में चल रहे विचारों और दृश्यों की याद से उसे घिन आ रही थी। कल जो फिल्म उसने देखी थी, हाँ, उसका नाम क्या था? अधनंगी महिलाओं के उत्तेजक दृश्य; फिर वो लड़की जो ट्रैवलर्स बंगले में आई थी, उसका नाम क्या था? उसने सत्यप्पा को विधायक समझा था और उसे ऐसा ही कहा था; कौन जाने वो लड़की थी, युवती थी या अधेड़। उसका शरीर और कद-काठी उसकी उम्र छुपा रही थी। ओह, उसका नाम क्या था? वो भी अधनंगी आई थी और दोपहर के समय ही उस बाग के तालाब में अधनंगी नहा रही थी। ओह, उसका सुंदर शरीर! उसकी आँखें उसके दिमाग और दिल में उतरकर उसे उकसा रही थीं। धिक्कार है ऐसे सपनों पर! कहते हैं सपने नींद में टिकते नहीं। ये तो बस एक साल की घटनाओं का सार एक मिनट में समेटने जैसा था, जैसा फिल्मों में होता है और बीते हुए साल का भ्रम पैदा करता है। सपने भी ऐसे ही होते हैं। सत्यप्पा को ऐसा लग रहा था मानो वह पूरी रात उस लड़की को ही देख रहा हो। और हाँ, उसका नाम क्या था? सपने में भी जब उसने उसका नाम पूछा, तो मंजय्या ने हंसते हुए कहा, 'तुम मुझसे क्यों पूछ रहे हो? ऐसी

महिलाओं से बातचीत शुरू करने का अच्छा तरीका तो 'तुम्हारा नाम क्या है?' पूछना ही होता है।' सत्यप्पा उठ खड़ा हुआ। उसे पूरा यकीन था कि कोई चोर बाग में नहीं घुसा है। फिर भी उसने एक चक्कर लगाना उचित समझा। अंधेरे में टॉर्च जलाकर वह जासूस की तरह चौकन्ना होकर देखने लगा कि कहीं पेड़ से गिरे नारियल के कोई निशान तो नहीं हैं। उसने सांपों और दूसरे सरीसृपों पर भी नज़र रखी। कुछ भी गड़बड़ नहीं थी। उसने सोचा कि उसका अनुमान सही था कि भले ही कोई आवाज़ या हलचल नहीं थी, लेकिन चोरों को किसी न किसी तरह यह आभास हो गया होगा कि कोई उन्हें देख रहा है। या शायद उन्हें उसके लौटने की खबर मिल गई हो। इसलिए, स्वाभाविक रूप से, वे यहाँ नहीं आए। उसका मन फिर से सोने का हुआ, वह कुएँ के सामने पत्थर की पटिया पर आया और बैठ गया। उस सपने की याद उसे फिर सताने लगी। "ओह, हाँ, अब याद आया, उसका नाम चंद्रिका था। वह उस कुएँ में अधनंगी होकर नहा रही थी, बिल्कुल उस फिल्म के दृश्य की तरह।" सपने सचमुच अजीब होते हैं; वे दूर-दराज की जगहों की चीजों को वर्तमान क्षण से जोड़ देते हैं, सत्यप्पा ने लेटते हुए सोचा।

वह तब तक सोता रहा जब तक सूरज की किरणें उसे चुभने लगीं और मक्खियाँ भिनभिनाने लगीं। उसे कोई विकृत सपने नहीं आए। उसने एक बार फिर बाग का चक्कर लगाया, ऊपर देखा, नारियल के गुच्छों को देखा और घर चला गया।

जब रामचंद्र ने उपवन में झोपड़ी बनाने का अपना विचार बताया, तो उसे राहत मिली और वह तुरंत सहमत हो गया। क्योंकि झोपड़ी होने पर उसके पिता लगभग हमेशा वहीं रहेंगे और कोई चोर उपवन में कदम रखने की हिम्मत नहीं करेगा। उसी शाम वह वोद्दाराहल्ली गया और दो पत्थर के खंभों का ऑर्डर दिया। उसने अपने पिता से विवरण नहीं पूछा। आठ दिनों के भीतर, एक साधारण ढांचे के बजाय, ताड़ के पत्तों और बांस की पट्टियों से बनी एक छोटी सी झोपड़ी तैयार हो गई। चारों ओर की दीवार कमर तक ऊंची थी। नारियल के तनों का उपयोग दोनों खंभों पर क्रॉसबीम के रूप में किया गया था। लकड़ी के तख्ते से बना एक दरवाजा लगाया गया था। घर के अंदर एक मोटा गद्दा और तकिए के रूप में लकड़ी का एक टुकड़ा था। ये सभी चीजें रामचंद्र द्वारा लाई गई थीं। झोपड़ी और व्यवस्था को देखकर सत्यप्पा के मन में वानप्रस्थ और पत्तों और घास से बने एक मंडप का चित्र उभर आया। उन्हें लगा कि बेटे की शादी होते ही उन्हें ऐसी झोपड़ी बना लेनी चाहिए और वहां रहना शुरू कर देना चाहिए।

वह केवल दोपहर के भोजन के लिए घर जाता था। सुबह से शाम तक सत्यप्पा झोपड़ी में ही रहने लगा। उसके भीतर संतोष और वैराग्य की भावना धीरे-धीरे बढ़ने लगी! उसे उपवन में अकेले रहने से थोड़ा डर लगता था। आधी रात तक वह कुएँ के पास बैठकर आकाश के अंधकार या तारों, चाँदनी और चाँद को देखता रहता। फिर वह झोपड़ी में जाकर सो जाता। झोपड़ी के अंदर सोने से उसे ठंड लगने या ओस में भीगने का कोई खतरा नहीं था। उसे ऐसा लगता था मानो यह जगह स्वाभाविक रूप से उसकी ही हो और इस भावना ने उसके संतोष को और मजबूत कर दिया। साबरमती में उसने जो अनुभव किया था, वह स्मृति, उसके मन की शांति को पोषित करती थी।

चोरियां पूरी तरह रुक गईं। किसी के कदमों की आहट का कोई निशान नहीं था। उसे संतुष्टि का एहसास हुआ। उसे खुशी थी कि उसने किसी को घायल या जान से मारे बिना चोरियों को रोक दिया। उसने सोचा कि उसकी उपलब्धि मंजय्या से कहीं बेहतर है। लेकिन उसने यह तुलना अपने मन से निकाल दी, क्योंकि उसे लगा कि मंजय्या जैसे लोगों से अपनी तुलना करना बहुत ही नीच बात है।

हालांकि, यह खुशी सिर्फ आठ-दस दिन ही टिकी। चोरी की चिंता खत्म होने और अकेलेपन के डर से छुटकारा पाने के बाद, उसे रातों की नींद उड़ने लगी। कभी-कभी यह सवाल उसे परेशान करता: आखिर इस पहरेदारी से उसे क्या हासिल हुआ? ऊपर से, झोपड़ी में कदम रखते ही उसका मन मंजय्या की हरकतों, मंजय्या द्वारा बताई गई शरारतों, सावित्री की अश्लील बातों, मंजय्या के घमंड और शेखी बघारने की यादों से भर जाता। बार-बार चंद्रिका की दोपहर की धूप में अधनंगी स्नान करते या पूरी तरह नग्न होकर पानी में उतरते दृश्य उसके मन में छा जाते। चाहे वह उन्हें मन से निकालने या कुचलने की कितनी भी कोशिश करता, यह उसके लिए संभव नहीं होता और वही विचार, वही छवियां उसके मन में भर जातीं। उसे इस कल्पना में एक तरह का आनंद मिलने लगा, जैसे कोई युवक या किशोर यौवन की पीड़ा से गुजर रहा हो। कभी-कभी वह डर जाता और कभी-कभी घृणा की भावना उसे घेर लेती। उन्हें झोपड़ी से बाहर जाने की तीव्र इच्छा होती थी। कुछ रातें तो उन्हें बिल्कुल भी नींद नहीं आती थी और उस मोटे गद्दे पर करवट बदलते हुए उन्हें सरसराहट की आवाज सुनाई देती थी। झोपड़ी पूरी तरह से मंजय्या के उपवन की झोपड़ी में बदल जाती थी और सत्यप्पा बेचैनी से झोपड़ी से बाहर निकल आते थे। अगर वे कुएँ के पास जाते, तो रात में भी चंद्रिका को नग्न अवस्था

में अंधेरे पानी में कदम रखते हुए देखते। जब उनका मन शांत होता, तो वे इस विकृति के इतिहास की खोज शुरू कर देते और यह जानने की कोशिश करते कि यह कब से उनके मन में बसी हुई है। ऐसा नहीं था कि अतीत में उन्हें ऐसे विचार नहीं आते थे। अपनी पत्नी की मृत्यु के बाद एक वर्ष तक उनका मन शोक में डूबा रहा। उसके बाद, उनका मन ऐसी कल्पनाओं में खो जाता था। या तो दोबारा शादी करने की या अपने खेतों में काम करने वाली महिलाओं से बात करने की तीव्र इच्छा होती थी। धीरे-धीरे, विभिन्न गतिविधियों में मन लगाने से उन्हें इस इच्छा को नियंत्रित करने और सहन करने में मदद मिली। उस अवधि के बीत जाने के बाद, यदि ऐसे विचार आते भी, तो वे बहुत कम ही आते, सपने में या स्वप्न के रूप में। जागते ही उन्हें अपराधबोध होने लगता। जागते समय तो वे इस पर पूरी तरह काबू रखने में कामयाब हो चुके थे। और अब अपने पहले पोते के जन्म के बाद, दादा बनने का एहसास उनके मन पर हावी हो गया था और सपने में आने वाला वह दुर्लभ नकारात्मक विचार भी लगभग थम गया था। सत्यप्पा सोचने लगे: यह अचानक फिर से क्यों उभर आया? इससे पहले यह उन्हें कभी इतना हिंसक, इतना अश्लील और लगातार परेशान नहीं करता था। ऐसा क्यों था? क्या यह मंजय्या का प्रभाव था? लेकिन उनका मन इसे मानने को तैयार नहीं था। यह एकमात्र कारण नहीं हो सकता। इससे पहले उन्होंने मंजय्या से कितनी बार बात की थी, मंजय्या कितनी बार यहाँ आए थे? वे हमेशा अपने कारनामों, उपलब्धियों और विजयों की बातें साझा करते थे। उन्होंने पहले भी अप्रत्यक्ष रूप से सत्यप्पा के ब्रह्मचर्य का मज़ाक उड़ाया था। इस बार इसका इतना गहरा असर क्यों हुआ? सत्यप्पा को कोई जवाब नहीं मिल रहा था और जवाब जानने के दबाव से कहीं ज़्यादा, उनका मन इस विकृति को सहन न कर पाने के कारण संघर्ष करने लगा। अब तक, सामान्य बातचीत के दौरान उसका मन इस बात पर ध्यान नहीं देता था कि उससे बात करने वाला पुरुष है या स्त्री। लेकिन अब, जैसे ही वह किसी स्त्री को देखता, उसका मन उसकी उम्र का अनुमान लगाने लगता। उसके अंगों, चेहरे के अन्य हिस्सों और शरीर के अन्य भागों की कल्पनाएँ शुरू हो जातीं और अंततः उन्हें रोकने के लिए, वही मन बड़ी मुश्किल से घृणा महसूस करता। फिर भी, उसकी भटकती कल्पनाएँ गंदगी के दलदल में फँसने से नहीं रुकती थीं। कई बार वह अपने खेत में काम करने वाली किसी स्त्री से बात करने के बारे में सोचता। लेकिन उसे डर लगता था कि कहीं उसकी आँखें उसके गंदे विचारों को उजागर न कर दें

और कोई उन्हें देख न ले। वह इस सब से क्यों गुज़र रहा था? उसका मन इस बात के लिए केवल मंजय्या को दोषी नहीं ठहरा पा रहा था।
यह सच है कि गलती संगति के कारण हुई। फिर भी, चाहे वह कुछ भी कहे और करे, मेरा मन तो सिर्फ मेरा है। अगर यह बेतहाशा नाचने लगे, तो यह उछलना-कूदना या नाचना शायद इसके मूल स्वभाव में ही छिपा हुआ था। वह समझ गया, शायद उसने जो आत्म-नियंत्रण का अभ्यास किया, वह एक कृत्रिम बोझ था जो उसने खुद पर तब डाला था जब उसने सारी जिम्मेदारियाँ खुद उठाने का फैसला किया था।
सत्यप्पा ने इस नई व्यवस्था में लगभग दो महीने बिताए। फिर उन्हें वह बात याद आई जो मंजय्या ने परमेश्वरय्या के बारे में कही थी: यदि परमेश्वरय्या ने कभी आत्मनिरीक्षण किया होता, तो वे कभी आत्महत्या न करते। कठोर ब्रह्मचर्य का पालन करने वालों के लिए आत्महत्या के अलावा और क्या रास्ता बचता है? तुमने और क्या हासिल किया? केवल स्वार्थ। तुमने अपने बेटे का पालन-पोषण किया, उसकी शादी कर दी, सब कुछ उसे सौंप दिया और उसके घर में अवैतनिक सेवक बन गए। तुमने और क्या किया? अगर तुम साथ रहते या महिलाओं से संपर्क रखते, तो भी तुम अपने बेटे का पालन-पोषण कर सकते थे। इन दोनों में क्या संबंध है? तुमने एक-दो पुरुषों का सम्मान पाने के अलावा और क्या हासिल किया, सिवाय इसके कि कोई सत्यप्पा की प्रशंसा करे कि वह महात्मा गांधी का सच्चा अनुयायी है, उनकी हूबहू नकल है?
सत्यप्पा को लगा कि शायद मंजय्या की बातें सच थीं। उनके आदर्श और लक्ष्य पूरी तरह विफल हो गए थे, यह एहसास उन्हें सता रहा था। उन्होंने परिवार की ज़िम्मेदारी ठुकराकर गाँव के उत्थान का सपना पूरा करने के लिए वानप्रस्थ का मार्ग चुना था, लेकिन वह भी उन्हें नहीं मिला। हालाँकि उन्होंने स्वेच्छा से संपत्ति का भार अपने पुत्र को सौंप दिया था, फिर भी उनका पुत्र उन्हें आश्रित समझने लगा था। हालाँकि वह खुलकर नहीं कहता था, लेकिन व्यापारिक मामलों में वह कभी अपने पिता से सलाह नहीं लेता था और अपने ही फैसले लेता था। सत्यप्पा को उदासी सताने लगी: शायद इस कुँवारी में पहुँचना ही हर लिहाज़ से उनका स्वाभाविक अंत था। इस भावना के साथ-साथ उनकी शारीरिक इच्छा भी धधकती मशाल की तरह तीव्र हो गई।

सत्यप्पा थका हुआ महसूस कर रहा था – उसे जीने की क्या ज़रूरत थी? ऐसा नहीं था कि कोई तीव्र शारीरिक इच्छा उसे सता रही थी। अगर ऐसा नहीं भी होता, तो भी इस झोपड़ी में रहना ही काफी था। उसके बेटे और बहू का अपना परिवार था। वह पोते-पोतियों के साथ खेल सकता था और उन्हें प्यार कर सकता था। बस, इससे ज़्यादा कुछ नहीं। वह पचास साल और जी सकता था, लेकिन जीवन में क्या सुख, क्या आनंद या क्या आकर्षण था? कभी-कभी सत्यप्पा को लगता कि शायद एक तरह से मंजय्या सही था। उसे किसी भी तरह के आदर्शवाद का भ्रम नहीं था। उसने अपने सुख के स्रोत को ठीक से समझ लिया था। लेकिन एक-दो दिन के भीतर सत्यप्पा का मन पूरी तरह से अलग दिशा में सोचने लगता और वह पुनर्विचार करने लगता। मंजय्या का जीवन तो एक साधारण पशुवत जीवन था। क्या उसे इसे ही जीवन का सच्चा स्रोत मानना चाहिए?

एक दिन, वह कुआँ और सुरागी के पेड़ को पीछे छोड़कर, जो उसके मन में कामुक कल्पनाएँ जगा रहे थे, झोपड़ी छोड़कर चला गया। वह वहाँ से बहुत दूर चला गया और जामुन के पेड़ के नीचे बैठ गया, जो बैंगनी बेर का पेड़ था, और अपने मन की परतों को खोलकर उनका विश्लेषण करने लगा। हो सकता है वह चंद्रिका हो या सिद्दी, जो मंजय्या के वर्णन के अनुसार अधिक दृढ़ और बलवान थी, या हो सकता है वह कोई भी स्त्री हो जो बाग में या गाँव की सड़क पर घूम रही हो, हर कोई इस बाग में, इस नई बनी झोपड़ी में, इस नरम गद्दे पर आकर आकर रुकती थी। इस झोपड़ी और मंजय्या की झोपड़ी में एक समानता विकसित हो गई थी। यह झोपड़ी उसे मंजय्या की झोपड़ी की याद दिलाती थी और यह झोपड़ी उसी की याद में बनी थी। शायद इस झोपड़ी को बनाते समय, नारियल चोरों पर नज़र रखने का उद्देश्य और इसमें रहने और मानसिक कामुकता में लिप्त होने का आंतरिक उद्देश्य, दोनों ही बराबर मकसद थे। इस झोपड़ी के बिना भी वह चोरों पर नज़र रख सकता था। तो... विचारों का प्रवाह वहीं रुक गया। उसने अपने मन को मुट्ठी की तरह कस लिया। वह उठा, झोपड़ी की ओर चला, दरवाजा खोला, अंदर गया और दृढ़ निश्चय के साथ उसका निरीक्षण किया। वही नरम चटाई, जिस पर पैर रखकर लेटने और लोटने पर वही सरसराहट की आवाज आती थी। उस पर एक तह किया हुआ कंबल था। उसके बगल में एक मशाल और एक लाठी रखी थी। सत्यप्पा उन्हें घूरता रहा। मानो उसने कुछ ठान लिया हो, वह बाहर आया, तेजी से झोपड़ी के मुख्य द्वार की ओर चला और गांव की ओर चल पड़ा।

रास्ते में उसे एक व्यक्ति मिला, लेकिन वह न तो उस गांव का था और न ही आसपास के किसी गांव का। 'गौदारे, तुम कहां से हो?' सत्यप्पा ने पूछा। उसने उत्तर दिया, 'कुंदूरू'। 'क्या तुम मुझे एक माचिस दे सकते हो?' सत्यप्पा ने पूछा। यह सर्वविदित है कि गांव की सड़कों पर बीड़ी के शौकीन लोग माचिस मांगते हैं और जो लोग खुद भी बीड़ी के शौकीन होते हैं, वे उदारतापूर्वक उन्हें माचिस दे देते हैं, भले ही वे अन्य मामलों में कितने ही कंजूस क्यों न हों। उस यात्री ने माचिस की डिब्बी निकाली और अपनी बीड़ी भी उसी से जलाने के लिए निकाली। लेकिन सत्यप्पा ने माचिस की डिब्बी खोली, एक तीली निकाली, बारूद से सनी पट्टी का एक टुकड़ा फाड़ा और माचिस की डिब्बी वापस रख दी। यात्री ने पूछा, 'अरे, आपके पास बीड़ी क्यों नहीं है? अगर आप चाहें तो एक ले लीजिए।' लेकिन सत्यप्पा ने बढ़े हुए हाथ पर ध्यान नहीं दिया, पीछे मुड़े और तेजी से पेड़ों के झुरमुट की ओर चल दिए। झुरमुट पहुँचते ही उन्होंने हवा की दिशा पहचानी, उस जगह खड़े हुए, तीली को पट्टी पर जलाया, उसे हाथों से ढक लिया ताकि वह बुझ न जाए और झोपड़ी की छत पर रखे सूखे पत्ते में आग लगा दी। दो मिनट के भीतर ही छत में आग लग गई, हालाँकि हवा बहुत हल्की चल रही थी। आग फैलती गई, चारों ओर फैलती गई, और पाँच मिनट में पूरी छत में आग लग गई। चटकती हुई पीली और लाल लपटें दो आदमियों की ऊँचाई तक उठीं और धुआँ आसमान में फैल गया। सत्यप्पा वहाँ बिना पलक झपकाए खड़े रहे, मानो वह आग उनकी आँखों के सामने समा रही हो और चित्र बना रही हो। नारियल के सारे पत्ते जलकर राख हो गए। बांस की पट्टियों में आग लग गई। ताड़ के पत्तों से बनी छत धंसने लगी। जलते हुए पत्ते की एक पट्टी गद्दे पर गिरी और कंबल भी जलने लगा। लाठी राख में बदल गई। दरवाजे और उसके फ्रेम में आग लग गई। सत्यप्पा खड़े होकर देखते रहे, और मीनार के आकार की लपटें उनकी खाली-खाली आँखों में प्रतिबिंबित हो रही थीं। उनके मन में विचार आया, 'अरे, माचिस की तीली उधार लेकर इस झोपड़ी को जलाने से क्या हासिल हुआ? इसका क्या फायदा? इसे तो माथे पर स्थित तीसरी आँख से जलाना चाहिए था! अगर उनमें वह शक्ति होती तो कितना अच्छा होता!' वे अपनी कमजोरी पर व्यंग्यात्मक और अर्थपूर्ण ढंग से हँसे। उनका मन तीसरी आँख की कल्पना में डूबा हुआ था। शिव सचमुच महान थे, पूजा के योग्य। इन विचारों के साथ, वे थोड़ा पीछे हटकर छत पर बैठ गए। लेकिन उनकी नजर आग में जलकर गिरते हुए बीम और दरवाजे और झुलसी हुई दीवारों पर टिकी रही। उनके मन में

तूफान थमने के बाद शांत पानी की सतह जैसी संतुष्टि का भाव आया। जब वह वहां बेसुध होकर बैठा था, तभी कोई दौड़ता हुआ आया और बाग का मुख्य द्वार खोल दिया। वह समझ गया कि यह रामचंद्र है। वह हांफ रहा था और बोला, 'ओह अप्पा, किसी ने मुझे बताया कि हमारे बाग में बहुत धुआं और आग लगी है। इसीलिए मैं दौड़ता हुआ आया हूं। झोपड़ी में आग लग गई है और वह पूरी तरह जलकर राख हो गई है और आप वहां शांति से बैठे देख रहे हैं।'
'हां, मैंने खुद ही इसमें आग लगाई थी,' सत्यप्पा ने कहा।
'क्या? तुमने ऐसा क्यों किया?'
'देखो, रामचंद्र, जिस दिन से यह झोपड़ी बनी थी, उसी दिन से इसमें एक सांप घुसता आ रहा था। तुमने चाहे जो भी किया, वह नहीं भागा। मैंने झोपड़ी में आग लगा दी ताकि सांप अंदर ही मर जाए। मुझे पक्का नहीं पता कि वह मरा या भाग निकला।'
'क्या इसके लिए झोपड़ी में आग लगाना जरूरी था? हम तो सांप पकड़ने वाले को भी बुला सकते थे,' रामचंद्र ने आरोप लगाते हुए कहा।
सत्यप्पा ने कोई जवाब नहीं दिया। वे चुपचाप बैठे रहे, अपने बेटे की बातों से अप्रभावित। रामचंद्र झोपड़ी के पास गया, उस जगह से अंदर झाँका जहाँ पहले दरवाजा था और चिल्लाया, 'उस कंबल की कीमत तीस रुपये थी, गद्दा भी जल गया है। वहाँ एक लाठी और एक मशाल भी थी।'
सत्यप्पा चुपचाप बैठे रहे। पिता का यह कृत्य पुत्र को विचित्र लगा। उस दिन से सत्यप्पा अपने घर के सामने बने चबूतरे पर सोने लगे। पहले की तरह वे बगीचे का चक्कर लगाते, पर चोर अंदर नहीं आते थे। उनका मन भी संतुष्ट रहता, पर केवल पाँच दिनों के लिए। छठी रात को जब वे चबूतरे पर लेटते, तो फिर वही शारीरिक इच्छा उन्हें जकड़ लेती। जली हुई झोपड़ी उनके मन में अपना मूल रूप धारण कर लेती, और वहाँ एक नरम, सरसराहट करती हुई गद्दी बन जाती। बात यहीं नहीं रुकी। जब वे बाहर आते, तो सभी पेड़-पौधे और पत्थर के खंभे स्त्री रूप धारण करने लगते। दिन हो या रात, जागते हों या सपने देखते, सब एक जैसा ही होता। उन्हें गायों, भेड़ों और बकरियों में भी लिंग भेद दिखाई देने लगा। आकाश में बादल, बरगद के पेड़ों की हवाई जड़ें, पत्थर पर उभरे और गड्ढे उन्हें स्त्री अंगों के रूप में दिखाई देने लगे। सत्यप्पा को लगा कि अगर यह सिलसिला जारी रहा, तो वे निश्चित रूप से पागल हो जाएँगे। उन्हें इस बात का डर सताने लगा कि अनजाने में

उनकी ज़बान उनके कामुक विचारों को प्रकट कर देगी। उन्हें लगा जैसे यह एक यातना है, एक असहनीय पीड़ा है, मेरे साथ ही ऐसा क्यों हुआ, यह आंतरिक पीड़ा जो अठारह वर्ष की आयु में नहीं थी, अब क्यों उत्पन्न हुई? वे चाहे कितना भी सोच लें, उन्हें न तो कोई उत्तर मिला और न ही कोई सांत्वना। हाँ, मंजय्या की बात सही है। यदि नाक में बलगम भरा हो, तो वह भारी और दर्दनाक होगी। एक बार जब आप उसे बाहर निकाल देते हैं, तो सब ठीक हो जाता है, फिर आपको कुछ याद नहीं रहता। सत्यप्पा ने पाया कि यह भी वैसा ही है।

उसे लगने लगा कि झोपड़ी में आग लगाकर उसने बस एक गलती कर दी है। उसे लगा कि वह कितना मूर्ख है, जिसे यह नहीं पता कि चींटियों के टीले पर प्रहार करने से अंदर बैठा साँप तो बस रेंग कर भाग जाएगा। कम से कम अगर वह झोपड़ी होती, तो वह किसी पेशेवर को बुला सकता था। अरे, ऐसी कोई है कहाँ? ऐसी औरतें तो हर जगह हैं। बाहरी गली की येंगती, लेकिन ज़ाहिर है वह बूढ़ी है, उसकी बेटी पुत्तलक्ष्मी, नारियल ढोने आने वाली ईरव्वा, दुकान वाली चेलुवम्मा, इस गाँव में ही आठ-दस औरतें हैं। लेकिन उनसे बात कैसे करें? सत्यप्पा को यह एक बड़ी बाधा लगी। वह चेलुवम्मा की दुकान के सामने से दो बार गुजरा। उसने देखा कि वह अकेली थी। उसकी नज़र उसके शरीर पर पड़ी। लेकिन वह दुकान की ओर कैसे मुड़ता, अंदर कैसे जाता, फिर कैसे बात करता और क्या पूछता? डरकर वह वापस लौट आया।

एक बार फिर, मंजय्या के शब्दों ने समाधान प्रकट किया; उन्होंने कहा था, 'अब तुम अपने गाँव लौट जाओ अन्नाय्या। आराम से सोचो और जब इच्छा हो, तो मेरे पास आना। तुमने रात में चंद्रिका को देखा था, मैं तुम्हारे लिए एक ऐसी लड़की ढूँढ दूँगा जो बिना कुछ कहे तुम्हें खुद को सौंप देगी, चंद्रिका से भी ज़्यादा जवान। उसे देखते ही तुम्हें लगेगा कि तुम बाईस साल के हो गए हो। मैं किसी को नहीं बताऊँगा। तुम मुझ पर भरोसा कर सकते हो। मंजय्या ने इस मामले में कभी अपना वादा नहीं तोड़ा है। और ऐसे मामलों में साथी कभी एक-दूसरे को धोखा नहीं देते।' तो सत्यप्पा ने तय किया, हाँ, वही समाधान है। उनके सिवा कोई और सहारा नहीं। हाँ, यह बलगम निकालने जैसा था। यह कामुकता का स्वभाव है, अगर इसे बाहर निकाल दिया जाए, तो सूजन कम हो जाती है। यह घाव की सूजन को काटकर उसमें से मवाद निचोड़ने जैसा है। आख़िर इस ढलती उम्र में और क्या बचा है! यह एक ऐसी तीव्र इच्छा है जो हाल ही में जागी है। जितना मैं इसे दबाता हूँ, उतना ही

यह धड़कता है और सतह पर आ जाता है। सत्यप्पा ने अपनी इस तीव्र इच्छा का बचाव किया और जब उन्होंने अगली सुबह बिलिकेरे जाने का फैसला किया, तो उनका मन शांत हो गया।

सुबह तड़के उसने दरवाजा खटखटाया, रामचंद्र को जगाया और कहा, 'मैं भूल ही गया था कि मुझे बिलिकेरे जाना है। मैंने कहा था कि मैं आऊंगा और आपके दादाजी के तीसरे महीने के संस्कार में शामिल होऊंगा!'

'अगर तुम गांव छोड़ दोगे, तो क्या होगा अगर चोर फिर से बाग में हमला कर दें?' रामचंद्र ने पूछा।

'नहीं, नहीं, मैं जल्दी लौट आऊंगा,' सत्यप्पा ने कहा, खादी के थैले में खादी के कपड़े रखे और चल पड़े। तेज़ी से चलते हुए उन्हें एक साथ दो बातों का एहसास हुआ। अब तक उन्होंने कभी झूठ नहीं बोला था और अब उन्होंने अपने ही बेटे से झूठ बोल दिया था। दूसरी बात उनके बेटे की आपत्ति थी। 'अगर आप गांव छोड़ देंगे, तो चोरी हो गई तो क्या होगा?' सत्यप्पा ने दोनों बातों की चिंता न करते हुए चलना शुरू कर दिया। उन्होंने सोचा कि बिलिकेरे में कोई न कोई उन्हें पहचान लेगा और अगर वे रामकृष्ण के घर के बजाय मंजय्या के घर जाएंगे तो तरह-तरह के कयास लगाए जाएंगे। इसलिए उन्होंने गांव के सामने से न जाकर कुम्हारों की गली से मंजय्या के घर जाने का फैसला किया। वहां उन्हें कोई नहीं पहचानेगा। इस तरह उन्होंने इस समस्या से भी छुटकारा पा लिया।

वह भगवान रंगस्वामी की पहाड़ी की ऊँची चोटी पर चढ़े और उतरे, घाटियों को पार किया, बिलिकेरे के तालाब के तटबंध पर चले और सुबह ग्यारह बजे वहाँ पहुँच गए। सौभाग्य से, मंजय्या घर पर थे। सत्यप्पा को देखकर मंजय्या मुस्कुराए। लेकिन सत्यप्पा शर्मिंदा महसूस कर रहे थे। मंजय्या ने चटाई पर बैठे और अपने चेहरे से पसीना पोंछ रहे सत्यप्पा से कहा, 'आपको सब कुछ बताने की ज़रूरत नहीं है। मैं जानता हूँ कि आप क्यों आए हैं।'

सत्यप्पा ने अपनी मुस्कान को काबू में रखते हुए कहा, 'तुम्हें क्या पता?'

'देखो, अन्नाय्या, एक कुशल चिकित्सक तो मरीज की नब्ज़ देखे बिना ही बीमारी का पता लगा लेता है। क्या मैं तुम्हें बताऊँ?'

नहीं, इसकी कोई आवश्यकता नहीं है। मुझे थोड़ा पानी पीने को दीजिए। मुझे भूख भी लगी है। कृपया कुछ नाश्ते का इंतजाम कीजिए।

'पुरदम्मा खाना बना रही हैं। इस बीच आप नहा लीजिए,' मंजय्या ने कहा और सत्यप्पा के पास आकर धीमी आवाज़ में पूछा, 'चन्नरायपट्टाना में आपने जिस चंद्रिका को देखा था, वह मैसूर चली गई है, क्योंकि बड़े शहर में उसका बेहतर कारोबार हो सकता है। क्या यहाँ से कोई अच्छी लड़की चलेगी?'
'ओह, मुझे नहीं पता। मैं सब कुछ आप पर छोड़ता हूँ।' यह कहते हुए सत्यप्पा शर्म से सिकुड़ गया।
जब वह अपने कपड़े धोकर नहा रहा था, मंजय्या बाहर गया और आधे घंटे में लौट आया। पुरदम्मा ने उन्हें खाना परोसा। दोपहर के भोजन के बाद, उसने केले के पत्ते हटाए जिन पर उन्होंने खाना खाया था, जगह साफ की और बाहर चली गई। जब केवल वे दोनों ही रह गए, तो मंजय्या ने आत्मीय स्वर में कहा, 'देखो, अन्नाय्या, मैं तुम्हें थोड़े से चावल के टुकड़े, गुड़ का पाउडर, कसा हुआ नारियल और एक बर्तन देता हूँ। तुम इन्हें अपने थैले में रख लो। अब तुम मेरे बगीचे में जाओ। द्वार का ताला खोलकर अंदर से बंद कर दो और झोपड़ी में इंतज़ार करो। वह एक बजे तक आ जाएगी। उसका नाम नागी है। वह शाम तक रहेगी और अगर तुम चाहो तो आधी रात तक तुम्हारे साथ रहेगी। अगर तुम्हें भूख लगे, तो इस भुने हुए चावल को भिगोकर खा लेना। हंसिया अपने साथ ले जाना। फिर तुम छोटे पेड़ों से कच्चे नारियल तोड़कर पी सकते हो। वह खुद कच्चे नारियल तोड़कर, उन्हें काटकर, तुम्हें पिलाएगी, गिरी निकालकर तुम्हें खिलाएगी।' मैंने उससे कहा है कि वह तुमसे एक भी पाई न ले। यह मेरा खाता है। वह तुमसे नहीं मांगेगी। फिर भी तुम उसे एक-दो रुपये दे दो। वह प्रसन्न हो जाएगी और तुम्हारे पैर छूकर कहेगी, "कृपया कल भी आइएगा।" वैसे, क्या तुम्हारे पास कुछ पैसे हैं? अगर नहीं तो ये ले लो।' तब मंजय्या ने अपनी जेब से एक-एक रुपये के दो सिक्के निकाले और सत्यप्पा के सामने रख दिए। फिर उसने कहा, 'तुम्हें पंद्रह मिनट के भीतर निकलना होगा। एक मिनट रुको, मैं पुरदम्मा को गुड़ पीसने और नारियल कसने के लिए कहता हूँ और मैं तुम्हें चावल के प्याले देता हूँ।' फिर जैसे उसे कोई और बात याद आ गई हो, उसने कहा, 'मैंने उसे एक नया साबुन दिया है और उससे कहा है कि मेरी रिश्तेदार बहुत साफ-सुथरी है – मैंने उससे कहा है कि नहाते समय इसे दो बार लगाए और नारियल के रेशे से अच्छी तरह रगड़ कर साफ करे। वह हमेशा साफ रहती है और तुम कभी ऊबोगे नहीं। देखो, शाम तक वह तुम्हारी जवानी को चार

गुना बढ़ा देगी।’ वापस आने के बाद तुम मुझसे कहोगे, 'हां, मंजय्या, इस दुनिया में ऐसी स्त्री नहीं मिल सकती।'

एक हाथ में चावल के प्याले, नारियल का बुरादा, गुड़ का पाउडर और एक बर्तन से भरा थैला और दूसरे हाथ में छाता लिए सत्यप्पा दोपहर की धूप में चल रहे थे, सड़क पर कोई नहीं था। मंजय्या के उपवन की ओर जाते समय उन्हें गाँव के सामने स्थित शिव मंदिर से होकर गुजरना था। वहाँ पहुँचते ही उनकी नज़र मंदिर के सामने खड़े विशाल बरगद के पेड़ पर पड़ी। उनकी निगाह उस शाखा पर टिक गई, जिस पर उनके ससुर ने फांसी लगाई थी और लटके हुए दिखाई दे रहे थे। यह कल्पना उनके मन में घर कर गई - आम तौर पर फांसी लगाने वाले लोग पहले रस्सी को ऊपर की शाखा से बांधते हैं और फिर फंदा अपने गले में डालकर नीचे कूद जाते हैं। सत्यप्पा उस शाखा को घूरते रह गए। मंजय्या भले ही कहें, 'संयम का पालन करने वालों के लिए आत्महत्या के सिवा कोई रास्ता नहीं है,' लेकिन सत्यप्पा को लगा कि उनके लिए अपने ससुर को इस तरह हल्के में याद करना संभव नहीं था। सत्यप्पा का सिर अपने आप पीछे की ओर झुक गया, ठीक वैसे ही जैसे उनके बाएं हाथ में पकड़ी छतरी का हैंडल झुका होता है, और वे उस डाल को निहार रहे थे जिस पर उनके ससुर ने अपने जीवन का अंतिम पड़ाव डाला था। सिर्फ एक झूठ बोलकर आत्महत्या करने का कारण उनकी यादों में भक्ति भाव भर गया था। सत्यप्पा को एहसास हुआ कि अगर वे खड़े रहे तो गांव का कोई न कोई उन्हें पहचान लेगा, और उन्हें याद आया कि यह गांव के तालाब, गीले खेत और बागों से होकर गांव में प्रवेश करने वाली मुख्य सड़क थी। वे तेजी से आगे बढ़े और पहली नहर पार की। अब वे सोचने लगे: क्या व्यभिचार भी झूठ नहीं है? इसी के लिए मैंने जागते ही दो झूठ बोले और चलना शुरू किया। उनके मन में एक विचार आया: उन्हें मंजय्या के घर वापस जाकर कहना चाहिए, 'मैं यह नहीं चाहता। यह सच है कि मेरे मन में वासना जागी थी। लेकिन उस बरगद के पेड़ को देखकर जिस पर ससुर ने आत्महत्या की थी, वह वासना मिट गई।' आगे बढ़ें या पीछे हटें, यह न जानते हुए वे कुछ देर वहीं खड़े रहे। उन्होंने अपनी आंखें बंद कर लीं और अपने भीतर के भावों को समझने लगे। यह सच है कि व्यभिचार झूठ का एक कदम है, एक झूठा रिश्ता है और यह भी सच है कि यह बरगद का पेड़ झूठ की सजा की याद दिलाता है। लेकिन उसे लगा कि यह भी झूठ नहीं था कि उसके अंदर जो इच्छा उसे कुचल रही थी, वह संतुष्टि पाने के लिए थी। वह वहाँ व्यभिचार करने

नहीं, बल्कि एक वेश्या के पास जा रहा था, एक ऐसी स्त्री के पास जो उसके जैसे पुरुषों के साथ सोने और उनकी वासना को शांत करने को अपना पेशा मानती थी। इस विचार से स्पष्ट रूप से संतुष्ट होकर सत्यप्पा तेजी से आगे बढ़ा। जैसा मंजय्या ने उसे बताया था, उसने अंदर से उपवन का द्वार बंद किया, ताला लगाया और झोपड़ी तक पहुँच गया। अब मट्टीकेरे स्थित अपने उपवन की झोपड़ी में उसके मन में घूम रही और उसे सता रही सभी कामुक छवियाँ एक साथ उसके दिमाग में फिर से चलने लगीं। उसने झोपड़ी का दरवाजा खोला और अंदर कदम रखा। अरे, वह तो पहले से ही वहाँ थी। चूंकि वह तेज धूप में चल रहा था, उसे अंदर अंधेरा लगा और वह उसका रूप या आकृति स्पष्ट रूप से नहीं देख सका। वह वहीं खड़ा रहा। वह तुरंत उठ गई। वह अंदर नहीं गया। वह खोया हुआ महसूस कर रहा था। उसकी आँखें धीरे-धीरे प्रकाश के अंतर से अभ्यस्त हो रही थीं। उसका रूप और आकृति स्पष्ट होने लगी। सत्यप्पा ने सोचा, उसकी आकृति एक ही स्त्री में साकार स्वरूप थी, जिसके अंगों और आकृति की उसने वृक्षों, पौधों, बादलों और चट्टानों में कल्पना की थी, और वह उत्तेजित हो गया। वह वहीं खड़ा उसे निहारता रहा। उसकी नाड़ी तेज़ हो गई, और तीव्र पीड़ा उसके चेहरे और शरीर से बाहर निकलने को बेताब थी। वह तीव्र उत्तेजना की स्थिति में था जो उसे बेहोशी की ओर धकेल रही थी और उसे कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था। उस अवस्था में भी, उसे धुंधला सा एहसास था कि वह बेहोश हो रहा है और जूट की रस्सी उसके गले में कसती जा रही है। तभी वह स्वयं आगे आई और झोपड़ी का दरवाजा बंद कर दिया। उसने उसे गले लगाया, उसे उस सरसराती चटाई पर ले गई, और जैसे कुश्ती में कोई पहलवान अचानक अपने प्रतिद्वंद्वी को ज़मीन पर गिराकर हरा देता है, वैसे ही उसने उसे चटाई पर पटक दिया और पकड़ लिया। उसने स्वयं को निष्क्रिय रूप से उसके हवाले कर दिया, यह सोचते हुए कि उसके मन में जो शक्तियाँ उन्मादपूर्वक सक्रिय थीं, वे अब उसके रूप में सकारात्मक रूप से सक्रिय हो गई हैं।

फिर पूर्ण शून्यता छा गई। यह मात्र पागलपन था। यह पागलपन के स्रोत से छुटकारा पाना नहीं था। उसे ऐसा महसूस हुआ मानो पागलपन की बाढ़ ने उसकी आंतरिक शक्ति को बहा दिया हो और घृणास्पद तृप्ति की स्थिति पैदा कर दी हो। उदासी, शोक और निराशा ने उसे घेर लिया: वैसी ही शर्मिंदगी, जैसी तब होती है जब पर्याप्त शक्ति होने के बावजूद, वह हमलावर लुटेरे के सामने सब कुछ त्याग

देता है और अपनी जान बचा लेता है। सत्यप्पा के मन और शरीर को यही शर्मिंदगी सता रही थी। अब झोपड़ी का भीतरी हिस्सा उसे ऐसा लग रहा था मानो वह चारों ओर से उसके पतन से सना हुआ घेरा हो और वह जगह हो जहाँ उसे नहीं आना चाहिए था। उसे याद आया, जिस दिन मंजय्या नारियल तोड़ने के लिए बाग के दूसरी ओर गया था, वह चुपके से इस झोपड़ी में घुस आया था। उसी क्षण, इस संक्रामक शैतान ने उस पर अपना प्रहार किया था! धीरे-धीरे इसने अपना बीज बोया और करोड़ों विषैले परमाणु विकसित किए, और उसे उसी स्थान पर खींच लाया और आज उसके पतन का कारण बना। सत्यप्पा ने अपने पतन का इस प्रकार उपमा दी। वह एक तरफ मुड़ा और बिना हिले-डुले मुर्दे की तरह लेट गया, सोचने लगा – मुझे शुरू में ही क्यों नहीं समझ आया कि ऐसा होने वाला है? मैंने इसकी कल्पना भी क्यों नहीं की? उसने उसके सीने पर हाथ रखकर उसे अपनी ओर मोड़ने की कोशिश की। उसे घिन आ गई। एक पल के लिए वह गुस्से से आग बबूला हो गया और उसे लगा कि उस तरफ मुड़कर उसे थप्पड़ मार दे। साथ ही उसे दुगनी शर्म भी महसूस हुई। उसने सोचा कि वह कितना नीच इंसान है जो अपनी गलती का दोष उस औरत पर डालना चाहता है जो ईमानदारी से अपना पेशा करती है। उसने एक शब्द भी नहीं बोला। वह उठा, तेज़ी से उठा, झोपड़ी का दरवाजा खोला और बाहर आ गया। सूरज इतना तेज़ था कि ऐसा लग रहा था मानो नारियल के पेड़ों की चोटियाँ भाप छोड़ रही हों। दूर से उपवन का द्वार दिखाई दिया। वहीं मंजय्या ने चोर को मारा था, उसकी हत्या की थी और लाश को उस पेड़ के नीचे, पहाड़ी के उस पार घसीटकर ले गई थी और शरीर को इस तरह रखा था कि उसका सिर नुकीले पत्थर पर गिरे। ओह, सत्यप्पा को याद आया और उसे लगा कि यह कितनी क्रूरता थी। उसे उस उपवन में रुकने का मन नहीं कर रहा था। वह नंगे पैर बाग के द्वार तक गया, जेब से चाबी निकाली, द्वार खोला, उसे दोबारा बंद करना भूल गया और तेज़ी से गाँव की ओर चल पड़ा। उसने नहर पार की और जब वह गाँव के सामने स्थित शिव मंदिर के पास पहुँचा, तो उसका मन हुआ कि वह उस बरगद के पेड़ के नीचे खड़ा होकर उसकी शाखा को निहार ले। वह कुछ देर वहीं खड़ा रहा, मन ही मन शाखा को प्रणाम किया और सीधे मंजय्या के घर लौट आया।

उसे देखकर मंजय्या ने अपनी घड़ी देखी और कहा, 'अरे, क्या हुआ? अभी तो दो बजे भी नहीं बजे।' सत्यप्पा चुप रहा। वह ऐसे खड़ा रहा मानो उसके होंठ सिल गए

हों!
'इतनी जल्दी क्यों? क्या उसने कोई हंगामा किया या कोई शरारत की?'
'नहीं, इसमें उसकी कोई गलती नहीं थी। मुझे लगा कि मैं इसे दोबारा नहीं चाहता।' सत्यप्पा ने कहा।
'आपको कुछ और समय रुकना चाहिए था और आप इसे फिर से चाहेंगे।'
"नहीं, मुझे अपने स्वभाव का पता नहीं था। अब मुझे पछतावा हो रहा है। क्या मैंने तीन महीने तक सिर्फ़ इसी बात के लिए कष्ट सहा?" इतना कहकर सत्यप्पा हॉल में चटाई पर बैठ गए। मंजय्या ने अपने जूते पहने और तेज़ी से बाहर चले गए। उन्होंने सत्यप्पा को नहीं बताया कि वे कहाँ जा रहे हैं और सत्यप्पा को भी उनसे पूछने का ख्याल नहीं आया। वे बस लेट गए। सुबह चौदह मील पैदल चलने की थकान, अब बाग़ जाना और तेज़ धूप में वापस आना, और जीवन के प्रति वो उत्तेजित, पागलपन भरी घृणा। हालाँकि उन्हें जम्हाई आ रही थी, फिर भी उन्हें नींद नहीं आ रही थी। मानो वे किसी गंभीर बीमारी से ठीक हुए हों और करवट बदलने की भी ताकत न हो, उन्होंने अपने पैर उसी मुद्रा में फैला लिए जिस मुद्रा में वे लेटे थे।
शाम को मंजय्या लौटा। वह अपने साथ सत्यप्पा की चप्पलें, छाता और हंसिया लाया था, साथ ही चावल के प्याले, गुड़ आदि से भरा खाली थैला भी। मंजय्या ने लेटे हुए सत्यप्पा की ओर देखा और उपहास, दया और तिरस्कार से भरी मुस्कान के साथ उसकी ओर देखा। सत्यप्पा समझ गया कि मंजय्या क्या सोच रहा है। लेकिन वह कुछ बोला नहीं; बल्कि उसे समझ नहीं आ रहा था कि क्या बोले। उसके भीतर एक तरह का खालीपन छा गया था। सत्यप्पा को लगा कि अगर वह उस रात वहीं रुक भी जाए, तो भी मंजय्या से बात करने के लिए उसके पास कुछ नहीं होगा। अब तक वह मंजय्या की हर बात को ध्यान से सुनता था, कुछ नोट्स बनाता था और उन पर टिप्पणी करता था। लेकिन अब ऐसी बातों पर बोलना व्यर्थ था। सत्यप्पा को लगा कि अब उसके लिए मंजय्या से बात करना कभी संभव नहीं होगा। उसने अपना खाना खत्म किया और चुपचाप बिस्तर पर चला गया। उसने सुबह जल्दी उठकर अपने गाँव जाने का फैसला किया। उन्होंने अपने बेटे से कहा था कि वे तीसरे महीने के परमेश्वरय्या के समारोह में शामिल होने के लिए बिलिकेरे जा रहे हैं। अगर वे अगले दिन लौट आते, और वह भी बिना प्रसाद के, तो यह उनके बेटे और बहू को अस्वाभाविक लगता। सत्यप्पा को इसके लिए कोई झूठ गढ़ना पड़ा और कहना पड़ा कि रामकृष्ण और उनकी पत्नी पश्चिमवाहिनी,

नरसिपुरा या रामनाथपुरा जैसे नदी के किनारे स्थित पवित्र स्थानों पर गए हैं। एक और झूठ बोलने की सोचकर उनका मन बेचैन हो गया।
वह सुबह दस बजे तक अपने गाँव पहुँच गया। रामचंद्र की सास अपने घर लौट चुकी थीं और उनकी बहू खाना बना रही थी। रामचंद्र बच्चे की देखभाल कर रहे थे। रामचंद्र के पूछने से पहले ही सत्यप्पा ने पश्चिमवाहिनी जाने का झूठ बोल दिया। रामचंद्र ने थके हुए स्वर में शिकायत करते हुए कहा, 'कल रात नारियल के दो गुच्छे चोरी हो गए।' सत्यप्पा जानते थे कि उनकी बहू को चौदह मील पैदल चलकर आए अपने ससुर के लिए रोटी और चटनी बनाने की चिंता नहीं थी। सत्यप्पा जानते थे कि उनके बेटे ने उन्हें इतना महत्व दिया था कि रसोई में काम करना और कुछ पकाना उनकी बहू के लिए एक तरह की कृपा और एहसान था। अगर उन्हें रसोई में जाना पड़ता, तो पति को बच्चे की देखभाल करनी पड़ती। सत्यप्पा जानते थे कि अगर उनका बेटा बच्चे की देखभाल नहीं करेगा, तो चूल्हा नहीं जलेगा। इसलिए सत्यप्पा यह सोचकर बाग में चले गए कि वे दो कच्चे नारियल पी लेंगे। जिस झोपड़ी में उन्होंने आग लगाई थी, वह पहले की तरह खड़ी थी। कालिख से काली पड़ी होने के बावजूद, दीवारें और दो पत्थर के खंभे वही थे। नई बीम, बांस की पट्टियाँ और नारियल के पत्ते लगे थे, साथ ही नया दरवाज़ा और चौखट भी थी। यह सब एक दिन में नहीं हो सकता था। वह समझ गया था कि रामचंद्र ने बढ़ई को पहले ही निर्देश दे दिए थे, जिसने कल ही इन्हें तैयार करके लगाया था और छत के लिए ताड़ के पत्ते बिछाए थे। वह समझ गया था कि उसके बेटे की यही इच्छा थी कि पिता दिन में भी वहीं समय बिताएं। हालांकि, उसे रात उसी झोपड़ी में बितानी थी। जब वह अंदर गया, तो दीवारें और खंभे कालिख से काले हो गए। ऐसा लग रहा था मानो यह उसकी पिछली मनस्थिति को दर्शा रहा हो। लेकिन अब वह पूरी तरह से एक अलग इंसान था और झोपड़ी का भाव भी अलग था। उसे लगा जैसे दीवारें उसके पतन पर घृणा दिखा रही हों। सत्यप्पा को उस झोपड़ी में लेटकर थोड़ी देर आराम करने का मन हुआ। वह थका हुआ था। अंदर कोई चटाई नहीं थी। उसने अपना तौलिया बिछाया, पीठ के बल लेट गया और थोड़ी देर सो गया। जब वह उठा, तो उसे एक बात का एहसास हुआ। वह कल ब्रह्मचर्य भंग करने के कारण ही इतना परेशान नहीं था। यह उथल-पुथल उनके जीवन के अंतिम चरण की थी, जो अचानक दिशाहीन हो गया था। वे सोचने लगे: अगर उन्होंने दोबारा शादी कर ली होती, या किसी और औरत को अपने साथ रखा होता, या कई औरतों के साथ

संबंध बनाए होते, तो क्या वे अपने बेटे का पालन-पोषण ठीक से नहीं कर पाते? संभव था कि उनका बेटा बिगड़ जाए या अपने पिता के नक्शे कदम पर चलकर गलत रास्ते पर चला जाए। लेकिन यह सिर्फ एक संभावना थी। क्या रामचंद्र अब बिगड़ा हुआ नहीं है? क्या वह अच्छा है? क्या अच्छा होना यही है कि वह अपनी पत्नी की हर बात माने और पैसों व शारीरिक इच्छाओं के मामले में उसकी आज्ञा माने? उन्हें अंदर से बिल्कुल खालीपन महसूस हो रहा था।

उस रात वह झोपड़ी में सोया। लेकिन अब वह उन इच्छाओं और कामुक भावनाओं से मुक्त था जो उसे पहले महसूस होती थीं। उसे यकीन था कि उसे ऐसी इच्छाएँ फिर कभी नहीं होंगी। लेकिन उसके भीतर एक गहरा खालीपन था। ब्रह्मचर्य का टूटना, अब तक जिन सिद्धांतों पर वह विश्वास करता आया था, वे सब उलट-पलट हो गए थे, और साथ ही यह एहसास भी था कि वह एक ऐसे नौकर के स्तर पर आ गया है जिसका काम बस इस बाग की रखवाली करना है। इस बेकारपन की भावना ने उसके मन को जकड़ लिया था। वह बहुत देर बाद सोया। सुबह जब वह उठा, तो उसे खुजली महसूस हुई। वह बाहर आया, ध्यान से देखा और कुछ फफोले पाए, वो भी बारीकी से देखने पर। उसने सोचा, ये घमौरियों के कारण हो सकते हैं या... वह डर गया। मंजय्या ने कहा था कि वह साफ-सुथरी है। वह बाहरी रूप से साफ हो सकती है, लेकिन ऐसे पेशे वाली महिला... उसका डर और बढ़ गया। उसने खुद को यह सोचकर दिलासा दिया कि उसे घबराने की जरूरत नहीं है। दोपहर तक खुजली कम हो गई। जब वह सोने गया, तो उसे खुजली करने का मन हुआ। उसे काफी देर तक नींद नहीं आई, उसे शक था कि 'ज़रूर यही होगा'। आधी रात के बाद, वह उठा, टॉर्च जलाई और देखा। जी हाँ, फफोले घनी तरह से फैले हुए थे और थोड़ी सूजन भी थी। अब उसे कोई शक नहीं था। उसे तुरंत डॉक्टर से सलाह लेनी थी और इलाज करवाना था। अगर उसने इसे बढ़ने दिया, अगर उसने इसे बढ़ने दिया... यह सोचकर ही वह कांप गया। रात के साढ़े बारह ही बजे थे; वह लेट गया। उसे ऐसा लग रहा था कि उसके पाप की उचित सज़ा शुरू हो चुकी है। थोड़ी देर बाद, उसे अपने पुराने विचार याद आए कि हर काम पर पुण्य या पाप का पैमाना लागू करना सही नहीं है। उसके मन में जो भी विचार थे, वे सब फिर से घूमने लगे: सही-गलत, न्याय-अन्याय, ये सब मनुष्य के उत्थान और पतन के उतार-चढ़ाव को समझने के लिए काफी थे और उसका मन उन्हीं विचारों में खो गया और वर्तमान खतरा गायब हो गया।

वह सुबह जल्दी उठे, घर गए, अपनी बहू से आदेशात्मक स्वर में कहा, 'मेरे लिए जल्दी नाश्ता तैयार करो,' और स्नान किया। फिर उन्होंने अपने बेटे से कहा, 'मुझे पैसों की जरूरत है। मुझे कुछ काम से टिपटूर जाना है।'
'अब आपका टिपटूर में क्या काम है?' रामचंद्र ने उनसे पूछा।
सत्यप्पा क्रोधित हो गए। क्रोध से कहीं अधिक वे दुखी हुए। उन्हें लगा कि उनका बेटा उनसे एक सख्त पिता की तरह बात कर रहा है, जो अपने उस छोटे बेटे को डांटता है जिसे जिम्मेदारी या पैसे का प्रबंधन करना नहीं आता। उन्होंने कठोर स्वर में कहा, 'यह तुम्हारा काम नहीं है; बस मुझे पच्चीस रुपये दे दो।'
हालाँकि रामचंद्र ने कहा, 'भूमि कर की अंतिम किस्त जमा करने का यह आखिरी महीना है, मैं कैसे गुजारा करूँगा,' फिर भी वह अंदर गया, अपनी पत्नी से चाबी ली और अपने पिता को पैसे दे दिए। बहू को रोटी बनाने और उसके साथ अचार परोसने में पैंतालीस मिनट और लग गए।
तिप्तूर, मट्टीकेरे से दस मील दूर था और यह उनका मुख्य क्षेत्र भी था। इसके अलावा, सत्यप्पा अक्सर यहाँ आते थे, थोक गोदाम में खोपरा जमा करने और कपड़े व घरेलू सामान खरीदने के लिए। अपने बेटे को सारी ज़िम्मेदारी सौंपने के बाद, वे इस जगह पर नहीं आते थे। मट्टीकेरे गेट तक पैदल पाँच मील की दूरी थी। वहाँ से बस से आठ मील। लेकिन अक्सर बस में बहुत भीड़ होती थी और वह वहाँ रुकती ही नहीं थी। इसलिए, इससे बचने के लिए उन्होंने पैदल चलने का फैसला किया। जब वे छाता लेकर चल रहे थे, तो कपड़े के स्पर्श से उस जगह पर जलन महसूस हुई। उन्हें किस डॉक्टर से सलाह लेनी चाहिए? अगर वे वरिष्ठ डॉक्टर होते, तो वे उन्हें जानते होते, क्योंकि वे स्वतंत्रता संग्राम और अन्य आंदोलनों में भाग ले चुके थे। कम से कम उन्होंने उनका नाम तो सुना ही होगा। इसलिए बेहतर होगा कि कोई नया डॉक्टर हो। दूर-दूर से कई नए डॉक्टर आकर क्लीनिक खोल चुके थे, और उन्होंने एक नए डॉक्टर से सलाह लेने का फैसला किया। वे दोपहर तीन बजे तिप्तूर पहुँचे और एक होटल में भोजन किया। बाज़ार की गली में चलते हुए सत्यप्पा की नज़र 'डॉ. प्रकाश, एमबीबीएस' के बोर्ड पर पड़ी। उन्होंने सोचा कि ये कोई नए डॉक्टर होंगे और अंदर चले गए। जी हाँ, वो नए ही थे, लगभग तीस-पैंतीस साल के। सत्यप्पा शर्म से सिकुड़ रहे थे। वहाँ कोई और मरीज़ नहीं था। डॉक्टर तस्वीरों से भरी एक फ़िल्म पत्रिका पढ़ रहे थे। उन्होंने कहा, 'कृपया बैठ जाइए।' सत्यप्पा बैठ गए। डॉक्टर ने उनके चेहरे की ओर देखा। सत्यप्पा को समझ

नहीं आ रहा था कि क्या कहें और कैसे शुरू करें। वो बोल नहीं पा रहे थे। उनकी आवाज़ नहीं निकल रही थी। जब डॉक्टर ने आदेश भरे लहजे में पूछा, 'जी बताइए,' तब उन्हें अपनी समस्या बताने का तरीका सूझा और उन्होंने कहा, 'मुझे आपसे अकेले में बात करनी होगी।'

'यहाँ कोई निजी कमरा नहीं है, कृपया इस पर्दे के पीछे आ जाइए,' डॉक्टर ने कहा। बिना कोई जाँच किए, बीमारी के बारे में पूछे बिना, उन्होंने पूछा, 'अच्छा, आप किसके साथ थे?'

सत्यप्पा ने कहा, 'डॉक्टर साहब, मेरे मन में कोई बुरा विचार आ गया था। कृपया मेरा इलाज कीजिए।'

डॉक्टर ने आंखों से सत्यप्पा का परीक्षण किया, उनके चेहरे को देखा और कहा, 'देखो, यह बात गुप्त रखनी है। तुम्हें इंजेक्शन लगवाने होंगे। इसमें देरी नहीं होनी चाहिए। मुझे वे विशेष इंजेक्शन बैंगलोर से मंगवाने होंगे। कभी-कभी वे बैंगलोर में भी नहीं मिलते। उन्हें बॉम्बे से मंगवाना पड़ता है। मेरे पास केवल दो ट्यूब हैं, जो मैंने एक अन्य मरीज के लिए आरक्षित रखी हैं। परसों तक टेलीग्राम द्वारा आदेश देकर ट्यूब मंगवाना मेरी जिम्मेदारी है। तुम्हें कुल बारह इंजेक्शन लगवाने होंगे।'

'डॉक्टर साहब, फीस कितनी होगी?'

'देखिए, आपको पूरी तरह से ठीक करना मेरी ज़िम्मेदारी है और साथ ही इसे गुप्त रखना और आपकी प्रतिष्ठा की रक्षा करना भी मेरी ज़िम्मेदारी है। अगर आप दूसरे डॉक्टरों के पास जाएँगे, तो आपका इलाज केवल अस्थायी होगा और इस बीमारी की जड़ नष्ट नहीं होगी। क्या आप मेरी बात समझ रहे हैं?'

सत्यप्पा ने बस सिर हिलाया। डॉक्टर ने आगे कहा: 'ऐसे मामलों में अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा करना बहुत ज़रूरी है। मैं आपका नाम न तो रजिस्टर में लिखूंगा और न ही पर्ची में। आपको बारह दिन यहीं रहना होगा। प्रतिदिन एक इंजेक्शन। मैं दूसरे डॉक्टरों की तरह दर्द नहीं देता, जो इंजेक्शन लगाने के लिए मोटी और लंबी सुई का इस्तेमाल करते हैं। मेरे पास एक बहुत ही नाजुक, खास अमेरिकी सुई है।'

सत्यप्पा ने डॉक्टर की ओर ऐसे देखा मानो उसे तसल्ली मिल गई हो। डॉक्टर ने दृढ़ स्वर में अपनी तर्जनी उंगली उठाते हुए कहा, 'मुझे कुल एक हजार रुपये दीजिए; मैं आपसे मरहम और गोलियों के लिए अतिरिक्त नहीं मांग रहा हूँ। सब कुछ इसमें शामिल है।'

तब तक सत्यप्पा में थोड़ा आत्मविश्वास आ गया था और डॉक्टर पर उसका भरोसा भी बढ़ गया था। इसलिए उसने बिना हिचकिचाए कहा, 'देखिए डॉक्टर साहब, मेरी हालत में एक हजार का मतलब... कृपया, मैं आपकी दयालुता को कभी नहीं भूलूंगा। लेकिन मेरी हालत में...'

"देखो, जब तुम ऐसी स्त्रियों के साथ सोए थे, तब तुम्हें अपनी हालत याद नहीं थी। लेकिन जब तुम्हें इलाज करने वाले डॉक्टर को पैसे देने पड़ते हैं, तब तुम्हें अपनी हालत आसानी से याद आ जाती है। खैर, जाने दो। तुम्हें एक कमरा बुक करना होगा, होटल में ठहरना होगा और खाने-पीने आदि का खर्च खुद उठाना होगा। मैं तुम्हारा नाम नहीं पूछ रही। मैंने तुम्हें बताया था कि इज्जत बचाना जरूरी है। तुम मुझे आठ सौ रुपये दो और बारह दिन के लिए अपने खाने-पीने और होटल में ठहरने का इंतजाम करो। इस संक्रमण के लिए सिर्फ एक इंजेक्शन, एक गोली और एक मरहम ही दवा है और खाने-पीने पर कोई पाबंदी नहीं है। फैसला तुम्हें करना है।" तभी एक और मरीज अंदर आया।

सत्यप्पा ने आगे कुछ नहीं कहा, बस इतना ही बोला, 'हां, मैं फिर आऊंगा, आपका क्लिनिक कब तक खुला रहेगा?'

सात बजे तक।

सत्यप्पा बाहर आए। हालांकि दुकान पर कोई और मरीज़ नहीं आया था, फिर भी सत्यप्पा को मोलभाव करने का मन नहीं हुआ। अकेले इस डॉक्टर के पास जाना ही उनके लिए काफी था, जिससे उनका छह फुट का शरीर सिकुड़कर मुट्ठी जितना छोटा हो जाता था। वे किसी और डॉक्टर से सलाह नहीं लेना चाहते थे, न ही फीस के बारे में पूछताछ करके उसी अपमान का सामना करना चाहते थे। हालांकि, उन्हें एक हज़ार रुपये का इंतज़ाम करना ही था। इसी इरादे से रेलवे स्टेशन की ओर चलते हुए उन्हें थोक कोपरा व्यापारी चन्नवीरप्पा की याद आई। यह वही कोपरा गोदाम था जहाँ वे अपना कोपरा ले जाते थे। अब रामचंद्र अक्सर यहाँ आते हैं, ज़रूरत पड़ने पर एक-दो हज़ार रुपये का कर्ज़ लेते हैं और कोपरा के मौसम में कर्ज़ चुका देते हैं। सत्यप्पा को याद आया कि अपने बेटे को दुकान का प्रबंधन सौंपने से पहले वे भी इसी दुकान में व्यापार करते थे। वे बाईं ओर मुड़े और सीधे 'रवानी चन्नवीरप्पा एंड संस' की ओर चले गए। उन्हें वहाँ वरिष्ठ मालिक नहीं मिला। दुकान के दरवाजे पर खड़े नौकर ने बताया कि मालिक 'यात्रा ट्रेवल्स' कंपनी के साथ उत्तर भारत के दौरे पर गए हैं। उनका इरादा काशी, गया, बद्री, केदारा,

आगरा और दिल्ली घूमने का है और वे एक महीने बाद लौटेंगे। बड़ा बेटा शेखरप्पा कैश काउंटर के पास बैठा था। सत्यप्पा अंदर गए, अपना परिचय दिया और शेखरप्पा ने आदरपूर्वक उनका अभिवादन किया। हालचाल पूछने के बाद सत्यप्पा ने अपने खोपरा खाते के बदले एक हजार रुपये का ऋण मांगा।
लेकिन शेखरप्पा ने, एक व्यापारी की विशिष्ट झूठी विनम्रता के साथ, माफी मांगते हुए कहा, 'खाते आपके बेटे के नाम पर हैं। अगर वह आकर हस्ताक्षर कर दे, तो मैं आपको राशि दे सकता हूं।'
सत्यप्पा ने तर्क दिया, 'देखिए, मैंने यह संपत्ति अपने बेटे को सौंपे हुए केवल छह साल ही हुए हैं। उससे पहले, पच्चीस साल तक, यानी मेरे पिता के निधन के बाद, मैं ही आपके गोदाम का कारोबार करता था। अगर आप चाहें, तो कृपया पुराने लेखा-पुस्तकों की जाँच कर लें।'
शेखरप्पा ने उत्तर दिया, "क्या मैं नहीं जानता, महोदय, कि आप ही मालिक हैं? लेकिन, यदि हिसाब-किताब मिलाना है, तो खाताधारक के हस्ताक्षर आवश्यक हैं। यदि मेरे पिता यहाँ होते और यदि वे सहमत होते, तो मैं आपको ऋण दे सकता था। कृपया अपने पुत्र को यहाँ ले आइए, या उससे हस्ताक्षरित पत्र ले आइए, मैं आपको निश्चित रूप से धन दे दूंगा। आख़िरकार, आपका घर ज़्यादा दूर नहीं है।"
सत्यप्पा ने कहा, "अगर ऐसा पत्र लाने का समय होता, तो क्या मैं आपसे बहस करके समय बर्बाद कर रहा होता? मैं आपसे इसलिए पूछ रहा हूँ क्योंकि मुझे पैसों की बहुत ज़रूरत है। मैं खुद लिखकर खाता-बही में हस्ताक्षर कर दूंगा।"
युवा मालिक हठपूर्वक चुप रहा। दस मिनट बाद सत्यप्पा ने अपना अनुरोध दोहराया। शेखरप्पा ने एक बार फिर विनम्रता का दिखावा करते हुए हाथ जोड़कर कहा, 'क्षमा कीजिए, अगर अप्पाजी शहर में होते तो मैं कुछ कर सकता था। उन्होंने अभी तक मुझे ऐसे मामलों पर निर्णय लेने की अनुमति या स्वतंत्रता नहीं दी है।'
गोदाम से बाहर निकलते ही सत्यप्पा असहाय महसूस करने लगे। उन्हें गुस्सा आ रहा था, दुकान में उस लड़के पर नहीं, बल्कि खुद पर, जिसने अपने बेटे को सब कुछ दे दिया था, अपने लिए एक पैसा भी नहीं बचाया, यहाँ तक कि किसी आपात स्थिति के लिए भी नहीं। चलते समय कपड़ा त्वचा से छूता था और जलन बढ़ जाती थी। अब यह सुबह से भी ज़्यादा तेज़ थी। कल तक यह और भी बढ़ सकती थी। उन्होंने सोचा कि अगर आज पहला इंजेक्शन लगवा लूँ, तो शायद कुछ आराम

मिल जाए। लेकिन उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि ऐसा कैसे हो। वे धीरे-धीरे चलते रहे, कपड़े से बचते हुए, रेलवे स्टेशन पहुँचे और एक बेंच पर बैठ गए। अपनी वर्तमान स्थिति से ज़्यादा, उनका आंतरिक खालीपन उभर आया। कपड़े का संपर्क न होने पर भी उन्हें जलन महसूस होने लगी। वे अपनी हालत पर सोचने लगे: 'हे भगवान, मैंने खुद को किस हालत में पहुँचा दिया है। नारियल की दुकान वाला आदमी भी मेरे हस्ताक्षर की कदर नहीं करता।' हालाँकि सत्यप्पा फफोलों की स्थिति देखना चाहते थे, लेकिन उन्होंने यह विचार छोड़ दिया। कुछ देर बाद, उन्हें एक और उपाय सूझा। टिपटूर से चन्नरायपट्टाना के लिए बस सेवा थी। वह वहाँ से बिलिकेरे जाकर मंजय्या से पैसे माँग सकता था। मंजय्या के लिए एक हज़ार रुपये का इंतज़ाम करना मुश्किल नहीं था। सत्यप्पा ठीक होने के बाद पैसे लौटा सकता था। इसके अलावा, मंजय्या ही उसके भीतर इस घिनौनी इच्छा के जन्म का मूल कारण था और यह उचित ही था कि मंजय्या इसके इलाज में मदद करे। उसने यह ज़रूरी नहीं समझा कि वह मंजय्या से कम फीस वाले डॉक्टर को बुलाने के लिए कहे। वह बस स्टैंड तक पैदल गया। किसी तरह उसने रात गुज़ारी और सुबह आठ बजे चन्नरायपट्टाना के लिए बस पकड़ी। बस के झटकों और धक्कों से छालों में खुजली और जलन बढ़ गई। इतना ही नहीं, उसके लिए अपने चेहरे से दर्द के भाव छिपाना भी मुश्किल हो रहा था। दर्द से बिगड़े चेहरे को देखकर सहयात्री ज़रूर दर्द का कारण पूछते। अगर उन्हें बीमारी का पता चल जाता, तो शायद वे उसे बस से उतरने के लिए कह देते। उन्हें लगा कि इस दर्द को सहने से कहीं ज़्यादा आसान मौत का सामना करना है। दो घंटे से ज़्यादा की इस कठिन यात्रा को सहन करने के बाद जब वे चन्नरायपट्टाना बस स्टैंड पर उतरे, तो उन्होंने मंजय्या को देखा। जी हाँ, चंदन विभाग का खाकी कोट पहने हुए मंजय्या ही था। सत्यप्पा तेज़ी से चलने लगे। कपड़े के स्पर्श से दर्द और जलन बढ़ गई। वे 'मंजय्या, मंजय्या' चिल्लाए, मानो उन्हें डर हो कि मंजय्या वहाँ से भाग जाएगा। मंजय्या पास आया और सत्यप्पा ने कहा, 'देखो मंजय्या, मैं तुम्हें ही ढूँढ़ने आया हूँ।'

मंजय्या ने कहा, "आज हसन की बस थोड़ी देर से आ रही है। नहीं तो आप मुझसे नहीं मिलते। मुझे वन कार्यालय में कुछ काम है। क्या बात है?" सत्यप्पा ने मंजय्या को बांह से पकड़कर एक सुनसान जगह की ओर खींच लिया और कपड़े के रगड़ने से हो रहे दर्द से उसका चेहरा सिकुड़ गया।

उसने मंजय्या से विनती की। 'मंजय्या, मेरी बात सुनो, अभी मत जाओ। तुम्हारा जो भी ज़रूरी काम हो, यहाँ आओ। मुझे अपनी समस्या समझाने दो।'
मंजय्या ने कहा, 'अरे, बस इतना ही? मुझे तो पता है। तुम्हें यह बीमारी नागी से लगी है। लेकिन तुम्हें पता है, वह तो पवित्र है।'
'क्या आपको पता है मेरे साथ क्या हुआ है? लगातार जलन हो रही है, और जलन बढ़ती ही जा रही है। ये चकत्ते बहुत तेजी से फैल गए हैं।'
'अन्नय्या, क्या तुम जानते हो? खाना पकाने की आदी स्त्रियाँ किसी भी गर्म बर्तन को नंगे हाथों से उठा सकती हैं और नीचे रख सकती हैं। उनके हाथ न जलते हैं और न ही उनमें छाले पड़ते हैं। जानते हो क्यों? अभ्यास से। मुझे ही देख लो, मुझे तो ऐसी कोई समस्या नहीं होती, चाहे मैं किसी भी स्त्री के साथ सोऊँ। लेकिन, तुम्हें अभ्यास नहीं है। इसीलिए ऐसा हुआ है। एक बार जब तुम्हें इसकी आदत हो जाएगी, तो मेरी तरह तुम्हें भी ऐसी कोई समस्या नहीं होगी। डरो मत,' यह कहते हुए मंजय्या जोर से हँसा और सत्यप्पा की पीठ थपथपाई।
सत्यप्पा ने मंजय्या को पशु चिकित्सालय के चबूतरे पर बैठने को कहा और तिपतुर जाने और पैसे जुटाने में आई बाधाओं के बारे में बताया। मंजय्या ने कहा, "देखो अन्नाय्या, तिपतुर का वो डॉक्टर बड़ा लालची है। तुम्हारा चेहरा देखकर उसने समझ लिया कि तुम डरे हुए हो और एक हजार रुपये मांगे, फिर आठ सौ रुपये पर आ गया। यहाँ चन्नारायपट्टाना में, मार्केट स्ट्रीट में हशीम नाम का एक डॉक्टर है। वो बहुत ही नेक और सभ्य है। उसकी फीस तीन सौ रुपये है। वो हर तरह की बीमारी का इलाज करता है। अगर तुम चाहो तो उसे मेरा नाम बता देना।"
'तो मुझे कम से कम तीन सौ रुपये चाहिए, मंजय्या। और इस जगह रहने, खाने-पीने और बाकी चीजों के लिए, क्या मुझे सौ रुपये और नहीं चाहिए? तुम्हें मुझे देने ही होंगे। मैं किसी तरह चुका दूंगा,' सत्यप्पा ने मंजय्या का हाथ पकड़ते हुए कहा।
मंजय्या दो मिनट तक गंभीर चिंतन करते हुए बैठे रहे और बोले, "देखो अन्नाय्या, तुम्हारे लिए चार-पाँच सौ रुपये का इंतजाम करना मेरे लिए कोई बड़ी बात नहीं है। लेकिन तुम ज़मीन-जायदाद के मालिक होते हुए भी खोपरा के थोक व्यापारी से खाली हाथ लौट आए, जिसने कहा कि तुम्हारे हस्ताक्षर की कोई कीमत नहीं है? फिर मुझे कैसे चुकाओगे? अब मेरा सुझाव यह है। तुम अपने गाँव लौट जाओ, अपने बेटे को बुलाओ और उससे कहो, "अरे हरामखोर, मुझे एक हज़ार रुपये चाहिए। आज ही, तुरंत। आओ, लेकर आओ। अभी इसी वक्त।" और अगर वह

तुमसे पूछे, "तुम्हें अचानक इतने पैसों की क्या ज़रूरत है?" तो उससे कहना, "मुझे ये इसलिए चाहिए क्योंकि मैंने एक औरत के साथ संबंध बनाया और मुझे यौन रोग हो गया। मुझे इसके इलाज के लिए पैसे चाहिए।" इसमें शर्म की क्या बात है? क्या ये ऐसी बीमारी है जो इस दुनिया में किसी को कभी हुई ही नहीं? देखो अन्नाय्या, तुमने खुद को महात्मा गांधी समझा और अपनी सारी संपत्ति अपने बेटे को सौंप दी। इसी वजह से तुम इस सारी शर्म और उथल-पुथल से गुज़र रहे हो।" बस इतना समझ लो: जिस दिन तुम्हारे मन में किसी स्त्री के साथ सोने की इच्छा जागी और तुम बिलिकेरे आए, उसी दिन सब कुछ खत्म हो गया। अब अपने घर लौट जाओ, अपने बेटे से अपना कारोबार वापस ले लो। इस बीमारी में इंजेक्शन लगवाने में एक-दो दिन की देरी से कुछ गंभीर नहीं होता। मैं उस टिपटूर के डॉक्टर से ज़्यादा जानता हूँ। तुम अपने बेटे से अपनी बीमारी क्यों छिपा रहे हो? तुम्हें पता है, सच बोलने के लिए हिम्मत चाहिए। मुझसे सीख लो। यह मंजय्या अपनी कोई भी बीमारी कभी नहीं छिपाएगा। वह कभी झूठ नहीं बोलता। अरे, देखो, वह हसन की बस...' मंजय्या बोलते-बोलते रुक गया और बस की तरफ दौड़ पड़ा।

सत्यप्पा हैरान रह गया। मंजय्या के साथ कदम मिलाकर चलना या दौड़ना उसके लिए नामुमकिन था। मंजय्या ने हाथ बढ़ाया, बस रोकी, खुद को अंदर ठूंस लिया और बस धूल उड़ाते हुए आगे बढ़ गई।

सत्यप्पा की आखिरी उम्मीद भी टूट गई थी। वह समझ नहीं पा रहा था कि मंजय्या ने जो कहा, वह सचमुच में कहा था या उसने सत्यप्पा के चुने हुए रास्ते को रोकने के इरादे से ऐसा कहा था। लेकिन सत्यप्पा इस स्थिति को संभालने और इस समस्या को सुलझाने की उलझन में फंसा हुआ था। मंजय्या के मन की बातों को समझने के लिए उसके पास न तो समय था और न ही धैर्य। उसे लगा जैसे उसमें खड़े रहने की भी ताकत नहीं बची है। वह पशु चिकित्सालय के चबूतरे पर बैठ गया। बैठते ही ज़मीन से छूने के कारण उसे जलन और तेज़ महसूस होने लगी। आधे घंटे तक अंधेरे में भटकते हुए उसके मन में यही सवाल घूमता रहा, 'अब वह क्या करे?' अगर चन्नारायपट्टाना के डॉक्टर हशीम होते, तो पाँच सौ रुपये लगते, अगर टिपटूर के डॉक्टर होते, तो एक हज़ार रुपये लगते। वह सोचने लगा: क्या उसके पास पैसे नहीं थे? क्या उसका कोई दोस्त भी नहीं था? जब उन्होंने अपनी याददाश्त को खंगाला, तो उन्हें ओलागेराहल्ली निंगप्पा, बसवमपुरा के चिक्केगौदारू और अपने गाँव के हलागे गौड़ा के नाम याद आए। ये सभी उनके

घनिष्ठ मित्र थे जब वे लोकसेवा में थे। अगर वे उनमें से किसी एक के पास जाकर एक हजार रुपये के ऋण की मांग करते और कहते कि वे इसे छह महीने में चुका देंगे, लेकिन यह बात गुप्त रखी जाए, तो क्या वे मना कर देते? या अगर वे उन सभी के पास जाकर प्रत्येक से तीन सौ रुपये का ऋण मांगते? इसलिए, सत्यप्पा को लगा कि पैसे का इंतजाम करना कोई बड़ी समस्या नहीं है। दस मिनट के भीतर, वे उठे और शहर के एक होटल में भोजन करने का फैसला किया, फिर टिपटूर जाने वाली बस में बैठे, मट्टीकेरे गेट पर उतरे और सीधे ओलागेराहल्ली की ओर चल पड़े। वे मार्केट स्ट्रीट की ओर बढ़े। बाईं ओर एक होटल था। जब वे होटल के सामने खड़े हुए, तो उन्होंने उसके बगल में एक बड़ा किराने का स्टोर देखा। दुकान के अंदर, अलग-अलग मोटाई की जूट की रस्सियों के कुंडल लटके हुए थे। रस्सी के कुंडल देखते ही सत्यप्पा उनकी ओर आकर्षित हो गए और आधे घंटे से अधिक समय तक उन्हें निहारते रहे। अंदर से उन्हें देख रहे दुकानदार ने पूछा, 'क्या चाहिए साहब? अंदर आइए।' सत्यप्पा मानो किसी सपने से जागे हों, बुदबुदाए, 'कुछ नहीं,' और झट से होटल के अंदर चले गए। दोपहर का भोजन करते समय उनके दिमाग में एक स्पष्ट उपाय कौंधा। चाहे वो निंगप्पा हो, चिक्केगौड़ा हो या हलागेगौड़ा, उन्हें उन सबसे झूठ बोलना ही होगा।

पिछले चार दिनों से, जब से वह बिलिकेरे में एक स्त्री की तलाश में गया था, वह झूठ बोलते-बोलते थक चुका था। अब फिर झूठ बोलना, कर्ज लेना, फिर गलत तरीकों से चुकाना, अरे, इससे बेहतर है कि आठ आने की रस्सी खरीद लूँ, सीधे बिलिकेरे जाऊँ, और अपने ससुर द्वारा चुने गए बरगद के पेड़ की शाखा से खुद को फांसी लगा लूँ, जो शिवालय के सामने था। यह विचार उसके मन में घर कर गया और परिणामस्वरूप उसे संतोष हुआ। इसके अलावा, चन्नरायपट्टाना से बिलिकेरे के लिए बस सेवा भी थी। उसे बस शाम की बस के समय के बारे में पता करना था, बस से जाना था, शिवालय के चबूतरे पर किसी दूसरे स्थान से आए आगंतुक की तरह लेट जाना था और आधी रात के आसपास उठ जाना था। इस प्रकार उसके मन में एक स्पष्ट योजना बन गई और उसने फैसला किया कि यही सबसे उचित तरीका है। तब तक उसने थोड़ा चावल खा लिया था और उसे लगा कि वह और नहीं खा सकता। उसे खाने से अरुचि हो गई थी। उसने अब तक जो खाया था, वह बस स्टैंड तक चलने और बस से जाने के लिए काफी था। वह उठा, हाथ धोए, पैसे चुकाए और बाहर आ गया। वह दुकान पर गया और आठ हाथ लंबी

मुलायम जूट की रस्सी खरीदी, जिससे आसानी से फंदा बनाया जा सकता था। उसने उसे कुंडली बनाकर अपने थैले में रखा और बस स्टैंड की ओर चल पड़ा। उसे पता चला कि बिलिकेरे जाने वाली आखिरी बस शाम पाँच बजे है। यह उसके लिए बिल्कुल ठीक था। लेकिन अभी दोपहर के केवल 1:00 बजे थे। समय कहाँ बिताया जाए? उसने कुछ देर सोचा और फिर ट्रैवलर्स बंगलो की ओर चल पड़ा। अब, जब उसने अपने जीवन का अंत करने का फैसला कर लिया था, तो उसे धोती के त्वचा को छूने पर भी दर्द महसूस नहीं हो रहा था। ट्रैवलर्स बंगलो की ओर चलते हुए उसने मन ही मन कहा, 'जब शरीर ही समाप्त होने को तैयार है, तो थोड़े से दर्द से क्या फर्क पड़ता है?' वह उस कमरे के बाहर चबूतरे पर बैठ गया जहाँ वह परमेश्वरय्या के वैकुंठ की रात, चंद्रिका के दर्शन के दिन, मंजय्या के साथ रुका था। उसके सामने दो बड़े पेड़ थे और वहाँ कोई और नहीं था। उसने अपना तौलिया पत्थर की पटिया पर बिछाया और पीठ के बल लेट गया। उसे याद आने लगा कि उसका गिरना उसी कमरे से शुरू हुआ था। अचानक उसके मन में एक विचार आया। साती इसी कस्बे में रहती थी। उसका घर ढूंढना इतना मुश्किल नहीं था। अगर वह वहां जाकर उससे पूछे, 'साती, मुझे एक समस्या है, मुझे कुछ पैसों की ज़रूरत है। क्या तुम किसी तरह एक हज़ार रुपये का इंतज़ाम कर सकती हो? अगर नहीं, तो कम से कम अपनी सोने की चेन दे दो, प्लीज़। मैं इसे गिरवी रखकर पैसे ले लूंगा। छह महीने के अंदर चेन छुड़ा लूंगा।' बिना कारण पूछे ही वह मान जाएगी। फिर मैं अपना इलाज करवा लूंगा।' सत्यप्पा तुरंत उठ खड़ा हुआ। लेकिन दो मिनट के अंदर ही उसका उत्साह ठंडा पड़ गया। उसने सोचा: अगर मैं उसे यह न बताऊं कि मुझे ऐसी बीमारी है और इलाज के लिए पैसे चाहिए, और सीधे पैसे मांग लूं, तो यह झूठ बोलने के बराबर होगा। वह झूठ बोलकर निंगप्पा, चिक्केगौड़ा या हलागेगौड़ा से पैसे ले सकता था। लेकिन साती से झूठ बोलना बेहद नीचता भरा काम लगता। एक और साहसी विचार मन में आया। 'क्यों न उसे सच बता दिया जाए?' उसने बहुत देर तक सोचा, लेकिन कोई फैसला नहीं कर पाया और मन में एक अजीब सी बेचैनी छा गई। फिर लेट गया और घड़ी देखी। तीन बज रहे थे। साढ़े चार बजे शुरू करना काफी था। अगर आधी रात को बारह बज जाते, तो उसके जीवन के सिर्फ नौ घंटे बचे होते। इस ज्ञान से उसे गहरा दुख हुआ और वह अंदर ही अंदर घुटता रहा। उसका गला भर आया, लेकिन उसकी आँखें सूखी रहीं। थोड़ी देर बाद, उदासी और गम छा गया। गम का मतलब है जीवन के प्रति

स्नेह और प्रेम खोना। लेकिन खोने के लिए बचा ही क्या था? यह सवाल उठा, लेकिन न तो उसे सवाल समझ आया और न ही जवाब सूझा। वह सोचने लगा, वह बिलिकेरे क्यों जा रहा है, उसी बरगद के पेड़ की तलाश में जिस पर उसके ससुर ने खुद को फांसी लगा ली थी, मानो इस दुनिया में और कोई जगह ही न हो। क्या उसका इरादा अपने ससुर के मार्ग पर चलना था? क्या वह यह साबित करना चाहता था कि वह भी परमेश्वरय्या की तरह सच्चा है? या क्या उन्हें लगा कि उनकी अंतिम सजा भी उसी गाँव में होनी चाहिए जहाँ उनका पतन हुआ था? कोई उचित उत्तर उनके मन में नहीं आया। परमेश्वरय्या आदर के योग्य व्यक्ति थे। नैतिक रूप से वे उच्च कोटि के थे। लेकिन वे? उन्होंने एक घृणित कर्म करने और उससे बाहर निकलने का कोई और रास्ता न जानने के कारण फांसी के फंदे को चुना था। इसलिए, उन्हें उस वृक्ष पर चढ़कर और उसकी शाखा से लटककर उसे अपवित्र नहीं करना चाहिए। तुरंत ही उन्हें लगा कि यही सही है। यदि उन्हें फांसी लगानी ही है, तो या तो मंजय्या के बाग की झोपड़ी में या अपने खुद के बाग में। उन्हें अपने इस निर्णय में औचित्य दिखाई दिया कि उनकी मृत्यु का स्थान अलग होना चाहिए। पाँच मिनट के भीतर उन्होंने निर्णय लिया कि यह उनका अपना बाग होना चाहिए। मंजय्या को अनावश्यक रूप से क्यों शामिल किया जाए। उन्होंने टिपटूर बस पकड़ने और मट्टीकेरे गेट पर उतरने का फैसला किया, उठे, तौलिया अपने कंधे पर डाला, रस्सी का कुंडल वाला हैंडबैग लिया, अपना छाता पकड़ा और बस स्टैंड की ओर चल पड़े।

पांच बजे वह टिपटूर बस में सवार हुआ। बस के चलने के दौरान, हर झटके के साथ, उसे जलन और दर्द का अनुभव होता रहा। वह चाहे जिस मुद्रा में बैठा हो, दर्द कम नहीं होता था। उसके मन में सवाल उठ रहे थे, आखिर ऐसा क्यों हो रहा है? यहां तक कि जब उसने आत्महत्या करने का फैसला किया था, तब भी यह शारीरिक दर्द कम नहीं हुआ था। उसका मन दर्द और जीवन, मृत्यु और दर्द के अंत के बीच के संबंध को समझने लगा। डेढ़ घंटे का सफर था। वह मट्टीकेरे गेट पर उतरा, जब शाम की रोशनी कम हो रही थी और अंधेरा गहरा रहा था। मट्टीकेरे पहुंचते-पहुंचते पूरी तरह अंधेरा हो जाएगा। उसे घर क्यों जाना चाहिए? अगर वह सीधे बाग में जाता, तो उस समय वहां कोई नहीं होता। चोर ही एकमात्र ऐसे लोग हो सकते थे जो यह जानकर बाग में घुसते कि वह गांव में नहीं है, लेकिन वे आधी रात से पहले अपना काम शुरू नहीं करते। इसलिए, उसने सीधे बाग में जाने का

सोचा, उस जामुन के पेड़ पर चढ़ने का सोचा जिसे उसने पहले ही अपने मन में पहचान लिया था, उसकी पहली शाखा के दो हिस्सों पर बैठने का सोचा और रस्सी बांधने का सोचा। वह सुबह आठ बजकर पैंतालीस मिनट तक काम खत्म कर सकता था। उसका मन भी इस बात से सहमत था। जब उसके मन को याद आया कि काम खत्म होने में सिर्फ दो घंटे बचे हैं, तो उसे एक तरह का हल्कापन महसूस हुआ। लेकिन अचानक, उसे बहुत पसीना आने लगा। पूरा शरीर पसीने से भीग गया, अंदरूनी कपड़े चिपचिपे हो गए। उसकी चाल धीमी हो गई। उसने सोचा कि कहीं बैठकर आराम कर ले। लेकिन हठपूर्वक, 'मैं आराम क्यों करूँ?' उसने अपनी चाल तेज कर दी, हालाँकि तेज चलने से दर्द और जलन बढ़ गई क्योंकि कपड़े लगातार छालों से रगड़ रहे थे। दो मील चलने के बाद, ओलागेराहल्ली की ओर मुड़ने पर एक पत्थर की बेंच मिली। जब वह उस पर बैठा, तो ठंडी हवा चली और उसके मन में शांति छा गई। वह आधे घंटे तक वहाँ बैठा रहा और फिर विचारों की एक श्रृंखला शुरू हुई: उसने अपनी जान लेने का फैसला क्यों किया? क्या इसलिए कि वह इलाज के लिए पैसे का इंतजाम नहीं कर पाया? अगर उसने ठान लिया था, तो पैसे का इंतजाम करना कोई समस्या नहीं थी। बसवमपुरा पहुँचकर ओलागेराहल्ली या मट्टिकेरे हलागेगौड़ा जाने पर कर्ज लेने का कारण बताने की क्या ज़रूरत थी? बस इतना कहना ही काफी था कि आपात स्थिति थी और पैसों की ज़रूरत थी। कोई समस्या ही नहीं थी। क्या स्वेच्छा से अपनाए गए ब्रह्मचर्य के उल्लंघन की एकमात्र सज़ा आत्महत्या ही थी? अरे, इस दुनिया में कितने ही करोड़ पुरुष और महिलाएं ऐसे संबंध रखते हैं! इसका मतलब है कि अगर आप शादी करके समाज के सामने इसकी घोषणा करते हैं और फिर शारीरिक संबंध बनाते हैं तो यह वैध है और अगर नहीं तो अवैध। अगर ऐसा है, तो क्या अंतिम सज़ा आत्महत्या ही होनी चाहिए? जब उसके विचार इस दिशा में गए तो उसे अपनी जान लेने का कोई कारण नहीं मिला। अगर उसे किसी और तरह की खुजली, फोड़े या अल्सर होता तो क्या वह इलाज नहीं करवाता? क्या डॉक्टर खुद नहीं कहते कि तीन चौथाई बीमारियाँ संक्रामक होती हैं? ऐसे और भी कई कारण उसके मन में आए। उसने जूट की रस्सी फेंककर फिर से चलने का सोचा। लेकिन उसने ऐसा नहीं किया। उसे ओलागेराहल्ली की ओर मुड़ने का मन नहीं हुआ। वह उठा और अपने गाँव की ओर चल पड़ा। उसने सोचा कि जीवन समाप्त कर लेना ही बेहतर है। किसी तरह पैसों का इंतज़ाम करके इलाज करवा लेने के बाद भी जीने का क्या

मतलब था? उसे बीस-तीस साल और जीने या न जीने में कोई फर्क नहीं दिखता था। साढ़े नौ बज चुके थे जब वह अपने गाँव के पास पहुँचा। तब तक उसने एक बार फिर यह तर्क दे दिया था कि जीवन समाप्त करना ही समझदारी और तर्कसंगत है। गाँव के सामने आकर वह पाँच मिनट तक दो रास्तों के बीच दुविधा में खड़ा रहा, कि वह उस रास्ते को चुने जो सीधे बाग की ओर जाता है या दूसरे रास्ते को जो घर जाकर फिर बाग की ओर जाता है। रामचंद्र ने झोपड़ी की मरम्मत करवा दी थी और सत्यप्पा को बाग की देखभाल के लिए वहाँ जाना था। अंत में वह घर की ओर चल पड़ा।

बच्चे सो रहे थे। रामचंद्र और उनकी पत्नी सोने की तैयारी कर रहे थे। रामचंद्र ने दरवाजा खोला और पूछा, 'तुम कहाँ थे? कल से हम तुम्हारा इंतज़ार करते रहे, करते रहे और...' अपने पिता के चेहरे को देखकर वह आगे नहीं बोल पाए। दोपहर में जो खाना बना था, उसमें से काफ़ी बचा हुआ था। बहू रसोई में गई और ससुर के सामने थाली रखकर उन्हें खाना परोसा। सत्यप्पा ने अपने हाथ-पैर धोए और जल्दी से खाना खा लिया। रामचंद्र ने उनसे पूछा, 'क्या तुम चबूतरे पर सोओगे या बाग में जाओगे?' उन्होंने जवाब दिया कि वे बाग में जाएँगे। तुरंत बेटे ने कहा, 'मैंने वहाँ एक नई चटाई बिछा दी है, तकिए के लिए लकड़ी का एक टुकड़ा और बाकी सब कुछ। मैंने किसी को नहीं बताया कि आप गाँव में नहीं थे। इसलिए कोई भी गुच्छे चोरी नहीं हुए।' सत्यप्पा ने अपना कंबल, मशाल और लाठी ली, फिर अपने थैले से रस्सी का कुंडल निकाला, उसे कंबल में रखा और मोड़ दिया। उन्होंने अपने बेटे से पूछा, 'मुझे एक कागज़ और एक कलम चाहिए।' बेटे ने पूछा, 'अभी इनकी क्या ज़रूरत है?' उन्होंने जवाब दिया, 'मुझे कुछ हिसाब-किताब लिखना है।' रामचंद्र ने अपने पिता को दो कागज़ और एक कलम दी। सत्यप्पा ने उन्हें मोड़कर अपनी जेब में रख लिया, चप्पलें पहनीं और बाग में चले गए। उन्होंने मशाल, लाठी, कंबल और रस्सी नीचे रख दी, फिर कागज़ को मोड़कर अपनी गोद में रखा और जल्दी से दो-तीन पंक्तियाँ लिखना चाहा। उन्होंने मशाल जलाई, उसे इस तरह समायोजित किया कि रोशनी कागज़ पर पड़े। अब उन्हें क्या लिखना चाहिए? उन्हें कुछ सूझा नहीं। 'मेरी मृत्यु के लिए कोई ज़िम्मेदार नहीं है। मैंने अपनी मर्ज़ी से आत्महत्या की है।' यही वाक्य था, जो आत्महत्या करने वाले सभी लोग लिखते हैं। लेकिन सत्यप्पा को लगा कि वह अलग हैं। इसका मतलब है कि उन्हें असली कारण लिखना चाहिए, न कि घिसी-पिटी बातें। उनके लिए यह बात मायने नहीं रखती थी कि इलाज के लिए

पैसे पाने के लिए झूठ बोलना है या किसी और चीज़ के लिए सच बोलना है। लेकिन उसे लगा कि मरते समय, कम से कम जब किसी व्यक्ति ने अपनी मृत्यु का फैसला कर लिया हो और उसे अंजाम देने जा रहा हो, तो उसे सच बोलना चाहिए कि उसने मरने का फैसला क्यों किया। उसे किसी भी अन्य कारण से, चाहे अच्छा हो या बुरा, झूठ नहीं बोलना चाहिए। उसे ऐसा कोई नोट नहीं लिखना चाहिए जिससे किसी और को ठेस पहुंचे। लेकिन उसने ठीक वही सच बोलने का फैसला किया जिससे किसी को भी नुकसान न पहुंचे। फिर वह सोचने लगा: वह आत्महत्या क्यों कर रहा है? टॉर्च की रोशनी कम होने लगी। उसने सोचा कि शायद नोट पूरा होने तक बैटरी खत्म हो जाएगी, इसलिए उसने टॉर्च बंद कर दी। अंधेरे में बैठे-बैठे वह एक-एक करके चीजों का विश्लेषण करने लगा। झोपड़ी के अंदर अभी भी जली हुई दीवारों की गंध आ रही थी। लेकिन चाहे वह कितना भी सोचे, उसे कोई उचित कारण समझ में नहीं आया। 'अपनी मर्जी से' शब्दों का मतलब सिर्फ इतना था कि पुलिस को किसी और पर शक न हो, इसका कोई और अर्थ नहीं था। निराशा, हताशा, बीमारियां, कर्ज, हार - ये कभी भी आत्महत्या के मुख्य कारण नहीं हो सकते। उसने सोचा, जिस तरह मनुष्य के जीने के सटीक कारण खोजना मुश्किल है, उसी तरह आत्महत्या करने के सटीक कारण खोजना असंभव है। लेकिन उसे लगा कि शायद एकमात्र पर्याप्त कारण यही हो सकता है कि कोई जीना नहीं चाहता। उसके विचार भटकने लगे और दिशाहीन हो गए। अंत में उसने अपनी घड़ी देखी। दो बजने में पंद्रह मिनट बाकी थे। उसने सोचा कि अगर वह इसी तरह सोचता रहा तो रात खत्म हो जाएगी, इसलिए उसने टॉर्च जलाई और लिखा: 'मैंने अपनी मर्ज़ी से आत्महत्या कर ली है। इसके लिए कोई ज़िम्मेदार नहीं है। किसी को भी इसका ज़रा भी आभास नहीं था।' उसने हस्ताक्षर किए, तारीख, सप्ताह और समय लिखा, पत्र को मोड़कर अपनी जेब में रखा, रस्सी पकड़ी और बाहर आ गया। आकाश में टिमटिमाते तारों के अलावा, नीचे धरती पर घना अंधेरा था। कहते हैं कि आत्महत्या करने वाले लोग मरने से पहले अपनी अंतिम इच्छा पूरी करना चाहते हैं, जैसे अपने प्रियजनों को देखना या अपनी पसंदीदा मिठाई खाना। इसीलिए अदालतों में भी फांसी पर चढ़ाने से पहले अपराधी की अंतिम इच्छा पूछने की व्यवस्था है। एक पल के लिए सत्यप्पा ने सोचा कि क्या उसकी भी ऐसी कोई अंतिम इच्छा है। कुछ भी समझ में नहीं आया। फिर वह दस मिनट के लिए रुका, फिर भी कुछ नहीं सूझा। उसने खुद को यकीन दिलाया कि फांसी लगाने के लिए

यही सबसे उपयुक्त मानसिक स्थिति है और वह उस पेड़ की ओर चल पड़ा जिसे उसने पहले ही पहचान लिया था।
उसने कमर पर धोती को इस तरह समेटा कि घुटनों को हिलाने में कोई रुकावट न हो, रस्सी का कुंडल गले में डाला और टॉर्च जला ली। उसने पेड़ में खोखलापन और चढ़ने के लिए सुविधाजनक छोटी शाखाओं और घुमावों की तलाश की। उसने टॉर्च को अपनी जेब में रखा और धीरे-धीरे चढ़ना शुरू किया। जब घाव पेड़ के कठोर तने से छूआ, तो उसे तेज जलन होने लगी और उसे लगा जैसे वह वहीं मर जाएगा। पेड़ का तना बहुत बड़ा था और बिना त्वचा को छुए उस पर चढ़ना संभव नहीं था। उसने सोचा कि शायद दो मिनट तक जलन होगी, लेकिन उसे चढ़ना ही होगा। उसने टॉर्च दो बार जलाई और पहली शाखा पर चढ़ गया। जब वह जमीन से लगभग अठारह फीट ऊँची शाखा पर बैठा, तो एक और बात उसके दिमाग में आई: आत्महत्या नोट में जो कुछ भी लिखा हो, पुलिस उसका पोस्टमार्टम करेगी। डॉक्टर निश्चित रूप से इस निष्कर्ष पर पहुँचेंगे कि मट्टिकेरे सत्यनारायणप्पा ने किसी बीमार महिला के साथ संबंध बनाया था और उसी बीमारी से संक्रमित हो गया था, और उसे सहन न कर पाने के कारण उसने आत्महत्या कर ली। यही बात आसपास के गाँवों में भी फैल जाएगी। अगर गलती से भी यह खबर किसी अखबार में छप जाती, तो हर जगह फैल जाती। अखबारों में काम करने वाले लोग ऐसी खबरों के लिए तरसते हैं। और उसकी इज्जत मिट्टी में मिल जाती। यह ख्याल आते ही सत्यप्पा को पसीना आ गया। इसलिए उसने सोचा कि बेहतर यही होगा कि वह जी ले और अपना इलाज करवा ले। दस मिनट से भी ज्यादा समय तक वह अपने विचारों में डूबा रहा और रस्सी फेंकते-फेंकते पेड़ से नीचे उतरने ही वाला था कि अचानक उसके मन में एक और ख्याल आया। उसने रस्सी इसलिए नहीं खरीदी थी और न ही उस डाल पर चढ़ा था, क्योंकि उसे अपनी इज्जत का डर था या फिर लोगों को अपने किए के बारे में पता चलने पर शर्म आ रही थी। अगर उसे इतना डर होता, तो वह अपने किसी पुराने दोस्त से कर्ज लेकर इलाज करवा लेता। अगर उसका खुद का अस्तित्व ही न होता, तो उसे अपनी इज्जत या बदनामी की इतनी चिंता क्यों होती? उसने यही सोचकर खुद को समझाया कि ये सारी चिंताएं तो बस जीते जी की हैं। उन्हें अपनी ताकत का एक पहलू याद आया: कि वे कभी इस भ्रम में नहीं रहे कि उनकी मृत्यु के बाद भी उनका नाम और प्रसिद्धि वैसी ही बनी रहे, लोग उन्हें उसी तरह याद रखें और उनका नाम सूरज और चाँद के अस्तित्व तक

अमर रहे। फिर दस से पंद्रह मिनट बीत गए। उन्होंने टॉर्च जलाई, घड़ी देखी। तीन बज चुके थे, भोर होने वाली थी। दूर से कहीं पक्षियों के चहचहाने की आवाज़ सुनाई दी। उन्होंने सोचा कि अब और देर न करना ही समझदारी है, रस्सी खोली, नापी - रस्सी टांगने के लिए चार हाथ काफी थे। उन्होंने रस्सी का बाकी हिस्सा खाली छोड़ दिया और बीच का हिस्सा डाल से मज़बूती से बाँध दिया। उन्होंने रस्सी के एक सिरे पर कसकर गाँठ बाँधी, कुएँ से पानी निकालते समय घड़ों के गले में बाँधने वाली रस्सी की तरह फंदा बनाया। उन्होंने उसे अपने गले में डाल लिया, ढीला छोड़ दिया ताकि वह आसानी से सरक सके। उसने निश्चय किया कि अब अनावश्यक विलंब की कोई आवश्यकता नहीं है, उसने जेब में हाथ डाला, सुनिश्चित किया कि मृत्यु पत्र वहीं है, आँखें बंद कीं और कल्पना की, 'हाँ, एक, दो, तीन, धड़धड़ाहट की आवाज़, फंदा कसता जाएगा, साँसें रुक जाएँगी, हाथ-पैर छटपटाने लगेंगे। हाथ गाँठ खोलने के लिए फैलेंगे, इस बीच फंदा कसता जाएगा, चेतना मंद पड़ जाएगी, हाथ समझ नहीं पाएँगे कि क्या करें और शरीर पसीने से तर हो जाएगा। आगे, केवल शरीर का तड़पना होगा। अंत में, वह भी रुक जाएगा और केवल लटकते हुए शव की गतिहीनता रह जाएगी।' सत्यप्पा रस्सी गले में डाले हुए शाखा के दो भागों में स्थिर बैठा था। वह पसीने से तर था। उस अँधेरे में वह शाखा के नीचे ज़मीन की गहराई का अनुमान नहीं लगा पा रहा था। उसने अपनी गर्दन घुमाई। पत्तों के पीछे उसे तारे दिखाई दिए। अचानक उसने अपने गले से फंदा उतारकर फेंक दिया। उसने अपनी जेब में रखी टॉर्च जलाई, शाखा से तने की ओर, तने से ज़मीन की ओर उतरने लगा। उतरते समय त्वचा पेड़ के तने से छू गई थी और ज़मीन पर गिरने के बाद कपड़ा भी उससे लिपट गया था, फिर भी उसे दर्द या जलन का एहसास नहीं हो रहा था। वह झोपड़ी की ओर भागा। उसने वहीं छोड़ी हुई लाठी उठाई, टॉर्च जलाना भी भूल गया और अंधेरे में भी तेज़ी से दौड़ते हुए बाग के फाटक की ओर और वहाँ से अपने घर की ओर चल पड़ा। जब वह गाँव के पास पहुँचा, तो उसके दौड़ते कदमों की आहट सुनकर कुत्ते भौंकने लगे। इन कुत्तों का भौंकना सुनकर गाँव के सभी कुत्ते भी भौंकने लगे। कुछ कुत्ते उस पर हमला करने के लिए दौड़े। चबूतरे पर सो रहे लोग उठ गए और कुछ उसके पीछे-पीछे चले गए। लेकिन सत्यप्पा, इन सब बातों से बेखबर, सीधे अपने घर गया, लाठी से दरवाज़े पर ज़ोर से ठोका... खट-खट-खट, और चिल्लाया, 'अरे रामचंद्र, दरवाज़ा खोलो, उठो और दरवाज़ा खोलो! जल्दी खोलोगे या तोड़ दूँ? कमीने!' जब तक

उसने अपने पिता की आवाज़ पहचानी और दरवाज़ा खोला, तब तक आस-पास के दस घरों के लोग जाग कर आ गए थे। रामचंद्र ने अंदर और बाहर की बत्तियाँ जला दीं। लोग सड़क पर, चबूतरे पर और हॉल के दरवाजे के पास जमा हो गए। कुत्ते अभी भी भौंक रहे थे।

सत्यप्पा जोर से चिल्लाए, "सुनो दे रामचंद्र, तुम्हारी माँ के मरने के बाद मैंने दोबारा शादी नहीं की, क्योंकि मैं तुम्हें अच्छे से और आराम से पालना चाहता था। तब से मैंने किसी औरत की तरफ देखा तक नहीं। पाँच-छह दिन पहले मेरा एक औरत से संपर्क हुआ। मुझे बीमारी हो गई है और सूजन आ रही है। जब मैं उस चन्नवीरप्पा की दुकान पर डॉक्टर की फीस के लिए पैसे मांगने गया, तो तुम्हारी उम्र के उस कमीने शेखर ने कहा, "ये खाते तुम्हारे नाम नहीं हैं, तुम्हारे बेटे के हस्ताक्षर के बिना मैं तुम्हें एक पैसा भी नहीं दूंगा।" कोई और रास्ता न देखकर मैंने फांसी लगाने का सोचा। आज भी वह रस्सी बाग में जामुन के पेड़ पर टंगी है। अब, यहीं और अभी, तुम इस कागज पर लिखो, "मेरे खाते असल में मेरे पिता के हैं। आज से मैं इस संपत्ति या किसी भी व्यवसाय का मालिक नहीं हूँ। तुम अपने सारे लेन-देन सिर्फ मेरे पिता से करो और मुझे किसी भी लेन-देन के लिए मत बुलाओ।" 'अरे बदमाश, क्या तुम इसे लिखोगे और इस पर अपने हस्ताक्षर करोगे या नहीं?' ऐसा चिल्लाते हुए सत्यप्पा ने रामचंद्र को अपनी लाठी से पीटना शुरू कर दिया और उस पर लगातार वार करने लगा।

दो आदमियों ने, जिन्हें लगा कि सत्यप्पा पागल हो गए हैं, उन्हें पीछे से पकड़ लिया। लेकिन सत्यप्पा उनकी पकड़ से छूट गए और उन्हें पकड़ने की कोशिश करने वालों पर अपनी लाठी चला दी। बाकी लोग डर गए और भागने लगे। लेकिन भागना आसान नहीं था, क्योंकि इतने सारे लोग एक-दूसरे के बहुत करीब खड़े थे। कुछ ठोकर खाकर गिर पड़े। मानो उनका गला खिंचकर आसपास के एक लाख गांवों तक फैल गया हो, सत्यप्पा इतनी जोर से चिल्लाए कि पूरा गांव सुन ले, 'हां, सुनो तुम सब। मैंने एक औरत के साथ संबंध बनाया और मुझे बीमारी हो गई। मुझे इसके इलाज के लिए पैसे चाहिए। मेरे पास गोदाम में पैसे हैं, तो मैं किसी और से क्यों मांगूं?' उन्होंने रामचंद्र की ओर मुड़कर कहा, 'अरे बेवकूफ, तुम गूंगे की तरह क्यों खड़े हो? क्या घूर रहे हो?' जब सत्यप्पा ने फिर से अपनी लाठी उठाई, तो रामचंद्र जमीन पर गिर पड़े। सत्यप्पा ने अपने बेटे के सामने कागज और कलम फेंक दी जो उसके बेटे ने उन्हें पहले दी थी। रामचंद्र तेजी से लिखने लगे। उनकी

पत्नी डर गई और अंदर के दरवाजे के पास खड़ी रही। सत्यप्पा ने अपने बेटे की लिखी हुई चिट्ठी उठाई और उजाले में ज़ोर से पढ़ी। फिर उन्होंने कागज़ को मोड़कर अपनी जेब में रखा और तेज़ी से गाँव से बाहर अँधेरे में निकल गए। किसी की हिम्मत नहीं हुई उनके पीछे जाने की। यहाँ तक कि कुत्ते भी आपस में भौंक रहे थे, लेकिन उनके पीछे नहीं आए। सब लोग रामचंद्र के चेहरे को देख रहे थे। रामचंद्र, जो पहले डर से सुन्न थे, अब उन चोटों का दर्द महसूस कर रहे थे जो सूजकर चोट के निशान बन रही थीं।

चन्नरायपट्टाना के ट्रैवलर्स बंगले में सत्यप्पा से हुई अचानक मुलाकात ने मंजय्या को अपने मन की उथल-पुथल को कुछ हद तक शांत करने में मदद की। भला वह यह कैसे सोच सकता था कि सत्यप्पा चन्नरायपट्टाना आएंगे, वो भी ट्रैवलर्स बंगले में आकर उससे मिलेंगे। ऐसा नहीं था कि वह चंद्रिका को वहां आमंत्रित नहीं करता। चंदन विभाग के उच्च अधिकारियों से सौदे जीतना ही उसके अहंकार को संतुष्ट करने के लिए काफी था। लेकिन उसका तरीका था उसी रात एक फिल्म स्टार की तरह सजी लड़की के साथ समय बिताकर अपने अहंकार को शांत करना। चंद्रिका के जाने के बाद अपने भीतर के खालीपन को दबाना उसके लिए आसान हो गया, क्योंकि सत्यप्पा वहां था और मंजय्या उससे अपने विचार साझा कर सकता था। लेकिन जब उसने सत्यप्पा को मट्टीकेरे बस में बिठाया, अलविदा कहा और हसन जाने वाली बस में बैठा, तो हसन जाते समय सरोजक्षी उसके मन में छा गई। उसका पति, इतने सारे लोगों की शिकायतों के सामने बयान देते समय घबरा गया था। निश्चित रूप से उसे निलंबित कर दिया जाएगा। निलंबन का आदेश उस तक पहुंचे। तब उसे समझ आएगा कि यह मंजय्या कैसा है। उसे दो महीने तक बिना वेतन के भुखमरी का सामना करने दो और अपनी थोड़ी-बहुत बचत भी खर्च करने दो। तब वह कुटिल स्त्री उसे ढूंढने आएगी, चाहे वह कहीं भी हो। वह उस कुटिल स्त्री से कहेगा: 'पहले मेरे साथ सो जाओ, उसके बाद ही कोई बात।' ऐसा सोचते

हुए उसने सरोजक्षी को बिस्तर पर उसके सामने आत्मसमर्पण करते हुए कल्पना की। ऐसे मामलों में मंजय्या हर उस स्त्री को पाने में सफल नहीं होता था जिसे वह निशाना बनाता था। हालांकि वह अपने लक्ष्य को लेकर बेहद आश्वस्त था, लेकिन जब उसे सफलता नहीं मिली, तो उसे याद आया कि उसने इस बार जितना गंभीर रवैया अपनाया था, उतना पहले कभी नहीं अपनाया था। क्या ऐसा नहीं था, उसने सोचा, तो वह गाँव-गाँव क्यों भटका, इतने सारे किसानों से शिकायतें क्यों लिखवाईं और एक मामला क्यों खड़ा किया, ताकि उसके पति को निलंबित कर दिया जाए? क्या वह इतनी खूबसूरत थी? दो बच्चों की माँ - एक दस साल का लड़का और एक पाँच साल की लड़की। उसमें ऐसा क्या था? रंग-रूप? कद-काठी? शरीर की कसावट? दो बच्चों को जन्म देने के बाद किसी स्त्री में कैसी कसावट हो सकती है? क्या उसे देखते ही और उससे बात करते ही वह उसकी ओर बेकाबू होकर आकर्षित नहीं हो गया था? उसने भी ऐसा व्यवहार किया था मानो वह कोई खास इंसान हो। हाँ, वह आकर्षित था और उसने लगातार उस आकर्षण को बढ़ावा दिया था। लेकिन जब वह आखिरी कदम उठाने ही वाला था, तो उसने उसके गाल पर थप्पड़ मारकर उसे अपमानित कर दिया। बस में सफर करते हुए भी, उसे यह याद आते ही अचानक उसके गाल में जलन होने लगी। यह सिर्फ लाल जलन नहीं थी, बल्कि एक औरत के हाथों थप्पड़ खाने और उसे वापस थप्पड़ मारने के अपमान से पैदा हुई जलन थी। तब वह उसका घर छोड़कर चला गया था और जब वह अकेले जाकर उससे मदद माँगी, तो अगर वह सच में उससे प्यार करती, तो उसे अपने पति से कहकर उसे सजा से बचा लेना चाहिए था। लेकिन उस औरत ने कितनी चालाकी से पल्ला झाड़ लिया! मंजय्या अभी भी गुस्से से जल रहा था। वह अब भी उसके दिमाग में क्यों बसी हुई है? वह उसके साथ अपने रिश्ते की सारी बातें याद करने लगा, ताकि वह अपने दिमाग की कार्यप्रणाली को अच्छी तरह समझ सके। अगर सुंदरता का निर्धारण केवल रंग, कद और कद-काठी से ही किया जा सकता है, तो हमें कांच के बक्सों में करीने से सजी, तरह-तरह की साड़ियों में खड़ी पुतलों को भी सुंदर स्त्री कहना पड़ेगा! यह स्त्री की सुंदरता नहीं है। सरोजक्षी का रंग सांवला था। लेकिन उनकी आंखें मशाल की रोशनी की तरह चमकती थीं, जिनमें एक आंतरिक शक्ति और बुद्धिमत्ता झलकती थी। सुंदर आकार के, चमकते सफेद दांतों की कतार और कानों में सफेद बालियां बेहद आकर्षक थीं। मंजय्या सोचता था कि क्या इन तीनों की चमक - आंखें, दांत और

बालियां - मिलकर किसी जादुई शक्ति का सृजन करती हैं। जिस दिन से उसने उसे देखा था, उसे लगा था कि घर को साफ-सुथरा और सुंदर रखने में, कढ़ाई में, बच्चों के पालन-पोषण में, खाना पकाने और परोसने के तरीके में, वह सबसे अलग थी। उसे याद था कि कैसे उसने अपने द्वारा तैयार किया हुआ उपित्तु, सुंदर थाली, चम्मच, गिलास और पानी के बर्तन में परोसा था, जब वह पहली बार उसके पास आई थी। जब उसके पति ने मंजय्या का परिचय कराया, तो उसने बड़े ही सलीके से 'नमस्कार' कहा। उन्हें याद आया, 'क्या तब उन्हें हीन भावना का एहसास नहीं हुआ था?' यहाँ तक कि बच्चों को पहनाए जाने वाले कपड़े भी उन्होंने खुद सिले थे। मंजय्या ने मन ही मन कहा, 'अरे, कौन सा पेशेवर दर्जी इस तरह की सिलाई जानता है?' सरोजक्षी ने उन पर ऐसा जादू कर दिया था। क्या मंजय्या के लिए किसी स्त्री की ओर आकर्षित होना कोई नई बात थी? लेकिन सरोजक्षी के प्रति उनके मन में एक अजीब सा डर था, जिसे वे खुद परिभाषित नहीं कर पा रहे थे। वे बहुत सावधान और डरे हुए थे कि कहीं वे उनके सामने किसी देहाती की तरह न बोलें या व्यवहार न करें। ऐसा नहीं था कि वे पढ़े-लिखे शहरी लोगों से अपरिचित थे। कई बार वे हसन के वकीलों के घरों में रुके थे और उनके साथ खाना खाया था। उन्होंने प्रसिद्ध वकील वेंकटरामय्या की पत्नी से बात की थी, एक बार तो वे उनके लिए फूल और फल भी ले गए थे। लेकिन उनसे बात करते समय उन्हें कभी यह महसूस नहीं हुआ कि वे एक गाँव वाले या देहाती हैं। उन्हें भाषा के प्रयोग में सावधानी बरतने की जरूरत महसूस नहीं हुई। क्या उसे अदालतों, दफ्तरों, मठों, मंदिरों और मंत्रों में इस्तेमाल होने वाली भाषा का अंतर नहीं पता था? अगर ऐसा था भी, तो सरोजक्षी से बात करते समय वह बोलने से पहले अर्थ के बारे में सोचना और सुनिश्चित करना क्यों चाहता था? फिर उसने सोचा, यह किस तरह का डर या सम्मान था, जो उसने किसी भी डी.सी. के प्रति नहीं दिखाया था? वह भी ऐसा ही व्यवहार करती थी, विशेष ध्यान से खाना बनाती थी। उसे नहीं पता था कि वह उसके लिए इतना स्वादिष्ट खाना बनाती थी या जो भी वह बनाती थी, वह स्वाभाविक रूप से स्वादिष्ट होता था। मंजय्या को आश्चर्य हुआ, उसे कैसे पता चला कि वह संतोष नॉन-वेज रेस्टोरेंट में ही मांस खाता है, जबकि वह अपने घर पर कभी मांस नहीं खाता था? अगर वह पुत्तेलैया और पुरदम्मा से मांस बनाने को कहता, तो वे खुशी-खुशी उसके लिए मांस बना देते और खुद भी खुशी-खुशी खा लेते। लेकिन, वह अपने गाँव में शुद्ध शाकाहारी था, अपने मांस खाने के बारे में

जरा भी संकेत नहीं देता था। उस 'गंगादिकर मिलिट्री होटल' में बहुत ज़्यादा मिर्च डाली जाती थी और उस रहमानिया में जायफल, लौंग और जावित्री की तेज़ गंध आती थी। मैसूर, बैंगलोर, दावनगेरे या हुबली, कहीं भी संतोष नॉन-वेजिटेरियन रेस्टोरेंट जैसी उत्कृष्टता नहीं मिल सकती थी, यह उनका पक्का विश्वास था। लेकिन एक बार जब सरोजक्षी ने उन्हें मटन बिरयानी खिलाई, तो उन्हें संतोष रेस्टोरेंट की बिरयानी से ज़्यादा स्वादिष्ट लगी। आज भी ऐसा ही है, संतोष रेस्टोरेंट में भी उनकी रेसिपी को न तो बेहतर बनाया जा सका है और न ही उसमें महारत हासिल की जा सकी है! खैर, मंजय्या अब भी सोच रही थी कि उसे उनके मांसाहारी होने के बारे में कैसे पता चला? वह कभी संतोष रेस्टोरेंट नहीं गए थे, न तो अपने पति के साथ और न ही किसी और परिचित के साथ। ये गाँव के बदमाश जो यहाँ अदालतों, दफ्तरों, मंगलवार के बाज़ारों और मेलों और जनवरी में होने वाले रथ-उत्सवों में आते हैं, उन्हें तो इसकी जगह या नाम भी नहीं पता। ये सीधे-सादे गंवार हैं जो बिल देखकर ही दिल का दौरा पड़ जाएगा। ऐसे में, उसे उनके मांसाहारी होने के बारे में कैसे पता चला? या फिर क्या उसे पूरा भरोसा था कि अगर वह खाना बनाकर परोसेगी, तो वह ज़रूर खाएगा? पर उसे ऐसा सोचने का अधिकार कहाँ से आया कि वह ज़रूर खाएगा? कई हफ़्तों तक वह जवाब ढूंढता रहा, पर उसे कुछ नहीं मिला। जब वह उससे थोड़ा परिचित हुआ, एक दिन जब वह अकेली थी, तो उसने उससे पूछा: 'तुम्हें कैसे पता चला कि मैं मांस खाता हूँ?' तब वह ऐसे हँसी... मानो उसने अपनी आँखों, दाँतों और कानों की बालियों की मिली-जुली चमक से उसकी आँखें चौंधिया दी हों और कहा हो, 'क्या मैं अपने ईश्वर के मन की बात नहीं जानती?' उसका मतलब क्या था? वह जो भी बोलती, उसका यही हाल होता था। पर वह आगे बोलने की हिम्मत नहीं जुटा पाया। आखिर कैसे और क्यों उसके पास इतनी शक्ति थी, इतना गहरा प्रभाव था उस पर?

इतना ही नहीं, चंदन का ठेकेदार बनने के बाद, कहीं न कहीं महिलाओं के प्रति उसका आकर्षण कम हो गया। क्या यह चंदन के व्यापार के कारण था, जिसमें उसका ज़्यादा समय और ध्यान लगता था, या फिर लगातार यात्राओं के कारण होने वाली थकान? लेकिन क्या यह वही दिन नहीं था जब उसने ठेका संभाला था और अप्पाजप्पा उसे अपने घर ले गया था और सरोजक्षी ने उसे उप्पित्तू खिलाया था? लेकिन यह पूरी तरह सच नहीं था कि यह आकर्षण सरोजक्षी को देखने के बाद ही कम हुआ। इसके बाद भी, उसे याद था कि उसने चन्नरायपट्टाना, हसन, बिलिकेरे

और कई अन्य गांवों में कितनी महिलाओं को अपने जाल में फंसाया और उनके साथ सोया था। और कैसे उसने उस रात लक्कू को पकड़ा, उसे उस बीच के पेड़ के नीचे गिरा दिया, और एक बार उसके साथ संबंध बनाने के बाद उसे अपने वश में कर लिया। और बरी होने के बाद भी, वह उसे अपने साथ जोड़े रखने की कोशिश कर रहा था ताकि वह उस पर विश्वास करे। मंजय्या सोचने लगा, महिलाओं के प्रति उसकी लालसा पहले जैसी तीव्र क्यों नहीं रही? उसकी वह दीवानी इच्छा अब इतनी ज़ोर से क्यों नहीं उठती? सरोजक्षी ने सपने में भी कभी उसे आकर्षित नहीं किया था, न ही कल्पना में। उसमें वह सुंदरता या शारीरिक बनावट नहीं थी। उसने कभी सपने में भी नहीं सोचा था कि वह अपने बिस्तर पर लेटा होगा और बिस्तर के बगल में लगे बड़े दर्पण में उसे नग्न देखेगा। फिर भी ऐसा ही हो गया। क्या उम्र उस पर हावी हो रही थी? आखिर बावन साल। क्या यह इतनी उम्र थी? क्या यह इमली के पेड़ की तरह नहीं था, जो जितना पुराना होता जाता है, उसका स्वाद उतना ही तीखा होता जाता है? उसने खुद को कोसा कि वह कितना मूर्ख है जो इस अनुबंध को लेकर और चिलचिलाती धूप में यात्रा करके जीवन के मूलभूत सुख को नष्ट कर रहा है। उसे जीविका चलाने के लिए इस अनुबंध या इससे होने वाली आय की आवश्यकता नहीं थी, इससे उसे कोई खर्चा नहीं करना था। उस अनुबंध से जो कुछ मिलता था, वह अपने वरिष्ठों और अधीनस्थों में बांटने के लिए ही काफी था, जो बचता था वह नगण्य राशि थी। उसने सोचा, फिर क्यों न वह इसे छोड़ दे?

हाँ, वह इसे जाने क्यों न दे? यह सवाल उसके मन में एक बार नहीं, बल्कि कई बार उठा था, उस दिन जब उसने उसे थप्पड़ मारा था। इस अनुबंध के कारण पूरे जिले में उसका प्रभाव बढ़ गया था। चुनाव लड़ने वाले राजेगौड़ा ने उसकी मदद मांगी थी। वह मंजय्या को अपनी कार में कई शहरों में ले गया था। वह बिना किसी कारण के इतनी शक्तिशाली स्थिति क्यों खो दे? लेकिन, सत्ता और अधिकार होने के बावजूद, अगर ये सुख में बाधा बनें तो इनका क्या फायदा? वही विचार जो मंजय्या ने पहले सोचा था, फिर से उसके मन में आया। फिर से वही सवाल मन में उठा – क्या वही उसके मन में उस सुख से विमुख होने का कारण थी? मटन बिरयानी, मटन सूप और उसके द्वारा तैयार चिकन की इच्छा तो ठीक थी, लेकिन उसके लिए कोई खास इच्छा नहीं जागी थी। तो, यह कहना सही नहीं था कि उसकी विमुखता उसी के कारण थी। एक स्त्री कैसे सता सकती है, जब वह अकेले

में भी, जब उसने उसे चाहा हो, नग्न आकृति के रूप में मन में प्रकट न हो? लेकिन जब भी वह चन्नारायपट्टाना जाता, तो उसे लगता कि उसे उसके घर जाना चाहिए, उसके हाथ का बना खाना खाना चाहिए और उससे बात करनी चाहिए। उसे खाली हाथ नहीं जाना चाहिए, बल्कि बच्चों के लिए फल, फूल और बिस्कुट ले जाने चाहिए। यह कैसी लालसा थी? जब अप्पाजप्पा घर पर नहीं होते थे, बच्चे भी स्कूल चले जाते थे और घर में कोई नहीं होता था, तब यह इच्छा जागृत नहीं होती थी। अगर उसने ठान भी लिया होता, तो क्या किसी को उसे अपनी इच्छा व्यक्त करने के लिए शब्दों का सही इस्तेमाल सिखाना पड़ता? क्या उसे समझने के लिए इतनी चतुराई सिखानी पड़ती? फिर भी उसका मन ऐसा नहीं हुआ। यह अजीब लगता था, आज भी उसे अजीब लगता है। एक दिन घटी घटना याद आ गई और आज भी वह अजीब और चौंकाने वाली लगती है। उस दिन जब घर में कोई और नहीं था, वह उससे बात कर रहा था और अचानक उसकी इच्छा जाग उठी। हाँ, यह उसका मूल स्वभाव था। वह डरा हुआ था, कहीं यह चतुर स्त्री उसके मन की बात न समझ ले। ऐसी स्थिति में, उसे एक स्त्री ढूंढनी थी और अपना काम पूरा करना था। यह उसकी सहज प्रवृत्ति थी और वह यह जानता था। वह अचानक उठा और बोला, 'सरोजक्षम्मा, आप कुछ पका दीजिए। मुझे कुछ काम है। मैं एक घंटे में लौट आऊंगा।' मानो उस पर उसका कोई अधिकार हो, उसने बड़ी मधुरता से, अधिकारपूर्वक विरोध किया। 'मैं आपको इस तेज़ धूप में बाहर कैसे जाने दे सकती हूँ? नहीं, नहीं, मैं नहीं जाने दूँगी।' मंजय्या ने ज़िद की, 'नहीं, मुझे कुछ ज़रूरी काम है, मैं जल्दी लौट आऊंगा। बस चावल और सांभर बना दीजिए, इतना ही काफी है,' और वह कांतमणि के घर की ओर चल पड़ा। वह अकेली थी और गुस्से का नाटक करते हुए बोली, 'साहुकर को इस तरफ आए सदियां बीत गईं!' बिना कोई जवाब दिए, उसने उसे दरवाज़ा बंद करवाया और उसे गले लगा लिया। ओह, क्या इच्छा जागृत नहीं हो रही थी! जीवन में पहली बार उसकी मर्दानगी ने उसे धोखा दिया, उसका मज़ाक उड़ाया। कांतमणि क्रोधित हो गई। 'अरे, क्या तुम कांतमणि के पास उसे चिढ़ाने और उसका मज़ाक उड़ाने आए हो?' उसे समझ नहीं आ रहा था कि उसे कैसे शांत करे। उसे याद आया, उसने ही उसका नाम कंथामणि रखा था, बेलगोला की उस नीरस डोड्डुपापम्मा के बजाय। उसने आरोप लगाया, 'मुझे पता है कि यहाँ आने से पहले तुम किसी औरत के साथ सो चुके हो। इसीलिए तुम कुछ नहीं कर सकते।' मंजय्या दुविधा में पड़ गया। अगर वह मान लेता, तो यह उसका

अपमान होता। अगर वह इनकार करता, तो यह उसका खुद का अपमान होता। यह एक मुश्किल स्थिति थी। उसने कहा, 'मेरे मन में बहुत सारी बातें हैं; तालुक कार्यालय में कुछ ज़रूरी काम है। अपना काम खत्म करने के बाद, मैं शाम को यहाँ आऊँगा, वादा करता हूँ, तुम्हारी कसम खाता हूँ।' उसने अपने वादे की पुष्टि के तौर पर उसका हाथ छुआ, खुद को उससे छुड़ाया, कपड़े पहने और सरोजक्षी के घर की ओर चल पड़ा। उसने उसे चाँदी की थाली में चाय के बर्तन में चावल और रसम परोसा, जिसमें करी पत्ते, धनिया पत्ते और जीरा मिला हुआ था। उसे उसका सामना करने में शर्म आ रही थी, उसे इस बात का पछतावा था कि उसने उससे झूठ बोला था। क्या वह उसकी पत्नी थी जिसे उसने मांगल्य बांधकर यह अधिकार दिया था कि मैं उससे झूठ न बोलूं? उसकी मांगल्य धारण करने वाली सावित्री उसे छोड़कर चली गई, क्योंकि उसने उसे प्रश्न पूछने का अधिकार नहीं दिया था। यदि ऐसा है, तो इस सरोजक्षी को यह जानने का अधिकार कैसे हो सकता है कि मैं झूठ बोलता हूं या सच? हालांकि उसने कुछ नहीं पूछा। शायद उसने यह सब कल्पना की थी। वह अच्छा खाना बनाती है, सौहार्दपूर्ण ढंग से बात करती है और मुझे भोजन परोसती है। शायद वह यह सब इसलिए करती है क्योंकि मैं उसके पति को अतिरिक्त आय कमाने में मदद कर रहा हूं, वह आय जो वह पहले कभी नहीं कमा पाया था। यदि नहीं, तो यह चतुर स्त्री मेरे लिए इतना सब क्यों करती? जब मंजय्या इस प्रकार स्वयं को सांत्वना दे रहा था, तब उसने कोमल स्वर में पूछा, 'क्या आप वह काम पूरा कर पाए जिसके लिए आप बाहर गए थे?' उसके भीतर खतरे की घंटी बजने लगी। उसे पसीना आने लगा, पसीने की बूँदें उसके माथे पर फैल गईं। वह अपना चेहरा उठाने से डर रहा था, डर था कि सरोजक्षी उसके मन की बात पढ़ लेगी। उसने अपना सिर और नीचे झुका लिया और तेजी से अपना भोजन निगलने लगा। कमीज़ का कॉलर पसीने से पूरी तरह भीगा हुआ था। वह अभी जवाब तैयार ही कर रहा था, 'जब बात तालुक कार्यालय की हो, तो काम इतनी आसानी से कैसे खत्म हो सकता है?' तभी उसे ठंडी हवा का झोंका महसूस हुआ। उसने सिर उठाया और देखा कि सरोजक्षी पास खड़ी होकर उसे बाँस के पंखे से हवा कर रही है! वह शर्मिंदा हो गया। वह कुर्सी से उठकर 'अय्यायो' चिल्लाया। 'क्यों?! क्या मैं तुम्हें हवा नहीं कर सकती?' उसने मुस्कुराते हुए चेहरे से पूछा। उसके मन में फिर से वही ख्याल आया: जब सरोजक्षी बोलती है, तो शब्द लहरों की तरह एक के बाद एक लगातार आते हैं। लेकिन जब तक हम उन्हें

पूरी तरह समझने की कोशिश करते हैं, वे पीछे हटती लहरों की तरह गायब हो जाते हैं।
सरोजक्षी ने उसके पास एक और कुर्सी खींची, बैठ गई और धीरे-धीरे पंखा चलाने लगी। उसने सोचा, वह किसी फिल्म की नई दुल्हन जैसी लग रही है... और उसे याद आया कि सरोजक्षी भी कभी-कभी फिल्में देखती थी। जब तक वह पंखा चलाती रही, उसे शर्मिंदगी महसूस होती रही। उसने चावल और दही परोसा। उसने तुरंत कहा, 'दही ठंडा है, पंखा चलाने की ज़रूरत नहीं है।' फिर वह रसोई में चली गई और मंजय्या सोचने लगा कि क्या उसे शाम को कंथामणि के घर जाना चाहिए। मान लो वह वहाँ गया और फिर वही हुआ। कितना बड़ा अपमान होगा! ऐसा क्यों हुआ? उसने बहुत देर तक सोचा लेकिन कोई जवाब नहीं मिला। अब भी कोई जवाब नहीं सूझा। यह सरोजक्षी उसे अपने जाल में फंसाए हुए थी, उसके प्रति दीवानगी को ज़िंदा रखे हुए थी, क्योंकि वह उसके पति को अतिरिक्त पैसे कमाने में मदद कर रहा था। क्या वह इतनी चालाक थी कि मूलधन वापस न करे? शायद। दो महीने तक वेतन रोक दिया जाए। वह कुटिल उसके पास रेंगती हुई आएगी और फिर वह उसे सबक सिखाएगा। उसने ऐसा फैसला तो कर लिया, लेकिन अगले ही पल उसने बड़ी मुश्किल से अपने मन में एक तरह की घृणा पैदा कर ली, यह सोचते हुए कि आखिर वह इतनी खूबसूरत तो है नहीं!
तब तक बस संकेनहल्ली राज्य वन के किनारे से गुजर रही थी। सड़क के किनारे-किनारे एक सौ बीस एकड़ क्षेत्र में यूकेलिप्टस के वृक्षारोपण थे। यह मुख्य रूप से वन विभाग के अधीन था और चौकीदार उस्मानी इसकी सुरक्षा के लिए जिम्मेदार था। करादेवु और संकेनहल्ली चौकी के पास स्थित सरकारी वन में वृक्षारोपण, विकास और सुरक्षा करना उसका काम था। उसे सरकार द्वारा उपलब्ध कराए गए पौधों को लगाना, कुछ समय तक उन्हें पानी देना होता था और सरकारी अनुमति मिलने पर वह कुछ मजदूरों को पौधों को पानी देने और बाड़ की मरम्मत करने के लिए नियुक्त कर सकता था। उसे इस बात का भी ध्यान रखना होता था कि मवेशी आस-पास के गांवों से न घुसें और कोई भी जलाऊ लकड़ी के लिए पेड़ों की शाखाएँ न काटे। वन रक्षक विशकांतय्या उस्मानी का वरिष्ठ अधिकारी था, वनपाल प्रभुस्वामी विशकांतय्या का वरिष्ठ और रेंजर अप्पाजप्पा प्रभुस्वामी का वरिष्ठ था। उस्मानी को कोई अतिरिक्त आमदनी नहीं होती थी, सिवाय दस-बीस रुपये प्रति व्यक्ति के, जो उसे कुछ ग्रामीणों को अपने मवेशी चराने और उसके अधिकार क्षेत्र

में आने वाले दो यूकेलिप्टस के बागानों से कुछ जलाऊ लकड़ी ले जाने की अनुमति देने के बदले में मिलते थे। इससे उसे सालाना तीन से चार सौ रुपये मिलते थे। जब मंजय्या को तालुक का चंदन ठेकेदार नियुक्त किया गया, तो उस्मानी को भी कुछ अधिकार और अच्छी खासी अतिरिक्त आमदनी मिलने लगी। यूकेलिप्टस के पेड़ तो वहाँ थे ही। इतना काफी था कि उस्मानी की पत्नी या उसका सोलह वर्षीय बेटा बुदेन सप्ताह में एक बार आकर बागान का चक्कर लगा लें। मंजय्या ने उस्मानी की क्षमता को पहचान लिया और उसे अधिक जिम्मेदारी वाले काम सौंपने लगे। उसे जो भी जिम्मेदारी सौंपी जाती, उस्मानी यह साबित कर देता कि वह सौंपे गए काम से कहीं अधिक सक्षम और कुशल है और अपेक्षा से अधिक काम पूरा करता। वह मंजय्या का बहुत करीबी बन गया। उस्मानी में इन मामलों की जानकारी जुटाने का साहस, कौशल और दक्षता थी – जैसे कि बागों, खेतों, आर्द्रभूमि और शुष्कभूमि में चंदन के कितने पेड़ हैं, वे किस तालुक और होबली (कर्नाटक और आंध्र प्रदेश में कर और भूमि स्वामित्व के लिए संयुक्त रूप से प्रशासित आस-पास के गांवों का समूह) में आते हैं, पेड़ों की उम्र क्या है, क्या वे पक चुके हैं, किस व्यक्ति को डराकर या उसके खिलाफ मामला दर्ज करने की स्थिति पैदा करके उससे कितना पैसा वसूला जा सकता है। इसके साथ ही, वह रातों में कहीं भी जाकर मामला तैयार कर वापस लौट सकता था। मंजय्या को अनुबंध मिलने के तीन महीने बाद उस्मानी ने एक रैले साइकिल खरीद ली। उसके लिए मंजय्या मुख्य संरक्षक से भी श्रेष्ठ थे। हालांकि रेंजर अप्पाजप्पा हर महीने उसका वेतन स्वीकृत करते थे, फिर भी उस्मानी मंजय्या का अधिक सम्मान करता था।

जब बस संकेनहल्ली हैंडपोस्ट पर रुकी, तो वहाँ इंतज़ार कर रहे उस्मानी दौड़कर उस खिड़की के पास आए जहाँ मंजय्या बैठे थे। वे खिड़की के बाहर खड़े होकर बोले, 'सलाम कंजर्वेटर साहब।'

मंजय्या ने पूछा, 'क्या बात है? आप यहाँ क्यों इंतजार कर रहे हैं?'

उस्मानी ने कहा, 'मुझे लगा था कि आप इसी बस से आएंगे। आदेश के बारे में कोई खबर है?'

मंजय्या ने जवाब दिया, 'जांच तो कल शाम ही पूरी हुई थी। इतनी जल्दी आदेश कैसे जारी किए जा सकते हैं?'

"ओह साहब, अगर आप कमान संभालते, तो अप्पाजप्पा को तो ज़रूर बाहर का रास्ता दिखा दिया जाता।" उस्मानी ठहाके लगा रहा था कि बस चल पड़ी। उसने

फिर सलाम किया, “सलाम साहब।” जब बस आगे बढ़ी और सरकारी वन क्षेत्र समाप्त हुआ, तो मंजय्या को याद आया कि उसने सरोजक्षी का इतिहास इसी उस्मानी से जाना था।

एक दिन, दोपहर की तेज़ गर्मी में, मंजय्या सरकारी वन क्षेत्र के उसी हैंडपोस्ट के पास स्थित उस्मानी के घर गए थे। जी हाँ, वे साइकिल से गए थे। चिलचिलाती धूप में, घर के अंदर से आती मसालों की खुशबू यूकेलिप्टस के पेड़ों पर फैल रही थी। उस्मानी ने चबूतरे पर लकड़ी की कुर्सी रखी, मंजय्या से बैठने का अनुरोध किया और पूछा, 'हम चिकन सांभर बना रहे हैं, साहब, क्या आप गरमा गरम रागी के गोले और चावल खाएँगे?'

मंजय्या ने कहा, “नहीं, आप अपने खाने में बहुत ज्यादा दालचीनी और लौंग डालते हैं। मुझे ये नहीं चाहिए। बस मुझे पानी दे दीजिए, इतना ही काफी है।” उस्मानी ने बड़ी चतुराई और अर्थपूर्ण ढंग से आँख मारी। “जी साहब, सही कहा। एक बार इनका खाना चखने के बाद आपको कोई और स्वाद कैसे पसंद आ सकता है?” मंजय्या ने आँख मारने का इशारा अनसुना कर दिया, क्योंकि उन्हें अपने अधीनस्थों के साथ इतनी अनौपचारिकता उचित नहीं लगी। उस्मानी पानी से भरा पीतल का बर्तन और एक गिलास लेकर आया। मंजय्या के पानी पीने और पसीना आने के बाद उस्मानी ने पूछा, “क्या आप चन्नरायपट्टाना से आए हैं साहब? यहाँ बहुत गर्मी है।”

मंजय्या ने कहा, 'हाँ।' कुछ देर बाद, जैसे अचानक उसे कुछ सूझा हो, उसने उस्मानी से पूछा, 'वैसे तुम क्या कह रहे थे?'

‘किस बारे में साहब?’

आपने खाना पकाने के स्वाद के बारे में कुछ कहा था।

उस्मानी को हौसला मिला। 'स्वाद तो वही जानता है जिसने इसे चखा हो। हम, जिन्होंने सिर्फ कहानियां सुनी हैं, इसके बारे में कैसे जान सकते हैं, साहब?'

अंतरंगता का प्रस्ताव देते हुए, मंजय्या ने उस्मानी से कुछ रोचक बातें बताने को कहा।

उस्मानी ने शरारती अंदाज में, जैसे कि वह उनसे परिचित हो, जवाब दिया, 'देखिए साहब, यह ठीक वैसा ही है जैसे हकीम साहब किसी जाटका-साबी से दवा मांगें।'

मंजय्या ने पलटवार करते हुए कहा, 'सच कहूं तो, मुझे कुछ नहीं पता उस्मानी, मुझे बताओ।'

उस्मानी ने अपनी आवाज़ धीमी कर ली ताकि रसोई में खाना बना रही उसकी पत्नी न सुन सके और कहा, 'क्या, मैं आपको बताऊँ साहब? किसी महिला का चेहरा देखते ही आप समझ जाते हैं कि वह किस समूह से ताल्लुक रखती है, आप उस पर निशाना साधते हैं और अपना जाल बिछा देते हैं।'

'अच्छा, छोड़ो ये बात, मुझे इसके बारे में बताओ।' मैं चुप रहा। एक ही विभाग में काम करते हुए मुझे किसी से झगड़ा नहीं करना चाहिए। तुम तो वहाँ के अनुभवी हो। तुम्हें सब पता है। चलो, बताओ!'

उस्मानी ने आत्मीयता और निकटता दिखाते हुए आँख मारी और कहा: 'आप जानते हैं साहब, अप्पाजप्पा के दो बच्चे हैं। उस लड़के और उस लड़की की आँखें उनकी माँ की तरह चमकती हैं, और वे बहुत बुद्धिमान भी हैं। लेकिन वे अपने पिता से बिलकुल भी मिलते-जुलते नहीं हैं। अब आप बाकी बात समझ गए होंगे!'

मंजय्या को याद आया, हाँ, उसने उन्हें देखा तो था, लेकिन उसने कभी इस बात पर ध्यान नहीं दिया था। उसे यह बात सूझी ही नहीं थी। हाँ, बच्चे न केवल चेहरे-मोहरे में पिता से मिलते-जुलते नहीं थे, बल्कि रंग-रूप में भी उनमें कोई समानता नहीं थी।

मंजय्या ने कहा, 'अरे साहब! सिर्फ इसलिए कि बच्चे अपने पिता से मिलते-जुलते नहीं हैं, क्या हम ये सब कह सकते हैं? शायद वे अपने दादा या मामा से मिलते-जुलते हों।'

उस्मानी ने विस्तार से बताया, 'क्या साहब, आपको लगता है कि मैं बिना तथ्यों को जाने बोल रहा हूँ? यह विभाग में सबको पता है। आखिर यह अप्पाजप्पा किस तरह का बुद्धिमान व्यक्ति है जिसे इतनी जल्दी पदोन्नति मिल गई? साहब, यह सब उच्च अधिकारियों की कृपा है, पदोन्नति भी और बच्चे भी। अगर ऐसा नहीं होता तो कैसा पति अपनी पत्नी के प्रति इतना आज्ञाकारी होता?'

'आपको ये सारी बातें किसने बताईं?'

उस्मानी ने कहा, 'पहले यह आदमी कुनिगल में वनपाल था। मेरे बहनोई वहां चौकीदार थे। उन्होंने बताया कि वन संरक्षक साहब जब भी कुनिगल आते थे, अप्पाजप्पा के घर जाया करते थे।'

क्या मंजय्या को समझ नहीं आया कि इस साहब ने ये सब बातें उससे नज़दीकी बढ़ाने के लिए बताईं? लेकिन, सरोजक्षी के घर में मेरे मांस खाने की बात इस आदमी को किसने बताई होगी? क्या उसने खुद उसे बताया? लेकिन, जिस तरह

का संयम और आत्मसम्मान वह दिखाती है, उससे तो लगता नहीं कि वो किसी चौकीदार से ऐसी बातें करेगी। शायद अप्पाजप्पा ने? नहीं, वो भी इस उस्मानी के साथ इतना खुलकर बात नहीं करता। अप्पाजप्पा ने शायद विशकांत को बताया होगा और उसी के ज़रिए इस आदमी को पता चला होगा। मंजय्या ने सोचा, जाने दो, मुझे डरने की कोई वजह नहीं है। वैसे भी, उस्मानी उसका आदमी था। अगर उसने उस्मानी को अतिरिक्त पैसे कमाने में मदद नहीं की, तो उस्मानी को अपनी कम तनख्वाह में ही गुज़ारा करना पड़ेगा। इसके अलावा, मंजय्या ने सोचा, चाहे यह उस्मानी कितना भी भरोसेमंद क्यों न हो, उसके पास उस्मानी के वंश, मूल और बाकी सब बातों की जानकारी होनी चाहिए।

सरोजक्षी के बारे में ये अफवाह सुनकर मंजय्या को लगा जैसे उसके दिल से एक बड़ा बोझ उतर गया हो। ऐसा क्यों? ऐसा तो नहीं था कि उसने कभी किसी ऐसी स्त्री को न पाया हो जिसने पारिवारिक बंधन न तोड़े हों। फिर भी, अब जब उसे पता चला कि सरोजक्षी एक सहज स्त्री है, तो उसे तसल्ली मिली। उसे आसानी से और निश्चित रूप से पाया जा सकता है! पिछले छह महीनों से, अप्पाजप्पा के आने और सरोजक्षी से जान-पहचान होने के बाद से, उसके मन में जो उथल-पुथल मची हुई थी, वो अब शांत हो गई। उसे मन की शांति मिल गई। ऐसा क्यों हुआ? क्या ये उसे पाने की निश्चितता के कारण था या इस ज्ञान के कारण कि वह कोई नौसिखिया नहीं थी और उसी के स्तर की थी? बस में बैठे-बैठे भी वो इस बारे में सोचता रहा, पर उसे कोई जवाब नहीं मिला। उसकी यादें पीछे चली गईं। दो दिनों के भीतर उसने फैसला कर लिया कि क्या करना है। उसका रंग सांवला हो सकता है, लेकिन क्या वो नहीं जानता कि सुंदरता सिर्फ रंग पर निर्भर नहीं करती? उसका शरीर भले ही उतना सुडौल न हो, लेकिन फिर भी यही एकमात्र मापदंड नहीं है। उसके मन में यह दृढ़ विश्वास भर गया कि वह उन सभी महिलाओं से कहीं श्रेष्ठ है जिनके साथ उसने संबंध बनाए थे। उसे उसके प्रति उदासीन नहीं रहना चाहिए और तभी आगे बढ़ना चाहिए जब वह इसके लिए सहमत हो; और यदि नहीं, तो उसे यह विचार छोड़ देना चाहिए। किसी भी कीमत पर, किसी भी तरह, उसे उसे पाना ही था। उस्मानी ने जो कहा था वह सही था। अक्षम पति, उच्च अधिकारी प्रेमिका, इस तालुक के वन विभाग में उसके सिवा और कौन वरिष्ठ अधिकारी हो सकता है? क्या वह सहायक वन संरक्षक अप्पाजप्पा को अतिरिक्त पैसे कमाने में मदद करेगा? मंजय्या इन्हीं बातों में उलझा रहा। उसे उसके चेहरे के भाव याद आए: दस साल

का बेटा और पाँच साल की बेटी। जब मंजय्या ने आईने में अपना चेहरा देखा, तो उसने सोचा - क्या वह उसके जैसा बेटा नहीं चाहेगी? ऐसी इच्छा के बिना, क्या वह इतना नखरा दिखाएगी? मंजय्या ने आईने में अपनी छवि को कोसते हुए कहा: 'धिक्कार है मंजय्या, तुम मूर्ख हो, बिलकुल मूर्ख। छह महीने तक तुम इतने निष्क्रिय रहे। कोई कदम नहीं उठाया। तुमसे ज्यादा मूर्ख तो कोई नहीं है!'

उन्हें पता था कि अप्पाजप्पा उस सुबह हसन के लिए रवाना होंगे। वे सुबह उठे, दाढ़ी बनाई, नाश्ता किया, साइकिल से चन्नरायपट्टाना पहुँचे, फूल और फल खरीदे, फिर एक होटल में चेक-इन किया, पसीने से तर चेहरे को मैसूर चंदन के साबुन से धोया, कंघी की, वन विभाग का खाकी कोट पहना और सीधे सरोजक्षी के घर चले गए। उन्हें पता था कि बच्चे स्कूल में होंगे। सरोजक्षी ने उनका स्वागत करते हुए कहा, 'अरे, आप तो बहुत दिनों से नहीं आए!' जी हाँ, पाँच-छह दिन बीत चुके थे। वे कुर्सी पर बैठ गए और चायदानी पर फल और फूल रख दिए। सरोजक्षी ने कहा, 'यह सब औपचारिकता क्यों? जब भी आते हो, कुछ न कुछ लाना तुम्हारी आदत क्यों बन गई है? मैं बहुत नाराज़ हूँ, सच में बहुत नाराज़ हूँ।'

मंजय्या मुस्कुराया। 'नहीं, नहीं, कोई औपचारिकता नहीं। तुम्हारे लिए फूलों के अलावा मैं और क्या ला सकता हूँ? मैं क्या करूँ, जब भी मैं फूलों को देखता हूँ, तुम्हारा ही ख्याल आता है।' उसे तसल्ली हुई कि उसकी भूमिका सही थी। सरोजक्षी की निगाहें दरवाजे की ओर थीं।

'देखो, तुम्हारी साइकिल धूप में वहीं खड़ी है। आमतौर पर तुम इसे कभी बाहर नहीं छोड़ते। मुझे लगता है कि आज तुम्हारा ध्यान कहीं और है।'

जब मंजय्या यह समझने की कोशिश कर रहा था कि क्या वह यह इशारा कर रही थी कि वह उसकी बात समझ गई है या यह जता रही थी कि वह उससे ज्यादा चालाक है और वह उसे बेवकूफ नहीं बना सकता, तभी उसने कहा, 'देखो, मेरे लिए छब्बीस इंच की उस बड़ी साइकिल को उठाकर छाया में छोड़ना संभव नहीं है।'

उन्हें लगा कि सरोजक्षी आगे के कार्यक्रम की ओर इशारा कर रही हैं और उन्हें यकीन था कि वे ज़रूर सफल होंगे। वे उठे, साइकिल अंदर लाए और उसे दरवाजे के पीछे रख दिया। अपने भीतर तीव्र इच्छा लिए वे कुर्सी पर बैठ गए और पूछा, 'अप्पाजप्पा कब आने वाले हैं? शाम को या कल?'

उसने जवाब दिया: 'यह इस बात पर निर्भर करता है कि उसका काम पूरा हो गया है या नहीं, वह शाम की बस से लौट आएगा।'
उसके जवाब का अर्थ स्पष्ट नहीं था। उसने फिर पूछा, 'बच्चे शाम को ही स्कूल से लौटेंगे, है ना?' तब सरोजक्षी उसकी ओर मुड़ी, उसकी ओर निगाहें गड़ाकर बोली, 'तुम अभी-अभी आए हो। सुबह बैंगन की करी बनी है। मैं जल्दी से कुछ रोटियाँ बना लेती हूँ। कृपया प्रतीक्षा कीजिए।' वह अंदर गई, अखबार लाई, उसके सामने रखा और अंदर चली गई। मंजय्या को समझ नहीं आया कि उसका क्या मतलब था। क्या उसका मतलब यह था कि वह उसके लिए खाना बनाएगी और उससे भी बढ़कर, वह उसे कुछ और नहीं देगी? उसे गर्मी और बेचैनी महसूस हुई। तो, उस्मानी ने जो कहा वह शायद झूठ था। हालांकि, मंजय्या ने तय किया कि उस्मानी ने जो कहा वह झूठ हो या सच, और सबसे बुरा यह होगा कि यह अनुबंध रद्द हो जाए, लेकिन उसे परवाह नहीं थी। वह उठा, अपना कोट उतारा, सामने का दरवाजा बंद किया और रसोई में चला गया। सरोजक्षी रोटियों के लिए चावल का आटा गूंथ रही थी। मंजय्या उसके सामने खड़ा हुआ और पूछा, 'मैंने जो फूल लाए थे, उन्हें तुमने क्यों नहीं पहना?' वह मुड़ी और उसे घूरने लगी। वह समझ नहीं पा रहा था कि वह अपने काम में मग्न थी या सिर्फ दिखावा कर रही थी। मंजय्या ने आगे कहा, 'मैंने सोचा कि मैं खुद तुम्हारे बालों में ये फूल लगा दूं। अगर तुम नहीं चाहती हो, तो कोई बात नहीं।' सरोजक्षी चुप रही। वह क्या समझे? वह उदास हो गया। ओह, यह अंधकार! उसने चारों ओर देखा। उसे पता नहीं चला कि उसने फूल कहाँ रखे थे। सुगंध से भी उसे कोई सुराग नहीं मिला। उसे समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहे। उसका शरीर कांपने लगा। उसे लगा कि अगर वह बोलेगा, तो उसकी आवाज भी टूट जाएगी। तीस वर्षों में मंजय्या ने कभी ऐसा डर या बेचैनी महसूस नहीं की थी। चाहे कोई भी स्त्री हो, वह साहसपूर्वक उसकी ओर दौड़ता, उसे गले लगाता, उसे अपना बना लेता।
वह सोचने लगा, आखिर इस लड़की के साथ ऐसा क्यों हुआ? उसने आटे को तवे पर रखा, फैलाया और हाथ से थपथपाया, हाथ धोए, माचिस जलाई और मिट्टी के तेल का चूल्हा जलाया। तभी उसे लगा कि अंधेरा छंट गया है। लेकिन मिट्टी के तेल का धुआँ पूरे कमरे में फैल गया। उसने तवा चूल्हे पर रखा, ढक्कन से ढका, चूल्हे की तरफ मुड़ी और बैठ गई। खामोशी ने उसे शर्मिंदा कर दिया। उसने वापस जाकर कुर्सी पर बैठने का सोचा। लेकिन हार मानकर लौटने में उसे शर्म आ रही

थी। खैर, उसने सोचा, शुरुआत में तो पुरुष को ही पहल करनी पड़ती है, औरत कभी ऐसे मामलों में पहल नहीं करती। जैसे ही यह ख्याल उसके मन में आया, वह आगे बढ़ा, उसे गले लगाया, अपनी ओर खींचा, उसे इतनी मजबूती से पकड़ लिया कि वह हिल भी न सके और प्यार भरे शब्द फुसफुसाए। उसने सोचा कि कोई औरत इसका विरोध नहीं कर सकती। लेकिन किसी तरह सरोजक्षी ने अपना दाहिना हाथ छुड़ाया और उसे थप्पड़ मार दिया! ओह, कितना ज़ोरदार थप्पड़ था! वह झट से खुद को छुड़ाकर बाहर भागी और सामने का दरवाजा खोल दिया। मंजय्या घबरा गया कि कहीं वह बाहर जाकर पड़ोसियों को न बुला ले, इसलिए वह उसके पीछे-पीछे चला गया। सरोजक्षी ने मुस्कुराते हुए कहा, 'कृपया कुर्सी पर बैठ जाइए, रोटी जल जाएगी। मैं अभी अंदर लाती हूँ,' और खंभे के पास खड़ी हो गई। पसीने से तरबतर मंजय्या को राहत मिली। उसे यकीन हो गया कि वह कोई हंगामा नहीं करेगी। लेकिन अगर उसने किसी को बुला भी लिया, तो क्या होगा? क्या वह पुलिस में शिकायत करेगी? अगर उसने कहा, 'उसने खुद मुझे बुलाया था,' तो यह कुतिया क्या करेगी? उसका गाल अभी भी जल रहा था। वह अभी भी खंभे के पास खड़ी थी। मंजय्या सोचने लगा: मैंने उसे अपना हाथ क्यों खोलने दिया? अगर उसने एक ही बार में काम खत्म कर दिया होता, तो वह कुतिया की तरह आज्ञाकारी हो जाती। ऐसा सोचते हुए मंजय्या को हार की शर्मिंदगी के साथ-साथ दुख भी हुआ। जब वह सिर झुकाकर बैठा, तो वह अंदर चली गई। उसने साइकिल लेकर निकलने का सोचा। पहले कितनी बार उसने ऐसा नहीं किया था? वह जानता था कि अगर कोई पुरुष ऐसी स्थिति में तुरंत वहां से चला जाए, तो स्त्री अपनी प्रतिष्ठा खोने के डर से चुप रहती है। बाद में, अगर वह उस व्यक्ति से मिलती भी है, तो ऐसे व्यवहार करती है जैसे कुछ हुआ ही न हो। लेकिन मंजय्या को लगा जैसे उसके पैर वहीं जम गए हों और वह वहां से हिल नहीं पा रहा हो। ओह, वह चांदी की थाली में रोटी लेकर आई, थाली के कोने में बैंगन की करी थी, बराबर कटी हुई और उसकी खुशबू फैल रही थी। ऐसा लग रहा था जैसे उसने उसमें मूंगफली का पाउडर भी डाला हो और उसके बगल में गाढ़ा घी रखा था। उसने थाली को चायदानी पर रखा, अंदर गई और उस चमकदार पीतल के बर्तन में पानी लाई जो वह हमेशा उसके लिए लाती थी। उसने गिलास नीचे रखा और कहा, 'कृपया खा लीजिए, रोटी गरम ही अच्छी लगती है,' और खंभे के पास खड़ी हो गई, मानो उसे जरा भी गुस्सा न हो। मंजय्या का मन रोटी लेने से मना करने का हुआ, लेकिन उसे

एक तरह का डर लगा। वह क्यों डर रहा था? किस डर ने उसे जकड़ लिया था? उसने थाली की ओर हाथ बढ़ाया और बिना कुछ बोले खाने लगा। वह अंदर गई, दो मिनट में लौट आई, और उसके सिर उठाने से पहले ही उसने एक और रोटी परोस दी। उसने उसके पास एक कुर्सी खींची और धीरे-धीरे उसे पंखा झलने लगी। उसे उलझन, शर्म और गुस्सा महसूस हुआ क्योंकि उसे लगा कि वह उसे अपमानित करने पर तुली हुई है। वह चुपचाप उसे पंखा झलती रही जब तक कि उसने आधी रोटी नहीं खा ली। पंखा झलते हुए उसने कहा, 'मैं आपसे कुछ पूछना चाहती हूँ। लेकिन आपको गुस्सा नहीं होना चाहिए। क्या मैं पूछ सकती हूँ?'
मंजय्या ने सोचा कि अगर वह चुप रहा तो यह क्रोध प्रदर्शित करने जैसा होगा और उसने कहा, 'हाँ!'
'देखो, तुम्हें गुस्सा नहीं करना चाहिए, मेरी कसम खाओ!' वह खिलखिलाकर हंस पड़ी।
मंजय्या ने कहा, 'मुझे गुस्सा क्यों आना चाहिए? विश्वास और दोस्ती महत्वपूर्ण हैं।'
'आप औपचारिक रूप से बात कर रहे हैं। लेकिन मैं आपसे बहुत ही अंतरंग, वह भी एक निजी सवाल पूछ रहा हूँ। कृपया बताइए। अब तक, कितनी महिलाओं के साथ, मुझे नहीं पता कैसे पूछूँ, ठीक है, क्या आपको कम से कम याद है, आपके कितने संबंध रहे हैं...?'
उसने सिर उठाकर बोलने की हिम्मत जुटाई, लेकिन तुरंत ही उसे नीचे झुका लिया। आखिर ऐसा क्यों होना था? अगर कोई दूसरी औरत ये शब्द पूछती, वो भी अगर प्रेम-प्रसंग के संदर्भ में, तो वो उसकी चापलूसी करके उसे ये कहकर खुश कर सकता था, 'इस दुनिया में तुम्हारे सिवा कोई और औरत नहीं है।' अगर उसने उसे मजबूर किया होता या उस पर हावी होने की कोशिश की होती, तो वो बहादुरी से उसका मुंह बंद कर देता और कहता, 'तो क्या हुआ? मेरे पास तो हज़ार हैं।' लेकिन सरोजक्षी के सामने इतना भी दावा करने की हिम्मत क्यों नहीं जुटा पाया? उसने सवाल को मीठी आवाज़ में, एक अनुभवी वकील की तरह, दोहराया, 'देखो, ये क्रिकेट में शतक लगाने जैसा है। शायद इतने साल हो गए हैं, तुमने सौ पार कर लिए हैं। लेकिन तुम इस तालुका के शेर हो। मुझे ईमानदारी से बताओ, कुल कितने हुए हैं?' मंजय्या न बोला और न ही उसने सिर उठाया। वो दो मिनट तक चुप रही, फिर घड़े से गिलास में पानी डाला और ज़िद करते हुए बोली, 'मुझे पता है कि तुम नाम भूल गए होगे।' लेकिन सोचो, कुल संख्या तो कम से कम तुम्हें याद होगी। क्या

तुम्हें पता है? अगर तुम मालेनाडु के शिकारियों से पूछोगे, तो वे गर्व से बताएंगे कि उन्होंने इतने बाघ, लकड़बग्घे, हिरण मारे हैं और अभी कितने मारने बाकी हैं। उन शिकारियों की तरह, तुमने अब तक कितने मारे हैं और कितने और मारने का लक्ष्य है? क्या तुम मुझे बताओगे? चलो बताओ, याद रखो मैंने तुमसे कसम खाने को कहा है।

मंजय्या कुछ नहीं बोला। उसने धीरे-धीरे खाना शुरू किया, क्योंकि खाना खत्म करने के बाद उसे अपना सिर ऊपर उठाना पड़ता और उसका चेहरा देखना पड़ता। फिर से उसने अपनी मीठी आवाज़ में ज़िद की, 'कृपया, क्या तुम मुझे बताओगे?'

वह और कितना सह सकता था? और वह कौन थी जिसके लिए उसे अपना सिर झुकाना पड़ा? वह कौन कमीना था जिसने उसे इस तरह से पूछताछ करने और जांच करने का अधिकार दिया? मंजय्या गुस्से से आग बबूला था, और उसका गुस्सा जायज़ था। उसने ठान लिया, सिर उठाया, उसे तीखी निगाहों से घूरा और पूछा, 'ओह, तो तुम्हें मेरे बारे में सारी जानकारी चाहिए। अब बताओ, तुमने कितने मर्दों के साथ संबंध बनाए हैं? बताओ तुम्हारे बच्चों का बाप कौन है? मैं साफ-साफ कह दूं, मैंने कभी किसी पवित्र स्त्री के लिए ऐसी इच्छा नहीं जगाई। तुम्हारी कहानी जानने के बाद ही मेरे मन में ऐसी इच्छा जागी।'

सरोजक्षी क्रोधित हो उठीं, वह उन्हें ऐसे घूर रही थीं मानो अपनी तीखी निगाहों से उनकी आंखों को भेद देंगी और पलटकर बोलीं, 'मंजय्यानावर, तुम्हारा क्या मतलब है? मुझे नहीं पता था कि तुम इतने नीच होगे कि एक स्त्री से ऐसा प्रश्न पूछोगे।'

उसने हाथ उठाया और झट से उसके गाल पर ज़ोरदार थप्पड़ मारा। एक ज़ोरदार थप्पड़! उस धूर्त औरत के लिए एक करारा जवाब, जिसने मंजय्या को मारने की हिम्मत की थी।

बस में सफर करते हुए, उस घटना की याद आते ही उसे बेहद खुशी हुई। थप्पड़ के असर से सरोजक्षी कुर्सी से गिर पड़ी। मंजय्या डर गया। क्या वो थप्पड़ उसके कान के पास लगा था, क्या उसकी जान को खतरा था? उसने झटपट घड़े से पानी अपनी हथेली पर डाला, उसके सिर पर थपथपाया, उसके चेहरे पर पानी छिड़का, उसके हाथ से गिरा पंखा उठाया और जल्दी से उसे हवा दी। दो मिनट के भीतर ही उसे होश आ गया और वो तुरंत उठ बैठी। एक मिनट बाद उसने ऐसा नाटक किया जैसे वो रोने ही वाली हो लेकिन खुद को रोक रही हो। उसने कहा, 'तुमने मेरी बात

गलत समझी।' लेकिन उसने सोचा, क्या मंजय्या को किसी को ये सिखाने की ज़रूरत है कि 'औरत का मतलब सिर्फ दिखावा और नाटक होता है?' वो उठा, अपना कोट पहना, दरवाजे के पीछे गया, अपनी साइकिल ली और चिल्लाया, 'मैंने तुम्हें सही समझा है, वेश्या... लानत!' सरोजक्षी ने कहा, 'देखो, अगर तुम समझ सकते थे, तो अब तक समझ चुके होते।' कृपया यहीं रुकिए। मैं सब कुछ समझा दूंगा।

लेकिन वह अपनी बात पर अड़ा रहा। 'मैं तुम्हें पूरी तरह समझ चुका हूँ। मैं तुम्हारे जैसी सैकड़ों महिलाओं को जानता हूँ।' उसने अपनी साइकिल दहलीज से निकाली, तेजी से पैडल मारा और निकल गया।

तब तक बस शांतिग्राम पहुँच चुकी थी और यात्रियों के उतरने या चढ़ने के लिए रुकी हुई थी। मंजय्या ने मन ही मन सोचा, 'ये कैसी एक्सप्रेस बस है?' और अपनी घड़ी देखी। वह हसन में ही अप्पाजप्पा के बारे में कल की पूछताछ की रिपोर्ट किसी भी तरह हासिल करना चाहता था। टाइपिस्ट नांजेगौड़ा आमतौर पर ऐसा काम स्टीफन को सौंपता था। अगर मंजय्या अनुरोध करता, तो स्टीफन पूरी रिपोर्ट न सही, लेकिन कुछ जानकारी तो ज़रूर दे देता। इसी विश्वास के साथ मंजय्या ने अपनी घड़ी की सुइयों का अर्थ समझा। अगर बात सिर्फ इतनी ही होती, तो वह अप्पाजप्पा के खिलाफ किसानों की शिकायत को बढ़ावा न देता। मंजय्या ने अप्पाजप्पा को अतिरिक्त पैसे कमाने में मदद करके उसके परिवार की सहायता की थी। क्या उसे कृतज्ञ नहीं होना चाहिए, मुश्किल समय में मंजय्या को आश्रय और सुरक्षा नहीं देनी चाहिए? वह कभी कृतघ्न नहीं था, उसने कभी उन लोगों को नहीं भुलाया जिन्होंने उसकी मदद की थी। ऐसे में...

जब वह अपने विचारों में डूबा हुआ था, बस ने अपनी यात्रा फिर से शुरू की और तेज़ी से चलने लगी। उसके विचार उसी में उलझे रहे – कितना नाजुक समय था! अगर वह बरी नहीं हुआ तो उसे मौत की सज़ा या उम्रकैद हो सकती थी। आधी रात हो चुकी थी, फिर भी चन्नारायपट्टाना की सड़कों पर चलना उसके लिए खतरनाक था। क्योंकि हर कांस्टेबल उसे जानता था और कांस्टेबल रात भर गश्त करते रहते थे। ऐसे में मंजय्या ने हिम्मत जुटाई, सरोजक्षी के घर गया और आधी रात को उसके दरवाजे की दस्तक दी। पड़ोसियों को कुछ सुनाई नहीं देना चाहिए था। क्योंकि अगर वह अंदर से पूछती, 'कौन है?' और मंजय्या कहता, 'मंजय्या', तो पड़ोसी सुन सकते थे और पुलिस को सूचना दे सकते थे। पूरे तालुका को पता था

कि बिलिकेरे मंजय्या ने नारियल चोर की हत्या की है। यह खबर बैंगलोर के अखबारों में भी छपी थी, यानी पूरे कर्नाटक को इसके बारे में पता था। उसकी आंखें बहुत संवेदनशील थीं। उसके कान बहुत तेज़ थे। उसने तुरंत आवाज़ पहचान ली और दरवाजा खोल दिया। उसके पति खर्राटे ले रहे थे। हालांकि, अगर उसने उसके पति से बात भी की होती, तो भी वह अपनी पत्नी से सलाह लिए बिना कुछ नहीं करता। मंजय्या ने जल्दी से कहा, 'कृपया दरवाजा बंद कर दीजिए, लाइट बंद कर दीजिए। मुझे लगता है आपको पता है कि पुलिस मुझे ढूंढ रही है!' सरोजक्षी ने तुरंत दरवाजा बंद किया, अपने हाथ में पकड़ी टॉर्च जलाई और मंजय्या को रसोई में ले गई, उसी रसोई में जहाँ उसने उसे पकड़ा था और थप्पड़ मारा था। उसने अपनी मूर्तियों के आले में रखे दीपक में तेल डाला, उसे जलाया और फुसफुसाते हुए कहा, 'क्या मैं अप्पाजप्पा को जगा दूँ?' मंजय्या ने सीधे उससे कहा, 'देखिए, उस दिन मैं जल्दबाजी में था और आपके मन की बात जाने बिना आगे बढ़ गया था। मुझे खेद है। आपने मुझे थप्पड़ मारा, यह सही था। लेकिन मुझे आपको वापस थप्पड़ नहीं मारना चाहिए था। मैं आपसे माफी मांगने आया हूँ: कृपया बताइए, क्या आप मुझे माफ करेंगी?'

'तुम्हें मुझसे इस तरह नहीं पूछना चाहिए,' उसने कहा और मेरा हाथ धीरे से दबाया। उस स्पर्श की गर्माहट ने मुझमें विश्वास जगाया और मैंने कहा, 'मुझे यकीन है कि आपने सुना होगा कि पुलिस ने मेरे खिलाफ हत्या का मामला दर्ज किया है। अब मेरे पास सारी बातें बताने का समय नहीं है। यह महज़ एक दुर्घटना थी। उस चोर की पत्नी ने पुलिस को दस हज़ार रुपये की रिश्वत दी है। वह मुझे फांसी पर चढ़ाने पर तुली हुई है। इसके अलावा, उसे अप्पाजप्पा से भी कुछ दुश्मनी है। मैंने उसके खेतों में चंदन के पेड़ को लेकर कुछ हंगामा किया था और उसे अप्पाजप्पा को पैसे देने पर मजबूर किया था। इसलिए, अब मुझे बस इतना चाहिए: "अगर अप्पाजप्पा गवाही दे कि पुलिस फाइलों में दर्ज हत्या की तारीख को अप्पाजप्पा सरकारी काम से एक दूर के गांव में गया था और मंजय्या भी उसके साथ थी और हम पूरी रात वहीं रुके थे।" अगर वह गवाही देता है, तो अदालत उस पर ज़रूर विश्वास करेगी, क्योंकि वह एक सरकारी अधिकारी है। अगर आप अप्पाजप्पा को बता देंगी, तो वह ज़रूर मान जाएगा।'

सरोजक्षी ने मेरे चेहरे को घूरकर देखा। दीपक की मंद रोशनी में भी उनकी आँखें नई बैटरी वाली टॉर्च से भी ज़्यादा चमक रही थीं। मैंने सोचा: क्या वह मुझे परखने

के लिए इस तरह घूर रही थीं या...? उन्होंने कहा: 'देखो, अदालत में महज़ गवाह होना काफ़ी नहीं है। कार्यक्रम का रिकॉर्ड, डायरी और अन्य दस्तावेज़ होने चाहिए। निरीक्षण से पहले इन्हें दर्ज किया जाना चाहिए। बाकी के लिए उस गाँव के ग्रामीणों की गवाही ज़रूरी है।'
मैंने कहा, 'ऐसी सभी चीजें बनाना कोई बड़ी समस्या नहीं है।'
सरोजक्षी ने बस मेरे हाथ हल्के से दबा दिए। इसका क्या मतलब था? मैं समझ नहीं पाई और बोली, 'कृपया मुझे जल्दी बताइए। अगर मैं यहाँ ज़्यादा देर रही तो खतरा मोल लेना होगा।' तब उन्होंने कहा, 'देखिए, चाहे जो भी रिकॉर्ड बने, अप्पाजप्पा से अदालत में जिरह होगी और एक मिनट के अंदर ही वो पकड़ा जाएगा। जब आपका मुख्य गवाह ही झूठा साबित हो जाएगा, तो आपका क्या होगा? अगर जज ने ये लिख दिया कि सरकारी अधिकारी होने के नाते वो झूठी गवाही देने आया था और इसके परिणामस्वरूप मेरे पति की नौकरी चली गई, तो मेरे परिवार का क्या होगा?'
मैंने कहा था: 'सरोजा, मैं तुम्हारा और तुम्हारे बच्चों का ख्याल रखूंगा,' और उसका हाथ पकड़कर उसे भगवान के सामने ले गया।
उसे गुस्से से याद आया कि उस औरत ने उस पर विश्वास नहीं किया, बस उसका हाथ दबाया और कहा: 'देखो, मैं तुम्हारी सुरक्षा तो चाहती हूँ। लेकिन ऐसे संकटपूर्ण हालात में दिया गया कोई भी वादा ठीक नहीं है। किसी को भी मजबूरी में या विकट परिस्थितियों में किसी से कोई वादा नहीं करना चाहिए, चाहे वह ईमानदारी से ही क्यों न दिया गया हो। देखो, अप्पाजप्पा को इस वजह से मुसीबत में नहीं पड़ना चाहिए। इसके अलावा, वह इतना समझदार नहीं है कि गवाही दे सके जिससे तुम अपना केस जीत सको। कृपया कोई दूसरा तरीका ढूंढो।' मैं आधी रात को उसके घर पूरी तरह से उस पर भरोसा करके गया था, पकड़े जाने के खतरे की परवाह किए बिना। लेकिन मैं पूरी तरह से निराश हुआ। जब मैं वहाँ खड़ा था, तो उसने कहा, 'तुम अपना केस जीतो और आओ, मैं भगवान की कसम खाती हूँ, चलो इस मामले पर बात करते हैं। मैं भगवान से वादा करती हूँ कि तुम जीतोगे। अब तुम जाओ, रुको, मैं बिना आवाज किए दरवाजा खोलती हूँ, और देखती हूँ कि बाहर कोई है या नहीं और तुम्हें इशारा देती हूँ।' मैं गुस्से से आग बबूला था लेकिन सरोजक्षी को गालियाँ देने के अलावा कुछ नहीं कर सका। उस वेश्या ने मुझे एक पल भी रुकने का मौका दिए बिना ही भगा दिया, कितनी मीठी-मीठी बातें करने

वाली वेश्या है वो! ओह, वो कुतिया मेरे नाम पर भगवान से कसम खाने वाली है। मेरे लिए वो हर तरह की मुसीबत सहने को तैयार है। लेकिन उसके पति को कोई तकलीफ नहीं होनी चाहिए। मैं देखूंगी कि वो अपने पति की नौकरी कैसे बचाएगी। खैर, उसे मेरे सामने आकर प्रणाम करना चाहिए, तब मैं उससे कहूंगी, 'अरे कुतिया, तेरा पाखंड मुझ पर कभी नहीं चलेगा, समझ ले।' ऐसा सोचते हुए मंजय्या ने संतुष्टि से मुस्कुरा दिया।

हसन अदालत के परिसर में एक पेड़ के नीचे खड़े बोचिहाल्ली निंगप्पा चारमीनार सिगरेट पीते हुए, नाक से धुआं निकालते हुए, तगादोरू दलेगौड़ा से कह रहे थे, "देखिए, डेढ़ सौ रुपये फेंक देना कोई बड़ी बात नहीं है। लेकिन इज्जत और प्रतिष्ठा महत्वपूर्ण हैं। बताइए, अगर मेरे पिता की संतान मुझ जैसे व्यक्ति को सजा माफ करवानी पड़े, तो क्या वह जीने लायक है? क्या उसे उससे पहले मर नहीं जाना चाहिए?"

हालांकि तगादोरू दलेगौड़ा की उम्र बोचिहल्ली निंगप्पा के बराबर थी, फिर भी वे दरबार और दफ्तरों के मामलों में नए थे, इसलिए उन्होंने अभी तक बीड़ी से सिगरेट तक की तरक्की नहीं की थी। वे हाथ से बनी बीड़ी से ब्रांडेड बीड़ी तक ही पहुंचे थे। निंगप्पा ने ज़िद की और उन्हें एक चारमीनार सिगरेट देते हुए कहा, 'लो अन्नाय्या, बाद में बात करेंगे।' दलेगौड़ा ने सिगरेट जलाई, लेकिन उन्हें बीड़ी से बेहतर कुछ नहीं लगी। निंगप्पन्ना जानते थे कि दलेगौड़ा दरबार में क्यों आए थे। दलेगौड़ा को बस इतना पता था कि निंगप्पन्ना का मामला चंदन विभाग से जुड़ा है, लेकिन उन्हें इसके बारे में कोई और जानकारी नहीं थी। दलेगौड़ा में यह समझ थी कि अगर वे कई मामलों के बारे में सुनें और जानें, तो दरबार में अपने काम को संभालने का उनका ज्ञान बढ़ जाएगा। उन्होंने निंगप्पन्ना से पूछा, 'अन्नाय्या, आप तो बड़े होशियार हैं। बोचिहल्ली में आपके जैसा होशियार कोई नहीं है।' तो फिर आपके खिलाफ यह मामला कैसे दर्ज किया गया?

'अगर मैं शुरू करूँ तो यह रामायण जितनी लंबी कहानी हो जाएगी,' निंगप्पा ने कहा और अपनी घड़ी देखी। अदालती कामकाज में व्यस्त होने के बाद, उन्हें एहसास हुआ कि घड़ी के बिना बस और अदालत के समय का हिसाब रखना मुमकिन नहीं होगा। इसलिए उन्होंने तीन महीने पहले एक कलाई घड़ी खरीदी थी। अनुभव से उन्हें सुई के आधे मिनट के अंक पर रुककर घंटे और मिनट का सटीक

समय बताने का ज्ञान हो गया था। सुबह के नौ बज रहे थे। अदालत शुरू होने में डेढ़ घंटा बाकी था। निंगन्ना के वकील जयदेवगौड़ा ने अपने दफ्तर में उनसे अदालत के पास इंतजार करने को कहा और कहा कि वे आ जाएँगे। इसलिए निंगप्पा सीधे वहाँ आ गए। लेकिन उन्हें डेढ़ घंटा समय बिताना पड़ा। इसलिए उन्होंने दलेगौड़ा को अपना अनुभव, रोमांच और दुर्दशा सुनाना शुरू किया: 'सुनिए, मैं आपको सब कुछ शुरू से बताता हूँ। अगर मैं आपको टुकड़ों में बताऊँगा तो आप ठीक से समझ नहीं पाएँगे। क्या आप जानते हैं, एक दिन क्या हुआ था? एक साल हो गया है। सुबह के नौ बजे।' मैं रोटी का नाश्ता कर रहा था। हमारे गाँव का एक लड़का आया और बोला: 'वन अधिकारी आए हैं। वे पीपल के पेड़ के चबूतरे पर बैठे हैं और कुछ बुला रहे हैं।' खैर, मैंने धीरे-धीरे रोटी खाई, यह सोचते हुए कि आखिर ये अधिकारी कौन होंगे? उन्हें थोड़ा इंतज़ार करने दो। और फिर जब मैं पीपल के पेड़ के चबूतरे पर गया, तो वहाँ कोई अधिकारी नहीं था, बल्कि बिलिकेरे मंजय्या खाकी कोट पहने बैठे थे। क्या आप मंजय्या को जानते हैं?'
'क्या कोई ऐसा है जो उसे नहीं जानता? वह राजेगौदारू के साथ हमारे गांव में भी वोट मांगने आया था। वह चंदन के ठेकों का वकील है।'
'हमारे बीच कुछ मतभेद था। कोई सद्भावना या विश्वास नहीं था। मैंने उनसे पूछा, 'अरे, "इस अधिकारी" से आपका क्या मतलब है?' तब मंजय्या ने कहा, 'जी हां, अधिकारी ने खुद मेरे माध्यम से संदेश भेजा है। चंदन अधिकारी के परिवार में शादी है। उन्हें सौ खोपरा चाहिए। क्या आप उन्हें देंगे?' मैंने कहा, 'जी हां, एक हजार खोपरा की कीमत एक हजार पांच सौ रुपये है। टिपटूर में नीलामी का यही भाव है। सौ खोपरा की कीमत एक सौ पचास रुपये है। अगर आप चाहें तो मैं दो सौ खोपरा भी दे सकता हूं।' मुझे बताइए कि मैंने जो कहा उसमें क्या गलत था? मंजय्या ने कहा, "अगर ऐसा है तो वो गोदाम से ही खरीद सकता है।" तब मैंने कहा, "क्या मैंने तुम्हें ये बता दिया कि तुम सिर्फ हमारे नारियल खाने के लिए ललचा रहे हो?" तब मंजय्या चुप हो गया। मैंने वहाँ एक कुत्ते को खड़ा देखा। मैंने उस कुत्ते को गाली दी, "छी छी, तू गंदगी खाने वाला," और घर आ गया। दलप्पा, बताओ ये डांटना सही था या गलत?
दलप्पा ने जवाब दिया, 'क्या ऐसा नहीं है? ये लोग जो वोट मांगते हैं, वे किसानों का गोबर खाने आते हैं।'

‘अरे, दलप्पा, सुनो। कहानी बिल्कुल अलग है। मैं तुम्हें बस घटनाओं का क्रम बता रहा हूँ। देखो, वो घटिया आदमी कोई और ही है। इस घटना के पंद्रह दिन बाद, मैं दोपहर का खाना खाने ही वाला था कि अचानक चंदन विभाग की पूरी फौज मेरे घर आ गई। चौकीदार, गार्ड, वनपाल, ठेकेदार मंजय्या, सब खाकी वर्दी में थे। सबके पास साइकिलें थीं। मंजय्या को देखते ही मैं समझ गया कि वो मुझे धमकाने और खोपरा लेने आया है। मैंने मन ही मन ठान लिया कि मैं उसे एक भी खोपरा नहीं दूँगा और चुपचाप खड़ा रहा। संकेनहल्ली जंगल में उस्मानी नाम का एक चौकीदार है। क्या तुमने उसे देखा है?’

'हां, मैंने देखा है, वह हमारे गांव में भी आया था, हमारे सभी बागों की तलाशी लेने के लिए।'

वह दरबारी अधिकारी के लहजे में बोलने लगा। उसने पूछा, “क्या तुम पुट्टय्या के पुत्र निंगप्पा हो?” मैंने उत्तर दिया, “हाँ, मैं हूँ, क्यों?” उसने कहा, “शिकायत है कि तुमने चंदन के पेड़ की एक शाखा काटकर भूसे के ढेर में रख दी है। हमें इसकी जाँच करनी होगी।” तब मैंने उसे धमकाया। शाखा किसने काटी है? देखो दलप्पा, अगर तुम पर झूठा आरोप लगाया जाए तो गुस्सा मत होना। तब उस्मानी ने कहा, “हम इसकी जाँच करने आए हैं। चलो, हम तुम्हारे भूसे के ढेर में चलते हैं।” मुझे पूरा विश्वास था कि मेरे भूसे के ढेर में चंदन की कोई शाखा नहीं थी। मैंने कहा, “अगर आप आना चाहते हैं तो आइए,” हाथ धोने के लिए लाया हुआ पानी का घड़ा नीचे रखा, बाहर गया, भूसे के ढेर वाले शेड की चाबी ली और उसे गाँव के सामने वाली जगह पर ले गया। उस जगह के चारों ओर एक मजबूत बाड़ थी और बाड़ का छोटा फाटक बंद था। मैंने छोटा दरवाज़ा खोला और उन पाँचों को अंदर जाने दिया और दरवाज़े पर खड़ा हो गया। मैंने कहा: “जाओ और खुद खोज लो।” लेकिन मंजय्या ने कहा: “नहीं, आपके बिना हम अंदर नहीं जा सकते। इस गाँव के पटेल को भी महाजर में मौजूद होना चाहिए।” उसने एक लड़के को भेजा और हमारे गाँव के पटेल चिक्कय्या को वहाँ आने को कहा। वे सभी लोग उस खेत में गए जहाँ भूसे के ढेर लगे थे। वे झुके और दो भूसे के ढेरों के नीचे, आगे-पीछे सब जगह खोजबीन की। फिर उन्होंने शिकायत को एक बार फिर पढ़ा, बड़े ढेर के बीच में हाथ डाला और लगभग आठ हाथ लंबी और एक व्यक्ति की जांघ जितनी मोटी एक शाखा निकाली। मंजय्या ने कहा: “देखो पटेल चिक्कय्या, इसे सूंघकर बताओ कि यह कौन सी लकड़ी है।” चिक्कय्या चुपचाप खड़ा रहा। मंजय्या ने फिर

ज़ोर देकर कहा: "पटेल सरकारी अधिकारी होते हैं। उन्हें अपना कर्तव्य निभाना चाहिए!" जैसे कि वह इन्हीं शब्दों का इंतज़ार कर रहा था, हमारे ही गाँव का यह पटेल, जो हमारी ही जाति का है और हमारा रिश्तेदार भी है, वह नीचे झुका, सूंघा और चुपचाप सिर हिलाया, ठीक वैसे ही जैसे बसवन्ना, प्रशिक्षित बैल, पूछे जाने पर सिर हिलाता है। मंजय्या ने मुझसे पूछा, "देखो, निंगप्पा, तुम भी इसे सूंघो।" मंजय्या ने खुद रिपोर्ट लिखी और उस पटेल का अंगूठे का निशान लिया। इस नीच आदमी ने अंगूठे का निशान लगाने से मना नहीं किया, न ही कहा, "रुको, हम फैसला करते हैं," जबकि वह उसी गाँव और उसी जाति का था। वहाँ प्रभुस्वामी नाम का एक और अधिकारी था। उसने कहा, "चलो, तुम्हारे बाग में चलते हैं।" हम सब चले गए। मैं उनके पीछे-पीछे गया। मुझे लगा कि वे मुझसे सौ नारियल मांगेंगे। मैंने सौ नहीं, बल्कि दो सौ नारियल देने का फैसला किया और खुद को इस शैतान से मुक्त कर लिया। प्रभुस्वामी ने शिकायत एक बार फिर पढ़ी और पूछा, "ठीक है, चलो हमें अपने बाग में घुमाओ।" मैं आगे-आगे चला और बाग का मुख्य द्वार खोला। जैसे ही मैं अंदर आया, प्रभुस्वामी ने फिर से अपने हाथ में शिकायत याचिका देखी और कहा: "पूर्व की ओर, मतलब इस तरफ," और जैसे सर्वेक्षक नक्शे देखकर रास्ता खोजते हैं, वैसे ही वह अपनी सेना के साथ आगे बढ़ गया। पहाड़ी के पास बाड़ से चौबीस क्यूबिट की दूरी पर एक बड़ा चंदन का पेड़ था, और पेड़ की एक शाखा कटी हुई थी। कोई भी बता सकता था कि भूसे के ढेर में मिली चंदन की शाखा इसी पेड़ से काटी गई थी। उसने पटेल से पूछा: "पटेल, इस शाखा को ध्यान से देखिए – इसकी परिधि, चौड़ाई और इसका रंग। प्रमाणित कीजिए कि यह शाखा इसी पेड़ की है या नहीं।" उसने कहा और तेज़ी से रिपोर्ट लिखने लगा। इस मूर्ख ने अपना अंगूठा दबाया। वे सब अपनी साइकिलों पर सवार होकर चले गए। निंगप्पा ने अपने हाथ में पकड़ी सिगरेट को गहरी साँस लेकर ऐसे खींचा जैसे वह उसके फेफड़ों के भीतर तक चली जाए और डलेगौड़ा के चेहरे की ओर देखा।

'तो फिर यह निश्चित रूप से मंजय्या की शरारत है, इसमें कोई संदेह नहीं है,' डेलगौड़ा ने आत्मविश्वास से कहा।

निंगप्पा ने आगे कहा, "उसी सुबह मैंने अपने बहनोई, आप जानते हैं, बोगचिकरे के येनगाटेगौड़ा को बिलिकेरे भेजा। मैंने उनके साथ संदेश भेजा: "सुनिए, मैं आपको एक हजार रुपये देने को तैयार हूँ। कृपया मेरे खिलाफ मुकदमा दर्ज न करें। यह मेरी बहुत बड़ी गलती थी। मैंने आपको नारियल देने से इनकार कर दिया।" "क्या

आप जानते हैं कि उस मंजय्या ने येनगाटेगौड़ा से क्या कहा? उसे बताइए, यह निंगप्पा का कुत्ता है जो गंदगी खाता है। मैं इस मामले को रोक नहीं सकता।" मैं भी चुप रहा, यह सोचकर कि जो होना है, सो होगा। तहसीलदार की अदालत में मामला दर्ज हो गया। समन आता, मैं चन्नरायपट्टाना के लिए निकल जाता, वहाँ एक कुत्ते की तरह इंतजार करता, शाम तक आवाज आती "मामला स्थगित" – आज तहसीलदार जीप से चले गए हैं, अगले दिन व्यस्त हैं। एक और दिन, दोपहर में सुनवाई होनी थी, लेकिन वह मांसाहारी दावत में चला गया। आखिरकार, मुझे बहस के लिए लंबे समय तक इंतजार कराने के बाद, पूछताछ शुरू हुई। अरे, कैसी पूछताछ थी! वह कमीना तहसीलदार एक किसान का बेटा था, येलेकेरे संजीवगौड़ा का दामाद। उसने मुझ पर रौब जमाते हुए कहा, "अगर ऐसा है, तो बाड़ के अंदर पेड़ की शाखा तुम्हारे गांव के भूसे के ढेर में कैसे गई? अगर तुम्हारी बात सच है, तो अदालत में साबित करो, अगर नहीं, तो जुर्माना माफ कर दो," और उसने जुर्माने के तौर पर एक सौ पचास रुपये तय कर दिए। देखो भाई, ये कैसा न्याय है!

'अरे, मैं तहसीलदार को जानता हूँ। वह एक ही बार में एक बकरी को निगल जाता है।'

निंगन्ना ने शेखी बघारते हुए कहा, 'पुरुष के रूप में जन्म लेने के बाद, क्या मैं इसे यहीं छोड़ सकता था? मैंने हसन की अदालत में अपील दायर की और जयदेवगौड़ा को वकील नियुक्त किया।'

'तुम्हें वेंकटरामय्या को ठीक कर देना चाहिए था। विशेषज्ञ, वास्तव में कहा जाता है कि वह एक विशेषज्ञ हैं।'

अब दलेगौड़ा को उस सिगरेट का स्वाद अच्छा लगने लगा। निंगप्पा ने अपनी कहानी जारी रखते हुए कहा, "देखो, यह वेंकटरामय्या का जूनियर है। जूनियर का मतलब शिष्य होता है। वेंकटरामय्या ने उससे कहा था, 'तुम केस संभालो, मैं सुनवाई वाले दिन आऊंगा।' हमारे गांव में दो पक्ष हैं। एक पटेला का और दूसरा मेरा। क्या पटेला ने मेरे खिलाफ रिपोर्ट पर अंगूठे का निशान लगाया था? खूब लड़ाई हुई। पटेला का एक दांत टूट गया। यह पुलिस केस है, लेकिन उस दिन मैं गांव में था ही नहीं।"

अब दलेगौड़ा ने बातचीत को मुख्य विवाद की ओर मोड़ते हुए पूछा: 'अच्छा, क्या यह वही मामला है जिसमें आपने अप्पाजप्पा के खिलाफ शिकायत लिखी थी? आप

हमारे गांव आए थे और हमसे हस्ताक्षर लिए थे जिसमें लिखा था कि चंदन विभाग के रेंजर अप्पाजप्पा हमसे रिश्वत मांगते हैं।'

'तुम और क्या सोचते थे? क्या तुम्हें लगता था कि मंजय्या एक कृतघ्न व्यक्ति था? मुझे भी ऐसा ही लगता था। लेकिन, एक महीने पहले, राजेगौड़ा मुझे ढूंढते हुए आया। उसने न तो घमंड दिखाया और न ही अभिमान। वह चबूतरे पर बने चबूतरे पर बैठ गया। मंजय्या भी उसके साथ आया था। मैं बाहर आया, मंजय्या को देखकर मैंने मुंह बनाया। राजेगौड़ा चुपचाप बैठा रहा। मैं अंदर गया, एक चटाई लाया और उसे बिछाया। दोनों उस पर बैठ गए।' फिर मंजय्या ने कहा, "देखो निंगप्पा, मुझे देखकर तुम्हारे चेहरे पर जो भाव हैं, वे स्वाभाविक हैं। मैं तुम्हें असली बात बताने आया हूँ। राजेगौड़ा को भी साथ लाया हूँ, ताकि सच्चाई जानने वाला कोई यहाँ मौजूद रहे और जहाँ भी मुझसे कोई गलती हो, वह मुझे सुधार दे। लेकिन यह मत सोचो कि मैं अकेले आने से डरता हूँ। तुम मानो या न मानो, मुझे लोगों के मेरे शब्दों पर विश्वास करने से कोई लाभ नहीं है। मेरे लिए इतना ही काफी है कि भगवान मुझ पर विश्वास करें। इसके अलावा, हम दोनों एक ही तालुका के हैं और हमें अपनी मृत्यु तक एक-दूसरे की मदद करनी चाहिए। लेकिन इन सरकारी अधिकारियों का क्या – आज कहीं और कल कहीं। समझे? बताओ निंगन्ना, क्या मेरे शब्दों में कोई गलती है?" जब मंजय्या मुझसे इस तरह सवाल कर रहे थे, तो मुझे उनकी बात का कुछ भी समझ नहीं आ रहा था। फिर उन्होंने पूछा, "अगर कोई गलती है तो बताओ, अगर नहीं तो हाँ कहो," तो मैंने हाँ कह दी। मैंने यह सोचकर सिर हिलाया कि वह सच बता देंगे। उन्होंने कहा: "लगता है आप सभी गांवों में सबको बता रहे हैं कि चंदन का मामला मेरे खिलाफ मंजय्या ने दर्ज कराया था। मुझे पता है, आप गलत नहीं हैं। यह सच है कि मैंने आपसे उच्च अधिकारी के लिए सौ खोपरे मांगे थे। इसीलिए आपको ऐसा लग रहा है। लेकिन एक बात समझ लीजिए: सरकारी अधिकारी हमेशा अपना काम दूसरों के जरिए करवाते हैं। आप जानते हैं, मैं तो आखिर एक ठेकेदार ही हूं। अगर मुझे आदेश मिले कि आपके बाग में लगा पेड़ पक गया है और अधिकारी उसे तोड़ने का आदेश दे, तो मैं पेड़ के भीतरी हिस्से का वजन करूंगा, छाल उतारूंगा, हिसाब लगाऊंगा और चंदन डिपो भेज दूंगा। यह सब मेरा कर्तव्य है। मुझे ही उनकी बात माननी पड़ती है। क्या वे मेरी बात मानते हैं? निंगन्ना, मुझे बताइए, मामला दर्ज करने का अधिकार किसके पास है? ठेकेदार के पास या अधिकारी के पास? खैर, आप हसन की

अदालत गए थे। रिकॉर्ड में किसका नाम है? ठेकेदार मंजय्या का या वन क्षेत्र अधिकारी अप्पाजप्पा का? बताइए, अगर आप अपने बाप के बेटे हैं, तो सच बताइए।" निंगन्ना ने आगे कहा और डेलगौड़ा से पूछा: 'अब तुम क्या कहोगे? सच में, मुझे तो यह ख्याल ही नहीं आया था।' मंजय्या ने ज़िद की: "अगर तुम सच नहीं बताओगे, तो मैं आगे कुछ नहीं कहूँगा," इसलिए मैंने "हाँ" कह दिया और मंजय्या बोलने लगे: "अब तुम समझ गए होगे, मुझे उम्मीद है, उसने तुम्हारे खिलाफ़ मामला इसलिए बनाया है क्योंकि तुमने उसे नारियल देने से इनकार कर दिया था। मेरा अपना नारियल का बाग़ है, अपना घर है। साल में दो बार मैं टिपटूर गोदाम को नारियल बेचता हूँ। अगर ऐसा है, तो क्या मुझे तुमसे सौ नारियल माँगने आना चाहिए? क्या तुम जानते हो कि मैं आज क्यों आया हूँ? तुम चन्नरायपट्टाना के शनिवार के बाज़ार में तालुका के लोगों को इकट्ठा करते हो। चलो हम दोनों लड़ते हैं। अगर तुम ताकतवर हो तो तुम मुझे हरा दोगे, अगर नहीं तो तुम पिट जाओगे। लेकिन मैं तुम्हें एक बात का भरोसा दिलाता हूँ। यह बिलिकेरे मंजय्या उन बेकार नारियलों के लालच में दूसरों की पत्नियों की रिश्वत लेने वाला आदमी नहीं है। मैं देने वाला आदमी हूँ, लेने वाला नहीं। मैं लोगों को परेशान करके कभी दुष्ट नहीं कहलाऊँगा। मेरा अपना तालुका। मुझे पता है, निंगन्ना, तुमने मेरे बारे में कितने लोगों से शिकायत की है। लेकिन क्या तुम जानते हो कि वे लोग क्या कहते हैं? 'अरे मंजय्या साहब, आपने अदालत में कितने लोगों के केस जीते हैं। लेकिन आपने बोचिहल्ली निंगप्पा के साथ ऐसा क्यों किया? आपने किसी तरह उसे केस जितवा दिया।' वो कमीना अप्पाजप्पा तबादला करवाकर यहाँ से चला जाता। तुम तो यहीं के रहने वाले हो। तुम बदनामी क्यों कमा रहे हो?' इस पर तुम क्या कहते हो, निंगन्ना? मैं बदनामी नहीं चाहता। मैं यहीं का रहने वाला हूँ। तुम समझते हो, हम भाई जैसे हैं। अगर मैं अधिकारी के खिलाफ जाता हूँ, तो मेरा अनुबंध रद्द हो जाता है। किसे परवाह है? मैंने तय किया है कि अगर अनुबंध रद्द हुआ, तो मेरे बाल के एक लट्ठे के नुकसान के बराबर है और मैं तुम्हारे यहाँ इसलिए आया हूँ ताकि राजेगौड़ा की मौजूदगी में सब कुछ तय हो जाए। मंजय्या ने ऐसा कहा, सिगरेट का पैकेट खोला, एक सिगरेट मेरे सामने रखी, दूसरी राजगौड़ा को दी और एक खुद रख ली। राजगौड़ा ने माचिस जलाकर सिगरेटों को जलाया। मंजय्या सिगरेट होठों पर रखे अपनी साइकिल पर सवार होकर चला गया। राजगौड़ा और मैं आमने-सामने रह गए। उसने कहा: "निंगप्पन्ना, एक बात समझ लो। मंजय्या एक सीधा-

सादा आदमी है। वह हमेशा न्याय के लिए लड़ता है। तुम्हारे मामले में जीत दिलाना उसके लिए मुश्किल नहीं है। लेकिन मंजय्या को उस अधिकारी की दुश्मनी मोल लेनी होगी। और इससे, मेरे साथी अप्पाजप्पा, उसके अनुबंध पर आपत्ति होगी।" मैंने राजगौड़ा को आश्वासन दिया कि मैं हमारे सभी किसानों को मंजय्या के पक्ष में कर दूंगा और कहा कि वह अधिकारी हमसे ज्यादा ताकतवर नहीं है।

'देखो दलेगौड़ा, राजेगौड़ा का दिमाग बहुत तेज है। उसने कुछ देर सोचा और बोला: 'न्यायाधीश अधिकारी द्वारा तैयार किए गए रिकॉर्ड के अनुसार फैसला सुनाते हैं। न्यायिक सुनवाई के दिन मंजय्या को भी गवाही देनी चाहिए। उनके साथ वनपाल प्रभुस्वामी, गार्ड विशकांतय्या और चौकीदार उस्मानी भी गवाह के रूप में पेश हों। अगर ये लोग अपने बयानों को तोड़-मरोड़ कर पेश करेंगे तो मामला बिगड़ जाएगा। मंजय्या की चिंता मत करो, वह उस अनुबंध को टूटी चप्पल की तरह आसानी से उतार फेंकेगा। लेकिन प्रभुस्वामी, विशकांतय्या और उस्मानी पूरी तरह से अपने वेतन पर निर्भर हैं। जब तक अप्पाजप्पा अधिकारी रहेंगे, हम उन्हें अपने पक्ष में नहीं कर सकते। क्या आप मेरी बात समझ रहे हैं? वह अप्पाजप्पा एक जहरीला सांप है। इसलिए, आप अपनी तरफ से पचास लोगों को इकट्ठा करें और चंदन विभाग के वरिष्ठ अधिकारी, यानी संरक्षक को एक याचिका सौंपें, जिसमें यह लिखा हो कि यह अप्पाजप्पा भारी रिश्वत मांगता है और जो भी रिश्वत देने से इनकार करता है, वह उनके खिलाफ झूठे मामले दर्ज करता है और रिकॉर्ड बनाता है।' मंजय्या आपको याचिका लिखने का तरीका बताएगा। इसी तरह, आपको काल्केरे, श्रावणबेलगोला, नुग्गेहल्ली और बागुरू में अपने लोगों की ओर से भी याचिका भेजनी चाहिए। वर्तमान संरक्षक बहुत सख्त और उग्र स्वभाव का है। वह निश्चित रूप से इस व्यक्ति को निलंबित या बर्खास्त करवा देगा। अगर यह व्यक्ति पद छोड़ देता है और कोई दूसरा आता है और मामले की धार को दो पायदान नीचे कर देता है, तो छत गिर जाएगी।" इस तरह उसने राज़ खोल दिया। क्या अब आपको समझ आया कि असली बदमाश कौन था?

कहानी में आए इस अचानक मोड़ से दलेगौड़ा अचंभित रह गए और उन्होंने अपना हाथ मुंह पर रख लिया। निंगप्पा ने कहा: 'याचिका पहले ही भेजी जा चुकी है। कल शाम विभागीय जांच भी पूरी हो गई। हम सभी ने चन्नरायपट्टाना ट्रैवलर्स बंगलो में अपने बयान दे दिए हैं। चार-पांच दिनों के भीतर उस अप्पाजप्पा के निलंबन आदेश जारी कर दिए जाएंगे। नया अधिकारी कार्यभार संभालेगा। तब तक हमें इंतजार

करना होगा। हमारे वकील आज की सुनवाई स्थगित करने का अनुरोध करेंगे। मंजय्या ने भी कहा था कि वह अब आएंगे। लगभग समय हो गया है।' ऐसा कहते हुए निंगप्पा ने अपनी घड़ी देखी, डायल पर दो सुइयां और अंक देखे और मन ही मन समय का हिसाब लगाने लगे।

सावित्री, कोटे नंजप्पा के मुख्य भवन के पीछे बने एक छोटे से किराए के मकान में रहती थी। यह मकान मूल रूप से उस बड़े घर के परिसर से जुड़ा हुआ था। पहले जब नंजप्पा जमींदार थे, तब उन्होंने इस छोटे मकान को रसोई के रूप में बनवाया था ताकि मुख्य घर में धुआं न आए। अब उनकी बेटियाँ शादी करके अपने-अपने घरों में बस चुकी थीं। उनके बेटे अपनी शैक्षणिक योग्यता और अवसरों के बल पर इस देश में आराम से और खुशी से रह सकते थे। लेकिन वे अमेरिका चले गए और वहीं बस गए। अब यह बुजुर्ग दंपति बड़े मकान में रहते थे। उन्होंने सावित्री को यह मकान दो कारणों से किराए पर दिया था। पहला, जब भी उन्हें किसी साथी या मदद की ज़रूरत हो, तो उनके पास कोई हो। दूसरा, सावित्री बिलिकेरे परमेश्वरय्या की पुत्री थीं। किराए की रकम दंपति के लिए मायने नहीं रखती थी। मुख्य द्वार से अंदर आने के बाद, दाहिनी ओर से इस छोटे मकान तक जाने का एक अलग रास्ता था।

सावित्री स्कूल गई हुई थी। सत्यप्पा अपने घर में लेटे हुए अपने जीवन के बारे में सोच रहे थे। जिस गहरे अंधकार में वे डूब गए थे, यह बीमारी, जीवन समाप्त करने का उनका निर्णय, मृत्यु के कगार तक जाना और वापस लौटना, और उस कगार से लौटने पर उनके अंदर उमड़ा उन्माद। जब वे इन सब बातों पर विचार कर रहे होते, तो कभी-कभी उनका आगे का रास्ता बिजली की तरह कौंध जाता। लेकिन कुछ भी स्पष्ट नहीं था। अब बीमारी को लेकर चिंतित होने की कोई ज़रूरत नहीं थी। चकत्ते सूख चुके थे। वे मार्केट स्ट्रीट स्थित डॉ. हशीम के क्लिनिक तक जा सकते थे, इंजेक्शन और गोलियां ले सकते थे और वापस आ सकते थे। तीन दिन

पहले वे सावित्री के घर आए थे। उससे पहले, पाँच दिनों तक वे डॉक्टर के क्लिनिक के ऊपर वाले कमरे में रुके थे, वह कमरा जो डॉक्टर ने ऐसे मरीजों के लिए आरक्षित रखा था। यह एक सुविधाजनक कमरा था। कॉफी, नाश्ता और दोपहर का भोजन उपलब्ध कराया जाता था और कमरे को दिन में दो बार फिनाइल से पोंछा और कीटाणुरहित किया जाता था। डॉ. हशीम टिप्पुर के डॉ. प्रकाश जितने लालची नहीं थे। सत्यप्पा की जांच करने के बाद उन्होंने कहा, "आपकी बीमारी ज्यादा गंभीर नहीं है। बारह इंजेक्शन, एक मरहम और गोलियां काफी होंगी। आपको कुल तीन सौ रुपये देने होंगे। अगर अभी आपके पास पैसे नहीं हैं, तो जो भी आपके पास है, दे दीजिए। मैं फिर भी आपका इलाज करूंगा। बीमारी का इलाज करना मेरा कर्तव्य है। आप जानते हैं कि यह बीमारी कभी न कभी हर किसी को हो जाती है। डॉक्टर होने के नाते हम यह जानते हैं। आपको पौष्टिक भोजन करना चाहिए। क्या आप अंडे खाते हैं? अगर नहीं, तो खूब फल और दूध लीजिए।" दयालु डॉक्टर ने सत्यप्पा को दिलासा देते हुए कहा। हालांकि सत्यप्पा ने कहा कि उनके पास 2500 रुपये हैं, लेकिन डॉ. हशीम ने 300 रुपये से एक आना भी ज्यादा लेने से इनकार कर दिया।

सत्यप्पा सोचने लगे कि हालांकि वह क्लिनिक काफी सुविधाजनक था, फिर भी उन्होंने सावित्री को संदेश क्यों भेजा और उसके घर क्यों आए? उन्होंने उन पांच दिनों की अपनी मानसिक स्थिति का विश्लेषण करना शुरू किया। वहां डॉक्टर थे जिन पर उन्हें पूरा भरोसा था। इलाज से सुधार दिखने लगा था। एक नौकर उनके लिए खाना, फल और दूध लाता था और उनके कपड़े व कमरा साफ करता था। किसी ने भी उनका नाम, पता, जाति या ठिकाने के बारे में नहीं पूछा। फिर भी, उन्हें जीवन असहनीय लग रहा था। उन्हें किसी ऐसे व्यक्ति की सख्त जरूरत थी जो उनकी परवाह करे, जो उनसे प्यार करे। लेकिन वह कौन हो सकता है? सत्यप्पा ने सोचा, क्या मैं अपने बेटे को संदेश भेजूं? फिर उन्हें पछतावा हुआ कि उन्माद के क्षण में ही सही, उन्होंने अपनी स्थिति का खुलकर ऐलान कर दिया था। क्या उन्हें उस बेटे से कोई भावनात्मक सहारा मिल सकता है जो अपने पिता की तुलना अपने मन में बनी पिता की आदर्श छवि से करता है? क्या ऐसा बेटा उनकी मानसिक स्थिति को समझेगा और सहानुभूति दिखाएगा? क्या वह पिता को नैतिकता के तराजू पर नहीं तौलेगा और एक मिलीग्राम के अंतर पर भी बहस नहीं करेगा? साती की याद उनके मन में घर करने लगी। वह उसी कस्बे में रहती थी।

सत्यप्पा को उसे संदेश भेजने और अपनी स्थिति बताने का मन हुआ। उसे ऐसी तीव्र इच्छा क्यों हुई? क्या उसे दया की आवश्यकता थी? सावित्री के घर में लेटे हुए सत्यप्पा ने पिछले कुछ दिनों की अपनी मानसिक स्थिति को समझने की कोशिश की। उसे लगा कि यह सहानुभूति या सांत्वना की इच्छा नहीं थी। सहानुभूति और चिंता में अंतर होता है। करुणा और अपनेपन की भावना से रहित मात्र सहानुभूति तो दया मात्र होती है। खैर, जैसे ही उसने सावित्री को बुलाया, वह दौड़कर आ गई। उसके चेहरे पर चिंता के साथ-साथ अपने भाव के प्रति स्नेह भी स्पष्ट था। हालांकि लगभग पच्चीस वर्षों से उनके बीच कोई संवाद नहीं हुआ था, लेकिन अपने पिता के अंतिम संस्कार के दौरान उनसे मिलने के बाद उनके भाव के प्रति स्नेह फिर से जागृत हो गया था। और यह स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा था। उसने पूछा: 'हे भाव, आप यहाँ क्यों रुके हैं? क्या हुआ, यह क्या बीमारी है? क्या आपको याद नहीं था, साती यहाँ रहती है? चलिए, घर चलते हैं।' डॉक्टर वहां आएंगे और आपका इलाज करेंगे,' उनके चेहरे पर कितनी सच्ची चिंता झलक रही थी!

सत्यप्पा ने भावहीन स्वर में कहा, "मुझे अपनी बीमारी के बारे में जानने के बाद अपने घर आमंत्रित कीजिए। देखिए, आपके भाव ने इस उम्र में अपना संतुलन खो दिया और एक बीमारी से ग्रसित हो गए। अब इस डॉक्टर द्वारा उनका इलाज किया जा रहा है!"

उसके चेहरे पर दिख रहा दर्द! साथ ही, एक तरह की कठोरता भी आ गई थी। यह एक कठोर निर्णय था जिसने उसे जकड़ लिया और उसे तेज़ी से अंधकार के गहरे गड्ढे में धकेल दिया – स्त्रियों का पागलपन, किसी स्त्री को छूना और उसके साथ सोना! अपने पति मंजय्या के प्रति उसके मन में जो घृणा और तिरस्कार था, वह स्वाभाविक रूप से ऐसे कृत्य करने वाले किसी भी व्यक्ति तक पहुँच जाता। अब वह घृणा उस तक भी पहुँच गई थी। जिस क्षण सत्यप्पा ने यह महसूस किया, उसे पता चल गया कि उसका ऐसा महसूस करना बिल्कुल स्वाभाविक था। उसे याद आया कि संदेश भेजने से पहले यह बात उसके मन में नहीं आई थी। अगर आई भी होती, तो क्या वह उसे बुलवा नहीं लेता? फांसी के फंदे से मुक्त होने और जीवित रहने की उस उन्मादी अवस्था में उसने अपने बेटे के सामने, सभी ग्रामीणों के सामने, भौंकते कुत्तों के शोर के बीच, अपनी बीमारी का सच चिल्लाकर बताया था। लेकिन उसके बाद वह मन ही मन सोच रहा था: क्या यह सच बोलना होगा अगर वह इसे सबके सामने प्रकट कर दे? किसे बताना है और क्यों, इस बात का विवेक

और विवेक रखे बिना, सड़क पर सार्वजनिक रूप से चिल्लाई गई कोई भी बात सत्य नहीं हो सकती। फिर भी, सत्यप्पा को लगा कि अगर वह साती को सच नहीं बताएगा तो यह सच छिपाना और झूठ बोलना होगा। साती ने उसके चेहरे की ओर ऐसे देखा मानो वह मन ही मन सोच-विचार कर रही हो और कोई निर्णय ले रही हो। सत्यप्पा समझ गया कि उसकी आवाज़ में जो कोमलता थी, वह उसने बड़ी मुश्किल से लाई थी। फिर उसने कहा, 'देखो भावा, क्योंकि हमारा संपर्क पूरी तरह टूट गया था, मुझे तुम्हारी कोई याद नहीं थी। लेकिन जब तुम अप्पा के अंतिम संस्कार में आए और मैंने तुमसे बात की, तो मुझे बहुत तसल्ली मिली कि कम से कम एक व्यक्ति तो है जिसने उनकी इज्जत, प्रतिष्ठा और गुण बचाए हैं। लेकिन, अगर तुमने भी ऐसा किया है... तो इसका मतलब...' सावित्री बोलना बंद कर दी, शायद उसे समझ नहीं आ रहा था कि आगे क्या कहे या फिर वह अपने गुस्से को एक-दो शब्दों में ही सीमित रखना चाहती थी। अचानक वह मुड़ी और चली गई। सत्यप्पा को उसकी चप्पलों की आवाज साफ सुनाई दी और वह समझ गया कि वह सीढ़ियों से नीचे उतर रही है। अब उन्हें एहसास हुआ, 'हमें अपने चरित्र की रक्षा करनी होगी, न केवल अपने लिए, बल्कि अपने से जुड़े लोगों के लिए भी। मुझे अब तक यह बात समझ नहीं आई थी कि अगर हमारे चरित्र की शक्ति खो जाती है, तो हमारे से जुड़े लोगों की शक्ति भी कम हो जाती है।' साती ने उन्हें ठुकरा दिया और चली गईं। लेकिन उन्हें ऐसा नहीं लगा कि वह उन्हें पूरी तरह से अस्वीकार कर देंगी। उनका अंतरात्मा उन्हें कह रहा था, 'भले ही उनकी बुद्धि उन्हें कह रही है कि मुझे अस्वीकार करना सही है, लेकिन उनका हृदय इसकी अनुमति नहीं देगा।' लेकिन वह दया या करुणा स्वीकार करने को तैयार नहीं थे, यहाँ तक कि साती की भी नहीं। उन्होंने ऐसी शक्ति अर्जित करने का निश्चय किया था जो सहानुभूति से भी बढ़कर हो। उनका मन भी उस स्तर की परिपक्वता तक पहुँच गया। उनकी अंतरात्मा की आवाज सही साबित हुई। दो घंटे बाद सावित्री लौटीं। 'भाव, हालाँकि तुम बीमार थे, मैं क्रोधित हो गई और चली गई। मुझे याद है जब मैं छोटी बच्ची थी तो तुम मुझे 'क्रोधित साती' कहकर बुलाते थे। इस उम्र में भी मेरा क्रोध मुझे नहीं छोड़ता। कृपया उठो, मैं तुम्हारे कपड़े लाती हूँ। चलो मेरे घर चलते हैं।' डॉक्टर को रोज़ आने दीजिए और दवाइयाँ देने दीजिए।' उसने चेहरे पर मुस्कान लाने की कोशिश की। पर उसके चेहरे से साफ पता चल रहा था कि वह बहुत रोई है, अपने आँसू पोंछे हैं और यहाँ आई है। सत्यप्पा ने कहा, 'मुझे यहीं रहने दीजिए। यह

ज़्यादा सुविधाजनक है। अगर आप कभी-कभार आकर मुझसे बात कर लें, तो इतना ही काफी है। इसके अलावा, यह एक संक्रामक बीमारी है। बीमारी के शुरुआती दौर में दूसरों को भी इसके संक्रमण का खतरा रहता है। इसलिए, पूरी तरह ठीक होने के बाद, मैं आकर चार दिन आपके साथ रहूँगा। मुझे भी आपसे सब कुछ कहने का मन कर रहा है।'

मैंने डॉक्टर से बात की और उन्हें बताया कि ऊपर वाले कमरे में जो मरीज़ है, वह मेरा जीजा है। मैं उसे घर ले जाकर उसकी देखभाल करूँगा। डॉक्टर ने कहा, "उसे यहाँ रहने की ज़रूरत नहीं है। तुम उसे घर ले जा सकते हो। उसे किसी कमरे में या हॉल के किसी कोने में रख दो। बस इतना ध्यान रखना कि उस जगह को रोज़ाना फिनाइल से धोते रहना और उसके कपड़े अलग रखना। ये पाबंदियाँ भी सिर्फ़ आठ से दस दिनों के लिए हैं। तब तक वह पूरी तरह ठीक हो जाएगा। वह पैदल यहाँ आ सकता है, इंजेक्शन लगवाकर घर जा सकता है। वह यहाँ अकेला है और ऊब रहा है। इसके अलावा, होटल का खाना भी उसे ज़्यादा फ़ायदा नहीं पहुँचाएगा।" तो चलो, उठो, घर चलते हैं। अपने कपड़े एक बैग में रख लो। मैं डॉक्टर से फिनाइल की एक बोतल माँग लेता हूँ।

सावित्री उसे घर ले आई और उसकी देखभाल करने लगी। उसने उसे पौष्टिक भोजन, फल और दूध दिया और एक अच्छी नर्स की तरह उसकी सेवा कर रही थी। लेकिन सत्यप्पा को लग रहा था कि उसने उसे पूरी तरह से माफ नहीं किया है। वह झूठ बोलने वाली नहीं थी कि उसने उसे माफ कर दिया है। हालांकि वह पिछले तीन दिनों से उसके घर में था, उसने एक भी सवाल नहीं पूछा था। उसका न पूछना और सत्यप्पा का इस बारे में बात न करना बनावटी लग रहा था और इससे दोनों को शर्मिंदगी हो रही थी। उसे लग रहा था कि जब तक वे इस गंदे लेकिन संवेदनशील मुद्दे पर खुलकर चर्चा नहीं करेंगे, तब तक उनके बीच कोई खुली या स्वाभाविक बातचीत संभव नहीं होगी। पिछली रात, भोजन के बाद, उसने इस विषय को उठाया। 'भाव, मैं जानती हूँ कि तुम बहुत दृढ़ निश्चयी हो। तुम ऐसा कैसे कर सकते हो? मुझे लगता है, यह किसी बुरी संगत की वजह से हुआ!'

सत्यप्पा को अपने मन के सारे द्वार खोलने का अवसर मिला। 'नहीं, साती, मेरा अंतरात्मा मुझे खुद को निर्दोष कहने और किसी दूसरे पर दोष मढ़कर उसे बुरी संगति बताकर टालने की अनुमति नहीं देता। जो कुछ भी हुआ है, उसके लिए मैं ही पूरी तरह जिम्मेदार हूँ। मेरा इरादा साँप को मारने का था... नहीं, नहीं... मारने

का नहीं, बल्कि शल्यक्रिया द्वारा उसके विष-कोष को निकालकर उसे एक गुणी साँप में बदलने का था। लेकिन उसी साँप ने मुझे काट लिया।'
'अच्छा, क्या हुआ भावा? क्या तुमने सामाजिक उत्थान के लिए प्रयास किया या वेश्यावृत्ति की समस्या को हल करने के लिए?'
नहीं, नहीं, ऐसा कुछ नहीं। जब मैं तुम्हारे पिता के अंतिम संस्कार में आया था, उस रात पिछवाड़े के गौशाला में, तुमने मुझे मंजय्या के घिनौने कामों के बारे में बताया था। यह सुनकर मेरे मन में उसे हर हाल में सुधारने और किसी तरह उसकी अंतरात्मा को जगाने का ख्याल आया। उस सुबह मैं उसके घर गया... सत्यप्पा ने अपने हर कदम, हर शब्द और अपने मन में आए सभी उतार-चढ़ावों का वर्णन किया। उन्होंने बताया कि कैसे जीवन में मिली सारी निराशाएँ और असफलताएँ एक साथ उमड़ आईं और उनके भीतर एक दरार पैदा हो गई। उन्होंने बताया कि कैसे वह स्वेच्छा से मंजय्या के पास गए और उनसे यह बात कही, और कैसे वह मंजय्या के बाग की उसी झोपड़ी में गिर पड़े। फिर कैसे वह तिपतुर के डॉक्टर के पास गए, खोपरा व्यापारी के गोदाम में भटकते रहे, चन्नारायपट्टाना में मंजय्या से मिले, मंजय्या ने क्या कहा, और अपने ससुर के मार्ग पर चलने के भ्रम में आत्महत्या करने का उनका निर्णय। उसने बताया कि कैसे उसने उसी पेड़ की डाल से फांसी लगाने की कोशिश की थी, फिर सावित्री से कर्ज लेने का विचार छोड़कर वह अपने गांव लौट आया, डाल पर चढ़ा, अपने गले में फंदा डालकर सब कुछ खत्म करने की कोशिश की, लेकिन अंत में अपना इरादा बदल दिया और नीचे उतर आया। उसने बताया कि कैसे वह दौड़कर घर आया, रामचंद्र को पुकारा, उस पर चिल्लाया और उससे अपने पिता को संपत्ति का अधिकार वापस देने के लिए पत्र लिखवाया। सत्यप्पा ने जब यह लंबी कहानी खत्म की, तब तक आधी रात हो चुकी थी। साती बस सिर हिला रही थी, लेकिन उसने यह नहीं कहा कि उसके काम सही थे या गलत। कहानी खत्म होने के बाद उसने बत्ती बंद कर दी और लेट गई। लेकिन उसे नींद नहीं आई। वह भी सुबह तक नहीं सोई। साती के मन में क्या चल रहा होगा? सत्यप्पा ने सोचा, उसे जो सोचना है सोचने दो। अपनी दुख भरी कहानी सुनाकर मुझे तसल्ली मिली है। और वही अकेली ऐसी इंसान थी जिस पर मैंने इतना भरोसा किया।
सावित्री शाम को जल्दी आ गई। वह सेब, अंगूर और संतरे से भरा एक थैला लेकर आई। उसने तरोताज़ा होकर फल काटे, सत्यप्पा के सामने एक बड़ी थाली रखी

और कहा, 'अब इसे खत्म करो,' और थोड़ी दूरी पर दीवार से टेक लगाकर बैठ गई। सत्यप्पा को भी लगा कि माहौल साफ हो गया है और पिछले कुछ दिनों का अस्वाभाविक और तनावपूर्ण वातावरण और उनके बीच की असहज चुप्पी गायब हो गई है। सावित्री ने आदेश दिया, 'चलो, खाना शुरू करो। अगर तुम डॉक्टर हशीम की सलाह नहीं मानोगे, तो क्या तुम्हारा ठीक होना धीमा नहीं होगा?' सेब के कुछ टुकड़े खाने के बाद उसने कहा, 'याद रखो, मैंने तुम्हें उस दिन सब कुछ बता दिया था। वह आखिरी बार था। तब मैंने उस मनहूस आदमी की याद अपने दिमाग से मिटा दी थी। लेकिन कल रात तुमने जो बताया, उसे सुनकर उसकी याद मुझे फिर से सता रही है। अगर तुम जैसे इंसान को भी उस जहर का शिकार होना पड़ सकता है, तो वह किस तरह का जहरीला सांप होगा? उसे सुधारना नामुमकिन है।' अब तक किसी ने भी उसे हटाया नहीं है – न ही उसे मारा है जब वह शिकार करने जाता था, न ही दूसरों की स्त्रियों को बहकाने जाता था – ठीक वैसे ही जैसे उसने कांची को दूसरों के बागों में चुपके से घुसकर नारियल चुराने के लिए हटाया था। यह विचार कल से मेरे मन में बैठा हुआ है। मैंने अप्पा को चबूतरे पर बैठकर हमारे गाँव के लगनियाप्पे से एक विवाद सुलझाते हुए कहते सुना था कि कोई व्यक्ति कितना भी दुष्ट क्यों न हो, हमें कभी उसकी मृत्यु की कामना नहीं करनी चाहिए। यह सबसे बड़ा पाप है। तब मैं मात्र नौ या दस वर्ष की बच्ची थी। लेकिन यह विचार मेरे मन में इतनी दृढ़ता से बैठ गया कि किसी भी परिस्थिति में मैंने कभी नहीं चाहा कि वह मर जाए या कोई उसे मार डाले। उसी दिन मैंने तुम्हें बताया था कि अप्पा के आत्महत्या करने के बाद मैं पूरी तरह बदल गई थी। और अब यह सुनकर कि तुम भी आत्महत्या करने वाले हो, मुझे पूरा यकीन है कि ऐसे पापियों के लिए मृत्युदंड ही एकमात्र उपयुक्त सजा है।

सत्यप्पा ने उसके चेहरे की ओर देखा। उनके चेहरे पर भी वही दृढ़ निश्चय झलक रहा था जो उसके चेहरे पर था। सावित्री ने उनके प्रति अपना स्नेह प्रकट किया था। इससे उन्हें प्रसन्नता और सुकून मिला। उन्होंने कहा, 'देखो साती, मंजय्या ने तुम्हारे साथ जो अन्याय किया है, मावा के साथ जो विश्वासघात किया है, दोनों ही अक्षम्य हैं। लेकिन उसने मेरे साथ जो किया है, उसकी पूरी जिम्मेदारी सिर्फ मुझ पर है।' उन्होंने सिर्फ इशारा किया। अंतरंग स्वर में उन्होंने मेरे भीतर पहले से मौजूद कामुकता को जगाया और पूरी बात को आकर्षक और सरल बनाकर मेरे मन और हृदय को छू लिया। यह ठीक वैसे ही था जैसे शराबी प्यार से दूसरों को पीने के लिए

उकसाते हैं और धूम्रपान करने वाले दोस्ती के नाम पर दूसरों को एक कश लेने के लिए प्रेरित करते हैं। लेकिन अगर मैं दृढ़ और अडिग थी, तो मैं पीड़ित क्यों होती? इसके बजाय, मानो पागलपन के वश में होकर, सूर्योदय से पहले उठकर, चौदह मील चलकर, मैं उनके सामने खड़ी हुई और बोली, 'देखो, मैं आ गई हूँ!' मंजय्या ने मुझे रस्सी से बांधकर अपने कुटिया में नहीं घसीटा। फिर भी, उन्होंने मेरे इलाज के लिए पांच सौ रुपये देने से साफ इनकार नहीं किया। उन्होंने बस इतना कहा, 'तुम यह बात क्यों छुपा रहे हो? अगर हिम्मत है तो जाओ और अपने बेटे को बता दो।' एक तरह से उनके शब्दों में कोई दोहरापन नहीं था। मुझे लगता है कि इन शब्दों ने मेरी आंखें खोल दीं!

सावित्री अपने भाव के इस 'धर्मराय-भाव' को समझ नहीं पा रही थी। लेकिन इतने तीव्र दर्द में भी अपनी गलती की पूरी ज़िम्मेदारी उठाने के उनके रवैये को देखकर उनके प्रति उनका आदर और बढ़ गया। शारीरिक सुख की तीव्र लालसा कितनी भयानक होती है, यह सावित्री के लिए कोई नई बात नहीं थी। अब जब उन्हें पता चला कि उनके भाव में यह लालसा और भी तीव्र हो गई है, तो उनका क्रोध लगभग पूरी तरह शांत हो गया। लेकिन यह बात उनके लिए असहनीय थी कि सुख की लालसा उस दुष्ट मंजय्या के कारण उत्तेजित हुई और उनका भाव उसके वश में हो गया। किसी तरह उनके मन में यह इच्छा जाग उठी कि उनका भाव महान हो, उस नीच व्यक्ति से भी महान हो और कभी भी उसके वश में न हो। उन्होंने गर्दन उठाई, सत्यप्पा के चेहरे की ओर देखा और उन्हें लगा कि यह विजय का संकेत है कि उन्होंने अपनी गलती का एहसास कर लिया है और ज़िम्मेदारी उठा ली है। उन्हें पूरा विश्वास था कि वह वश में नहीं होंगे। वह उठीं और रसोई में चली गईं।

रात के खाने के बाद, वह अपने कमरे में चले गए। दरवाजा खुला था। सावित्री ने अपना बिस्तर कमरे के बाहर बिछाया था। फिनाइल की गंध बाहर भी फैल रही थी। सत्यप्पा समझ गए कि सावित्री ने अपना बिस्तर वहाँ इसलिए बिछाया है ताकि वह नींद आने तक उनसे बातें कर सके। उसने बत्ती बंद की और कहा, 'मैंने कल से शुरू होने वाली आठ दिन की छुट्टी के लिए आवेदन किया है।'

सत्यप्पा ने विरोध करते हुए कहा, 'आप अपनी छुट्टी क्यों बर्बाद कर रहे हैं? अब मैं ठीक हो रहा हूँ। कल जब मैं डॉक्टर के पास गया था, तो उन्होंने मुझे लेटे रहने के बजाय तालाब के किनारे टहलने की सलाह दी। चार-पाँच दिनों में मेरा इलाज पूरा हो जाएगा और मैं अपने घर लौट सकता हूँ।'

सावित्री ने पूछा, 'अपने घर लौटने के बाद तुम क्या करोगे?'
'हां, वहां वापस जाकर मैं क्या करूंगा? मैं भी यही सोच रहा हूं,' सत्यप्पा ने कहा।
'डॉक्टर की अनुमति मिलते ही आपको यहाँ से क्यों जाना चाहिए? आज ही डॉक्टर से पूछ लीजिए कि क्या मैं आपके कपड़े धो सकती हूँ, आपके खाने की थाली और गिलास साफ कर सकती हूँ। मैं कुछ और दिनों तक आपकी देखभाल करूँगी और फिर अपनी छुट्टी जारी रखूँगी। देखिए, भावा, अब आपके घर लौटने के बाद रामचंद्र का क्या रवैया होगा? क्या उनकी पत्नी का आपके प्रति वही सम्मान रहेगा जो पहले था? क्या आपने सोचा है कि गाँव के लोग कैसा व्यवहार करेंगे?'
"साती, असली मुद्दा यह नहीं है कि वे मेरा आदरपूर्वक ध्यान रखते हैं या नहीं, बल्कि यह है कि क्या वे पहले मेरा आदरपूर्वक व्यवहार करते थे। लेकिन अब तो मैंने सारी ज़मीनों और वित्तीय मामलों का पूरा अधिकार अपने हाथ में ले लिया है। इसलिए आदर तो अपने आप ही मिलना चाहिए।" सत्यप्पा ज़ोर से हँसे। लेकिन उस अँधेरे में भी सावित्री उनकी आवाज़ से समझ गई कि उनकी हँसी में उदासी भी छिपी है।
कुछ देर तक कोई नहीं बोला। फिर सत्यप्पा बोलने लगे। 'देखो साती, इस शहर में आने के बाद, डॉ. हशीम ने इंजेक्शन शुरू किए और मेरी बीमारी पर काबू पा लिया, और मुझे लगा कि मैं बेहतर हो रहा हूँ। मेरे सारे विचार मेरे जीवन के उद्देश्य की ओर जाने लगे। मैं सोचने लगा, 'मुझसे कहाँ गलती हुई?' कई कारण मेरे सामने आ रहे हैं। तुम जानती हो साती, अगर हम अपने किसी करीबी से खुले मन से बात करें, तो हमारे विचार हमें खुद ही स्पष्ट हो जाते हैं। इसलिए, मैं तुम्हें सब कुछ बताता हूँ। क्या तुम जानती हो कि मैंने क्या गलती की? महात्मा गांधी ने पूरे समाज और देश में एक अलग व्यवस्था, जागरूकता और नैतिकता की भावना स्थापित करने का प्रयास किया। शायद इतने महान व्यक्ति के लिए इतने बड़े पैमाने पर कार्यक्रम चलाना संभव था। लेकिन अब, जब मैं स्थिति को देखता हूँ, तो मुझे लगता है कि इस देश की नीचता ने उन्हें भी पीछे छोड़ दिया है। मेरी गलती यह थी कि मैं उनके सभी विचारों और कार्यक्रमों को एक साथ लागू करना चाहता था और सोचता था कि मैं यह अकेले कर सकता हूँ। मैं एक तालुका में भी थोड़ा सा भी बदलाव नहीं ला सका; कोई बदलाव लाना संभव ही नहीं था। एक नई तरह की सरकार अस्तित्व में आ गई।' लोगों की नीच प्रवृत्तियों को बढ़ावा देने और चुनाव जीतने वाला नेतृत्व हावी रहा। हमारे लोगों की मानसिकता नीच है, और ये नेता इसे

बढ़ावा देते हैं और पोषित करते हैं। उनके पोषण से यह और भी व्यापक रूप से फैलती है। मैंने सोचा कि लोग ईमानदार और पवित्र हैं और नेता गलत और बेईमान हैं, इसलिए मैंने नेताओं के खिलाफ सार्वजनिक रूप से विरोध करने की कोशिश की। मैंने उन राजनीतिक नेताओं से बेहतर नेतृत्व दिखाने का प्रयास किया। क्या तुम जानती हो साती, नैतिक नेतृत्व भी अहंकार को बढ़ाता है, भ्रष्ट राजनीतिक नेतृत्व से भी अधिक। मैं इसमें पूरी तरह असफल रहा। मुझे इसका व्यावहारिक ज्ञान होना चाहिए था। कहने का तात्पर्य यह है कि हमारे लोग भी भ्रष्ट और दुष्ट हैं। लेकिन उनमें अच्छा बनने का मूल गुण सुप्त अवस्था में है, यदि वे यह जान लें कि जब तक वे अच्छे नहीं बनेंगे, तब तक वे जीवन में आगे नहीं बढ़ पाएंगे और समृद्ध नहीं होंगे। हम उन्हें अच्छाई का अर्थ, जीवन में आगे बढ़ने का अर्थ समझा सकते हैं। तब वे जागरूक हो सकते हैं, सोच सकते हैं और सही मार्ग को जान सकते हैं। कुल मिलाकर, जब तक कोई व्यक्ति उन्हें भरपूर और निरंतर प्रेम करने का गुण और शक्ति प्राप्त नहीं कर लेता, तब तक उन्हें सुधारा या उनका उद्धार नहीं किया जा सकता, यह जानते हुए कि एक हजार में से नौ सौ निन्यानवे लोगों में भ्रष्ट होने की प्रवृत्ति होती है। क्या आप मेरी बात समझ रहे हैं?' सत्यप्पा चुप हो गए।

सावित्री ने तुरंत कोई प्रतिक्रिया नहीं दी। फिर उसने कहा, 'अच्छा, भावा, मुझे राजनीति और हमारे देश की स्थिति के बारे में क्या पता? आप स्वतंत्रता आंदोलन में शामिल हुए थे, महात्मा गांधी से मिले थे और उनसे बात भी की थी। आपने इतना अध्ययन भी किया है, फिर भी मुझे लगता है कि मैं आपकी बात पूरी तरह से समझ नहीं पा रही हूँ।'

'कोई बात नहीं, छोड़ो। मैंने तुम्हें बताया था कि मैं अकेले लेटी सोच-विचार कर रही हूँ, फिर भी मुझे कुछ समझ नहीं आ रहा। देखो, मैं तुम्हें असल ज़िंदगी का एक उदाहरण देती हूँ। उम्मीद है तुम हमारे गाँव के पास बंजारा बस्ती को जानती हो। तुमने उसे बचपन में देखा होगा। मैं तुम्हें एक दिन वहाँ ले गई थी। वहाँ जो लोग तब बच्चे थे, अब जवान हो गए हैं। उनके पास न तो शिक्षा है और न ही कोई नौकरी। उनके पास ज़मीन भी नहीं है। हमारे यहाँ कोई भी बिना खेती वाली ज़मीन नहीं है। अगर कोई उद्योग या रोज़गार होता, तो वे काम करके अपनी रोज़ी-रोटी कमा लेते। लेकिन अब वे रात में आस-पास के गाँवों से नारियल चुराते हैं। वे आठ-दस के समूह में बागों में घुस जाते हैं। सभी बाग मालिक उनसे डरते हैं। मैंने इस समस्या को हल करने के लिए क्या किया? बाकी लोगों की तरह मैं भी अपने बेटे और पोते-

पोतियों के प्यार में पड़ गई और मैंने अपने बाग की रक्षा करने का फैसला किया।’ देखो, साती, अपने कार्यक्रम को लागू करने के लिए पूरे तालुका को चुनने के बजाय, अगर मैंने एक छोटा सा गाँव चुना होता, वहाँ रहकर उनके ज्ञान का विकास किया होता और सहयोग के लिए आवश्यक विश्वास और ईमानदारी का भाव पैदा किया होता और नारियल के रेशे का उद्योग शुरू किया होता, तो यह अच्छी तरह चलता। हम मारवाड़ी से भी सस्ता उत्पाद बेच सकते थे या लड़कों के लिए कोई और उद्योग शुरू कर सकते थे। लेकिन उस गाँव में एक सरकारी स्कूल शुरू हो गया है। वह स्कूल बच्चों में अच्छे गुण विकसित नहीं कर रहा है। मैं उनके साथ वहाँ रहकर उनके चरित्र निर्माण पर ध्यान केंद्रित कर सकता था। मैंने ऐसा काम भी नहीं किया। मैं बस अपने बाग की रखवाली करता रहा। क्या कामवासना ही 'मैं' का सार नहीं है? इसके अलावा और क्या होगा सिवाय उसके वश में हो जाने के?’ सत्यप्पा चुप हो गए। सावित्री अंधेरे की खामोशी में इन शब्दों पर विचार कर रही थी। वह इन शब्दों को उनके पहले कहे गए शब्दों से कहीं अधिक स्पष्ट रूप से समझ पा रही थी: आधे घंटे तक दोनों में से कोई नहीं बोला। लेकिन, वे जानते थे, दोनों में से किसी को भी नींद नहीं आ रही थी। अंत में सत्यप्पा ने कहा: ‘जानती हो, मैंने अपने बेटे रामचंद्र का ठीक से पालन-पोषण नहीं किया।’ मैं उसके प्रति इस स्नेह में फंसा हुआ था कि वह एक अनाथ बच्चा है। अब यह अंधा दुलार स्नेह को जहर में बदल रहा है। उसकी पत्नी ही उसके लिए सब कुछ है। उसने उसे अपना गुलाम बना लिया है। वह जानती है कि वह शारीरिक सुख का सेवक है। इसके अलावा, वह एक डरपोक है। उसमें रात में जंगल में जाने, चक्कर लगाने, चेतावनी देने और वापस आने का साहस नहीं है। उसकी इस कायरता के लिए कौन जिम्मेदार है? क्या यह मैं नहीं हूँ?

सत्यप्पा फिर चुप हो गए। सावित्री भी रामचंद्र के बारे में जानती थी। वह और उसकी पत्नी बुरे नहीं थे। फिर भी सद्गुण कैसे विकसित किए जा सकते हैं? इसके क्या तरीके हैं? सावित्री का मन इन्हीं विचारों में उलझा रहा क्योंकि वह कई वर्षों से शिक्षिका के रूप में काम कर रही थी। लगभग आधे घंटे तक दोनों के मन अपने-अपने विचारों में खोए रहे। फिर सत्यप्पा ने कहा, ‘देखो साति, अब मैं सोच रहा हूँ कि मुझे क्या करना चाहिए। अपने घर लौटने के बाद, मैं ज़मीनों का बंटवारा करूँगा और उसका आधा हिस्सा रामचंद्र को दे दूँगा। अगर वह स्वतंत्र रूप से मेहनत करेगा, तो उसे भोजन, वस्त्र आदि की चिंता नहीं करनी पड़ेगी। अगर

उसकी पत्नी पशुओं की देखभाल करेगी और गायों का ध्यान रखेगी, तो दूध की कमी नहीं होगी। अगर नहीं, तो कुछ भी नहीं होगा। मैं यह निर्णय उन्हें दंडित करने के इरादे से नहीं ले रहा हूँ। अगर कोई व्यक्ति अपनी मेहनत से कमाया हुआ भोजन खाता है, तो उसका तीन चौथाई स्वार्थ समाप्त हो जाता है। मैं शेष आधा हिस्सा अपने लिए रखूँगा। मैंने तुम्हें बताया था कि मेरे उपवन में एक कुटिया है।' जब मैं उस झोपड़ी में रहता था या वहाँ लेटता था, तो मंजय्या की झोपड़ी के सारे गंदे विचार और हरकतें मुझे सताती रहती थीं। मैं वहीं रहूँगा, अपना खाना खुद पकाऊँगा। मैं वहाँ सिर्फ मिट्टी के बर्तन रखूँगा ताकि चोरी का कोई खतरा न रहे। मेरे लिए इतना ही काफी है। मैं यह सुनिश्चित करूँगा कि मेरी ज़मीन से होने वाली आमदनी बचाई जाए। उस पूंजी से मैं एक छोटी सी योजना बनाऊँगा और अपना काम शुरू करूँगा जिससे एक छोटे से गाँव, एक गली या सिर्फ चार परिवारों के जीवन में बदलाव आएगा। मेरा मकसद सिर्फ उनका उत्थान करना है। लेकिन मेरा उद्देश्य यह है कि मैं खुद न गिरूँ। मैं यह सब रामचंद्र और उनकी पत्नी को समझाऊँगा। मुझे पता है, वे नहीं समझेंगे। मुझे पता है कि वे सोचते हैं कि मैंने उन्हें अधर में छोड़ दिया है। लेकिन उन्हें बताना मेरा कर्तव्य है। मैं उन्हें समझाने और मनाने में अपना समय बर्बाद नहीं करना चाहता। इसके अलावा, मैं एक अलग जगह पर रहता हूँ।

सावित्री को यह योजना असामान्य नहीं लगी। बचपन से ही उसने अपने पिता को पत्नी की मृत्यु के बाद कृषि कार्यों और बच्चों के पालन-पोषण के भार के साथ-साथ प्रतिदिन शिवालय जाते, मेहमानों को घर लाते और उन्हें भोजन कराते देखा था। उसके बड़े भाई रामकृष्ण भी लगभग इसी स्वभाव के थे। अपनी बड़ी बहन सीता के विवाह के बाद सावित्री ढाई साल तक अपने पिता के घर में रहीं। यद्यपि वह छोटी बच्ची थीं, फिर भी उनके मन में अपने पिता के लोकसेवा में व्यस्त रहने की कुछ धुंधली सी झलक थी। इसके साथ ही, उन्हें मंजय्या से विवाह के मात्र छह महीने बाद ही सत्रह वर्षों का अपना अनुभव प्राप्त था। सावित्री ने इन सब के बीच अपने पिता के विचारों को समझने का प्रयास किया। लेकिन न तो उनके पिता का उत्साह और न ही उनकी सफलता का विश्वास उनमें विकसित हुआ। परन्तु एक बात तो उन्हें स्पष्ट रूप से ज्ञात थी। उनके बड़े भाई रामकृष्ण अत्यंत मौन स्वभाव के थे। उनसे बात करना असंभव था। उन्हें एक दिन रामकृष्ण की कही हुई एक बात याद आई। 'हम जो कुछ भी बोलते हैं, उसका निन्यानवे प्रतिशत व्यर्थ,

अनावश्यक और समय की बर्बादी है।’ उसने सोचा, चाहे कितनी भी अच्छाई और उदारता हो, अगर उसे वाणी के माध्यम से व्यक्त न किया जाए और दूसरों को अपने मन की बात और अपने भीतर की उथल-पुथल को व्यक्त करने के लिए प्रोत्साहित न किया जाए, तो दिल कैसे करीब आ सकते हैं? उसे लगा कि यह भाव ठीक है और जब भी उसे बोलने का मन करे, वह मट्टिकेरे जा सकती है। इसी विचार के साथ वह सो गई।

मंजय्या के जाने के काफी देर बाद भी सरोजक्षी के गालों की झुलसा देने वाली गर्मी और जलन कम नहीं हुई। उसे ऐसा लगा जैसे ठोस लोहे को इंसानी उंगलियों के आकार में ढालकर आग में गर्म किया गया हो और उसके गाल पर दबाया गया हो। जिस क्षण वह प्रहार पड़ा और उसके गाल झुलस गए, उस क्षण उसने ऐसी क्रूरता का अनुभव किया जिसकी उसने अब तक कल्पना भी नहीं की थी। उसके साइकिल पर सवार होकर चले जाने के बाद, उसका रूप उभरने लगा, मानो पूरी गर्म तेल में डुबोने पर फूल जाती है, वैसे ही वह हर दिशा में फैलती चली गई। यद्यपि प्रेम में कलह, झगड़े और मार-पीट आम बात थी, सरोजक्षी को लगा कि इस तरह की क्रूरता केवल नीच और घृणित व्यक्तियों में ही संभव है। उसका मन उस पशुवत मंजय्या की ओर आकर्षित होने के कारण दुख और आत्म-निंदा से भर गया।

शाम को जब बच्चे घर लौटे, तो सरोजक्षी ने अपने चेहरे पर रोज़ाना से ज़्यादा टैल्कम पाउडर लगाया, ताकि उसके गालों की सूजन किसी को नज़र न आए। अगर पति पूछता, तो वह जवाब दे सकती थी, 'कुछ नहीं। मेरे गाल क्यों देख रहे हो?' और अगर वह थोड़ी नाराज़गी दिखाती, तो बस इतना ही काफी था। कहीं न कहीं शर्मिंदगी का एहसास था, हालाँकि उसने अपने पति के लिए जवाब तैयार कर रखा था। हे भगवान, ये कैसी ज़िंदगी है! उस दरिंदे के प्रति भयानक आकर्षण और इस गाय जैसे पति के प्रति भयानक घृणा, दया और तिरस्कार। उस रात सरोजक्षी

करवटें बदलती रही, नींद नहीं आई। उसका मन आत्ममंथन करने लगा: क्या उसने ही तो ये सब शुरू किया था? जब एक पुरुष और एक स्त्री के बीच ऐसी दोस्ती हो और दोनों को पता हो कि दोस्ती से बढ़कर कुछ और भी है, तो यह स्वाभाविक है कि पुरुष उस 'भावना' की चाह रखेगा। यह वाकई हैरानी की बात थी कि मंजय्या जैसे पुरुष ने पहले ही इस ओर ज़ोर क्यों नहीं दिया। जब उसने उसे पकड़ा, तो वह न केवल खुद को छुड़ा पाई बल्कि उसने उसे थप्पड़ भी मार दिया। अगर उसने उसे न मारा होता, तो वह उसे फिर से पकड़ लेता और अपनी मनमानी करता, उसे इस तरह पकड़ता कि वह खुद को छुड़ा न पाती और सब कुछ खत्म कर देती; नहीं, वह उसके अंदर की जलती हुई इच्छा को भी शांत कर देता। फिर, ऐसे चार-पाँच अनुभवों के बाद, उसकी दिलचस्पी खत्म हो जाती। तो, उसे रोकने के लिए थप्पड़ मारने के अलावा उसके पास और क्या उपाय था? उसका मन इन्हीं विचारों से खुद को दिलासा दे रहा था। खुद को छुड़ाने और उसे थप्पड़ मारने के बाद, वह खुद बोलने लगी। वह सोच रही थी कि उसे यह क्यों पूछना पड़ा कि उसने कितनी महिलाओं का शिकार किया है? लेकिन वह अपना मकसद जानती थी: वह यह स्पष्ट करना चाहती थी कि वह उसके इतिहास से भली-भांति परिचित है। फिर भी वह उसकी दोस्ती चाहती थी। उस क्षण, उसने सोचा कि वह इस तरीके से उसे जीत सकती है। लेकिन क्या वह जीती? दो दिनों के भीतर ही उसे एहसास होने लगा कि बेशक उसने उसे बेरहमी से थप्पड़ मारकर नहीं जीता। इससे उसे भयानक जलन हुई, लेकिन वह थप्पड़ से हारी नहीं थी। उसे इंतज़ार करना पड़ा। लेकिन उसे उम्मीद नहीं थी कि वह इतनी जल्दी खुद उसके घर आ जाएगा। फिर भी, उसे थोड़ी सी उम्मीद थी कि शायद वह एक दिन अचानक आ जाए और उससे पूछे, 'आपने किसी अर्थ के बारे में कुछ कहा था, वह क्या था?'

एक हफ्ते बाद, उसके पति ने उससे पूछा, 'क्या हुआ? मैंने मंजय्या को नहीं देखा? क्या वह नहीं आया?'

उसने पलटकर जवाब दिया, 'वह तुम्हारे दफ्तर में है या मेरे दफ्तर में? मुझे कैसे पता चलेगा?'

अप्पाजप्पा ऐसे चुप रहे मानो उन्होंने कोई अपराध किया हो।

सरोजक्षी लगातार सोच में डूबी रही। उसका मन मंजय्या पर क्यों अटका हुआ था? उसके मन का एक हिस्सा हमेशा यही सोचता रहता था, हालांकि वह इस विचार

को मन से मिटाने की कोशिश करती थी। जिस दिन उसने उसे अपने घर पर देखा, उसे लगा जैसे वह किसी सच्चे मर्द के करीब है। उसका मन स्मृति के अंतिम पायदान तक उतर जाता, दीपक जलाता और गहराई से सोचने लगता: क्या वह उसी दिन उसके जाल में फंस गई थी? वह पुरुष-स्त्री के रिश्तों से अनजान नहीं थी, न ही अनुभवहीन थी। वह ऐसी स्त्री नहीं थी जो सिर्फ एक ही अनुभव तक सीमित हो, जिसने अपने पति के अलावा किसी और पुरुष को छुआ तक न हो। लेकिन, तब तक वह ऐसे किसी पुरुष से नहीं मिली थी, जिसे देखते ही और उससे बात करते ही उसे यह एहसास हो जाए कि वह एक मर्द है, एक सच्चा मर्द, जो उसके मन को मोह ले। नहीं, लक्कप्पा नहीं, न ही वह सुब्बय्या। उसने मंजय्या को कॉफी और नाश्ता दिया। और उससे चार-पांच वाक्य बोलने के बाद ही उसके प्रति आकर्षण और बढ़ गया। सरोजक्षी ने खुद से सवाल किया कि क्या वह उसकी ओर इसलिए आकर्षित हो रही थी क्योंकि वह उसके पति को अतिरिक्त आय कमाने में मदद करता था और वास्तव में पूरे तालुका के वन विभाग का प्रबंधन करता था। उसका मन इस पहलू पर गहराई से विचार कर रहा था। शायद यही एक कारण था जिससे उनकी दोस्ती घनिष्ठता की ओर बढ़ रही थी। लेकिन यह मन के उसके प्रति आकर्षित होने और उस पर मोहित होने का एक बहुत ही तुच्छ कारण प्रतीत होता था। हर पल वह अपने पति की तुलना मंजय्या से करती और इस विचार से क्रोधित होती कि उसका पति मंजय्या जैसा क्यों नहीं हो सकता। वह जानती थी कि बिना किसी कारण के वह अपने पति पर क्रोधित हो जाती थी। हे भगवान, वह कैसा पति था! न बुरा, न दुष्ट, वह एक कमजोर व्यक्ति था जो किसी पर या किसी भी चीज पर शासन या प्रभुत्व नहीं कर सकता था। विवाह के शुरुआती दिनों में, जब एक महिला अपने पति को लेकर भय और चिंता महसूस करती है, तो हर बात में पत्नी से सलाह लेने की इस आज्ञाकारिता ने सरोजक्षी को कुछ हद तक संतुष्टि दी थी। लेकिन यह जल्द ही असंतोष में बदल गई। बहुत जल्द ही, उसे एहसास हुआ कि उसके पति का व्यक्तित्व न तो अच्छे झगड़े, न प्रेम और न ही क्रोध प्रदर्शन के लिए उपयुक्त था। कितनी बार उसने सोचा था कि पति को कुछ भी करना चाहिए, चाहे वह पत्नी को धोखा देना ही क्यों न हो, वह आत्मविश्वास से करता है। शारीरिक संबंध बनाते समय भी, अगर वह गुस्से का नाटक करती और लाल आँखों से कहती, 'अरे, मुझे क्यों परेशान कर रहे हो, चले जाओ,' तो वह एक साधारण नौकर की तरह विनम्रता से क्षमा मांगता और झुक जाता। ऐसे पति के लिए प्रेम कैसे पनप

सकता है जो अपनी पत्नी को परेशान करने की 'गलती' करने की हिम्मत भी नहीं करता? वहाँ तो बस दया ही संभव थी। चाहे वाणी हो, कर्म हो या लेन-देन, उसके पति में ज़रा भी संकेतशीलता नहीं थी। वह एक मूर्ख था - एक नासमझ जानवर जिसे यह नहीं पता था कि शब्दों के परे भी कुछ संकेत, कुछ अर्थ, कुछ भावनाएँ छिपी हो सकती हैं। उसने उसे साहित्य पढ़ने के लिए प्रेरित किया और उसके हाथों में कुछ किताबें थमा दीं। लेकिन वह कहता, 'मुझे यह सब समझ नहीं आएगा,' और एक शिक्षक के सामने मूर्ख छात्र की तरह भयभीत खड़ा रहता। उसकी एकमात्र खूबी यह थी कि वह हमेशा कहता था, 'देखो, मैं तुम्हारी हर बात मानता हूँ, मैं कभी तुम्हारे खिलाफ नहीं जाता।' सरोजक्षी ने उस आज्ञाकारिता को दूर करने और उसे एक सक्षम, बलवान पुरुष बनाने के लिए कितना प्रयास किया होगा! उसने कितनी गहराई से पुरुष के चरित्र और उन गुणों को समझाया होगा जिन्हें एक स्त्री सराहती है! वह केवल विनम्रतापूर्वक उसकी सारी बातें सुनता रहता था। कभी-कभी वह धैर्य खो देती और क्रोधित होकर उसे उकसाती, 'मुझे पता है तुम मुझे पीटना चाहते हो, जब तक तुम मुझे नहीं पीटोगे तब तक तुम्हें चैन नहीं आएगा। मैं वादा करती हूँ कि मैं चिल्लाऊँगी नहीं और न ही कोई हंगामा करूँगी। मुझे पीटो, चलो मुझे पीट दो,' ऐसा कहकर वह उसकी ओर पीठ करके झुक जाती। लेकिन छह फुट का वह पुरुष, वन विभाग के लिए उपयुक्त मजबूत कद-काठी वाला वह पुरुष, उसकी इस हरकत को समझ नहीं पाता और अचंभित खड़ा रहता। और फिर वह अपनी बेगुनाही साबित करने की कोशिश करता और कहता, 'सरोजा, मैंने ऐसा कब कहा?' सरोजक्षी कहती, 'नहीं, तुमने ऐसा नहीं कहा।' लेकिन मुझे पता है तुम्हारे मन में क्या चल रहा है।' लेकिन वह मूर्ख पति फिर से अपने अहिंसक स्वभाव का बचाव करेगा।

सरोजक्षी का गाल छूने पर अब भी जल रहा था, हालांकि मंजय्या ने उसे थप्पड़ मारे पांच दिन हो चुके थे। उसे लगा, शायद त्वचा की पतली परत फूलकर झड़ जाएगी और अंदर से एक नई परत उग आएगी। लेकिन उसने सोचा, मंजय्या की पिटाई किसी स्त्री को वश में करने के आत्मविश्वास का संकेत नहीं थी। यह तो सरासर क्रूरता थी। भला वह अपनी प्रेमिका को इतनी बेरहमी से कैसे पीट सकता है? क्या उसका प्यार सच्चा था? उसे याद आया कि उसने कहीं पढ़ा था कि अगर प्यार में पड़े लोग निराश होते हैं, तो वे खुद को चोट पहुंचाते हैं और खुद को सजा देते हैं, लेकिन अगर सिर्फ उनकी वासना पूरी न हो, तो वे दूसरों को चोट पहुंचाते हैं और

सजा देते हैं। क्या मंजय्या के मामले में सिर्फ वासना ही थी? किसी तरह उसका मन इस बात को मानने को तैयार नहीं था। वह अपने मन को समझाती कि वह भी मंजय्या के लिए सिर्फ यौन कुंठा के कारण तड़प नहीं रही थी। वह सिर्फ शारीरिक संबंधों और शारीरिक मिलन से तंग आ चुकी थी। जब तक यह रिश्ता चल रहा था, तब तक उसे लगता था कि यह सिर्फ शारीरिक संबंध से कहीं बढ़कर है। लेकिन वास्तव में उन सुखद दिनों में वह इतनी गहराई से आत्मनिरीक्षण कैसे कर सकती थी? जब उसकी यादें उन दिनों में खो जातीं, तो लक्कप्पा के साथ उसके संबंधों की बारीकियां उसके मन में लौट आतीं। हालांकि वह छह फुट लंबा नहीं था और न ही अप्पाजप्पा की तरह चौड़े कंधे वाला था, फिर भी वह अत्यंत आत्मविश्वासी युवक था। उसने प्रतियोगी परीक्षा पहले ही प्रयास में उत्तीर्ण कर ली थी, परिवीक्षा अवधि पूरी की और सहायक संरक्षक, एक उच्च अधिकारी के पद पर नियुक्त हो गया। क्या मैसूर में अच्छे होटलों की कमी थी? फिर भी, चूंकि लक्कप्पा अभी अविवाहित था, सरोजक्षी ने अपने पति को उसे दोपहर के भोजन पर आमंत्रित करने के लिए भेजा और जब उससे जान-पहचान हो गई, तो उसने कहा, 'अगर मेरे पति घर पर न हों तो आपको शर्म या संकोच करने की जरूरत नहीं है। आपको हर रात यहीं भोजन करना चाहिए।' जब सरोजा ने अपने पति के सामने जोर दिया, तो उन्होंने भी कहा, 'जी महोदय, जी महोदय, आपको आना ही होगा।' इस प्रकार लक्कप्पा तब भी आता था जब सरोजक्षी अकेली होती थी। वह पूछता, 'सरोजा, क्या तुम कल मेरे लिए चिकन बनाओगी?' 'अगर मैं मना कर दूं तो क्या करोगे?' 'मैं तुम्हें अपने कमरे में ले जाऊंगा और खाना बनाने का हुक्म दूंगा।' 'अरे, ऐसा? आपको मुझे हुक्म देने का अधिकार किसने दिया?' 'मुझे कोई और क्यों दे? यह अधिकार तो मुझे खुद है!' 'आप चुप रहिए साहब, यह अधिकार सिर्फ अप्पाजप्पा के पास है, आपके पास नहीं!' 'क्या सच में? लीजिए, मैं अपना अधिकार दिखाता हूं।' लक्कप्पा ने उसकी बात समझी, आस-पास देखा कि कोई है या नहीं, पास आया, उसके हाथ कसकर पकड़े और बोला, 'अब तुम मेरी बात मानोगी या नहीं?' और अपना अधिकार दिखाया। कितना आत्मविश्वास! उसके बाद, वह उसे हुक्म देता। 'चलो, सरोजा, फिल्म देखने चलते हैं।' फिर पड़ोसियों की परवाह किए बिना, वह उसकी बात मानती, उसकी मोटरसाइकिल पर पीछे बैठती और फिल्म देखने और दूसरी जगहों पर चली जाती। क्या अप्पाजप्पा ने कम से कम तब तो मुझे पीटा था? एक दिन सरोजक्षी ने लक्कप्पा से कहा, "देखो, अगर अप्पाजप्पा को पता चल गया, तो

क्या वो चुप रहेंगे? क्या वो हमें यूँ ही जाने देंगे?" लक्कप्पा ने पलटकर कहा, "कौन? अप्पाजप्पा? तुम्हारा पति? क्या तुम्हें लगता है कि उसे पता नहीं है? वो कुछ नहीं करेंगे। चिंता मत करो!" सरोज को अपने पति की पत्नी होने पर शर्म आती थी, जो अपनी पत्नी के अफेयर के बारे में जानते हुए भी चुप रहता था, और उससे भी बड़ी शर्म की बात ये थी कि वो अब भी उसकी पत्नी बनी हुई थी। और लक्कप्पा एक चतुर प्रेमी था। चाहे सरोजक्षी ने इशारों में कहा हो या खुलकर पूछा हो, वो सरोजक्षी से शादी करने या उसे अप्पाजप्पा से तलाक लेने देने को तैयार नहीं था। ये अप्पाजप्पा एक आज्ञाकारी पति था। अगर सरोजक्षी कहती कि वो उसे छोड़ देगी, तो या तो वो चुपचाप आँखें झपका लेता या फिर कुछ आँसू बहा देता। जब सरोजक्षी के गर्भ में बच्चा पलने लगा, तो लक्कप्पा उससे दूर हो गया। क्या उसे डर था कि सरोजक्षी अधिकारपूर्वक ये साबित कर देगी कि बच्चा उसी का है? या क्या उसे अपने किए पर कुछ शर्मिंदगी महसूस हुई? या क्या उसने सोचा कि वह इस बात पर अड़ी रहेगी कि वह उसी से गर्भवती हुई है और उसे उससे शादी कर लेनी चाहिए? सरोजक्षी ने सोचा, 'एक विवाहित और अपने पति के साथ रहने वाली महिला के साथ बिना किसी जोखिम के कुछ भी करना आसान था। चाहे कुछ भी हो जाए, कोई जिम्मेदारी नहीं होगी।' उसे नहीं पता था कि अप्पाजप्पा को यह पता था या जानते हुए भी वह कोई कदम उठाने के लिए बहुत कमजोर था। या शशिकांत अप्पाजप्पा का ही बच्चा हो सकता है। यह कैसे कहा जा सकता है कि उसका पिता लक्कप्पा है? सरोजक्षी ने सोचा, जब तक कोई महिला विवाह की इस सीमा या दायरे से बाहर नहीं निकलती, तब तक वह परिवार के वास्तविक स्वरूप को नहीं समझ सकती। लक्कप्पा के डर से दूर हो जाने के बाद, सरोजक्षी को यह सच्चाई समझ में आ गई कि उसके पास अप्पाजप्पा के साथ तालमेल बिठाने के अलावा जीवन में कोई विकल्प नहीं था। अप्पाजप्पा के प्रति उसका क्रोध और आक्रोश कम हो गया। यह सच था कि उसने उसके साथ तालमेल बिठा लिया, लेकिन क्या उसका मन संतुष्ट हो सका? अप्पाजप्पा कभी भी ऐसा पुरुष नहीं था जो उसके मन को भर सके। उस पर केवल दया की जा सकती थी, उसे गाली नहीं दी जा सकती थी। आखिर फिल्में, कहानियों की किताबें, रेडियो, हिट फिल्में उसे कितने दिनों तक बहला सकती थीं? शशिकांत की मुस्कान उसे कितने दिनों तक व्यस्त रख सकती थी? जन्म के बाद बच्चा एक साल तक मां के मन का हिस्सा तो हो सकता है, लेकिन क्या वह उस आंतरिक खालीपन को भर सकता है? क्या बच्चा

साथी बन सकता है? सरोजक्षी मैसूर में होने वाले व्याख्यानों में जाती, कविताएँ और गंभीर उपन्यास पढ़ती। अप्पाजप्पा को वनपाल के पद पर पदोन्नति मिली और उनका तबादला मदिकेरी, विराजपेट और नागरहोल में हो गया। वे अकेले रहते और अपना खाना खुद बनाते। सरोजक्षी मैसूर में ही रहीं, यह कहते हुए कि उन छोटे शहरों में बच्चे का उचित इलाज संभव नहीं है। अप्पाजप्पा, जिन्होंने कभी उनका विरोध नहीं किया था, इस व्यवस्था से भी सहमत हो गए। फिर भी वह सोचती, उस आदमी के प्रति दया के अलावा और क्या भावना उसके मन में उठ सकती है? अगर वह चाहती, तो कुछ पुरुषों की दोस्ती पा सकती थी और जीवन का आनंद ले सकती थी। लेकिन वह आकस्मिक दोस्ती नहीं चाहती थी। जब अप्पाजप्पा का तबादला नागरहोल से कुनिगल हो गया, तो वह मैसूर से ऊब गई, अप्पाजप्पा के प्रति उसके मन में दया उमड़ आई और उसने उनसे कहा: 'देखिए, कुनिगल में एक घर बना लीजिए। मैं भी आ जाऊंगी। वहां अस्पताल है।' ओह, उनके चेहरे पर राहत का भाव! उनके पति के चेहरे पर ऐसी कोई कठोरता नहीं थी जो पत्नी को आदेश दे सके, 'देखिए, अगर आप मेरे साथ कहीं भी आकर नहीं रहेंगी, तो मैं आपको इतनी जोर से लात मारूंगा कि आपकी हड्डियां टूट जाएंगी!'
सरोजक्षी हाथ में उपन्यास लिए बैठी थी। चन्नरायपट्टाना में उसे साहित्यिक रचनाएँ नहीं मिलती थीं। गंभीर साहित्य तो और भी दुर्लभ था। उसे अपने अनुभव से यह समझ आया था कि गंभीर साहित्य से आंतरिक खालीपन भर जाएगा, यह सोचना एक भ्रम है। उसे लगता था कि गंभीर साहित्य आंतरिक खालीपन को जलती हुई शून्यता में बदल देता है। कुनिगल आने के बाद अच्छा ही हुआ कि उसे अच्छी किताबें नहीं मिलीं! वहाँ घटिया फिल्मों के अलावा कुछ नहीं मिलता था। वह सोचती रहती थी, काश सुबह से शाम तक मन को व्यस्त रखने के लिए कोई काम या नौकरी होती, तो उस जैसी स्त्री ऐसे पति के साथ नरमी से पेश आ पाती। क्या आक्रामक स्वभाव वाली स्त्री अपने निष्क्रिय पति को मुक्त छोड़ सकती है? चाहे वह कितना भी संयम रखने की कोशिश करे, उसका मन क्रोधित हो ही जाता है। उसका क्रोध उसे और भी बेबस बना देता है। सरोजक्षी ने सोचा, अगर कोई और साथी होती, तो वह अपने पति के साथ और भी सौहार्दपूर्ण व्यवहार कर पाती और उसे खुश कर पाती। अगर उसके पास भी कोई और स्त्री साथी होती, तो क्या वह अपनी पत्नी को खुश कर पाता? हालाँकि यह विचार अजीब था, फिर भी उसके मन में कौंध गया। उसे याद आया, सुब्बय्या से जान-पहचान और दोस्ती होने के बाद

अप्पाजप्पा के प्रति उसका गुस्सा शांत हो गया था और वह उसके साथ अधिक कोमल व्यवहार करने लगी थी। यह सच था कि लक्कप्पा के करीब आने पर उसके मन में एक शांति का भाव उत्पन्न हो गया था। तो फिर, वह जुनून, जो भीतर के खालीपन को भरता है, अपराधबोध कैसे हो सकता है? यह स्वाभाविक है कि जिस पुरुष या स्त्री के भीतर वह खालीपन भरता है, उसमें आनंद, सुख और प्रसन्नता उत्पन्न होती है। जो लोग स्वयं में आंतरिक सुख और आनंद से वंचित हैं, वे दूसरों को ये सुख और प्रसन्नता कैसे प्रदान कर सकते हैं? जब संरक्षक सुब्बय्या निरीक्षण के लिए कुनिगल आए, तो वे सरोजक्षी के घर दोपहर के भोजन के लिए आए। वे एक कोडगा थे, एक कुशल निशानेबाज, एक शिकारी। वे एक शक्तिशाली वरिष्ठ अधिकारी थे जो अपने अधिकार का प्रयोग कर सकते थे। सरोजक्षी ने सोचा, एक अधिकारी को उन्हीं की तरह होना चाहिए। उन्होंने कहा था, 'सरोजा, तुम्हारा रंग, शरीर और सुंदरता वैसी नहीं है, हाँ यह सच है। लेकिन तुम्हारे सामने कूर्ग की सारी सुंदरियाँ बिना मसाले या नमक के भोजन के समान हैं।' देखो सरोजा, अगर मैं निरीक्षण के बहाने बार-बार कुनिगल जाऊँगा, तो हमारे विभाग को शक हो जाएगा। इसलिए तुम बैंगलोर आ जाओ। अगर होटल में कमरा बुक हो जाए, तो कोई दिक्कत नहीं होगी!' जब सरोजक्षी अपने पति से कहतीं, 'मैं बैंगलोर से कुछ किताबें लाना चाहती हूँ। कृपया बच्चे का ख्याल रखना!' अप्पाजप्पा कितनी खुशी और आज्ञाकारिता से मान जाते। वह जानती थीं कि वह ज़रूर मान जाएँगे। उन्हें खुद भी शक था कि शशिकांत लक्कप्पा की संतान है या अप्पाजप्पा की। वैजयंती को देखकर कौन कह सकता था कि वह कोडवा कन्या नहीं है? एक तरह से सुब्बय्या एक ऐसा पुरुष था जो एक स्त्री पर राज कर सकता था और उसे नियंत्रित कर सकता था। लेकिन सरोजक्षी छह महीने के भीतर ही उनकी सीमाओं को समझ गई थीं। हर मामले में वह सीधे और स्पष्टवादी थे। शुरुआत में ही उन्होंने अपने रिश्ते के बारे में स्पष्ट कर दिया था कि क्या उम्मीद की जा सकती है और क्या नहीं। उन्होंने इस तरह व्यवहार किया कि उनकी या उनकी गरिमा पर कोई दाग न लगे। उनके सभी कार्यों में गोपनीयता थी। वह उदारतापूर्वक उसके लिए साड़ी, गहने या अन्य कोई भी वस्तु लाते थे। उसने उनसे अपने पति की पदोन्नति के लिए नहीं कहा। सुब्बय्या के प्रयासों के बिना, अप्पाजप्पा को प्रशिक्षण के लिए इतनी जल्दी चुना नहीं जाता और न ही उन्हें कोयंबटूर भेजा जाता और न ही उन्हें पदोन्नति मिलती। लेकिन उन्होंने एक बार भी उसके सामने यह दावा नहीं किया कि

उन्होंने यह सब हासिल किया। सरोजक्षी ने सोचा: यह क्या है? क्या शासन का यही एकमात्र अर्थ है? जो लोग स्वयं को पूरी तरह समर्पित नहीं करते, वे शासन कैसे कर सकते हैं? सुब्बय्या ने स्वयं को पूरी तरह समर्पित नहीं किया; शायद स्वतंत्र लोग स्वयं को समर्पित कर सकते हैं। सरोजक्षी ने विश्लेषण किया: अधिकारी हमेशा अपनी सीमाएं बनाए रखेंगे, यहां तक कि प्रेम में भी।

सरोजक्षी उठी और आईने में अपने बाएं जबड़े के पास गाल को देखा। त्वचा की परत उतर रही थी। अंदर की लाल त्वचा पीली पड़ रही थी। उसे याद आया कि सुब्बय्या ने कभी भी इस तरह अपना क्रोध नहीं निकाला था, न ही उसे डांटा था और न ही अपशब्द कहे थे। फिर भी, वह सोच रही थी कि क्या क्रोध और मार-पीट गर्म होकर उन दिलों को पिघला सकते हैं जो अभी तक एक नहीं हुए हैं और उन्हें जोड़ सकते हैं। किसी तरह, उसे लगा कि मंजय्या एक सच्चा प्रेमी बनेगा। वह जीवन साथी बनेगा, जो सब कुछ दे सकता है और सब कुछ ले सकता है और पूर्ण सामंजस्य और एकात्मता में विलीन हो सकता है। मंजय्या एक स्वतंत्र व्यक्ति था, सरकारी कर्मचारी नहीं। उसे किसी बात का डर नहीं था। वह एक जमींदार था। उसने यह ठेका लालच या जीविका के साधन के रूप में नहीं लिया था। कहा जाता है कि उसकी पत्नी ने उसे छोड़ दिया था या उसने खुद उसे छोड़ा था? फिर भी वह एक स्वतंत्र व्यक्ति है। जब वह उसकी सेवा कर रही होती, उसे भोजन, नाश्ता या कॉफी परोस रही होती, तो उसका मन पूरी तरह से उसे समर्पित हो जाता। उसकी स्थिति बिल्कुल स्पष्ट थी। अप्पाजप्पा घर में हो भी सकते हैं और नहीं भी। अगर वे घर में होते भी, तो वह उन्हें बता सकती थी। 'कुछ किराने का सामान चाहिए, कृपया जाकर बाजार से ले आइए। जल्दी वापस मत आइएगा। आपको वह ठंडा नींबू पानी पसंद है, पता है ना। उस गुरु की फैक्ट्री में जाइए और नींबू पानी पीजिए। बच्चों को भी पसंद है, उन्हें भी साथ ले जाइए।' अगर उसने ऐसा कहा होता, तो वह आज्ञाकारी होकर दोनों बच्चों को साथ लेकर चले जाते। वह मंजय्या की संगति का आनंद ले सकती थी। लेकिन सरोजक्षी, अपने दो प्रेम प्रसंगों के बाद, ऐसे रिश्ते की चाहत नहीं रखती थी। उसे कुछ गहरा चाहिए था, उसे सच्चे साथ की जरूरत थी। वह सपना देख रही थी कि मंजय्या उसके प्रति अपने सम्मानजनक व्यवहार – फल, फूल लाने, उसकी मीठी बातों और आत्मविश्वास से भरी मुस्कान – के कारण उसकी उम्मीदों पर खरा उतरेगा। उसने सोचा, अगर वह चुपके से रसोई में आता, खुलकर अपने मन की बात कहता और कहता, 'देखो सरोजा, क्या तुम्हें

नहीं लगता कि जब मन एक हो जाते हैं तो दूरी बनाए रखना बनावटी है?' तो वह अपने पूरे दिल से खुद को उसके हवाले कर देती। लेकिन इसके बजाय, उसने ऐसा व्यवहार क्यों किया?

हालांकि, उसका दिल उसे यही तसल्ली देता रहा कि एक दिन वह ज़रूर उसके पास आएगा। कभी-कभी शक भी उठ खड़ा होता था, चाहे वो उसके दिल की आवाज़ हो या सिर्फ़ इच्छा। उसने एक हफ़्ता, दो हफ़्ते, तीन हफ़्ते इंतज़ार किया, पर वो नहीं आया। वो निराश हो गई, ये सोचकर कि शायद वो कभी आएगा ही नहीं। एक दिन उसे उसकी पत्नी को देखने की उत्सुकता हुई, जो उसी कस्बे में एक शिक्षिका थी। हालांकि उसे ये स्पष्ट नहीं था कि उसे उसकी पत्नी से क्यों मिलना चाहिए या उसे क्या जानना चाहिए, लेकिन दो दिनों के भीतर ही उसे देखने की इच्छा बेकाबू हो गई। चौकीदार उस्मानी ने कहा था: 'मंजय्या की पत्नी बहुत सुंदर और गोरी है। अरे, उसे छूने से पहले हाथ ज़रूर धोने चाहिए – अच्छी कद-काठी, तेज़ आँखें, नुकीली और सीधी नाक।' इसके अलावा सरोजक्षी ने मंजय्या के बारे में भी पूछताछ की थी। एक दिन सुबह आठ बजे, सरोजक्षी लड़कियों के माध्यमिक विद्यालय गई और बाहर के गेट के पास खड़ी हो गई। छात्राएँ और शिक्षिकाएँ एक-एक करके आने लगीं और इकट्ठा हो गईं। इसी बीच एक महिला आई। जैसे ही उसने उसे देखा, रूप, आत्मविश्वास से भरी मुद्रा और उदासी की झलक देखकर वह तुरंत समझ गई कि यह सावित्राम्मा ही हैं। सरोजक्षी ने पास खड़ी एक छोटी बच्ची को बुलाया और पूछा, "उस शिक्षिका का नाम क्या है?" बच्ची ने कहा, "सावित्राम्मा मिस।" सरोजक्षी तब तक वहीं खड़ी रही जब तक सावित्री विद्यालय के अंदर नहीं चली गई। किसी तरह सरोजक्षी को पसीना आने लगा। उसने सोचा, अगर इस मंजय्या को, जिसने इतनी सुंदर, आत्मविश्वासी पत्नी को इतने वर्षों तक छोड़ दिया है, कोई दुख नहीं है, तो क्या वह मुझे ढूंढने आएगा? इस विचार ने उसके यहाँ आने के उद्देश्य को उजागर कर दिया। वह उदास हो गई और घर लौट गई। लेकिन दो दिनों के भीतर ही उसकी उदासी दूर हो गई और सकारात्मक सोच जागृत हुई। उसने खुद को यह सोचकर सांत्वना दी: अगर केवल रंग, कद, कद-काठी और चेहरा, ये विशेषताएं एक स्त्री के व्यक्तित्व को आकार देती हैं, तो यही विशेषताएं और गुण एक पुरुष के व्यक्तित्व को भी आकार देने चाहिए। अप्पाजप्पा, जिसमें ये विशेषताएं हैं, व्यक्तित्वहीन है। यह सर्वविदित है कि मंजय्या ने सत्रह वर्ष पहले अपनी पत्नी को छोड़ दिया था। उसके लिए सावित्री का

कोई अस्तित्व ही नहीं था। इसलिए सरोजक्षी को बचाव का एक और बहाना मिल गया। कि तुलना का तो सवाल ही नहीं उठता। उसने कई बार मंजय्या को भूलने की कोशिश की। जब वह फिल्में देखने, बच्चों के साथ ज़्यादा समय बिताने, अपने कुछ जान-पहचान वालों के ज़रिए हाई स्कूल से किताबें मंगवाकर पढ़ने में अपना मन लगाती, तो उसे तसल्ली हो जाती कि वह उसे सचमुच भूल चुकी है। लेकिन अब, मंजय्या की पत्नी को देखने के बाद, वह उसे हमेशा सताने लगा। उसके मन में हमेशा यही ख्याल रहता कि सावित्री उसकी प्रतिद्वंदी है। सरोजक्षी खुद को दिलासा देती; वह प्रतिद्वंदी कैसे हो सकती है, जब उसे छोड़े हुए सत्रह साल हो गए थे और उनके बीच कोई संपर्क ही नहीं था। हे भगवान, उसे क्या पागलपन सवार था! लेकिन सावित्री की छवि उसके मन से मिटने का नाम ही नहीं ले रही थी। जब उसे एहसास हुआ कि मंजय्या से ज़्यादा सावित्री उसके मन में छाई हुई है, तो उसे शर्म महसूस हुई। फिर वह खुद को कोसती और सोचती कि वह एक साधारण स्त्री के स्तर तक गिर गई है।

एक दिन अप्पाजप्पा एक भयानक खबर लेकर आए। उन्होंने कहा, 'मंजय्या ने किसी का सिर फोड़कर उसकी हत्या कर दी है, क्योंकि वह नारियल चुराने के लिए उनके बाग में घुस गया था। पुलिस इंस्पेक्टर नारायण मूर्ति, सब-इंस्पेक्टर, दफेदार और पुलिस कांस्टेबल के साथ बिलिकेरे गए हैं, लेकिन मंजय्या पकड़ा नहीं जा सका।' यह खबर सुनकर सरोजक्षी कांप उठीं। उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि यह कंपकंपी मंजय्या को अदालत में मिलने वाली सजा से थी या उसके द्वारा किए गए क्रूर कृत्य, यानी हत्या से। उसी शाम, चौकीदार उस्मानी उनके घर के लिए लकड़ियों का गट्ठा लेकर आया। सरोजक्षी ने अपनी चिंता को काबू न कर पाते हुए उससे पूछा, 'उस्मानी, क्या तुमने खबर सुनी?' उस्मानी ने मंजय्या की दिल खोलकर तारीफ की, 'देखिए महोदया, अगर कोई सच्चा मर्द है, तो वह यही मंजय्या है। क्या वह चूड़ियाँ पहनने वाला कोई औरत है जो चुपचाप सह ले और किसी के उसके बाग में घुसकर नारियल चुराने पर चुप रहे? अरे! उसने तो चोर को पीट-पीट कर रख दिया।' उसमें मुख्य संरक्षक बनने का साहस और शौर्य है।' सरोजक्षी ने पूछा, 'पुलिस ने उसे अभी तक पकड़ा नहीं है, आगे क्या होगा?' उस्मानी ने उत्तर दिया, 'उसका दिमाग बहुत चंचल है, वह पारे जैसा है। कानून की डिग्री न होने के बावजूद वह वकील की तरह व्यवहार करता है। वह काला कोट भी पहनता है। क्या वह दिमाग बिना किसी योजना के हत्या कर देगा? शायद वह पुलिस से

छिपकर गवाह और सबूत इकट्ठा करने के लिए कहीं जा रहा हो। सब कुछ तैयार हो जाने के बाद, वह खुद पुलिस स्टेशन जाकर कह सकता है, "देखिए, मैं आ गया हूँ। अदालत जाइए, जो भी आरोपपत्र लिखना हो लिखिए।" आपको चिंता करने की ज़रूरत नहीं है, अव्वा।'

सरोजक्षी को थोड़ी शांति तो मिली, लेकिन चिंता पूरी तरह से दूर नहीं हुई थी। मन में डर था, क्योंकि अदालत में क्या होगा यह स्पष्ट नहीं था। वह यह जानने के लिए उत्सुक थी कि आगे क्या होगा और क्या होगा। लेकिन वह किससे बात करती? अप्पाजप्पा में इतनी समझ नहीं थी कि वह मंजय्या के मामले में क्या मोड़ आ सकता है, यह समझा सकें। वह किससे पूछे? वह मंजय्या की मदद कैसे करती? इस उथल-पुथल में उसे एक पल भी नींद नहीं आई और पूरी रात वह करवटें बदलती रही। अप्पाजप्पा जोर-जोर से खर्राटे ले रहे थे। आधी रात को जब दरवाजे पर दस्तक हुई, तो उसने तुरंत पूछा, 'कौन है?' 'मैं' शब्द पूरा होने से पहले ही वह सहज रूप से समझ गई कि यह किसी परिचित व्यक्ति की आवाज है। वह उठी और दरवाजा खोला। उन्होंने उससे पांच मिनट बात की और चले गए।

लेकिन एक बात उसके मन में बिल्कुल स्पष्ट थी; कि मंजय्या से अप्पाजप्पा को गवाह न बनाने के लिए कहना उसका सही फैसला था। वह जानती थी कि इस व्यक्ति में एक मिनट के लिए भी जिरह का सामना करने की बुद्धि नहीं है। उसे अपनी तीक्ष्ण बुद्धि पर पूरा भरोसा था, लेकिन वह उसे बचाने के लिए कुछ नहीं कर सकी। उसे इस बात का दुख तो था ही कि वह कुछ नहीं कर पाई, उसे बचाने का कोई उपाय नहीं था, साथ ही भविष्य में क्या होगा, इसकी चिंता भी दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही थी। एक दिन वह अप्पाजप्पा के साथ मंजय्या से मिलने हसन गई, तो जेल अधिकारियों ने कहा, 'चूंकि जांच अभी जारी है, इसलिए किसी को भी उससे मिलने की अनुमति नहीं दी जाएगी।' उसकी आंखों में आंसू भर आए।

मंजय्या रिहा हो गया और सरोजक्षी ने राहत की सांस ली। लेकिन वह उससे मिलने नहीं आया। उसने एक हफ्ता, दो हफ्ते और फिर एक महीने से भी ज़्यादा इंतज़ार किया। उसके मन में उसके सिवा कुछ और नहीं सूझ रहा था। उसका यह भरोसा कि वह ज़रूर आएगा, दिन-ब-दिन कम होता जा रहा था। वह अपने पति के घर आते ही उनसे पूछना चाहती थी कि क्या मंजय्या दफ्तर आया था। लेकिन वह ज़िद्दी थी और खुद से पूछना नहीं चाहती थी। उसे अपने पति के स्वभाव पर पूरा भरोसा

था। जहाँ तक उसे पता था, वह घर लौटते ही बता देगा कि मंजय्या दफ्तर आया था या नहीं।

एक दिन अप्पाजाप्पा दोपहर तीन बजे दफ्तर से लौटे। वे थके हुए लग रहे थे और उनका चेहरा उतरा हुआ था। वे कुर्सी पर धंस गए और सिर नहीं उठाया। सरोजक्षी समझ गईं कि उनके पति दुविधा में हैं: एक तरफ पत्नी से कुछ कहने की तीव्र इच्छा थी, वहीं दूसरी तरफ कहने का डर भी। उन्होंने बातचीत शुरू करते हुए पूछा, 'आप इतनी जल्दी घर कैसे लौट आए?'

अप्पाजप्पा की आँखों से आँसू बह रहे थे। उन्होंने कहा, "मैंने आपको बताया नहीं था। मुझे निलंबित कर दिया गया है। पूरे तालुका में शिकायतें थीं कि मैं रिश्वत लेता हूँ। चार दिन पहले, उप संरक्षक ने उन सात-आठ गाँवों का दौरा किया था जहाँ से शिकायतें आई थीं, ताकि जाँच की जा सके। उन्होंने आदेश भेजा है, "जाँच पूरी होने तक, आपको तत्काल प्रभाव से निलंबित किया जाता है। आपको अरसिकेरे रेंजर को कार्यभार सौंपना होगा।" उन्होंने आदेश अरसिकेरे रेंजर के साथ भेजे थे, जो आए और कार्यभार संभाल लिया। यह सब बताते-बताते उनकी आँखों से लगातार आँसू बह रहे थे।

सरोजक्षी को कुछ समझ नहीं आ रहा था। अप्पाजप्पा के रिश्वत लेने की शिकायतें होना कोई आश्चर्य की बात नहीं थी, क्योंकि यह एक सच्चाई थी। लेकिन न तो वह किसी से रिश्वत मांगता था और न ही मना करने पर किसी को नुकसान पहुंचाने की धमकी देता था। वास्तव में, वह ऐसी क्षमता या सामर्थ्य का व्यक्ति नहीं था। तालुका में रिश्वत का पूरा तंत्र मंजय्या द्वारा सोच-समझकर संगठित किया गया था। अचानक उसे याद आया: उसने कहा था कि वह उसे सबक सिखाएगा। उसने ऐसा उसके पति को वेतन न दिलवाकर किया था। क्या यह बदला था, क्योंकि उसने अदालत में पति से झूठी गवाही दिलवाने की उसकी विनती नहीं मानी थी और यह भी नहीं माना था कि अगर न्यायाधीश ने अपनी रिपोर्ट में लिखा, 'यह अप्पाजप्पा, सरकारी कर्मचारी होते हुए भी झूठी गवाही देता है,' और उसके पति की नौकरी चली गई, तो उसके परिवार का क्या होगा? क्या यह एक चुनौती थी कि, 'देखो, अब भी मैं यह सुनिश्चित करूंगा कि तुम्हारे पति की नौकरी चली जाए?' उसके मन का एक हिस्सा इन विचारों में उलझा हुआ था, जबकि दूसरा हिस्सा अपने पति के प्रति घृणा से भरा हुआ था। साथ ही अपराधबोध भी उसमें समाया हुआ था। अगर उसे अपने आँसू बहाने वाले पति के प्रति घृणा महसूस हो रही थी, तो उसके मन में उस दरिंदे

मंजय्या के प्रति भी घृणा उत्पन्न हो रही थी, जो शायद कभी आँसू नहीं बहाता था। उसका पति कुर्सी पर सिर झुकाए बैठा था। उसने अपनी हथेलियों से अपनी आँखों को दबाकर आँसू रोकने की कोशिश की। उसे उसे सांत्वना देने का मन हुआ। लेकिन फिर से उसके मन में तिरस्कार का भाव आया। ऐसी परिस्थितियों में, क्या पत्नी को पति को सांत्वना देनी चाहिए या इसका उल्टा होना चाहिए?

रात को जब अप्पाजाप्पा नींद न आने के कारण बिस्तर पर करवटें बदल रहे थे, तो उन्होंने अपनी पत्नी से पूछा, 'हाल ही में मेरी मुलाकात मंजय्या से नहीं हुई है। उन्हें अदालती और दफ्तरों के मामलों का अच्छा खासा अनुभव है। अगर हम उनसे संपर्क करें तो वे निश्चित रूप से हमारी मदद करेंगे। मुझे कोई और रास्ता सूझता ही नहीं!'

सरोजक्षी ने तुरंत जवाब दिया, 'आप एक अधिकारी हैं। मंजय्या को आपके सुझाव पर वरिष्ठ अधिकारियों ने ठेकेदार नियुक्त किया है। आपको अपने काम के लिए उसे अपने वरिष्ठों के पास क्यों ले जाना चाहिए?'

उसने मंजय्या का जिक्र करते हुए एकवचन का प्रयोग किया था। अप्पाजप्पा ने टिप्पणी की, 'यह क्या है? तुम मंजय्या के लिए एकवचन का प्रयोग क्यों कर रही हो और उसका अपमान क्यों कर रही हो? तुम ऐसा कैसे कर सकती हो?'

'ठीक है। चलिए, हम उन्हें "महामहिम" कहकर बुलाते हैं और उनका शाही सम्मान करते हैं। मैंने तो बस इतना पूछा था कि क्या आप उनके बिना जाकर इन मामलों को सुलझा नहीं सकतीं?' अप्पाजप्पा चुप हो गईं। उन्हें पता था कि उनके पति को काफी देर से नींद नहीं आई थी। उन्हें भी ज़रा भी नींद नहीं आई थी। उन्होंने कभी सोचा भी नहीं था कि मंजय्या इतनी नीच हरकत कर सकता है। उन्होंने सोचा, अगर उन्हें यह पता होता, तो शायद उनका ध्यान उसकी तरफ न जाता। लेकिन थोड़ी देर में ही उन्हें अपने मन की विचित्रता का एहसास हुआ। उसके आचरण और चरित्र के बारे में सब कुछ जानने के बाद भी वह उसे अपने मन से अलग क्यों नहीं कर पा रही थीं? उन्होंने फैसला किया: अगर उनके बीच कुछ था भी, तो वह सिर्फ दुश्मनी थी। लेकिन फिर उनका मन खुद को समझने की कोशिश में लग गया, बार-बार सोचता रहा और कहने लगा: नहीं, ऐसा मुमकिन नहीं था। सिर्फ तिरस्कार, घृणा, अवमानना। घृणा तो स्वाभाविक थी। नीच, घिनौना! उसने उन्हें धमकाने का फैसला कर लिया था। 'मैं तुम्हारे पति की नौकरी छीन लूंगी और तुम्हें भूखा मरने पर मजबूर कर दूंगी।' सरोजक्षी गुस्से से आग बबूला हो गई।

वह सुबह रसोई में काम कर रही थी। जब वह बाहर आई, तो उसके पति और उनकी साइकिल कहीं नहीं थे। उसने शशिकांत से पूछा, जो गणित के सवाल हल कर रहा था, 'अप्पा कहाँ हैं?' उसने कहा, 'वह तैयार होकर ऑफिस चले गए!' वह तुरंत समझ गई और गुस्से से भर उठी। वह चिंतित भी थी, जब वह स्वेच्छा से मंजय्या के पास गया था, तो वह बदमाश ज़रूर कोई और चाल चलेगा। अब वह गुस्से से आग बबूला थी, क्योंकि अगर उसके पति ने उसे ऑफिस जाने की सूचना नहीं दी थी, तो वह उस आदमी से मिलने गया होगा। उसने अपने होंठ दबा लिए। नहीं, वह कभी नहीं समझेगा और न ही उसमें इतनी हिम्मत है कि वह इसे संभाल सके। अगर उसमें यह हिम्मत है, तो उसे क्यों... वाक्य पूरा होने से पहले ही उसकी आँखों में आँसू भर आए। उसने तुरंत उन्हें रोक लिया। लेकिन रसोई में मौजूद छोटी वैजयंती ने पूछा, 'अम्मा आप क्यों रो रही हैं?' सरोजक्षी झल्लाई। 'क्या तुम्हारी कोई पढ़ाई नहीं है? क्या तुमने वर्णमाला लिखी है?' लेकिन वैजयंती डरने वाली बच्ची नहीं थी। उसने अपनी माँ को एक घूंसा मारा और बाहर भाग गई। सरोजक्षी यह जानने के लिए उत्सुक थी कि मंजय्या ने क्या चाल चली होगी, लेकिन यह तो अप्पाजप्पा के घर लौटने के बाद ही पता चलेगा। साथ ही, उसे चिंता भी थी कि कहीं यह हिरण शिकारी के जाल में न फंस जाए। वह जानती थी कि अप्पाजप्पा उससे कभी कुछ नहीं छिपाएगा; उसमें ऐसा करने की न तो हिम्मत थी और न ही समझ। उसे एहसास हुआ कि अगर वह थोड़ा गुस्सा दिखाएगी, तो वह उसकी इच्छा के अनुसार बदल जाएगा। फिर भी उसके मन में एक चाहत जाग उठी: पति एक ऐसा आदर्श होना चाहिए जिस पर स्त्री सिर उठाकर देख सके, वह हमेशा खुले आसमान को छूता रहे। उसका मन इसी कल्पना में खो गया और वहीं ठहर गया। वह तस्वीर कितनी सुंदर थी! उसने याद करने की कोशिश की कि क्या उसने यह तुलना किसी कविता या उपन्यास में पढ़ी है।

जैसा उसने सोचा था वैसा ही हुआ। अप्पाजप्पा दोपहर तक नहीं लौटे, बल्कि देर शाम लगभग आठ बजे वापस आए। उनकी साइकिल के ठेले पर एक बड़ा, पका हुआ कटहल बंधा हुआ था, जिसकी खुशबू दूर से ही नाक में घुस रही थी। यह फल मंजय्या के खेत का था। यह अप्पाजप्पा का पसंदीदा फल था। सरोजक्षी को लगा कि मंजय्या ने उन्हें खुश करने के लिए यह फल भेजा है। अप्पाजप्पा अपनी साइकिल लाए, फल नीचे रखा और माफी मांगते हुए बोले, 'मैं बिलिकेरे गया था।'

सरोजक्षी ने पूछा, 'क्या उन्होंने दोपहर के भोजन के लिए दूध की खीर बनाई थी या नहीं?'
'हां, आपको किसने बताया? क्या उस्मानी आया था?'
सरोजक्षी एक मिनट तक चुप रही। फिर बोली, 'ठीक है, आओ, खाना खा लो। जाने से पहले उन्होंने जो दूध की खीर दी थी, इतनी दूरी साइकिल से तय करने में अब तक पच गई होगी।'
अप्पाजप्पा ने आश्चर्य से पूछा, 'क्या? मेरे शुरू करने से पहले ही खीर पेश की गई थी। आपको किसने बताया? उस्मानी तब तक जा चुका था!'
बच्चों को जम्हाई आ रही थी, इसलिए उसने पहले उन्हें खाना परोसा। उन्होंने सुबह कटहल काटने का फैसला किया था। जब सिर्फ़ वे दोनों ही खाना खा रहे थे, तब सरोजक्षी ने उससे पूछा, 'मंजय्या ने आपसे चीज़ें ठीक करवाने के लिए कितने पैसे मांगे थे?' अप्पाजप्पा ने कहा, 'क्या कह रही हो? क्या तुम्हें लगता है कि मंजय्या हमसे पैसे लेगा? वह तो सिर्फ़ हमें देता है। बड़े अधिकारी तो जहाज़ ही निगल जाते हैं। खासकर वन विभाग में।'
'ठीक है। उसने तुम्हें अपने वरिष्ठों को रिश्वत देने के लिए कितने पैसे लाने को कहा?' 'दो हजार।'
'क्या आप उन्हीं दो हजार लोगों को लेकर अपने वरिष्ठों के पास जाकर काम नहीं करवा सकते?'
'क्या! मैं!' अप्पाजप्पा के चेहरे पर घबराहट छा गई। 'अगर वे मुझे रिश्वत देने की कोशिश के आरोप में भ्रष्टाचार विरोधी दस्ते के हवाले कर दें तो क्या होगा?'
उन्होंने कहा, 'इस बात की क्या गारंटी है कि वे मंजय्या को भी उसी आरोप में पुलिस के हवाले नहीं करेंगे?'
'देखिए, मंजय्या को उनसे बात करना आता है। वह होशियार है।'
सरोजक्षी के मन में अपने पति के प्रति एक बार फिर घृणा उमड़ रही थी। इस बार उसे मंजय्या के प्रति कोई घृणा नहीं थी। उसके भीतर एक भयंकर क्रोध उमड़ रहा था कि उसे मंजय्या को पकड़कर उसका सिर गड़गड़ा देना चाहिए या हंसिया से काट देना चाहिए। इस लड़ाई में या तो वह मरेगा या शायद दोनों एक साथ। यह दृश्य उसके मन में गहरा बैठ गया। हाँ, दोनों को एक साथ लड़ना और मरना चाहिए। उसने आगे कुछ नहीं कहा। भोजन समाप्त करके अप्पाजप्पा शयनकक्ष में चला गया। पलंग लगाना, कंबल ठीक करना और मच्छरदानी बाँधना हमेशा उसका

कर्तव्य था। सरोजक्षी ने उसे ये सब करने का कभी आदेश नहीं दिया था। वह ये सब स्वयं करता था। तब तक वह रसोई के काम भी निपटा लेती थी। पलंग पर लेटे हुए अप्पाजप्पा का मन उन दो हजार रुपये के इंतजाम के बारे में सोच रहा था। सारा खर्चा सरोजक्षी के हाथ में था। उसे नहीं पता था कि कुछ बचत हुई है या नहीं। महीने की तीस तारीख थी और कल उसे वेतन नहीं मिलेगा। अगर कुछ बचत भी हो जाती, तो वो भी घर के रोज़मर्रा के खर्चों में ही लग जाती। अप्पाजप्पा अपनी पत्नी से सोने की चूड़ियाँ या चेन माँगने से डर रहे थे। उन्हें चिंता सताने लगी, 'अगर वो देने से मना कर दे, तो मैं क्या करूँगा?' सरोजक्षी लेटी हुई मंजय्या से अपनी लड़ाई, खून से लथपथ शरीरों का एक साथ मरना, ये सब कल्पना कर रही थीं। आधी रात के बाद, अप्पाजप्पा ने आखिरकार कहा, 'जब तक हम कुछ सोना नहीं बेचते, दो हज़ार रुपये का इंतज़ाम कैसे करेंगे?'

सरोजक्षी कुछ नहीं बोलीं। अप्पाजप्पा जानते थे कि अगर उन्होंने सवाल दोहराया तो वह नाराज़ हो जाएंगी, इसलिए वह चुप रहे। लेकिन उन्हें पूरा यकीन था कि वह जाग रही थीं और उन्होंने उनका सवाल सुन लिया था। वह इस उम्मीद में चुप रहे कि कल या परसों वह खुद उन्हें बता देंगी कि क्या करना है।

सुबह उठते ही बच्चों ने कटहल काटने की ज़िद की। अप्पाजाप्पा ने अपनी पत्नी की ओर देखा। उसने कहा, 'सिर्फ इसलिए क्यों ले लो क्योंकि उसने तुम्हें दिया था?'

अप्पाजप्पा एक मिनट तक ऐसे खड़े रहे मानो उन्होंने कोई बड़ी गलती कर दी हो, फिर अपना बचाव करने की कोशिश की। 'क्या मैं इसे पहले भी नहीं ला रहा था?' जब उन्होंने उन्हें फल काटने को कहा, तो उन्होंने हंसिया पर तेल लगाया, फल को दो हिस्सों में काटा, एक हिस्से से फल के टुकड़े निकाले और दूसरे हिस्से को रसोई में ले आए। उन्होंने उनसे कहा, 'देखो, नाश्ते के बाद साइकिल से बिलिकेरे जाओ और मंजय्या से कहो, "देखो मंजय्या, अगर हमें पैसों का इंतजाम करना है, तो हमें सोना बेचना या गिरवी रखना होगा। हम किसी भरोसेमंद जौहरी को नहीं जानते। कृपया आओ, मेरी पत्नी से बात करो, उसे दुकान पर ले जाओ और मामला सुलझा लो।"'

अप्पाजप्पा खुशी से फूले नहीं समा रहे थे। उन्हें इस बात की बेहद खुशी थी कि उनकी पत्नी ने इतनी जल्दी उनके सुझाव पर सहमति दे दी। उन्होंने कहा, 'इससे ज्यादा एक शब्द भी मत बोलिए। शायद वो आपके साथ आ जाएं। अगर वो आते हैं, तो मैं इस कारोबार के बारे में बात करूंगी। आपको समझ नहीं आएगा। जब

हम बात कर रहे हों, आप ये कहकर बाहर चले जाइए कि आपको बाजार में कुछ काम मिला है।'
अप्पाजप्पा ने जल्दी से स्नान किया, देवताओं के सामने अगरबत्ती जलाई, रोटी, चटनी और कटहल खाया, कॉफी पी और अपनी साइकिल पर सवार होकर चले गए।
वह दोपहर तक लौट आया। 'मंजय्या के दाहिने पैर में मोच आ गई है। वह चल नहीं सकता। उसने कहा कि साइकिल चलाना भी दर्दनाक है। मैंने उसे अपनी साइकिल पर दो-दो करके ले जाने की पेशकश की, लेकिन उसने कहा कि वह ठेले पर नहीं बैठ सकता।'
क्या पैर सूजा हुआ था?
'नहीं। उन्होंने कहा कि बहुत दर्द हो रहा था। उन्होंने किसी को तेल लाने को कहा और मालिश करवाई। मैंने भी थोड़ी मालिश की।' सरोजक्षी ने कोई प्रतिक्रिया नहीं दी। वह रसोई में चली गई।
एक सप्ताह बीत जाने के बाद भी मंजय्या नहीं आया। अप्पाजप्पा ने अपनी पत्नी से पूछा, 'अब हम क्या करें?' सरोजक्षी ने शर्त रखी, 'मैं धन जुटाने के लिए अपने कुछ गहने दे दूंगी। लेकिन शर्त यह है कि आप स्वयं जाकर वरिष्ठ अधिकारियों से मिलें और काम पूरा करें। इसमें किसी का कोई मध्यस्थ या मध्यस्थता नहीं होनी चाहिए।' अप्पाजप्पा के पास इसका कोई जवाब नहीं था, इसलिए वे चुप हो गए। उनके पास करने के लिए और कुछ नहीं था, इसलिए समय बिताना उनके लिए मुश्किल था। वे कोई काम ढूंढते, कपड़ों का गट्ठा लेकर तालाब में जाते, उन्हें धोते, सुखाने के लिए बाहर रखते या झाड़ू उठाकर फर्श साफ करने लगते। सरोजक्षी क्रोधित हो जातीं, क्योंकि पत्नी के घर में रहते हुए पति द्वारा झाड़ू छूना स्त्री का अपमान माना जाता था। वह जितनी क्रोधित होतीं, अप्पाजप्पा उतना ही आज्ञाकारी हो जाते। उनका क्रोध अप्पाजप्पा की आज्ञाकारिता के अनुपात में बढ़ता। वे सोचते कि वह उनके निलंबित होने की गलती पर क्रोधित हो रही हैं, और मानो इसकी भरपाई के लिए वे और अधिक विनम्र हो जाते। एक दिन सरोजक्षी ने उसे डांटा। 'तुम पुरुष पैदा हुए हो। मैंने तुमसे नौकरानी की तरह घर के काम करने को नहीं कहा था।' अप्पाजप्पा उसकी बातों का अर्थ समझने लगा। अंत में, उसे कुछ समझ नहीं आया, उसने नाश्ता किया और मार्केट स्ट्रीट में टहलने चला गया। दोपहर के भोजन के लिए आया, फिर बाहर चला गया और शाम को लौटा। वह मार्केट स्ट्रीट में किसी दुकान

के चबूतरे पर या तालुक कार्यालय के पास बैठ या खड़ा हो जाता और समय बिताता। यह उसकी दिनचर्या बन गई थी। सरोजक्षी ने इस पर कोई आपत्ति नहीं जताई। वह चुप रही, यह सोचकर कि कम से कम वह एक ऐसे पुरुष को देखकर चिढ़ने से बच सकती है जो एक रूढ़िवादी परिवार में माहवारी के दौरान महिला की तरह घर पर बैठा रहता है। एक दिन दोपहर का भोजन करते समय अप्पाजप्पा ने कहा, 'मैं तालुक कार्यालय के पास मंजय्या से मिला।'

उसने क्या कहा?

'मैंने उसे घर बुलाया। मैंने पूछा, "आजकल तुम बिल्कुल नहीं आ रहे, क्या बात है?" उसने कहा कि उसे हसन में कुछ काम है और वह रास्ते में है। मैंने उसे याद दिलाया कि मैंने उससे गहने बेचने का मामला सुलझाने और आपसे बात करने के लिए आने का अनुरोध किया था। मैंने कहा, "लेकिन उस दिन आपके पैर में मोच आ गई थी। कृपया आइए और उससे बात कीजिए, पैसे लीजिए और मेरा निलंबन रद्द करवाने में मेरी मदद कीजिए।" लेकिन उसने कहा कि गहनों का कारोबार महिलाओं का है और उसे इसमें कोई दिलचस्पी नहीं है और वह चला गया!' अप्पाजप्पा ने बताया।

अगर तुम उससे दोबारा मिलो तो उससे बात मत करना।

'अगर आप कहेंगे कि उससे बात मत करो, तो हमारा काम कैसे हो पाएगा?' अप्पाजप्पा ने जोर देकर कहा।

उसने अपने गुस्से पर काबू पाया। लेकिन एक बात ने उसे तसल्ली दी। क्या मंजय्या के व्यवहार में सिर्फ़ दुष्टता थी? या वह उससे मिलने आने से डर रहा था? हालांकि, यह सच था कि उसने यह निलंबन केवल दुष्टता के कारण, एक जानवर के क्रोध के कारण किया था। 'देखो मैं तुम्हें कैसे सबक सिखाऊँगी, मैं यह सुनिश्चित करूँगी कि तुम्हें मुट्ठी भर चावल भी न मिलें।' लेकिन, हालांकि उसने उसे संदेश भेजा था कि वह आकर उससे बात करे, वह नहीं आया था। वह समझ गई कि यह या तो शर्म या डर के कारण होगा।

कई दिनों बाद, उनके पास जो भी नकदी थी, वह खत्म हो गई और उनके पास अपने गहने बेचने के अलावा कोई चारा नहीं बचा। घर का सारा खर्च वही संभाल रही थीं, इसलिए पति से सलाह लेने की स्थिति में नहीं थीं। हालांकि निलंबित व्यक्ति एक तिहाई वेतन का हकदार था, लेकिन उन्हें पता था कि इसे मंज़ूर होने में महीनों लग जाएंगे। एक दिन अप्पाजप्पा को पता चला कि मंजय्या ने ही किसानों को

उनके खिलाफ शिकायत लिखने के लिए उकसाया था। मंजय्या ने एक ही व्यक्ति के खिलाफ तीस अलग-अलग किसानों से शिकायतें लिखवाई थीं। इन शिकायतों की प्रतियां बेंगलुरु भी पहुंच गईं। इस वजह से अप्पाजप्पा को निलंबित करना पड़ा। अब बेंगलुरु मुख्यालय से निर्देश आने और जांच होने तक कुछ नहीं किया जा सकता था। अप्पाजप्पा स्तब्ध और हैरान थे। वे आत्मचिंतन करने लगे कि उन्होंने मंजय्या के साथ कितना बड़ा अन्याय किया था! वे घर आए और अपनी पत्नी को बताया। पत्नी ने कहा, 'यह कैसे हुआ? क्या तुम्हें पहले पता नहीं था? तुम्हें जिला कार्यालय जाकर पता लगाना चाहिए था कि मामला क्या है।'
मुझे और कैसे पता चलता?
उसने कहा, 'क्या यह काफी नहीं था? जब आपने उसे बुलाया तब भी वह हमारे घर नहीं आया। उसने बहाना बनाया कि उसके पैर में मोच आ गई है।'
अप्पाजप्पा कुछ नहीं बोले। उन्हें याद आया कि उनकी पत्नी उनसे कहीं अधिक बुद्धिमान थीं।
अब तक उसके मन में इस दुष्ट के प्रति जो घृणा थी, वह क्रोध में बदल गई। उसकी छवि क्रोध के रूप में हमेशा उसके मन में छाई रहती थी। वह उसे ऐसा सबक सिखाना चाहती थी जिसे वह कभी न भूले, लेकिन तरीका न सूझने के कारण वह बेचैन थी। वह जानती थी कि अगर वह खुद बिलिकेरे जाकर उससे विनती करे कि वह सक्षम है, तो वह इस समस्या का समाधान कर देगा। लेकिन उसे उसके सामने झुकना था, कहना था, 'मेरी समस्या का समाधान करने वाला आपके सिवा कोई नहीं है,' उसे खुद को उसी तरह अर्पित करना था जैसा वह चाहता था। उसे लगा जैसे उसका शरीर आग से जल रहा हो। तभी उसे अचानक समझ आया। वह उसे तभी मात दे सकती थी जब वह उसकी मदद के बिना अपनी समस्या का समाधान करे। इसके अलावा, उसे एहसास हुआ कि केवल गहने बेचकर और बैंगलोर जाकर निलंबन रद्द करवाना असंभव था। उसने सोचा कि चूंकि यह स्थिति उसी ने पैदा की है, इसलिए इसका समाधान भी उसी को करना है। वह जानती थी कि उसका पति उसके सिर पर सारा बोझ डालने और बैठे रहने के अलावा कुछ नहीं कर सकता। एक रात जब वह इस बारे में सोच रही थी, तो उसे सुब्बय्या का ख्याल आया। तुरंत ही, उसे लगा कि उसने जीत हासिल कर ली है। उन्हें दुख हुआ कि इतने दिनों तक उन्हें इस बात का एहसास नहीं हुआ। उन्होंने सोचा, वह अब कहाँ होंगे? चाहे जहाँ भी हों, किसी उच्च पद पर होंगे, ज़रूर किसी को सिफारिश

करेंगे और ज़रूरी कदम उठाएंगे। इस विश्वास के साथ-साथ उन्हें बेचैनी भी होने लगी। उनके बच्चे वैजयंती के गर्भ धारण करने के बाद से उनका उनसे कोई संपर्क नहीं रहा। जब सुब्बय्या का तबादला बैंगलोर से मैसूर हुआ, तब वह चार महीने की गर्भवती थीं। यह बात भूल जाना?! शायद उनके लिए यह बात भूलना आसान था, आखिर वह अधिकारी तो थे ही? लेकिन उन्होंने उन्हें भुलाने की बहुत कोशिश की, पढ़ने में सुकून पाया। और वैजयंती का चेहरा देखकर विचलित न होना कितना मुश्किल था! दरअसल, इस मंजय्या को देखने के बाद सुब्बय्या की याद से होने वाला दर्द थोड़ा कम हो गया था। अब उनका मन दुखी था; उन्हें उसी सुब्बय्या के पास जाकर मदद मांगनी थी। उन्होंने आठ दिन इस बात को लेकर व्याकुलता में बिताए, हालाँकि वह जानती थीं कि कोई और रास्ता नहीं था। अंततः घर में जो भी पैसा था, वह खत्म हो गया और बैंक में केवल पचास रुपये बचे। उसने उससे मिलने जाने का फैसला किया। उसने अपने पति से कहा, 'पता लगाओ सुब्बय्या कहाँ है। चलो उससे मिलते हैं!' अप्पाजप्पा हसन गए, दोपहर में ही लौट आए और बोले, 'वह देहरादून में प्रशिक्षण महाविद्यालय के अधीक्षक के पद पर गए थे। अब वह बैंगलोर में उप मुख्य संरक्षक बनकर आए हैं।'
सरोजक्षी ने कहा, 'चलो कल सुबह की बस से बैंगलोर चलते हैं।'
अप्पाजप्पा डरा हुआ लग रहा था। उसने कोई जवाब नहीं दिया। जब सरोजक्षी ने उससे दोबारा पूछा, तो उसने कहा, 'अगर वह पूछे कि तुमने ऐसा क्यों किया, तो क्या होगा?'
उसने कहा, 'मैं अंदर जाकर उससे बात करती हूँ। तुम बाहर इंतजार करो!'
उसने पड़ोसियों से शाम तक बच्चों की देखभाल करने का अनुरोध किया और दंपति ने बैंगलोर के लिए पहली बस पकड़ी। वे सुबह ग्यारह बजे कार्यालय पहुँचे। अधिकारी मौजूद थे। उसे अपना पिछला अनुभव याद आया। अगर वह कागज की पर्ची पर अपना नाम लिखकर भेज देती, तो वह तुरंत उसे बुला लेते। या साढ़े पाँच साल बाद वह उसे भूल गए थे? नहीं, सुब्बय्या उस तरह के व्यक्ति नहीं थे। मंजय्या जैसे लोग, जो सौ महिलाओं की तलाश में जाते हैं, शायद भूल जाएँ, लेकिन सुब्बय्या नहीं। फिर भी उसका मन उदास हो गया, उसे बेचैनी और शर्म महसूस हुई, क्योंकि उसे उस व्यक्ति से मिलने जाना था जिसे उसने अपने मन से निकाल दिया था। हालाँकि उसने इससे बचने की कोशिश की, फिर भी वह पुरानी याद उसे अपनी ओर खींच रही थी। वह अब लगभग पचास के करीब होंगे। उसने कल्पना

की कि उनके बाल और मूंछें सफेद हो गई होंगी। उसने तय किया कि अब और देर करने का कोई फायदा नहीं, चपरासी से एक पर्ची ली, उस पर लिखा, 'सरोजक्षी, [वनपाल अप्पाजप्पा की पत्नी, कुनिगल]' और उसे अंदर भेज दिया। उसके पति ने पूछा, 'क्या लिखा है तुमने?' 'चुप रहो। मैंने अपना नाम लिखा है, और क्या।' उसने उसे डांटा, मानो उसे हिम्मत दे रही हो। एक मिनट के भीतर चपरासी वापस आया और उसे अंदर जाने का इशारा किया। उसने अपने पति को रुकने को कहा, आधे खुले दरवाजे से अकेले अंदर गई, लकड़ी और कपड़े के पर्दे के चारों ओर घूमी और अंदर कदम रखा। सुब्बय्या उत्सुकता और आश्चर्य से खड़ा हो गया। उसने अपना हाथ बढ़ाया, एक मिनट से अधिक समय तक उसका हाथ कसकर पकड़े रखा और मुस्कुराते हुए धीरे से उसका हाथ दबाया। उसने पूछा, 'आजकल तुम कहां हो? कृपया बैठो!' यह वही पुरानी मित्रता थी। उसके चमकदार काले बाल, वही काली नुकीली कूर्गी मूंछें। उसने सोचा कि वह बालों में रंग लगाता होगा। उसे समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहे। उन पांच सालों में वह ज्यादा नहीं बदला था। वह भी उसे घूरता रहा, समझ नहीं आ रहा था कि क्या बोले। उसके पीछे दीवार पर बाघ की तस्वीर बनी हुई थी। बाघ ने पूरी दीवार को घेर रखा था। अगर यूं ही ध्यान न दिया जाए तो वह इतना असली लगता था कि चौंक उठना स्वाभाविक था। उसके बाईं और दाईं ओर घने जंगल के दृश्यों को दर्शाने वाली दो बड़ी पेंटिंग्स रणनीतिक रूप से लगाई गई थीं। उसे उसे घूरने पर शर्मिंदगी महसूस हुई और उसने अपना सवाल दोहराया, 'तुम अभी कहां हो?'

'In Channarayapattana.'

'मैं देहरादून स्टाफ कॉलेज गया था। मैं पिछले महीने ही यहाँ आया हूँ। बहुत भागदौड़ रही। मैंने सोचा कि आपसे संपर्क कर लूँ कि आप कहाँ हैं और एक निरीक्षण शिविर आयोजित करने की योजना बना रहा था। अगर नहीं तो मैं आपसे कैसे संपर्क कर सकता हूँ? पत्र लिखना सुरक्षित नहीं होगा क्योंकि यह किसी और के हाथ में पहुँच सकता है।'

फिर भी सरोजक्षी उदास लग रही थी। सुब्बय्या ने उससे पूछा, 'तुम इतनी उदास क्यों हो? क्या तुम्हें लगता है कि मैं सिर्फ तुम्हें अभी देखकर ऐसा बोल रहा हूँ? कसम से, देहरादून में भी तुम्हारी याद मुझे सताती रही। पर क्या कर सकते थे? अब अगर चन्नरायपट्टाना है तो पास ही है, कुनिगल से सिर्फ दोगुनी दूरी पर। आजकल तो कई एक्सप्रेस बसें भी चलती हैं।'

सरोजक्षी एक तरफ तो सुब्बय्या को अपने आने का मकसद न बताने का फैसला कर रही थी, लेकिन उसे कोई दूसरा रास्ता नहीं सूझा। तभी दीवार घड़ी में बारह बज गए। अचानक उसे अपने उन बच्चों की याद आई जिन्हें वह चन्नरायपट्टाना में छोड़कर आई थी, खासकर अपनी छोटी बेटी वैजयंती की, जो इस आदमी की बेटी थी, उस आदमी की बेटी जो उसे हवस भरी निगाहों से देख रहा था। उसे खुद नहीं पता था कि बेटा है या बेटी। जब उसका तबादला मैसूर हुआ था तब सरोजक्षी चार महीने की गर्भवती थी। सुब्बय्या ने भी मान लिया था कि बच्चा उसका ही है। लेकिन उसने यह नहीं पूछा कि लड़का है या लड़की। शायद किसी तरह के गर्व और शर्मिंदगी के कारण या शायद वह बैंगलोर के होटलों में साथ बिताए दिनों का नतीजा पूरी तरह भूल गया था। सरोजक्षी को लगा कि सुब्बय्या को सिर्फ उन दिनों की खुशी, आनंद और उस याद से उपजी खुशी की चाहत ही याद थी। उसने चुपचाप सुब्बय्या के चेहरे को देखा। वैजयंती की आंखें, नाक, भौहें और गाल हूबहू सुब्बय्या से मिलते थे; यहां तक कि रंग भी। अगर अप्पाजप्पा समझदार होते, अगर वे सुब्बय्या को देखते और अपनी बेटी को याद करते, तो सच्चाई उनके सामने आ जाती। अगर उन्हें सच्चाई का एहसास भी हो जाता, तो वे कोई कदम उठाने वाले व्यक्ति नहीं थे। वे आगंतुकों के लिए आरक्षित बेंच पर सिर झुकाकर बैठे थे। यह याद उसे उदास कर देती थी। उसके मन में सुब्बय्या को यह बताने की तीव्र इच्छा हुई, 'यह एक बच्ची है। यह पांचवीं कक्षा में पढ़ रही है। यह बिल्कुल तुम्हारी हमशक्ल है।' लेकिन उसने तुरंत ही इस विचार को दबा दिया।

सुब्बय्या ने पूछा, 'सरोजा, तुम इतनी उदास क्यों हो? मुझे लगता है कोई समस्या है। बताओ: क्या मैं तुम्हारी समस्या हल नहीं कर दूंगा?'

"देखो, तालुका में चंदन का एक ठेकेदार है। उसने अपने चहेते किसानों से अप्पाजप्पा के खिलाफ झूठी शिकायत लिखवाई है और विभाग ने उसे निलंबित कर दिया है और उसे वेतन नहीं मिल रहा है।" जब सरोजक्षी ने यह सब बताना शुरू किया, तो उसका मन हल्का हो गया क्योंकि यह उसके और सुब्बय्या के बीच के रिश्ते के दायरे से बाहर की बात थी।

सुब्बय्या ने पूछा, 'मुझे सब कुछ बताओ। वह ठेकेदार किस तरह का व्यक्ति है?'

उसके पास पर्याप्त भूमि संपत्ति है, आजीविका के साधनों की कोई कमी नहीं है। इसके साथ ही, वह एक तरह से पैरवी वकील का काम भी करता है। ऐसा कोई न्यायालय या कार्यालय नहीं है जिसके बारे में उसे जानकारी न हो। यह वही मंजय्या

था जिसने किसानों से यह कहकर धन वसूला कि यह उच्च अधिकारियों को देना है। आप जानते हैं, अप्पाजप्पा में धन वसूलने का कौशल या क्षमता नहीं है।
एक मिनट सोचने के बाद, सुब्बय्या ने उससे पूछा, 'क्या उसकी नज़र तुम पर थी और उसने तुम्हें पाने की कोशिश की? और क्योंकि तुमने उसे मौका नहीं दिया, तो क्या यह उसका बदला लेने का तरीका है?'
अचानक उसे ऐसा लगा जैसे किसी ने उसे खंजर से गोद दिया हो। उसने सोचा कि यह वरिष्ठ अधिकारी, जो उस पर अपना पुराना अधिकार फिर से स्थापित करने की कोशिश कर रहा था, उसके अंतर्मन में घुस गया है और वहाँ छिपी बातों को बाहर निकालने की कोशिश कर रहा है। एक पल में उसकी आँखों में आँसू भर आए, यह सोचकर कि क्या इस आदमी को लगता है कि वह इतनी तुच्छ औरत है? क्या उसने मुझे इतनी आसानी से पा लिया? तभी सुब्बय्या उठे, बड़ी मेज पर झुके, उसके कंधों को पकड़ा, धीरे से दबाया और उसे दिलासा देते हुए कहा, 'नहीं, सरोजा, मैंने यह सवाल तुम्हें परेशान करने या चिढ़ाने के लिए नहीं पूछा था। अगर हमें दुश्मन का मकसद साफ-साफ पता है, तो हल आसान है। मैंने यह सवाल सिर्फ इसी कारण से पूछा था।'
उसने सोचा: हाँ, वह जो कह रहा है वह सच है। उसके मन में तीव्र इच्छा हुई कि वह उसे बताए कि मंजय्या ने उसे कैसे वश में करने की कोशिश की और उसमें कुछ झूठ भी जोड़ दे। उसे सुब्बय्या को यह भी बताना चाहिए कि चूंकि उसने मंजय्या की हत्या के मामले में अप्पाजप्पा को अदालत में झूठी गवाही देने के उसके सुझाव पर सहमति नहीं दी थी, इसलिए उसने किसानों को भड़काया था। सरोजक्षी को सच बताने का मन हुआ ताकि मंजय्या को उचित दंड मिल सके। उसे पूरा विश्वास था कि अगर इस श्रेणी के अधिकारी ठान लें तो उसे सबक सिखाना असंभव नहीं है। वह एक मिनट के लिए चुप रही। फिर उसने अपनी इच्छा को दबाया और बोली, 'देखो, मैं तुमसे कुछ क्यों छिपाऊँ? मंजय्या के मन में ऐसी कोई भावना नहीं है। एक बार अप्पाजप्पा ने उससे यह पूछकर उसका विरोध किया था कि चंदन के पेड़ों की देखभाल करने वाले एक ठेकेदार होते हुए भी उसे मामला दर्ज करने का क्या अधिकार है। वह आदमी, एक तरह से, बिना कानून की डिग्री के वकील की तरह व्यवहार करता है और लोगों और पक्षों के बीच तरह-तरह के विवाद पैदा करता है। इसीलिए उसने ऐसा किया है।'

सुब्बय्या ने कहा, 'कोई बात नहीं,' और अपने पास रखे फोन का बटन दबाया। उनका सहायक प्रतीक्षा कक्ष से अंदर आया। अधिकारी ने सहायक से पूछा, 'क्या हसन जिले के चन्नरायपट्टाना के रेंज अधिकारी अप्पाजप्पा के बारे में कोई रिपोर्ट है?'

'जी सर, आपके यहां कार्यभार संभालने से पहले ही हमारे कार्यालय से उनके निलंबन के आदेश भेजे जा चुके थे।'

'अप्पाजप्पा की पूरी फाइल लाओ।' एक मिनट के भीतर सहायक एक बड़ी फाइल लेकर आया, उसे सुब्बय्या के सामने रखा और बाहर चला गया।

सुब्बय्या ने फाइल के सारे पन्ने खोले, उन पर एक नज़र डाली और कहा, 'जी हां, सभी शिकायतों का विषय एक ही है। तारीखों को देखकर साफ है कि ये सभी शिकायतें महज चार दिनों के अंतराल में लिखी गई हैं। हालांकि, हमें नहीं पता कि ये जगहें एक-दूसरे से कितनी दूर हैं। खैर, यह तो स्पष्ट है कि ये शिकायतें गुस्से में आकर की गई हैं। अगर वह मंजय्या सचमुच बिना कानून की डिग्री के वकील की तरह व्यवहार कर रहा होता, तो वह दो शिकायतों के बीच दो-तीन सप्ताह का अंतर रखता। इस तरह की शिकायतें सक्षम प्रशासकों के लिए अनजानी नहीं हैं। अब आप एक काम कीजिए। अप्पाजप्पा बाहर बैठे हैं, है ना?'

सरोजक्षी ने कहा, 'हां'।

सुब्बय्या ने घंटी बजाई और चपरासी को अप्पाजप्पा को अंदर बुलाने को कहा। उन्हें अंदर आने में पाँच मिनट लगे। अंदर आने के बाद भी वे थोड़ी दूरी पर खड़े रहे, सम्मानपूर्वक, उनके हावभाव में भय और आदर का मिश्रण था। सुब्बय्या ने पूछा, 'क्या बात है? ये शिकायतें किस बारे में हैं?' अप्पाजप्पा ने कुछ नहीं कहा। सुब्बय्या ने एक कागज़ निकाला, उसे मेज़ पर रखा और कहा, 'अब यह लिखिए: "आदरणीय उप मुख्य संरक्षक के विचारार्थ।"' सुब्बय्या ने अप्पाजप्पा से आवेदन लिखवाया। अप्पाजप्पा ने मेज़ के पास खड़े होकर झुककर आवेदन लिखा और हस्ताक्षर किए। फिर सुब्बय्या ने कहा, 'ठीक है, अब बाहर इंतज़ार कीजिए।' अप्पाजप्पा बाहर गए और राहत की साँस ली। तब तक, अधिकारी से मिलने के लिए इंतज़ार कर रहे लोगों में से एक ने अप्पाजप्पा की खाली सीट पर बैठ लिया था, इसलिए उन्हें खड़े रहना पड़ा।

एक बार सुब्बय्या ने आवेदन पढ़ा और सरोजक्षी से धीमी आवाज में पूछा, 'आप कहां रह रही हैं?'

हम सीधे बस स्टेशन से यहां आए हैं।
"देखो सरोजा, अपने पति से कहो, 'तुम्हारा अधिकारी तुम्हारी मदद करेगा। कुछ और रिकॉर्ड अभी खोजे जाने बाकी हैं। सेवा रजिस्टर की भी जाँच-पड़ताल करनी है। क्लर्कों को ये सब काम निपटाने हैं। मुझे यहाँ रहकर इन कामों को पूरा करवाने के लिए उन पर दबाव बनाना होगा। इसलिए तुम चन्नरायपट्टाना वापस जाओ और बच्चों की देखभाल करो। मैं कल वापस आ जाऊँगी। वैसे, तुम्हारे कितने बच्चे हैं?"
सरोजा को शर्म आ रही थी कि उसकी गरिमा कम हो रही है और वह उसे और नीचे गिरा रहा है। उसे लगा कि खासकर उस आखिरी सवाल ने उसे और भी तुच्छ बना दिया है। अचानक उसे वैजयंती का चेहरा याद आ गया। उसके मन में तीव्र इच्छा हुई कि वह उससे कहे कि वैजयंती को देखो: वह तो उसकी ही परछाई थी। क्या उसे याद नहीं था, जब उसका तबादला मैसूर हुआ था तब वह चार महीने की गर्भवती थी। उसे इतना गुस्सा आया कि वह लगभग उससे पूछने ही वाली थी कि क्या उसने कम से कम एक बार भी पूछा था कि बच्चा लड़का है या लड़की। लेकिन उसने बस अपना सिर झुकाया और बैठ गई।
उसने धीमी आवाज में उससे पूछा, 'क्या तुम्हें कोई समस्या है?'
सरोजक्षी ने कहा, "क्या तुम्हें याद है तुमने मुझसे एक बार क्या कहा था? आदमखोर बाघ का शिकार करते समय भी तुम उसे सोते हुए नहीं मारोगे; तुम बीमार या घायल बाघ का शिकार नहीं करोगे। क्या तुम्हें यह बात अभी भी याद है?"
जी हां, शिकार में भी निष्पक्षता होनी चाहिए। खेल भावना होनी चाहिए। हमें प्रतिद्वंद्वी को उचित अवसर देना चाहिए। देखिए, बीमार या थके हुए खिलाड़ी को चुनौती देने और हराने में क्या संतुष्टि है?
सरोजक्षी ने कहा, "हमारी मित्रता नई नहीं है, इसे नए आधार पर स्थापित करने की आवश्यकता नहीं है। बस याद रखिए कि यह कितनी पुरानी है। लेकिन अब, जब मैं दयनीय स्थिति में हूँ और आपसे मदद की गुहार लगाने आई हूँ, अगर मैं आपके साथ एक रात बिताऊँ, तो मुझे लगता है कि यह मेरे आत्मसम्मान को ठेस पहुँचाएगा। आपको भी भविष्य में कभी ऐसा ही महसूस हो सकता है, है ना?"
सुब्बय्या को ऐसा लगा जैसे वह किसी जाल में फंस गया हो। सरोजक्षी के कार्यालय में आते ही जो चेहरा खुशी से दमक रहा था, वह अचानक पीला पड़ गया। लेकिन कुछ ही पलों में उसने खुद को संभाला और कहा, "बिल्कुल, बिल्कुल, शोषण का

तो सवाल ही नहीं उठता। मैं यहाँ अन्याय को सुधारने के लिए आया हूँ, चाहे वह कहीं भी हुआ हो। इसके अलावा, आप जानती हैं कि सरकार का आदेश है कि किसी को भी किसी भी कीमत पर बाघ नहीं मारना चाहिए। वह आदेश भी मेरे आग्रह पर ही पारित हुआ था। बाघ चाहे कितना भी ताकतवर जानवर क्यों न हो, हाथ में बंदूक लिए आदमी के सामने वह बेबस होता है। हाँ, दोनों को बराबरी का सामना करना होगा। मैं आपकी बातों की सराहना करता हूँ। मित्रता महत्वपूर्ण है। घर पर सब कैसे हैं? आप कमजोर लग रहे हैं। आपको देखे हुए काफी समय हो गया है। कुछ टॉनिक और पौष्टिक भोजन कर लीजिए।”
सरोजक्षी मुस्कुराई, 'निलंबन के कारण कोई वेतन नहीं आ रहा है। मैं किस तरह का टॉनिक खरीद सकती हूँ?'
उन्होंने आश्वासन दिया, 'चिंता मत करो। इसे जल्द ही रद्द कर दिया जाएगा।'
उसने सोचा कि अब उसे चले जाना चाहिए और बोली, ‘मुझे बिल्कुल भी चिंता करने की जरूरत नहीं है, मुझे आप पर पूरा भरोसा है।’ वह उठ खड़ी हुई। सुब्बय्या नीचे झुका, उसका हाथ पकड़ा और बोला, ‘मैं जरूर आवश्यक कार्य करूंगा।’ उसने सुब्बय्या से विदा ली।
दंपति सीधे बस स्टेशन आए और उन्हें चन्नरायपट्टाना से होकर जाने वाली बस मिल गई। उन्हें अलग-अलग सीटें ही मिलीं। एक तरह से सरोजक्षी को इससे राहत मिली। उसे अपने पुराने दिन याद आ गए जब वह कुनिगल से बैंगलोर और फिर बैंगलोर से कुनिगल तक इसी रास्ते पर अकेले सफर करती थी। अगर महीने में कम से कम एक बार सुब्बय्या से मुलाकात न होती तो वह पागल हो जाती थी! अब वह न सिर्फ उसके मन से दूर हो गया था, बल्कि एक खलनायक जैसा लग रहा था। उसे इस बात पर हैरानी हो रही थी कि वह इस सुब्बय्या को उस मंजय्या से भी ज्यादा खलनायक समझ रही थी। शायद, वह निलंबन रद्द न करे और फाइल को यूं ही सड़ने के लिए छोड़ दे। हो सकता है उसने तय कर लिया हो कि वह उसे फिर से बुलाएगा। ये सारे संदेह उसके दिमाग में घूम रहे थे। अप्पाजप्पा चैन से सो रहा था, शायद इस तसल्ली के साथ कि वहां जाने का उसका मकसद पूरा हो गया था।

ऐसा नहीं था कि मंजय्या के पीछे पड़ी हर औरत ने बिना किसी विरोध के खुद को उसके हवाले कर दिया हो। जैसे कभी-कभी माहिर निशानेबाज भी निशाने से बस थोड़ी सी चूक कर जाता है, वैसा ही मंजय्या के साथ भी हुआ था। लेकिन इससे पहले उसने कभी किसी ऐसे व्यक्ति से बदला लेने के बारे में नहीं सोचा था जिसने उसकी बातों को नकार दिया हो। अब तक वह अपनी हार को खेल भावना से स्वीकार करता आया था। इसके अलावा, उसमें एक तरह का धैर्य भी था, 'अगर यह औरत नहीं तो सौ और होंगी, मैं क्यों परेशान होऊं?' यही उसका जीवन सिद्धांत था। लेकिन इस बार वह हठपूर्वक गांवों में घूमा, बोचिहल्ली निंगप्पा को भी भेजा और किसानों से अप्पाजप्पा के खिलाफ शिकायतें लिखवाईं, उनके हस्ताक्षर लिए, डाक खर्च उठाया और किसी तरह बहुत जल्दी अप्पाजप्पा को निलंबित करवा दिया। निलंबन आदेश के बारे में जानकर वह बहुत खुश हुआ। अगले ही दिन जब अप्पाजप्पा मदद मांगने बिलिकेरे आया, तो मंजय्या ने सोचा कि सरोजक्षी हार गई है और उसने अपने पति को सुलह कराने के लिए भेजा है। लेकिन अगले दिन अप्पाजप्पा फिर आया और बोला कि उसकी पत्नी ने संदेश भेजा है कि उसे गहने बेचकर या गिरवी रखकर पैसे का इंतजाम करना है और इसके लिए मंजय्या को खुद आना पड़ेगा। उस समय तो उसे लगा कि शायद उसकी पत्नी उसे खुद को विजेता को भेंट करने का निमंत्रण दे रही है या अपनी गलती का प्रायश्चित कर रही है, लेकिन अगले ही पल उसे बहुत शर्मिंदगी महसूस हुई। हालांकि उस समय उसे समझ नहीं आया कि ऐसा क्यों हुआ, लेकिन उसे उससे मिलने और बात करने में बहुत शर्म आ रही थी। उसके पति को उसी की वजह से निलंबित किया गया था। अप्पाजप्पा को इस बात का पता नहीं था। उसे वहां जाने में शर्म क्यों आनी चाहिए? आखिर हुआ क्या था? आखिरकार, मैंने ही तो उसके गाल पर थप्पड़ मारा था और उसे समझाया था, मुझे क्यों अपमानित महसूस करना चाहिए? उसे तो अपमानित महसूस करना चाहिए। मंजय्या ने अपने दिखावटी वकील की बुद्धि को चुनौती देने वाले हर तरह के तर्क गढ़े और शर्मिंदगी के उस सैलाब को रोकने की कोशिश की, लेकिन रोक नहीं पाया। अब उसे सरोजक्षी की राय में सच्चाई समझ आने लगी थी,

कि अगर वह अदालत में अप्पाजप्पा की गवाही पर भरोसा करता, तो उसके मामले को नुकसान पहुँचता। लेकिन उस पल, और जिस तेज़ी से उसने ये शब्द कहे, मंजय्या को लगा जैसे वह उसका अपमान कर रही हो। ये याद उसके अंदर बदले की आग को और भड़का रही थी। किसी तरह उसने पैर में मोच का बहाना बनाकर उससे मिलने जाने से परहेज किया। अप्पाजप्पा के वापस जाने के बाद भी मंजय्या की समस्या हल नहीं हुई, बल्कि और बढ़ गई; उसे पता था कि आज या कल ये बात सामने आ ही जाएगी कि निलंबन उसी की वजह से हुआ है। उसे सरोजक्षी से आमने-सामने मिलना ही पड़ेगा। तब वो क्या कहेगा? 'सुनो, तुमने मुझ पर अपना अधिकार जमाने की कोशिश की, अपने शब्दों से मेरा अपमान किया, इसलिए मैंने तुम्हें सज़ा देने के लिए ये किया,' लेकिन ये दृढ़ जवाब भी कमज़ोर पड़ रहा था। अगर वो मुस्कुराते हुए भी पूछती, तो उसे यकीन था कि वो सच में पूछेगी और उसने ऐसी दुविधा पहले कभी नहीं झेली थी। 'अरे, मुझे बताओ मेरे किन शब्दों से तुम्हारा अपमान हुआ?' क्या तुमने खुद ही अंत में नहीं कहा था कि मैंने जो कुछ भी कहा वह शत प्रतिशत सच था?' तो फिर वह क्या करता? तीन-चार दिन बाद उसने अपने शर्मिंदगी के मूल कारण को मिटाने के लिए सीधे तथ्यों को याद किया। आखिर वह इतनी खूबसूरत कैसे हो सकती थी कि वह उस पर मोहित हो जाए? क्या यह उसका रंग-रूप था, उसकी कद-काठी थी या सत्रह साल की उसकी जवानी? लेकिन उसे याद आया कि वह पहले भी कई बार इन बातों पर सोच चुका था और कोई जवाब न मिलने पर निराश हो गया था। फिर उसे एहसास हुआ कि सबको अंधेरे में धकेलने के लिए उसकी आँखों की चमक ही काफी थी। अंधेरे में लेटे हुए भी, उसे उसकी आँखों की रोशनी एक नई बैटरी वाली टॉर्च की तरह चकाचौंध करती हुई महसूस होती थी। कभी-कभी उसे शक होता था कि क्या वह औरत कोई काला जादू या मंत्र जानती है। लेकिन चूंकि मंजय्या को इन बातों में जरा भी विश्वास नहीं था, इसलिए यह शक उसे ज्यादा देर तक परेशान नहीं करता था।

तीन दिन बाद, उसे एक और रास्ता मिल गया। अपने अनुभव के दौरान परिचित और हमेशा कारगर तरीकों को न भूल पाने पर वह खुद पर हैरान था। यह आम बात थी कि उसके अनुभव के दायरे से जुड़ी कोई महिला उसका पीछा करती रहती थी। इस क्षेत्र में उसकी दक्षता चाहे जो भी हो, यह निश्चित नहीं था कि वह अपनी इच्छा अनुसार तुरंत उस महिला को पा सके। हो सकता है वह किसी और

जगह चली गई हो, या उसकी शादी हो गई हो, वह अपने पति के साथ रह रही हो और घर से बाहर निकलने की स्थिति में न हो। हो सकता है वह स्तनपान कराने वाली माँ हो। अगर वह उसे किसी और जगह से लाया होता, तो हो सकता है वह भाग गई हो। ऐसी परिस्थितियों में, अपने मन में बसी उस महिला को भुलाने के लिए, मंजय्या उसी तरह की, उसी उम्र की, उसी निपुणता और कौशल वाली महिला की तलाश करता, या वह उसे ये कौशल सिखाता, उसे अपने मनपसंद के अनुसार तैयार करता और उससे सेवा लेता। फिर वह महिला खुद ही हवा में सुगंध की तरह गायब हो जाती। अब भी, अगर उसे सरोजक्षी जैसी कोई मिल जाए। हाँ, उसने उसकी विशेषता को पहचान लिया था। सांवले रंग की, सफेद आँखों वाली महिलाओं का रूप स्वाभाविक रूप से उज्ज्वल लगता है। चमकीले सफेद दांत और सफेद पत्थरों से जड़ी बालियां सांवले चेहरे पर चमक बिखेर रही थीं और उसकी खूबसूरती को और बढ़ा रही थीं। हां, उसे ऐसी ही किसी लड़की की तलाश करनी चाहिए। वह तुरंत तैयार हो गया। उसने अपनी जेब नोटों से भर ली, हसन गया और अपने पुराने दोस्त पुट्टम्मा से एक नई लड़की दिखाने को कहा। पुट्टम्मा ने कुसुमाक्षी को बुलाया और शाम को मंजय्या से मिलवाया। इस लड़की के नाम के अंत में भी 'अक्षी' था और उसकी आंखें भी वैसी ही तेज थीं। अठारह साल की युवा लड़की होने के बावजूद, मंजय्या ने पुट्टम्मा के घर के पिछले कमरे में कुसुमाक्षी के साथ रात बिताई। उसने इस काम की कला और हुनर सीधे पुट्टम्मा से ही सीखी थी। मंजय्या को लगा कि वह सबसे बेहतरीन है। आखिर इस युवती के सामने सरोजक्षी क्या थी! मंजय्या पूरी तरह से इस काम में मग्न हो गया और जब वह चरम पर था, तो सरोजक्षी उसके दिमाग से गायब हो गई। उसने खुद को शाबाशी दी, 'वाह, बहुत बढ़िया' और इसमें और भी मग्न हो गया। सब खत्म होने के बाद, कुसुमाक्षी धीरे-धीरे खर्राटे लेने लगी। मंजय्या को अंदर से खालीपन महसूस हो रहा था, बिलकुल खाली। उस व्यक्ति का नाम उसके लिए अनजान नहीं था। काली या बोली या कुछ और, और इस पेशे में तो वे खुद को कुसुमाक्षी, कमलाक्षी, कंठमणि या कुछ और कहते हैं। यह भी उसे याद था। फिर भी, उसे समझ नहीं आ रहा था कि वह क्यों चिंतित था, यह सोचकर कि अगर सरोजक्षी को उसके इस लड़की के साथ सोने के बारे में पता चल गया तो क्या होगा। लेकिन उसे कैसे पता चलेगा? क्या संयोग से उसे पता चल गया? उसके अंदर डर पैदा हो गया। अचानक उसे गुस्सा आ गया। उसे कैसे पता चलेगा? वह मुस्कुराते हुए उससे इतने सवाल पूछती थी।

मेरे पहल करने पर उसे मुझे इस तरह ताना मारने का अधिकार कैसे मिल गया? अगर उसे पसंद था तो उसे 'हाँ' कहना चाहिए था। नहीं तो 'ना'। यह सब नखरे क्यों? क्या उसने उससे पूछा था कि वह कितने लोगों के साथ सो चुकी है? मंजय्या को फिर गुस्सा आ गया। आधे घंटे के भीतर वह शांत हो गया। असल में, शायद उसके पति के अलावा उसका कोई और पुरुष नहीं था। अगर ऐसा है, तो उसने उसे क्यों मना किया? तो फिर ऐसी प्रेम भरी बातों का क्या मतलब था, जिसमें भोजन और नाश्ते की पेशकश की जाती थी, और जब वह खा रहा होता था तो उसकी सहेली प्यार से पंखा झलती थी? वह कुछ भी नहीं समझ पा रहा था, यहाँ तक कि इस कुसुमाक्षी के साथ भी, चाहे उसका असली नाम कुछ भी हो। उसका मन कर रहा था कि उसे जगाकर पूछे, लेकिन वह खर्राटे ले रही थी। उसकी नींद क्यों खराब करे? अगर वह उसे जगाएगा, तो वह सोचेगी कि आपने ही उसे जगाया है और हाँ कह देगी। लेकिन उसका मन फिर से उठने का नहीं हुआ; उसका ध्यान सरोजक्षी की ओर चला गया था। उसे उसके साथ लेटना घिनौना लग रहा था। उसने अपने शरीर को उसके दिए हुए मैसूर चंदन के साबुन से मला था, नहाया था, बालों में चमेली के फूल लगाए थे। पुट्टम्मा हमेशा कमरा और बिस्तर साफ रखती है, वहाँ एक भी कीड़ा नहीं था। फिर भी उसे सब कुछ घिनौना लग रहा था और उसने बाहर निकलकर बस स्टैंड के पास वाले पार्क में जाने, पत्थर की बेंच पर लेटने या बैठने का सोचा। उसे ऐसा क्यों लग रहा था? उसका मन कर रहा था कि वह चन्नरायपट्टाना जाकर सरोजक्षी को इतनी ज़ोर से लात मारे कि उसकी कमर टूट जाए। वह बेचैनी से बिस्तर पर करवटें बदलने लगा, नींद उसके दिमाग में गूंज रही थी। सरोजक्षी के शब्द उसके मन में गूंज रहे थे: 'तुमने कितनों का शिकार किया है? कम से कम मुझे बताओगे क्या?' उसे मुझसे इस तरह सवाल करने का क्या अधिकार था? उसकी खासियत क्या थी?

सुबह कुसुमाक्षी ने उससे जाने की अनुमति मांगी। मंजय्या का उसे दोबारा छूने का मन नहीं हुआ। वह ऊब गया था, कुछ सुझाव दिए और उसे जाने की अनुमति दे दी। वह उठा, दाढ़ी बनाई, नहाया, अपना पर्स लिया और बाहर आ गया। लेकिन वह तय नहीं कर पा रहा था कि कहाँ जाए। वकील का घर, बस स्टैंड, संतोष रेस्तरां, डी.सी. कार्यालय और अधीक्षक का घर जैसी कई जगहें उसके मन में आईं। वह फैसला नहीं कर पा रहा था। और जब वह संतोष रेस्तरां में नाश्ता करने गया और वेटर उसके सामने खड़ा हुआ, तो उसे समझ नहीं आया कि क्या ऑर्डर

करे क्योंकि उसे सरोजक्षी के बनाए मांसाहारी व्यंजन याद आ गए। वह वेटर मंजय्या का परिचित था। उसने कहा, 'तुम्हें जो सबसे अच्छा लगे, वही लाओ।' हसन से मंजय्या बस से चन्नरायपट्टाना आया, खानाबदोश बंगले के चौकीदार से साइकिल ली और बिलिकेरे आ गया।

उन्होंने चन्नरायपट्टाना जाकर सरोजक्षी से मिलने का सोचा। लेकिन उनके मन में एक अटूट शर्म थी। इस तरह एक महीना बीत गया। इस दौरान अपने भीतर आए बदलाव को देखकर वे हैरान रह गए। उन्हें किसी स्त्री के प्रति कोई इच्छा नहीं हो रही थी। उन्हें ऐसा लग रहा था मानो वे अचानक बूढ़े हो गए हों और बुढ़ापा उन्हें पूरी तरह से घेर चुका हो। एक दिन दलदली भूमि के पास उनकी मुलाकात चन्नम्मा से हुई, जिनसे उनकी दोस्ती एक साल पहले हुई थी। उन्होंने ताना मारते हुए पूछा, 'अरे क्या बात है? लगता है हमारे अय्यावरु ने गेरुए रंग की धोती मंगाई है?' वह मुस्कुराईं। वह बड़ी चतुराई से बातें करती थीं। फिर भी उन्हें उन्हें झोपड़ी में बुलाना अच्छा नहीं लगा। उन्होंने आँख मारते हुए कहा, 'क्या? इतनी जल्दी बूढ़े हो गए, अय्या?' उन्होंने कहा, 'हाँ! हाँ, मैं बूढ़ा हो गया हूँ और मेरी ऊर्जा सूख गई है। लेकिन तुम अब भी जोश में नाच रही हो।' और वे उन्हें दो रुपये देने ही वाले थे कि उन्होंने कहा, 'मैंने तुमसे पैसे नहीं मांगे।' अगर आप चाहें तो मैं खुद आपको कुछ सिक्के दे सकती हूँ, ये लीजिए,' उसने पान के पत्ते, सुपारी और चूने से भरे अपने छोटे से थैले में हाथ डाला। मंजय्या को बहुत अपमान महसूस हुआ। लेकिन यह जानते हुए कि ऐसी परिस्थितियों में गुस्सा नहीं करना चाहिए, वह चुप रहा।

अप्पाजप्पा के निलंबित होने के बाद मंजय्या ने चंदन का कारोबार पूरी तरह बंद कर दिया। अरसिकेरे के रेंजर ने इस तालुक का कार्यभार संभाल लिया था और वे यहाँ सप्ताह में केवल एक बार आते थे। अप्पाजप्पा को रिश्वतखोरी की शिकायतों के कारण निलंबित किया गया था। मंजय्या के चंदन का कारोबार बंद करने के ये कारण नहीं थे। किसी तरह उनमें गाँव-गाँव घूमकर ऐसे चंदन के पेड़ ढूँढ़ने का उत्साह खत्म हो गया था जिनमें जड़ पक चुकी हो और उसके लिए उचित दस्तावेज़ तैयार करने का मन नहीं करता था। वे खुद पर गुस्सा करते थे कि इस घटिया ठेके के कारण उनका दिखावटी वकील का काम छूट गया।

एक दिन बोचिहल्ली निंगप्पा मंजय्या को ढूंढते हुए आए। उन्होंने कहा, 'देखो अय्या, ये पूछताछ का पत्र है, कृपया इसे पढ़ लो।' उस पत्र में बताया गया था कि अप्पाजप्पा पर लगे आरोपों की जांच चन्नरायपट्टाना के निरीक्षण बंगले में होनी है।

निंगप्पा को वहां उपस्थित होना होगा, बयान देना होगा और अपने आरोपों के बचाव में गवाह और दस्तावेज पेश करने होंगे। निंगप्पा ने मंजय्या से पूछा, 'मुझे बताओ, वे क्या पूछेंगे और मुझे क्या और कैसे जवाब देना चाहिए? वैसे भी तुम मेरे साथ आओगे ना?' मंजय्या ने कहा, 'विभागीय अधिकारी होने के नाते, अगर मुझे भी नोटिस मिलता है, तो मैं आऊंगा। अगर नहीं, तो मेरा वहां आना नियमों के खिलाफ होगा।' उन्होंने बात टाल दी। उन्हें निंगप्पा और उनके द्वारा उकसाए गए अन्य किसानों को सही जानकारी और मार्गदर्शन देना उचित नहीं लगा। अप्पाजप्पा को निलंबित हुए लगभग तीन महीने हो चुके थे। चार महीने से वेतन नहीं मिला था और उस्मानी के साथ आने के बाद अप्पाजप्पा भी उसके पास नहीं आया था। मंजय्या ने उसे चन्नारायपट्टाना में भी एक बार देखने के बाद नहीं देखा था। मंजय्या को लगा कि वह इस मामले में उसे हरा नहीं सकता। अगर जांच के समय ठीक से काम किया जाता और गवाहों को सही जानकारी दी जाती तो रिश्वत साबित करना मुश्किल नहीं था। लेकिन उसका मन नहीं था। अगर वह साबित भी कर देता, तो भी उसे लगता था कि वह जीत नहीं पाएगा। जब उसने तीन महीने तक उससे मिलने जाने में हिचकिचाते हुए टालमटोल की थी, तो अगर वह उसे हरा भी देता, तो आखिर क्या होता? अप्पाजप्पा का तबादला हो जाता या उसकी वेतन वृद्धि रोक दी जाती। लेकिन इससे, मंजय्या ने सोचा, उसकी बेचैनी कम नहीं होगी। उसने उस समय जो भी विचार आया, निंगप्पा को बताया और उसे भेज दिया। उसने सोचा कि दूसरे किसानों को भी ऐसे नोटिस मिले होंगे और वे भी उसे ढूंढते हुए आएंगे। उसने पूरी रात सोचा, सुबह उठा, पुरदम्मा और पुत्तेलैया को घर और खेतों में क्या-क्या काम करने हैं, इसके बारे में निर्देश दिए और बिलिकेरे से चला गया।

मंजय्या एक सप्ताह बाद लौटा। उसके लौटने तक विभाग का आदेश उसका इंतज़ार कर रहा था! मंजय्या ने एक विभागीय अधिकारी के विरुद्ध किसानों को भड़काया था और उनसे झूठी शिकायतें करवाई थीं, इसलिए चंदन का उसका अनुबंध तत्काल प्रभाव से रद्द कर दिया गया। उसे आदेश दिया गया कि वह अपने पास मौजूद सभी आधिकारिक अभिलेख और चंदन जिला कार्यालय में जमा करे और आदेश प्राप्त होने के सात दिनों के भीतर रसीद प्राप्त करे, अन्यथा आगे की कार्रवाई की जाएगी। मंजय्या को अनुबंध रद्द होने का कोई अफसोस नहीं था। लेकिन वह बेचैन हो गया। आखिर उसके खिलाफ हालात कैसे बदल गए? उसे ये सारी जानकारी किससे मिल सकती थी? उसने अपनी साइकिल में हवा भरी,

संकेनहल्ली के हैंडपोस्ट तक गया, उस्मानी से मिला और उससे उसे पता चला कि क्या हुआ था: कई किसान जिन्होंने शिकायत पर अपने अंगूठे के निशान लगाए थे, वे जांच में बिल्कुल भी उपस्थित नहीं हुए। बेंगलुरु से सीधे आए जांच अधिकारी ने तीखे सवाल पूछकर जिरह शुरू कर दी। उपस्थित किसानों ने झट से कहा, 'हमें क्या पता महोदय?' ठेकेदार मंजय्या ने हमें बताया और हमने उसे सच मानकर अपने अंगूठे के निशान लगा दिए।' केवल निंगप्पा ही अंत तक पूछताछ सहन कर पाए। आखिरकार, जब अधिकारी ने उनसे और पूछताछ शुरू की, तो निंगप्पा का और सहन नहीं हो सका। उन्हें सच बताने के लिए मजबूर होना पड़ा। उन्होंने कहा, 'मैंने किसानों को इसलिए उकसाया क्योंकि मेरे खिलाफ मामला दर्ज किया गया था।' पूछताछ, कैसी पूछताछ! एक बहुत ही सख्त और ईमानदार अधिकारी, शेर जैसा आदमी! उनका नाम मल्लारेड्डी है,' उस्मानी ने वर्णन किया।

मंजय्या ने पूछा, 'अप्पाजप्पा का क्या हुआ?'

जांच अधिकारी ने फैसला सुनाया कि अप्पाजप्पा को झूठा फंसाया गया था और वे निर्दोष थे, इसलिए उन्होंने उनका बकाया वेतन तुरंत जारी करने का आदेश दिया। इसके अलावा, उनका तबादला नेलमंगला कर दिया गया है। अधिकारी द्वारा जांच करने और बैंगलोर लौटने के चार दिन बाद यह आदेश डाक से आया। उस्मानी ने मंजय्या को आँख मारी और आगे कहा, "नहीं साहब, आप जैसे लोगों के लिए उस महिला को हराना नामुमकिन है। वह अपने पति के साथ खुद उप मुख्य संरक्षक के पास गई थीं। वह उनके पुराने दोस्त सुब्बय्या हैं।"

मंजय्या को ज़बरदस्त झटका लगा। 'तुम्हें किसने बताया?'

अप्पाजप्पा ने खुद मुझे बताया। एक दिन मेरी उनसे बस स्टैंड के पास एक सोडा शॉप में मुलाकात हुई। मैंने उनसे पूछा, "क्या बात है साहब? आप इतने चुप क्यों हैं? आपको कुछ करना चाहिए क्या?" देखिए मंजय्या साहब, अप्पाजप्पा विभाग के अधिकारी हैं। वही हमारे वेतन स्वीकृत करते हैं। अगर उन्हें निलंबित कर दिया जाए और वे घर पर बैठे रहें, तो क्या हमें बुरा नहीं लगेगा? तब अप्पाजप्पा ने कहा, "देखिए उस्मानी, कल हम बेंगलुरु गए थे। हमने उप मुख्य संरक्षक को एक याचिका सौंपी है। हम उस अधिकारी को बहुत समय से जानते हैं।" इसके तीन दिन बाद, जांच की तारीख बताते हुए एक नोटिस जारी किया गया। बाकी बातें आप समझ ही गए होंगे।

अप्पाजप्पा के निलंबन के बाद प्रशासन के उच्च स्तरों पर जो बदलाव हुए थे, उनकी जानकारी मंजय्या को नहीं थी। ज़ाहिर है, उन्होंने जानने की कोशिश भी नहीं की थी। अब उप प्रमुख सुब्बय्या का नाम सुनते ही उन्हें ऐसा लगा जैसे वे अंदर ही अंदर धंस गए हों। उन्होंने उस्मानी से पूछा, 'वे कब आए?' उस्मानी ने कहा, 'दो महीने पहले। हमें पता ही नहीं था।'

मंजय्या सीधे अपने घर लौट आया। उसे समझ आ गया था कि किसी भी तरह की याचिका से चंदन का ठेका नहीं बच सकता। उसने ज़िला कार्यालय में सारे रिकॉर्ड, हिसाब-किताब और चंदन जमा कर दिए, अपनी जेब से पाँच सौ रुपये दिए और रसीद ले ली। इसका मतलब था कि उस विभाग से उसका रिश्ता टूट चुका था और उससे भी। खैर, जीत तो उसी की हुई थी, उस धूर्त औरत की जिसने इतने बड़े अधिकारियों को अपने वश में किया था, मुझे भी अपने कब्जे में रखने की कोशिश की, बस मेरे साथ खिलवाड़ किया। उसने खुद को यह सोचकर तसल्ली देने की कोशिश की कि उसने भी उसे सबक सिखा दिया, उसे चार महीने तक बिना वेतन के तड़पाया। लेकिन किसी तरह, उसे तसल्ली नहीं मिली। वह हमेशा उसे दुख पहुँचाती रहती, उसके दिमाग में खटकती रहती और उसे अंदर ही अंदर परेशान करती रहती। उस डिप्टी चीफ साहब ने अप्पाजप्पा का तबादला नेलमंगला कर दिया है क्योंकि वह बैंगलोर के पास होगा। अब, क्या सरोजक्षी मेरी तरफ देखेगी भी, चाहे मैं कितना भी अच्छा बर्ताव करूँ? उसने हालात को स्वीकार करने की बहुत कोशिश की, कि उसे भूलने के अलावा कोई और रास्ता नहीं था। लेकिन लाख कोशिश करने के बावजूद, वह नहीं भूल पाया।

अब मंजय्या के काम में पहले की तरह कोई निश्चित उद्देश्य या स्थिरता नहीं थी। पुरदम्मा और पुत्तेल्लय्या की देखरेख में घर के काम-काज और कृषि कार्य सुचारू रूप से चल रहे थे। वह या तो घर पर लेटा रहता था या साइकिल से चन्नरायपट्टाना जाता, वहां के किसी चबूतरे में एक कमरा किराए पर लेकर लेट जाता। वह बाजार की गली में इधर-उधर टहलता रहता और कभी-कभी किसी दुकान के चबूतरे पर बैठकर समय बिताता। भूख लगने पर वह किसी होटल में जाकर जो भी मिलता, खा लेता। ऊब जाने पर वह अपने घर लौट आता। इसी दिनचर्या में व्यस्त एक दिन, जब वह बाजार की गली में चिंतामणि की दुकान के चबूतरे पर बैठा था, तो उसकी नजर उस पर पड़ी। उसके गांव बिलिकेरे की रहने वाली सावित्री अपने भाव, मट्टिकेरे के सत्यप्पा के साथ जा रही थी। सत्यप्पा ने सफेद खादी की धोती

और खादी का जूता पहना था और सावित्री ने पांच इंच बॉर्डर वाली सिंथेटिक सिल्क की साड़ी, चमकदार झुमके, सोने की चेन और सोने की चूड़ियां पहनी थीं और अपने देवर से कुछ बात कर रही थी। उसके हाथ में एक प्लास्टिक की थैली थी और उसके हाथ में भी एक बड़ी थैली थी। अगर कोई उन्हें देखता, तो ज़रूर सोचता कि वे पति-पत्नी हैं और मैसूर या बैंगलोर में घूमने या खरीदारी करने निकले हैं। मंजय्या ने सोचा, 'वाह, कितनी चुस्त-दुरुस्त लग रही है!' लेकिन तब तक वे उससे आगे निकल चुके थे। मंजय्या हैरान था: सत्यप्पा यहाँ क्यों है? बीमारी से सूजा हुआ, उदास चेहरा लिए, रोते हुए कह रहा था कि इलाज के लिए उसके पास पैसे नहीं हैं, अरे, सत्यप्पा उससे कब मिला था? क्या एक महीना पहले? अब तो लगता है कि वह पूरी तरह ठीक हो गया है। उसके मन में कुछ कौंधा। तुरंत शक ने अपना फन फैलाया और मंजय्या के कानों में फुसफुसाया: इस सत्यप्पा ने इतने सालों तक ब्रह्मचर्य का पालन किया और मैंने ही उसे फिर से जीवन का स्वाद चखाया। मंजय्या को शक हुआ: अब यह सत्यप्पा अपनी साली को बहला-फुसलाकर अपने पक्ष में करने की कोशिश कर रहा होगा, मंजय्या को गालियाँ दे रहा होगा और सावित्री को घुमाने, खरीदारी करने आदि के लिए ले जा रहा होगा। वह उठा और उनके पीछे गया। वे कंथाराजपुरा की हार्डवेयर की दुकान के अंदर थे। वह कुछ एल्युमिनियम के बर्तनों में से चुन रही थी। सत्यप्पा चुपचाप पास ही खड़े थे। मंजय्या उनसे बचकर निकल गए। बीस कदम चलते-चलते उनके दिमाग में सत्यप्पा के बारे में कुछ और जानकारी निकालने की योजना कौंध गई। मंजय्या सीधे डॉक्टर हशीम के क्लिनिक गए और डॉक्टर को सलाम किया। उनकी सेहत और अन्य बातों के बारे में पूछने के बाद, मंजय्या ने डॉक्टर से कहा, 'देखिए डॉक्टर साहब, मैंने एक मरीज़ को आपके पास भेजा था। मट्टीकेरे, टिप्पुर तालुका के सत्यनारायणप्पा। क्या वे ठीक हो गए?'

'ओह, उसे ज्यादा नुकसान नहीं हुआ था। आठ दिनों के भीतर ही वह सूख गया। एहतियात के तौर पर मैंने कुछ अतिरिक्त इंजेक्शन और दवाइयां दीं।'

'इस क्लिनिक से निकलने के बाद वह कहाँ रुका? दरअसल, मैं एक महीने से शहर से बाहर था और उसकी देखभाल नहीं कर सका।'

'कोई समस्या नहीं थी। उनकी भाभी, जो एक शिक्षिका हैं, यहीं रहती हैं। वह कन्नड़ गर्ल्स मिडिल स्कूल में पढ़ाती हैं। वह आईं और उन्हें अपने घर ले गईं और उनकी देखभाल की। मैंने उन्हें पंद्रह दिन पहले कहा था कि वे अपने घर जा सकते हैं।

फिर भी उन्होंने उन्हें यहीं रखा है ताकि उन्हें अच्छा पोषण मिल सके। लगता है वे कल अपने घर के लिए रवाना हो जाएंगे। सत्यनारायणप्पा आज सुबह यहां आए थे। उन्होंने पहले ही उनके मेडिकल बिल का भुगतान कर दिया था। मेरे मना करने के बावजूद, वे फल और फूल लाए, साथ ही दो सौ रुपये भी लाए और मुझे उपहार में दिए। अच्छे इंसान हैं, स्वभाव से उदार।' अब मंजय्या के लिए वहां बैठकर डॉक्टर से बातचीत जारी रखना असंभव था। उन्होंने कहा, 'मैं बस उनके बारे में आपसे पूछना चाहता था,' और विदा ली। कहीं जाने की इच्छा न होने के कारण, वे सीधे ट्रैवलर्स बंगलो में अपने कमरे में गए और लेट गए।

उन्होंने रात में अपने कमरे में खाना मंगवाया। अगले दिन भी नाश्ता और दोपहर का खाना उनके कमरे में आया, लेकिन उन्हें खाने की इच्छा नहीं हुई। लेकिन जब भूख लगी, तो उन्होंने थोड़ा सा खाया और प्लेट को मेज के कोने में रख दिया। हालाँकि मंजय्या अक्सर चन्नरायपट्टाना आते-जाते थे और यह कोई बड़ा शहर नहीं था, फिर भी उन्होंने सावित्री को बहुत कम ही देखा था, शायद चार-पाँच बार ही। किले का वह हिस्सा जहाँ वह रहती थी और लड़कियों का माध्यमिक विद्यालय, जो मानो किले से ही जुड़ा हुआ था, वे स्थान मंजय्या अक्सर नहीं जाते थे। पहले उन्होंने सावित्री को देखा था, लेकिन उन्हें इस बात की परवाह नहीं थी कि उसने उन्हें देखा है या नहीं। उनके मन में उसके बारे में कोई और विचार नहीं आता था, क्योंकि जैसे ही वह उसे देखते, उनके मन में यह भावना घर कर जाती थी कि 'वह घमंडी और अहंकारी है', मानो एक सहज प्रतिक्रिया हो। इस तरह कई साल बीतने पर, उपेक्षा और उदासीनता की भावना, कि उनके और उसके बीच कोई रिश्ता नहीं है, बढ़ती गई। यहाँ तक कि जब उन्होंने उसके पिता से अपने पक्ष में गवाह बनने का अनुरोध किया, तब भी सावित्री उनके मन में स्पष्ट रूप से नहीं थी। लेकिन जब से उसने उसे और उसके भाव को एक साथ देखा, तब से उसकी याद उसे सताने लगी। सत्रह साल पहले, शादी के शुरुआती दिनों में, मंजय्या को याद आया: ओह, वह रंगत, गोरा रंग, शरीर की बनावट, चेहरे की बनावट, वह कसाव, किसी के पास नहीं था। उसने सुखी पारिवारिक जीवन जीने के बजाय घमंडी और अभिमानी बनकर अपने ही परिवार को बर्बाद कर दिया। उसे न तो उसके स्कूल में और न ही चन्नरायपट्टाना कस्बे में किसी के साथ उसकी दोस्ती के बारे में पता था। अगर ऐसा कोई रिश्ता होता, तो क्या उसे पता नहीं चलता, उसने सोचा? लेकिन, कल उसे उसके भाव के साथ देखकर मंजय्या का मन बेचैन हो गया। उस बीमार व्यक्ति को,

जो यौन रोग से पीड़ित था, अपने घर ले जाना, उसकी सेवा करना, नर्स की तरह उसकी देखभाल करना, जबकि डॉक्टर ने कहा था कि वह अपने घर वापस जा सकता है, उसे पंद्रह दिन और अपने पास रखना, छी छी! मंजय्या के मन में संदेह से ज़्यादा ईर्ष्या हावी हो गई थी। लेकिन जब उसे नागी की सत्यप्पा के बारे में कही बात याद आई, तो उसे राहत मिली! 'अय्यो अय्या, वो कुछ नहीं कर सकता,' उसने कहा और उपहासपूर्वक हंस पड़ी। लेकिन जब उसे यह एहसास हुआ कि भले ही उनके पास 'वो' एक न हो, लेकिन उनके विचार एक जैसे हैं... मंजय्या की बेचैनी और बढ़ गई।

रात को उसे नींद नहीं आई। वह सोचने लगा, आखिर उसके साथ ऐसा क्यों हो रहा है? वह तो कितनी ही स्त्रियों के साथ सो चुका था। क्या उसने कभी सोचा भी था कि उसे विदा करने के बाद वह किसी और ग्राहक को तो नहीं ले जाएगी? उसने खुद को दिलासा देने की कोशिश की, पर फिर भी सावित्री के साथ ऐसा ही हो रहा था। सरोजक्षी के साथ भी तो ऐसा ही था। वह सुब्बय्या कौन था? लगता था वह कूर्गी था। क्या उस कमीने में मंजय्या के चेहरे-मोहरे, खूबसूरती या मर्दानगी थी? अगर सरोजक्षी ने एक बार भी, सिर्फ एक बार भी उसका स्वाद चख लिया होता, तो वह सुब्बय्या की तरफ कभी देख भी नहीं पाती। मंजय्या ने मन ही मन सोचा, 'हाँ, सच में मैंने उस दिन गलती की थी। मुझे उसका दाहिना हाथ नहीं छोड़ना चाहिए था। मुझे पहले ही वार में सब कुछ खत्म कर देना चाहिए था। मुझे अपनी कुशलता का इस्तेमाल करके उसे गुलाम बना लेना चाहिए था।' एक गुलाम की तरह जो कहता है, 'जो तुम कहो।' वह लेटकर यह कल्पना करने लगा कि अगर उसने सही कदम उठाए होते, और उस दुर्भाग्यपूर्ण दिन वह गलती न की होती, तो क्या होता।

अगले दिन वह थोड़ा देर से उठा। नहाते समय उसके मन में एक विचार आया। वाह, क्या शानदार योजना है! मंजय्या ने 'शाबाश' कहा और अपनी पीठ थपथपाई। उसने जल्दी से नहाना खत्म किया, इस्त्री किए हुए कपड़े पहने, कॉफी या नाश्ते का समय बर्बाद किए बिना चप्पलें पहनीं और निकल पड़ा। उसकी साइकिल खानाबदोशों के बंगले में कमरे में थी। उसने सुना था कि सावित्री कोटे नंजप्पा के घर के पीछे एक छोटे से कमरे में रहती है। अगर कोई हंगामा होता तो वह हमेशा कह सकता था कि वह उसका पति है और मामला शांत हो जाता। जब वह तेजी से टहल रहा था, तो नंजप्पा का बड़ा घर बंद था। जब उसने गेट खोला और बड़ी इमारत के दाहिनी ओर दिखाई देने वाले छोटे रास्ते पर चला, तो उसने देखा कि

उस छोटे घर का दरवाजा खुला था। वह सीधे अंदर गया और दरवाजे के पास खड़ा हो गया। सावित्री स्कूली बच्चों की नोटबुक व्यवस्थित कर रही थी। जब उसने मुड़कर उसे देखा, तो वह चौंक गई और अवाक रह गई। मंजय्या उसके पास आकर बोला, 'देखो, मैं तुमसे बात करने आया हूँ।' उसे समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहे और क्या करे। उसने बोलना शुरू किया, 'देखो, मैं तुम्हारे पिता की मृत्यु के लिए बिल्कुल भी ज़िम्मेदार नहीं हूँ। क्योंकि, तुम्हें पता है, उन्होंने गवाही नहीं दी। चलो, इस बात को छोड़ो। मैं खुद तुम्हें घर बुलाने वाला था, इसी बीच तुम्हारे पिता का निधन हो गया। कितनी सारी घटनाएँ हुईं।' सावित्री के चेहरे पर असमंजस था। वह मेज को देखती रही, उसे समझ नहीं आ रहा था कि क्या बोले, क्या करे और यहाँ तक कि वह अपना सिर उठाकर उसका चेहरा भी नहीं देख पा रही थी। एक पल भी देर किए बिना, पलक झपकते ही, 'सावित्री, मेरी बात सुनो, मैं तुमसे बात करना चाहता हूँ।' इतना कहकर उसने दरवाजा बंद किया, उसके पास कूदकर आया और उसे कसकर गले लगा लिया। उसने उसका मुँह अपने हाथ से बंद कर दिया, अपना पैर उसके पैर पर रखकर उसे गिरा दिया, कुश्ती की तरह पकड़ बना ली ताकि वह खुद को छुड़ा न सके और फुसफुसाते हुए, 'मेरी बात सुनो, मेरी बात सुनो' कहते हुए, उसे फुसलाते हुए, गले लगाते हुए, मंजय्या ने उस पर आक्रमण किया। वह इस बात का ध्यान रख रहा था कि सरोजक्षी के साथ की गई गलती न दोहराए। आक्रमण पूरा होने के बाद भी, उसने उसका मुँह बंद कर दिया ताकि वह चिल्ला न सके और अपने शरीर के सभी कामुक अंगों से उसे उत्तेजित करने लगा। वह विरोध कर रही थी, पीछे हटने, उसे गिराने और खुद को छुड़ाने के लिए संघर्ष कर रही थी। जब उसे एहसास हुआ कि उस इगुआना जैसी पकड़ से शारीरिक रूप से खुद को छुड़ाना असंभव है, जो हर पल कसती जा रही थी, तो सावित्री थक गई और शांत हो गई। फिर मंजय्या ने दशकों के अभ्यास से निपुणता प्राप्त कर चुके एक स्वच्छंद व्यक्ति के विज्ञान से अपनी कामुक उत्तेजनाओं को तेज कर दिया और जानता था कि सावित्री प्रतिक्रिया देने लगी है और इस क्रिया में भाग लेने लगी है। उसने उसके कानों में फुसफुसाया: 'यहाँ देखो, मेरी बातें सुनो' और उसकी कामुकता को और भड़का दिया। जब उसे यकीन हो गया कि सावित्री का प्रतिरोध खत्म हो गया है, तो उसने अपना हाथ उसके मुंह से हटा लिया। उसने सोचा कि सावित्री हार गई है और आज के लिए इतना ही काफी है। उसने तय किया कि अब से वह कुतिया की तरह आज्ञाकारी

रहेगी और उसने अपनी पकड़ ढीली कर दी और उठ खड़ा हुआ। सावित्री के चेहरे पर शर्म साफ झलक रही थी। जैसे ही उसने उसे छोड़ा, उसने अपना चेहरा दूसरी तरफ घुमाया, बाथरूम में गई और दरवाजा बंद कर लिया। मंजय्या एक पल भी वहां नहीं रुका, चप्पलें पहनीं, दरवाजा आधा बंद किया, बाहर आया, तेजी से बड़े घर के चारों ओर घूमा, फाटक और उस गली को पार किया, दूसरी गली में मुड़ा और झटपट खानाबदोशों के बंगले पर पहुंच गया। पूरे दिन सरोजक्षी की याद उसके मन में नहीं आई, क्योंकि उसे फिर से यह विश्वास हो गया था कि वह हारा नहीं है और कभी हारेगा नहीं।

एक दिन सुबह आठ बजे लगभग बीस साल का एक युवक रामकृष्णय्या के घर आया। रामकृष्णय्या खेतों और बाग में काम करने गए हुए थे। सुकन्या घर के कामों में लगी हुई थी। युवक की कमीज पसीने से भीगी हुई थी। उसका चेहरा धूल से सना हुआ था। ऐसा लग रहा था मानो वह दूर से आया हो। उसने सुकन्या को पहचान लिया, लेकिन सुकन्या उसे पहचान नहीं पाई। उसने अपने पायजामे की जेब से एक पर्ची निकाली, उसे सुकन्या के सामने रखा और कहा, 'मैं आपके गोदाम में सामान तौलने, बोरियां सिलने और वैगनों पर लादने का काम करता हूं। मेरा नाम पुत्तस्वामी है। साहूकार के पैर में घाव है। वह ठीक नहीं हो रहा, बल्कि खुल गया है। अंदर मांस और अस्थि मज्जा दिखाई दे रही है। साहूकार बच नहीं पाएगा। इसलिए क्लर्क ने मुझे आपसे और आपके पति से तुरंत आने के लिए कहा है और यह पत्र भी दिया है। लेकिन मुझे सही रास्ता नहीं पता था, मैं भटक गया, दूसरे गांव पहुंच गया और आखिरकार किसी तरह यहां पहुंच गया। मैं सुबह भोर से पहले, चार बजे अपने घर से निकला था।'

सुकन्या ने पत्र पढ़ा। लड़के ने जो कुछ भी बताया था, वह उसमें लिखा था। सार्थवल्ली नंजप्पा, नागप्पा के कारोबार के शुरुआती दिनों से ही सुकन्या के पिता के गोदाम में क्लर्क के रूप में काम करता था, हालांकि उसे कम वेतन मिलता था।

यह स्पष्ट नहीं था कि उसे कहीं और नौकरी नहीं मिली या फिर उसे अपनी जानी-पहचानी जगह छोड़ना पसंद नहीं था। सुकन्या ने पुट्टास्वामी से पूछा, 'किस तरह का घाव? यह कैसे हुआ?'

उन्होंने जवाब दिया, 'आप जानती हैं, साहब, साहूकार को मधुमेह था। फार्मासिस्ट ने कहा, "चीनी के मरीजों को ऐसे घाव होते हैं। मैं अपनी तरफ से पूरी कोशिश कर रहा हूँ। अगर वह बच नहीं पाते हैं, तो इसमें मेरी कोई गलती नहीं है।" उन्होंने कहा कि चीनी के मरीजों के घाव आसानी से नहीं भरते!'

पुट्टास्वामी जल्द से जल्द वापस लौटना चाहते थे। क्लर्क ने उन्हें जल्द से जल्द लौटने को कहा था क्योंकि उस दिन खोपरा की नीलामी थी। सुकन्या ने पुट्टास्वामी के लिए जल्दी-जल्दी रोटियाँ बनानी शुरू कर दीं। उन्हें अपने पति से अनुमति लेनी थी कि वे अपने पिता के घर कब और कैसे जा सकती हैं। जब उनके पिता ने बिना किसी विरोध के गणेश जी को अपने घर में रखकर उनकी उच्च शिक्षा पूरी करवाने के लिए ढाई हज़ार रुपये देने को तैयार हो गए, तब सुकन्या को अपने पिता के प्रति अपने पति के रवैये के बारे में कुछ पता नहीं था। रामकृष्णय्या का स्वभाव लोगों के बारे में बात करने का नहीं था। वे ऐसे ही अलग-थलग रहते थे मानो कुछ हुआ ही न हो। सुकन्या ऐसे व्यक्ति से बात करके अपने दुख को कम नहीं कर सकीं। उन्हें पूरा भरोसा नहीं था कि उनके पिता की मृत्यु के समय वे उनके साथ होंगे। उन्हें यह भी नहीं पता था कि वे कब बाग से लौटेंगे। यहाँ तक कि जब वे बाग में काम करने के लिए घर से निकलते थे, तब भी वे होलेनारसिपुरा से लाई हुई आध्यात्मिकता की एक किताब अपने साथ ले जाते थे। जब वह बाग में कुएँ के पास बैठकर किताब पढ़ता था, तो उसे नाश्ते या दोपहर के भोजन का समय कभी याद नहीं रहता था। सुकन्या पिछवाड़े के पास वाली दीवार के पास गई और होन्ना के घर की लक्ष्मी को ज़ोर से पुकारा। लक्ष्मी के आते ही सुकन्या ने उससे कहा, 'देखो लक्ष्मी, कृपया अपने लड़के को तुरंत हमारे बाग में भेजो। उसे दौड़कर अय्यावरु से कहने दो कि वह तुरंत आ जाएँ। कोई आया है। लड़के को अय्यावरु को तुरंत बुला लाना है।'

पुट्टास्वामी ने जब तक रोटी और चटनी का नाश्ता खत्म किया, रामकृष्णय्या तेज़ी से कदम बढ़ाते हुए लौट आए। उनके हाथ में एक बंधी हुई किताब थी। उन्होंने एक मोर का पंख बुकमार्क के रूप में रखा हुआ था। पुट्टास्वामी, जो आंगन में बैठे थे, ने रामकृष्णय्या को सब कुछ फिर से बताया। इस तरह सुकन्या को अपने पति को सब कुछ समझाने की परेशानी से मुक्ति मिल गई। उसने वह पत्र उन्हें दिया और

अंदर चली गई। रामकृष्णय्या को याद आया कि क्लर्क नंजप्पा वही आदमी था जो रामकृष्णय्या की शादी के दौरान इधर-उधर भाग-दौड़ कर रहा था, चापलूसी कर रहा था और चमचापन दिखा रहा था। पत्र पढ़ने के बाद, वे अंदर गए और सुकन्या से पूछा, 'अब तुम क्या कहती हो?' उसने कुछ नहीं कहा, बस उनके चेहरे को देखती रही। एक मिनट बाद, उन्होंने कहा, 'चन्नरायपट्टाना के लिए साढ़े ग्यारह बजे बस है। चलो चलते हैं। मैं चालपति शेट्टी से कुछ पैसे उधार ले लूंगा। अगर हम वह बस पकड़ लें, तो शाम से पहले टिपटूर पहुँच सकते हैं।' सुकन्या को बड़ी राहत मिली। वह बाहर आई और पुट्टास्वामी के साथ संदेश भेजा कि वे शाम तक टिपटूर पहुँच जाएँगे। पुट्टास्वामी ने रामकृष्णय्या से सही मार्ग पूछा और अपनी साइकिल पर सवार होकर निकल पड़े।

दंपति ने सुब्बन्नय्या के परिवार से घर की देखभाल करने का अनुरोध किया, उसे ताला लगाया, चाबियाँ उन्हें सौंप दीं और चले गए। वे चन्नरायपट्टाना की बस पकड़ सकते थे। चन्नरायपट्टाना बस स्टैंड पर उतरते ही रामकृष्णा सुकन्या को बस स्टैंड पर छोड़कर चालपति शेट्टी की दुकान पर चले गए। सुकन्या को न तो दुख हुआ और न ही सुकून। यह क्या था, वह समझ नहीं पा रही थी। उसके मन में चिंता और बेचैनी दोनों थी। उसका मन उसे चेतावनी दे रहा था कि उसके पिता की मृत्यु निश्चित है। अचानक उसके मन में एक इच्छा जागी। किसी भी तरह गणेश जी को उनके दादाजी की बीमारी के बारे में सूचित करना था और उन्हें हसन से सीधे तिपतुर बुलाना था। उसे लगा कि जब उनके दादाजी अंतिम सांस ले रहे हों, तब गणेश जी को वहाँ होना चाहिए। लेकिन वह उन्हें कैसे सूचित करती? कहा जाता है कि अगर चन्नरायपट्टाना से पत्र लिखा जाए, तो वह कल हसन पहुँच जाएगा। लेकिन उसे गणेश जी का पता नहीं था। अब तक उसे पत्र लिखने का कोई अवसर नहीं मिला था। वह अपने पति से कैसे पूछती? वह उससे पूछ सकता था, 'लड़का वहाँ दौड़कर क्यों आया, इस पोते और उस दादा का क्या रिश्ता है?' सुकन्या अपने पिता पर क्रोधित हो उठी। उसने पास ही दीवार पर बैठे एक व्यक्ति से, जिसके हाथ में टिकट बुक थी, पूछा, 'टिपटूर के लिए बस कितने बजे है?' उसने उत्तर दिया, 'दो बसें हैं महोदया, एक साढ़े तीन बजे और दूसरी शाम पाँच बजे।' सुकन्या को यह सोचकर राहत मिली कि अगर उसका पति थोड़ा देर से आए तो उसे चिंता करने की ज़रूरत नहीं है। क्या चालपति शेट्टी बिना लिखित और हस्ताक्षरित वचन पत्र लिए पैसे दे देगा? इसीलिए उसे देर हुई। सुकन्या अपने पति का स्वभाव जानती

थी। वह अपनी बात जल्दी खत्म करके, पैसे लेकर तुरंत नहीं चला जाता था। वह मूर्ति की तरह बैठा रहता था। वह उसकी चिंता कैसे समझ सकता था? वह उससे नाराज़ थी। अचानक उसकी नज़र किसी पर पड़ी जो उसके सामने से गुज़रा। जी हाँ, वह उसके ही गाँव का बुनकर थम्मन्ना था। उसने अंदाज़ा लगाया, 'शायद वो हसन में अपनी बेटी के घर के लिए निकल गए होंगे और बस का इंतज़ार कर रहे होंगे।' वो उठी, वहाँ गई और आवाज़ लगाई, 'थमन्ना शेट्टारे।' वो पीछे मुड़े, उसे पहचान नहीं पाए और उसे घूरते रहे। तब सुकन्या ने अपना परिचय दिया, 'अरे, शायद आप भूल गए होंगे, मैं आपके गाँव के परमेश्वरय्या की बहू हूँ।' जब उनके चेहरे पर पहचान की मुस्कान आई, तो उसने कहा, 'देखिए, मैं और मेरे पति अब बस से टिपटूर के लिए निकल रहे हैं। हमें पता चला है कि मेरे पिता टिपटूर में बहुत बीमार हैं और अपने आखिरी पल जी रहे हैं। हमारा बेटा हसन में पढ़ रहा है। उसने अंजनेय मंदिर के पीछे वाली गली में केंचय्या नाम के किसी व्यक्ति के घर के पीछे एक कमरा किराए पर लिया है। क्या आप कृपया उसे बता देंगे कि उसकी माँ ने उसे तुरंत टिपटूर जाने के लिए कहा है और उसे किसी भी कारण से देर नहीं करनी चाहिए?' क्या आप कृपया यह कर देंगे?' थम्मन्ना शेट्टारु ने मुस्कुराते हुए अपने दो सामने के दांत दिखाते हुए सुकन्या से पूछा: 'आपको कैसे पता चला कि मैं हसन के लिए निकल गया हूँ?' सुकन्या को समझ नहीं आया कि क्या जवाब दे। फिर भी, उन्होंने उसे आश्वासन दिया, 'जी हाँ, मैं आपके बेटे को ज़रूर बता दूँगा। आज शाम ही मैं यह खबर उसे दे दूँगा। मेरी बेटी का घर भी उस जगह के पास ही है,' और चले गए।

रामकृष्णय्या और सुकन्या तीन बजे वाली बस पकड़ पाए। जब तक वे टिपटूर पहुँचे और घर लौटे, शाम ढलने लगी थी। घर पर केवल क्लर्क नंजप्पा ही थे जो मरीज नागप्पा की देखभाल कर रहे थे। एक छोटा सा बल्ब मंद रोशनी दे रहा था। नागप्पा हॉल में फर्श पर बिछे पलंग पर लेटे हुए थे। सफेद पट्टी बंधी होने के बावजूद घाव से दुर्गंध आ रही थी। मरीज बहुत कमजोर और दुबला-पतला हो गया था। क्लर्क ने जोर से कहा, 'आपकी बेटी और दामाद आ गए हैं।' नागप्पा ने सुना और समझ भी गए। रामकृष्णय्या अपने ससुर के पास गए और पूछा, 'अब आप कैसा महसूस कर रहे हैं?' नागप्पा ने आँखें घुमाईं, मानो समझ गए हों। रामकृष्णय्या थोड़ी देर पलंग के पास बैठे रहे। सुकन्या आई, अपने पिता के हाथों को छुआ, उनकी बाहों और

कंधों को थामा और काँपा। उसकी आँखों से आँसू बहने लगे। उसके पिता की आँखें भी आँसुओं से भर आईं।
उसने क्लर्क से पूछा, 'डॉक्टर ने क्या कहा?'
'कृपया अंदर आइए। मैं आपको बताता हूँ,' उसने कहा, उसे अंदर ले गया और बत्ती जला दी। यह भी कम वाट का बल्ब था, जिससे उतनी ही रोशनी निकलती थी जितनी मिट्टी के तेल के दीपक से। क्लर्क ने अपनी आवाज़ धीमी कर ली ताकि मरीज़ को उसकी आवाज़ सुनाई न दे और बोला, 'आप डॉक्टर सीतारामय्या को जानती हैं ना? वही आपके पिताजी की जाँच कर रहे हैं और दवाइयाँ दे रहे हैं। उन्होंने बारह दिन पहले उन्हें बैंगलोर जाने को कहा था, क्योंकि मधुमेह के रोगियों को ऐसे घाव होते हैं। आपके पिताजी तब पूरी तरह होश में थे। लेकिन उन्होंने डॉक्टर की सलाह नहीं मानी। बल्कि उन्होंने कहा कि सीतारामय्या बैंगलोर में अपने डॉक्टर मित्रों से उनसे पैसे कमाना चाहते हैं। आपके पिताजी ने कहा कि वे किसी देसी दवा से अपना इलाज कर लेंगे, करेले का रस पिया और चुप रहे। देखो सुकन्याव, मैंने भी उनसे कहा था कि इससे कोई फायदा नहीं होगा और उन्हें डॉक्टर की सलाह मानने के लिए मजबूर किया। लेकिन देखो, आखिर मैं उनका अधीनस्थ हूँ, मैं अपने मालिक को कितना मजबूर कर सकता हूँ?' इसके अलावा, मालिक ने डॉक्टर सीतारामय्या के बिल का भुगतान नहीं किया। इसलिए, उन्होंने मरीज का इलाज करने की जहमत ही नहीं उठाई। तब तुम्हारे पिता ने सरकारी अस्पताल के फार्मासिस्ट नंजुंदप्पा को बुलवाया, क्योंकि उनकी फीस कम थी। वह आए, घाव पर पट्टी बांधी, गोलियां दीं और चले गए। मालिक ने सोचा कि इस इलाज से मरीज ठीक हो जाएगा और चुप रहे। वह फार्मासिस्ट आया और पट्टी बांधी क्योंकि तुम्हारे पिता एक बड़े गोदाम मालिक हैं। उन्होंने उस फार्मासिस्ट को भी वेतन नहीं दिया था!
सुकन्या को भी डॉ. सीतारामय्या को देखने की याद आ गई। जब वह छोटी बच्ची थी, तब वे तिप्पुर के सर्वश्रेष्ठ डॉक्टर के रूप में प्रसिद्ध थे। उनका क्लिनिक डोड्डापेट में था। सुकन्या ने अपने पति को अंदर बुलाया, क्लर्क द्वारा बताई गई सारी बातें उसे खुद क्लर्क के सामने बताईं और अपने पति से कहा, "कृपया डॉ. सीतारामय्या के पास जाइए। उनसे कहिए, 'जो भी खर्चा होगा, मैं चुका दूंगी। कृपया आइए और मेरे ससुर का इलाज कीजिए। अगर आप उनसे विनती करेंगे, तो वे ज़रूर आएंगे।' सुकन्या के बोलते ही उसके मन में एक विचार आया: अगर वे

कहते हैं कि वे जो भी रकम होगी, चुका देंगे, तो उनके पास वह रकम होनी चाहिए। उसे इस बात का कोई अंदाजा नहीं था कि उसके पति ने चालपति शेट्टी से कितना उधार लिया था। हालांकि, रामकृष्णय्या बिना कुछ बोले जाने लगे और क्लर्क नंजप्पा उन्हें डॉक्टर के क्लिनिक तक ले जाने के लिए उनके पीछे-पीछे चलने लगा।

डॉक्टर के क्लिनिक में इंतज़ार कर रहे मरीज़ों की भीड़ लगी हुई थी। फिर भी, जब क्लर्क नंजप्पा अंदर गया और सफ़ेद बालों और सफ़ेद दाढ़ी वाले, सफ़ेद कमीज़, सफ़ेद पतलून और काले बूट पहने डॉक्टर सीतारामय्या को सूचना दी, तो डॉक्टर ने रामकृष्णय्या को अंदर बुलाया। उन्होंने रामकृष्णय्या को अपने सामने वाली कुर्सी पर बैठने को कहा और बोले, 'गोदाम मालिक नागप्पा के दामाद, आप बता रहे हैं ना, कौन सी जगह?' रामकृष्णय्या ने जवाब दिया, 'बिलिकेरे के रामकृष्णय्या।' तुरंत डॉक्टर ने कहा, 'मुझे तुरंत याद नहीं आया, इसलिए मैंने पूछा। बिलिकेरे परमेश्वरय्या आपके पिता हैं। मुझे पता है कि अदालत में झूठी गवाही देने के पश्चाताप में उनकी मृत्यु हुई थी। दुर्भाग्य से, मुझे उनके जीवित रहते उनसे मिलने का अवसर नहीं मिला। अब, कृपया मुझे अपने आने का कारण बताइए। ऐसा लगता है कि आप बिना तैयार हुए ही जल्दी में यहाँ आ गए हैं।'

रामकृष्णय्या ने कहा, “कृपया चिकित्सक जी, मैं अपने साथ पैसे लाया हूँ। चाहे कितना भी खर्च हो, मुझे कोई आपत्ति नहीं है। लेकिन आपको आकर मेरे ससुर जी का इलाज करना होगा ताकि वे बच सकें। मेरी पत्नी और मैं यहीं रुकेंगे और उनके पूरी तरह ठीक होने तक उनकी देखभाल करेंगे।”

डॉक्टर ने कहा, 'देखिए, मैंने आपका नाम नहीं सुना!' वहाँ खड़े क्लर्क ने कहा, 'रामकृष्णय्या', और फिर डॉक्टर ने आगे कहा, 'देखिए रामकृष्णय्या, मैंने उन्हें दस-बारह दिन पहले ही बता दिया था कि इस तरह की बीमारी का इलाज यहाँ संभव नहीं है। आप बैंगलोर जाइए। मैं आपको नर्सिंग होम का नाम और पता दे दूँगा और तुरंत दिए जाने वाले इलाज के बारे में बता दूँगा। नागप्पा के बिल न चुकाने का यही एकमात्र कारण नहीं था; वह पैसे देने वाले व्यक्ति नहीं थे। लेकिन इस शहर में हमारे पास ऐसे मरीजों के इलाज की कोई सुविधा नहीं है। अगर किसी बड़े नर्सिंग होम में इलाज होता, तो सारी सुविधाएँ होतीं। वहाँ अलग-अलग तरह की बीमारियों के इलाज के विशेषज्ञ होते और वे उसी हिसाब से फीस लेते। लेकिन मुझे लगता है कि अगर बारह दिन बीत चुके हैं,' उन्होंने एक पल सोचा, अपनी इलाज की सूची

खोली, बारह दिन पहले की तारीख खोजी और कहा, 'देखिए, अगर आप उन्हें आज ही बैंगलोर ले जाएँ, तो भी वे बच नहीं पाएँगे। अब आप घर जाइए। इन सभी मरीजों की जाँच करने के बाद, मैं आकर उन्हें देख लूँगा।' क्या आप जानते हैं कि मैं क्या भविष्यवाणी कर सकता हूँ? मैं केवल इतना ही बता सकता हूँ कि वह कितने दिनों में अंतिम सांस लेगा। देखिए, आप अपने क्लर्क नंजप्पा से पूछकर पुष्टि कर लीजिए। यह डॉ. सीतारामय्या शेखी नहीं बघारते। अगर वे किसी गर्भवती महिला की जांच करते हैं, तो वे केवल यही भविष्यवाणी कर सकते हैं कि उसकी प्रसव तिथि तय होगी। कभी-कभार एक दिन पहले या एक दिन बाद हो सकता है। ठीक उसी तरह, रोगी की स्थिति देखकर, वे उसकी मृत्यु की सही तारीख की भी भविष्यवाणी कर सकते हैं। वह भी एक दिन पहले या एक दिन बाद हो सकती है। है ना नंजप्पाय्या?

क्लर्क ने सिर हिलाते हुए कहा, 'बिल्कुल सही, बिल्कुल सही।'

डॉक्टर ने अपनी घड़ी देखी और कहा, 'देखो, अब साढ़े सात बज गए हैं। मैं बाह्य रोगियों की जांच करके लगभग नौ बजे तुम्हारे घर आऊंगा।'

रामकृष्णय्या और क्लर्क घर लौट आए। क्लर्क ने सुकन्या को डॉक्टर की बात बताई। इस बीच सुकन्या ने रसोई की तलाशी ली। इस बार घर में रागी का आटा एक सेर तक नहीं था। पत्थर के एक घड़े में आधा सेर काला नमक ही बचा था, बाकी सारे टिन, बर्तन और पतीले खाली थे। बस जलाने के लिए लकड़ी थी। एक मिट्टी के तेल का चूल्हा था और एक बर्तन में थोड़ा सा दूध था। यह पुराना चूल्हा पहले इस घर में नहीं था। सुकन्या को लगा कि क्लर्क दूध उबालने के लिए इसे लाया होगा और उसने उससे पूछकर इसकी पुष्टि भी कर ली। उसे नहीं पता था कि उन्हें वहां कितने दिन रहना पड़ेगा। इसके अलावा, एक बार देखकर और उसे उस हालत में छोड़कर वापस लौटना भी मुमकिन नहीं था। अब उसे चावल, दाल, इमली, मिर्च, नारियल और बाकी सभी ज़रूरी चीज़ों की पर्ची लिखनी थी, अपने पति को सूची देनी थी और उनसे ये सब लाने को कहना था। सुबह जल्दी में होने के कारण दोनों ने सिर्फ एक-एक रोटी ही खाई थी। अब उसके पति को दुकान जाकर राशन लाना था, फिर उसे खाना बनाना था... ओह, कितना समय बर्बाद करने वाला काम होगा! ऐसा सोचते हुए उसे अपने पिता पर गुस्सा आया। तभी उसका पति और दुकानदार लौट आए। उसने अपने पति को राशन खरीदने की ज़रूरत बताई। रामकृष्णय्या ने कहा, 'अभी राशन खरीदकर फिर खाना क्यों

बनाना? हम किसी होटल में जाकर खाना खाकर वापस आ सकते हैं या फिर खाना मंगवा सकते हैं।' उन्होंने दुकानदार की ओर देखा। दुकानदार ने भी सहमति में सिर हिलाया। उन्होंने दुकानदार को कुछ पैसे दिए और कहा, 'तुम भी यहीं खाना खा लो। मरीज़ के लिए तीन वक्त का खाना और थोड़ा दूध ले आना।'

नौ बजे डॉक्टर आए और नागप्पा के पैर के घाव की जाँच की। 'सिर्फ चौबीस घंटे बचे हैं। अगर आप उन्हें हवाई जहाज़ से लंदन भी ले जाएँ, तो यही नतीजा होगा!' वे उठे। 'जो होना है, उसके लिए तैयार रहें।' उन्होंने अपना थैला उठाया और चले गए। सुकन्या ने थोड़ा दूध गर्म किया और अपने पिता को पिलाया। थोड़ा दूध मरीज़ के मुँह में चला गया। उसने नंजप्पा से कहा, 'देखिए, आज आप घर जाइए और आराम कीजिए। इतने दिनों से आप दिन-रात मेरे पिता की देखभाल कर रहे हैं।' नंजप्पा ने कहा, 'ठीक है, आप हमारा घर तो जानती ही हैं ना? अगर कोई आपात स्थिति हो, तो मुझे बुला लीजिएगा। अगर भाव मेरे साथ आए, तो मैं उन्हें अपना घर दिखा दूँगा।' रामकृष्णय्या उनके साथ गए, जगह नोट की और लौट आए।

मरीज बिल्कुल शांत लेटा हुआ था। हालाँकि साँसें तेज़ चल रही थीं, रामकृष्णय्या जानते थे कि ये अंतिम अवस्था की साँसें नहीं हैं। उन्होंने अपनी पत्नी को समझाया। उन्हें नींद आ रही थी और वे जम्हाई ले रहे थे। उनकी दोपहर की नींद छूट गई थी। इसके अलावा, उन्हें ऊबड़-खाबड़ बजरी वाली सड़क पर लंबी बस यात्रा की आदत नहीं थी। भोजन के भारीपन ने उनकी नींद और भी खराब कर दी थी, लेकिन उनकी पत्नी जागती रहीं। उन्हें मरणासन्न मरीज के साथ उन्हें अकेला छोड़कर सोना नहीं चाहिए था। ऐसा सोचते हुए वे दीवार से टेक लगाकर बैठ गए। न कुछ करने को था, न कुछ बोलने को। ऐसी परिस्थितियों में सुकन्या बात करना चाहती थी। उसे लगता था कि उसके पति को उससे कुछ कहना चाहिए। उसे उसकी हर बात सुननी चाहिए। कहना चाहिए, 'हाँ, ऐसा ही है।' ऐसी परिस्थितियों के अलावा वे एक-दूसरे से कब बात कर पाते थे? क्या बोलने से ही उन्हें एक-दूसरे को सांत्वना और हिम्मत नहीं मिलती थी? लेकिन सुकन्या अपने पति के स्वभाव को जानती थी। शिवालय के सामने परमेश्वरय्या के पिता द्वारा पेड़ की शाखा पर फांसी लगाने के बाद, जब उनके शरीर को नीचे उतारा गया और दाह संस्कार के लिए ले जाया गया, तब भी उनके पति ने एक शब्द भी नहीं बोला। वे आज की तरह ही चुप रहे। कई रातें उन्हें नींद नहीं आई। इसके अलावा, उन्होंने अपने पिता को याद करने या उनकी प्रशंसा करने का कोई शब्द नहीं कहा, न ही उनके द्वारा प्यार से

पाले-पोसे जाने के लिए आभार व्यक्त किया। लेकिन उनका चेहरा हमेशा उदास रहता था। उनका मन और आंखें अंतर्मुखी थीं। अब भी वे मौन आत्मनिरीक्षण में डूबे हुए थे। ये सब प्रकट होते हुए भी, वाणी से कुछ भी व्यक्त नहीं हो रहा था। सुकन्या ने स्वयं को सांत्वना दी, क्या ऐसा व्यक्ति इस स्थिति में बोलेगा? उसने निश्चय किया कि उसे जागते रहना चाहिए, समय-समय पर अपने पिता के मुंह में दूध की एक बूंद डालनी चाहिए। इसके अलावा उसके पास कोई और काम नहीं था। उसे मृत्यु के निकट आने पर सतर्कता से देखना चाहिए। देखकर वह क्या कर सकती थी? उसे अपने पति से कहना चाहिए, 'देखो, क्या हो रहा है?' जीवन अपने आप समाप्त हो जाएगा। फिर उसे याद आया कि रसोई में देवताओं के आले में काशी से लाया हुआ पवित्र गंगाजल से भरा एक सीलबंद तांबे का कलश रखा है। मृत्यु के समय उस कलश को तोड़कर उसके मुंह में एक छोटी चम्मच गंगाजल डालनी चाहिए। जैसे ही उसे याद आया, वह अंदर गई और देखा कि कलश वहीं है और अपने पति से कहा, 'तुम्हें हंसिया से सील खोलनी होगी।' उसने कहा, 'जी हां, ऐसा ही करना चाहिए। एक हंसिया ढूंढो और उसके किनारे से धूल साफ करो और उस तांबे की चम्मच को भी धो लो।' अब सुकन्या को तसल्ली हुई कि उसके पति ने उससे सच्चे मन से बात की है। इसके अलावा, अब उसे जागते रहने का एक स्पष्ट उद्देश्य मिल गया था। वह उठी, हंसिया और तांबे की चम्मच ढूंढी और उन्हें मिट्टी से रगड़कर धोया, क्योंकि घर में इमली नहीं थी, उन्हें पोंछा और पास रख दिया। फिर वह मरणासन्न रोगी के पास बैठ गई। कभी-कभी रोगी अपनी आंखें आधी खोलता था। बाकी समय उसकी पलकें बंद रहती थीं। जब उसकी आंखें आधी खुली होतीं, तो वह उससे पूछती, 'आप कैसे हैं?' 'देखो पापा, मैं आ गई, सुकन्या आ गई।' वह उनके कान में चिल्लाती। उनके चेहरे पर पहचान का भाव देखकर उसे तसल्ली मिलती। आधी रात हो चुकी थी। समय बहुत धीरे-धीरे बीत रहा था। उसने अपने पति से बात करने का कोई और बहाना सोचा, पर कितना भी सोचा, कुछ समझ नहीं आया। उसे भी नींद आने लगी थी। लगातार बैठे रहने से उसकी पीठ में दर्द होने लगा था। उसके पति के पास सहारा लेने के लिए दीवार थी। लेकिन बिस्तर के पास, जहाँ वह बैठी थी, वहाँ ऐसा कोई सहारा नहीं था। उसे दूर जाकर दीवार पर सहारा लेने का मन नहीं कर रहा था। वह अपने पति से नाराज़ थी।

तभी कदमों की आहट सुनाई दी और दरवाजे पर दस्तक हुई। सुकन्या ने सोचा कि शायद नंजप्पा होंगे। रामकृष्णय्या ने पूछा, 'कौन है?' 'मैं हूँ' सुनकर सुकन्या समझ गई कि ये गणेश हैं। उसे ऐसा लगा जैसे उसके दो हाथ और उग आए हों। उसने अनुमान लगाया कि थम्मन्ना शेट्टी ने तुरंत गणेश को सूचना दे दी होगी। उस समय हसन से टिपटूर के लिए कौन सी बस थी? उठकर उसे याद आया कि उसने अभी-अभी ट्रेन के चलने की आवाज सुनी थी। गणेश अंदर आए और बोले, 'थम्मन्ना शेट्टी ने मुझे सूचना दी थी। उस समय कोई बस सेवा नहीं थी। मैं रात की ट्रेन से निकला, अरसिकेरे आया और फिर मेल ट्रेन से यहाँ आया।' रामकृष्णय्या ने यह नहीं पूछा कि थम्मन्ना शेट्टी के माध्यम से किसने संदेश भेजा या ऐसी कोई बात। उन्होंने सोचा कि जो बात समझी जा सकती है, जो समझी जा चुकी है, उसके बारे में पूछताछ करना अनावश्यक है। यही उनका तरीका था। गणेश अपने दादाजी के पलंग के पास आए और अपनी माँ से पूछा, 'अम्मा, दादाजी को क्या हुआ?' उनकी माँ ने बताया। फिर उसने अपने पति की ओर मुड़कर कहा, 'आप जाइए, चटाई बिछाइए और सो जाइए। गणेश जी मेरा साथ देंगे।' रामकृष्णय्या अंदर के कमरे में गए, चटाई ली, उस पर जमी धूल झाड़ी, उसे बिछाया और लेट गए। थोड़ी देर बाद सुकन्या भी दीवार के सहारे सो गई। गणेश जी तो ज़मीन पर ही सो रहे थे।

सुकन्या सुबह तड़के उठी, अपने पिता का चेहरा पोंछा और उन्हें थोड़ा दूध पिलाया। रामकृष्णय्या और गणेश भी उठकर आसपास बैठ गए। क्लर्क भी अपने घर से आकर वहीं खड़ा हो गया। नागप्पा के पैर के घाव से बदबू बढ़ गई थी, इसलिए फार्मासिस्ट को आकर नई पट्टी लगानी पड़ी। मरीज को जांघों तक चादर से ढका गया था ताकि मक्खियां उसे परेशान न करें, लेकिन सुबह होते ही घाव की दुर्गंध से आकर्षित होकर मक्खियां भिनभिनाने लगीं। मरीज की कमीज की बदबू घाव की गंदी बदबू से भी ज्यादा थी। जब सुकन्या अपने पिता को बिठाने, गीले कपड़े से उनका शरीर पोंछने और कमीज बदलने के बारे में सोच ही रही थी कि नागप्पा ने अपनी आंखें खोल दीं। उनके चेहरे पर घबराहट और चिंता थी। वे कुछ बुदबुदा रहे थे, मानो कुछ मांग रहे हों। उन्होंने बड़ी मुश्किल से अपना दाहिना हाथ उठाया और अपनी बगल में टटोला। सुकन्या ने सोचा कि अब वह कम से कम एक बार अपने पिता से बात कर सकती है और बोली, 'देखो पापा, क्या? क्या चाहते हो? क्या मुझे पहचानते हो?' आपकी पुत्री सुकन्या। मैं आ गई हूँ। देखिए अप्पा, गणेश जी यहाँ हैं। देखिए, आपके दामाद भी यहाँ बैठे हैं।' लेकिन ये शब्द नागप्पा

के मन तक नहीं पहुँचे। सुकन्या बार-बार उन्हें पुकारती और पूछती, 'अप्पा, बताइए, आप क्या चाहते हैं? आप क्या चाहते हैं?'
उसके पास खड़े क्लर्क ने कहा, 'मालिक ने अपनी तिजोरी की चाबी अपने कंधे पर बंधे पवित्र धागे से बांध रखी है। जब भी उन्हें होश आता और चाबी याद आती, तो वे उसे टटोलते और छूते थे। अब भी वे उसे ढूंढ रहे हैं।'
रामकृष्णय्या अपने ससुर के पास गए, बदबूदार और दुर्गंधयुक्त कमीज उठाई, दुर्गंधयुक्त पवित्र धागे में खोजबीन की और उसमें एक मोटी चाबी पाई। उन्होंने धागे को नुकसान पहुंचाए बिना सावधानीपूर्वक गांठ खोली और चाबी नागप्पा के दाहिने हाथ में रख दी। उन्होंने एक शब्द भी नहीं कहा। नागप्पा ने पहले तो कमजोरी से चाबी को अपने हाथ में थामे रखा। धीरे-धीरे उन्होंने उंगलियों को चाबी के चारों ओर लपेटा और मुट्ठी कस ली। बिना सहारे के कोहनी पर टिका हुआ हाथ चाबी को मजबूती से पकड़े हुए मुट्ठी बन गया और सीने पर टिक गया। धीरे-धीरे उनकी आंखें बंद हो गईं। चेहरे पर घबराहट और चिंता कम हो गई और एक ऐसी नींद छा गई जो सुकून का एहसास दिलाती थी। यह सबने देखा।
रामकृष्णय्या ने अपनी पत्नी से कहा, 'जाओ नहा लो। मुझे माचिस दो, मैं बाथरूम का चूल्हा जला देता हूँ, क्योंकि तुम ठंडे पानी से नहीं नहा सकती।' सुकन्या उठी और बाथरूम में आग जला रहे अपने पति से पूछा, 'क्या आप कुछ राशन लाएँगे?' रामकृष्णय्या ने कहा, 'देखो अब क्या पकाओगी? क्या हम किसी होटल से कुछ नहीं ला सकते? मैं क्लर्क से इडली और कॉफी लाने को कहता हूँ। उसके बाद देखते हैं क्या करते हैं।' क्लर्क ने अभी तक अपना चेहरा नहीं धोया था। रामकृष्णय्या ने उससे कहा, 'जो दूध तुम कल रात लाए थे, वह अभी भी ठीक है। घर जाओ, नहा लो और बाकी काम निपटा लो। वापस आते समय होटल से दूध, बीस इडली और चटनी ले आना।' रामकृष्णय्या ने उसे पैसे दिए। गणेश रोगी के पास बैठ गए।
सुकन्या के घर की सफाई करने और अपने पति के स्नान करने तक गणेश अपने दादा के पलंग के पास बैठे रहे। रामकृष्णय्या ने जल्दी से उनके कपड़े धोए, उन्हें सूखने के लिए फैलाया और वापस आ गए। फिर गणेश स्नान करने चले गए। रोगी ने अपनी आँखें बंद कर रखी थीं। चाबी वाली मुट्ठी उनकी छाती पर थी। सुकन्या ने अपनी साड़ी धोई, उसे सूखने के लिए फैलाया और अपने पिता के पास बैठकर उन्हें थोड़ा दूध पिलाया। उसने कहा, 'पापा, अपना मुँह खोलिए, थोड़ा दूध पी

लीजिए।' उसने उनके होंठ खोलने की कोशिश की, लेकिन वे नहीं खुले। उसने उन्हें जबरदस्ती खोलने के लिए अपनी उंगलियाँ उनके बीच डालीं। वे ठंडे थे। उसने अपने पति को बुलाया, 'यहाँ आइए, देखिए, ये बर्फ की तरह ठंडे हैं।' रामकृष्णय्या आए और जाँच की। उन्होंने चाबी वाली मुट्ठी में मौजूद हाथ की नब्ज़ जाँची। जीवन कुछ घंटे पहले ही निकल चुका था। सुकन्या रोने लगी, 'पूरी रात हम इंतज़ार करते रहे, काश हम उनकी मृत्यु के समय उनके मुँह में गंगाजल डाल पाते।'

थोड़ी देर में क्लर्क एक पर्स में इडली का पैकेट और एक जग में दूध लेकर आया और वहीं खड़ा हो गया। दस मिनट बाद रामकृष्णय्या ने कहा, 'देखिए, मैं यहाँ अजनबी हूँ, इस जगह पर मैं किसी को नहीं जानता। कृपया शववाहक, अंतिम संस्कार करने वाले पुजारी, लकड़ी और अन्य आवश्यक वस्तुओं की व्यवस्था कीजिए। ये लीजिए।' उन्होंने अपनी कोट की जेब से पैसे निकाले, गिने और कहा, 'ये लीजिए सौ रुपये, जो भी आवश्यक हो ले आइए। अगर और पैसों की ज़रूरत होगी, तो मैं दे दूँगा।' क्लर्क चला गया। रामकृष्णय्या स्नानघर में गए, कुछ लकड़ियाँ लाए, उन्हें घर के सामने रखा और जला दिया, ताकि लोगों को घर में मृत्यु की सूचना मिल सके। जब तक क्लर्क अंतिम संस्कार की सारी व्यवस्था करके वापस नहीं आया, तब तक कुछ नहीं किया जा सकता था। सुकन्या भी चुपचाप बैठी रही क्योंकि वह शोक के बोझ से मुक्त हो चुकी थी। वह पहले ही रो-रो कर थक चुकी थी। गणेश भीतरी द्वार के पास खड़े थे। उन्हें न तो रोने का मन था और न ही उन्हें समझ आ रहा था कि क्या कहें। ढाई घंटे बीत जाने के बाद भी क्लर्क वापस नहीं आया। सब कुछ ठीक करना पड़ा; सबको ढूँढना पड़ा। आखिरकार लगभग बारह बजे, वह ज़रूरी सामान से भरा थैला लेकर तेज़ी से आया। पुजारी और चार सहायक उसके पीछे-पीछे आए। और कोई नहीं था। पुजारी अंदर आए और बोले, 'यह क्या है, तुमने पैर क्यों नहीं मोड़े और बाँहें क्यों नहीं बाँधीं? अब तक तो अकड़ गई होंगी।' उन्होंने वहाँ बैठे लोगों पर नाराज़गी जताई। 'मुझे यह ख्याल ही नहीं आया। चलो अब करते हैं,' रामकृष्णय्या ने कहा, शव के पास आए, मुट्ठी में पकड़ी चाबी को देखा और एक पल चुपचाप खड़े रहे। फिर वे पुजारी की ओर मुड़े और बोले, 'क्या आप बाहर का काम देख लेंगे? कुछ पारिवारिक मामला है जिस पर चर्चा करनी है।' पुजारी बाहर चले गए। क्लर्क भी वहाँ से चला गया और अंतिम संस्कार की व्यवस्था की देखरेख करने लगा। रामकृष्णय्या ने सामने का दरवाज़ा

बंद किया, कुंडी लगाई, वापस आए और अपनी पत्नी से शव की मुट्ठी से वह चाबी लेने को कहा। उसने अपने पति के चेहरे की ओर देखा। उसने फिर दोहराया, 'क्या तुमने नहीं सुना?' मानो वह समझ गई हो, वह झुकी और शव की मुट्ठी से चाबी निकालने की कोशिश की। लेकिन वह चाबी नहीं निकाल पाई, शव ने चाबी को कसकर पकड़ रखा था। उसने धीरे-धीरे और कुशलता से उंगलियों को खोलकर चाबी निकालने की कोशिश की। लेकिन शव ने अपनी कसी हुई मुट्ठी की एक भी उंगली नहीं छोड़ी। सुकन्या ने फिर कोशिश की। यह समझकर कि झुककर चाबी निकालना संभव नहीं है, वह शव के पास बैठ गई, अपनी सांस रोक ली और मुट्ठी खोलने लगी। उसने दो उंगलियों को जबरदस्ती खोल रखा था। फिर जब उसने अपनी उंगली को बची हुई दो उंगलियों के बीच में डालकर जगह बनाने की कोशिश की, तो खुली हुई उंगलियां तुरंत वापस अपनी जगह पर आ गईं और सुकन्या की उंगलियां फंस गईं। वह पसीने से तरबतर और घबरा गई। उसने अपने पति के चेहरे की ओर देखा। उसने उसे हिम्मत दी, 'अपनी उंगलियां छुड़ा लो।' उसने फिर कोशिश की। लेकिन शव ने चाबी नहीं छोड़ी। उसने अपने पति को पुकारा, "यहाँ आओ और इसे इसकी मुट्ठी से निकालो।" लेकिन वह वहीं जड़वत खड़ा रहा और बोला, "तुम्हें खुद ही निकालना होगा।" तब उसने अपने पुत्र को पुकारा, "गणेश, यहाँ आओ!" गणेश उसके पास आया। माता-पिता दोनों ने मिलकर प्रयास किया, शव की उंगलियाँ खोलीं और मुट्ठी से चाबी सफलतापूर्वक निकाल ली। सुकन्या चाबी अपने पति को देने गई। उसने चाबी लेने से इनकार कर दिया और बोला, "मुझे यह नहीं चाहिए। तुम दोनों तहखाने के अँधेरे कमरे में जाओ, तिजोरी खोलो। वहाँ जो भी धन मिले, उसे एक थैले में भरकर यहाँ ले आओ। उसे श्मशान ले जाकर चिता पर शव के ऊपर रख दो और शव के साथ जलाकर राख कर दो।" सुकन्या को उसकी बात समझ नहीं आई। वह वहीं खड़ी रही। 'क्या तुमने मेरी बात नहीं सुनी?' रामकृष्णय्या ने पूछा और सुकन्या के हाथ से चाबी छीनकर कहा, 'देखो गणेश, तहखाने में जाओ, तिजोरी और सारे बक्से तलाशो, वहाँ जो भी पैसा मिले उसे एक थैले में भरकर ले आओ।' उन्होंने चाबी अपने बेटे के सामने रखी। तब तक सुकन्या का दिमाग सतर्क हो चुका था, उसने जोर से अपने पति को फटकारा, 'क्या कह रहे हो? क्या तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है? पैसे जलाने की बात?' उसकी आवाज इतनी तेज थी कि बाहर के लोग भी सुन सकते थे। रामकृष्णय्या ने शांत लेकिन अधिकारपूर्वक कहा, 'चिल्लाओ मत। मैं

जो कह रहा हूँ उसके पीछे एक कारण है। उसी के अनुसार करो।' सुकन्या और भी जोर से चिल्लाने लगी। 'क्या मतलब? तुम्हें अक्ल कब से आ गई?' रामकृष्णय्या उसके पास आए, हाथ उठाया, उसके गाल पर जोर से थप्पड़ मारा और कहा, 'चुप रहोगी?' सुकन्या कांप उठी। जिस दिन से उसने अपने पिता का घर छोड़कर अपने पति का घर छोड़ा था, तब से लेकर आज तक उसके पति ने उसे कभी नहीं पीटा था। उसने सुना था कि उसका पति तो दूर, उसकी पत्नी भी अपने खेतों में भटकने वाले किसी भी पशु को कभी नहीं पीटेगी। इस अप्रत्याशित आघात से उसका साहस और दृढ़ संकल्प चकनाचूर हो गया। पास खड़े गणेश भी भयभीत हो गए। रामकृष्णय्या ने अपने पुत्र के सामने चाबी रखते हुए आदेश दिया, 'गणेश, जैसा मैं कहूँ वैसा करो।' गणेश ने चाबी ली और अंदर चले गए।

गणेश तहखाने के अंदर के उस अंधेरे कमरे के बारे में जानते थे। दादाजी ने वहाँ बिजली नहीं लगाई थी। उन्होंने दरवाजे के पीछे एक लालटेन रखी हुई थी। वे उसे जलाते, दरवाजा बंद करते, कुंडी लगाते और उसके बाद ही तहखाने में उतरकर उस तिजोरी का दरवाजा खोलते थे। गणेशजी को यह बात बाहर से आने वाली आवाज़ों से पता चली थी। आज उन्होंने उस कमरे के दरवाजे के पीछे लालटेन को ढूंढा जो दिन के उजाले में भी पूरी तरह अंधेरा था। किसी तरह उन्हें लालटेन मिल गई, वे उसे बाथरूम में ले गए, उसकी चिमनी साफ की और उसे जलाया। वे कमरे में गए, तहखाने में उतरे और ताला खोलने की कोशिश की। लेकिन ताला नहीं खुला। उन्होंने चाबी को बार-बार घुमाया, लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। तभी उन्हें अपनी माँ की कही बात याद आई कि चाबी को कुछ बार इधर-उधर घुमाने से ताला खुल जाता है। गणेशजी ने चाबी को इधर-उधर घुमाना शुरू किया। आखिरकार ताला खुल गया। उन्होंने लालटेन पकड़ी और उसकी रोशनी में नोटों के बंडल देखे। उन्होंने एक बंडल निकाला और गिना। सभी सौ रुपये के नोट थे और हर बंडल में सौ नोट थे। वह बाहर से एक बोरी लाया, नोट गिने और उसमें भर दिए। कुल पैंसठ बंडल थे। उसने जो गणितीय सूत्र पढ़े थे, उन्हें लगाकर एक मिनट में ही कुल योग का हिसाब लगा लिया। उसने तिजोरी का दरवाजा बंद किया, ताला लगाया और बोरी उठाकर ले गया। बोरी भारी थी। उसने कभी सोचा भी नहीं था कि करेंसी नोट इतने भारी होंगे। वह बोरी लेकर आया, उसे शव के पास रखा और अपने पिता से कहा, 'यहाँ साढ़े छह लाख हैं!' उसके पिता ने सिर उठाया और अपने बेटे का चेहरा देखा। एक मिनट बाद उन्होंने कहा, 'क्या मैंने

पूछा था कि कितने हैं? क्या मैंने तुम्हें गिनने को कहा था? बेहतर होगा कि तुम समझो। बदतमीजी और बेवजह की बातें नहीं करनी चाहिए।' गणेश का चेहरा पीला पड़ गया। सुकन्या किसी से बात किए बिना, मानो किसी प्रेतात्मा से ग्रसित होकर दीवार से टेक लगाकर बैठी रही। उसके बाएं गाल पर चार उंगलियों का लाल निशान था। रामकृष्णय्या बाहर गए, सामने का दरवाज़ा खोला और इंतज़ार कर रहे लोगों से कहा, 'अंदर आ जाइए, सूरज सिर पर आ चुका है, चलिए जल्दी से सब काम निपटा लेते हैं।' तुरंत ही सब लोग अंदर आ गए। शव को मोड़ना और हाथों-पैरों को समेटना मुश्किल था, हालाँकि दो लोगों ने मिलकर शव को अर्थी के नाप तक लाने की कोशिश की। जब बाकी लोग घायल पैर को छूने से कतरा रहे थे, तो रामकृष्णय्या ने खुद उसे उठाया, बड़ी मेहनत से दबाकर समेटा। घर पर होने वाली रस्में पूरी होने के बाद, रामकृष्णय्या ने अग्नि पात्र उठाया, अपने बेटे को बुलाया और कहा, 'देखो, वह थैला है जिसे तुम जानते हो, इसे बाँध लो, अपने कंधे पर उठा लो और मेरे आगे चलो।' पुजारी ने पूछा, 'क्या बात है?' रामकृष्णय्या ने कहा, 'यह पारिवारिक मामला है। कृपया आगे की रस्में पूरी करें।' पुजारी ने पूछा, 'क्या यह लड़का आपका बेटा है?' 'जिस बेटे के पिता जीवित हों, उसे श्मशान घाट नहीं आना चाहिए।' रामकृष्णय्या ने उत्तर दिया, 'जब मैं खुद उसे आने के लिए कह रहा हूँ, तो उसके आने या न आने से कोई फर्क नहीं पड़ता। अब, कृपया मुझे अंतिम संस्कार करने की अनुमति दें।' गोदाम मालिक नागप्पा के शरीर को अर्थी पर रखा गया और उनकी अंतिम यात्रा शुरू हुई। सर्दी का मौसम होने के बावजूद, धूप बहुत तेज थी। वहाँ केवल आठ लोग ही थे। बिना किसी अन्य रिश्तेदार, मित्र या भीड़ के, यात्रा कस्बे की सीमा पार कर अंततः श्मशान घाट पहुँच गई। चिता को व्यवस्थित ढंग से लकड़ियाँ रखकर सजाया गया। रामकृष्णय्या ने अपने बेटे को एक तरफ बुलाया और कहा, 'देखो, लकड़ियाँ रखी हुई हैं। एक परत हटाओ और नोटों के बंडलों को बिस्तर की तरह बिछाओ और फिर पहले की तरह लकड़ियों से ढक दो। किसी को पता न चले!'

रामकृष्णय्या ने पुत्र के उत्तरदायित्व और कर्तव्य को निभाते हुए सभी अनुष्ठान संपन्न किए। उन्होंने अपना सिर मुंडवाया और ठंडे पानी से स्नान किया। अंत में, सभी अनुष्ठानों के बाद, शव को चिता पर रखा गया। जब चिता को प्रज्वलित किया गया, तो नीचे रखी लकड़ियाँ चटकने की आवाज़ के साथ जलने लगीं। जब भवन के आकार में सजी चिता को हिलाया गया, तो नोटों के बंडल दिखाई दिए। पुजारी ने

पूछा, 'यह क्या है?' रामकृष्णय्या ने उत्तर दिया, 'मैंने कागज़ के टुकड़े इसलिए रखे हैं ताकि लकड़ियाँ ठीक से जलें।' पुजारी ने रामकृष्णय्या की ओर देखा। खोपड़ी के फटने तक किसी का वहाँ उपस्थित रहना आवश्यक था। इसलिए, सभी अनुष्ठानों के कर्ता रामकृष्णय्या ने एक लंबी बाँस की छड़ी पकड़ी और वहाँ खड़े रहे। जब काला धुआँ, लाल और पीली लपटें उठ रही थीं और सब कुछ जल रहा था, तब रामकृष्णय्या ने ध्यान रखा कि नोटों के सभी बंडलों को आग में धकेल कर राख कर दिया जाए। फिर खोपड़ी फट गई। आवश्यक अनुष्ठान संपन्न करने के बाद, सभी लोग पास के पत्थर के कुएँ में स्नान करने गए।

शव ले जाने के बाद, पड़ोसी अनंतकृष्ण का परिवार आया, सुकन्या को सांत्वना दी और अपने नौकर को घर की सफाई और धुलाई के लिए भेजा। वे इन लोगों के लिए पर्याप्त भोजन भी लाए। जब उसके पति, पुत्र और क्लर्क श्मशान घाट से लौटे, तो उसने उन्हें भोजन परोसा और खुद भी कुछ खाया। शाम हो चुकी थी और सूरज डूबने वाला था। 'मुझे रात में फिर कुछ नहीं चाहिए। अगर आपको पैसे चाहिए, तो आप मेरी कोट की जेब से ले सकते हैं।' रामकृष्णय्या ने अपनी पत्नी से कहा, एक चटाई बिछाई, अपने सिर के नीचे एक तख्ता रखा और खुद को धोती से ढककर लेट गए। किसी को पता नहीं चल सका कि वह सो रहे थे या सिर्फ लेटे हुए थे। सुकन्या जानती थी कि जिस दिन से उन्होंने अपने पिता से मंजय्या के पक्ष में अदालत में गवाही देने के लिए कहा था, तब से उनके पति रात को ठीक से सो नहीं पा रहे थे। सुकन्या ने एक दीपक जलाया, उसे उस जगह पर रखा जहाँ उसके पिता ने अंतिम सांस ली थी और उस पर एक टोकरी उलट दी। वह और उसका पुत्र गणेश घर के अंदर थे। किसी के लिए न तो बिस्तर था और न ही कंबल। किसी तरह गणेश सो गया। लेकिन वह नहीं सो सकी। उसे बहुत गुस्सा आ रहा था। ओह, इतने सालों के वैवाहिक जीवन में पहली बार, वो भी अपने बड़े बेटे के सामने, उसके पति ने उसके गाल पर थप्पड़ मारा, उसे चुप करा दिया। अब वो सिसकना या रोना नहीं चाहती थी, बल्कि बहुत गुस्से में थी। पिछली रात वो मुश्किल से दो घंटे सोई थी, फिर भी अब उसे नींद नहीं आ रही थी। वो रात भर जागती रही। पुणे जाने वाली ट्रेन गुजर चुकी थी, और गणेश जिस बैंगलोर-मेल से आए थे वो भी गुजर गई। सुकन्या को याद आया कि टिप्पुर में आधी रात का समय सिर्फ इन ट्रेनों की आवाज से ही पता चलता था। इसके साथ ही, उसकी मां की मृत्यु के बाद इस घर की याद और अकेले पिता के घर आने की याद भी उसके मन में बस गई। फिर भी

साढ़े छह लाख रुपये जलाकर राख कर देना कितनी बड़ी मूर्खता थी। ऐसा सोचते हुए उसने हिम्मत जुटाई और हर हाल में अपने पति से सवाल करने का फैसला किया। 'तुमने ये बेवकूफी क्यों की?!' इस फैसले के साथ ही उसके मन में घृणा का भाव भी उमड़ आया। आखिर वो कर क्या सकता है, एक बार तो मार ही चुका है मुझे।

सभी के स्नान करने के बाद रामकृष्णय्या ने अपनी पत्नी को बुलाया और कहा, 'कल ससुर जी की अस्थियां विसर्जित करने के बाद हम अपने घर चलते हैं। एक-दो दिन के लिए ही चावल और अन्य सामान क्यों खरीदें? क्या होटल से खाना नहीं लाया जा सकता? या जो भी तुम कहो।'

'आगे कौन-कौन से अनुष्ठान किए जाएंगे?' उसने पूछा।

'मैं भी यही सोच रहा हूँ। क्या इसे यहीं करना चाहिए? आप और गणेश जी बिलिकेरे जा सकते हैं। मैं या तो होलेनारसिपुरा जाऊँगा या पश्चिमवाहिनी, और वहाँ सभी सुविधाएँ उपलब्ध हैं, इसलिए मैं वहाँ जाकर अनुष्ठान करूँगा। उससे पहले, मुझे चन्नारायपट्टाना जाकर चालपति शेट्टी से पाँच सौ रुपये उधार लेने होंगे। अगर आप होलेनारसिपुरा आना चाहते हैं, तो ठीक है, या आप जो चाहें कह सकते हैं।'

सुकन्या को हिम्मत आ गई। 'क्या बात है? आप बार-बार "जैसा आप कहें", "जैसा आप कहें" कह रहे हैं, कल आपने इतना गुस्सा क्यों किया?' रामकृष्णय्या ने शांत भाव से पूछा, 'मैंने गुस्से में क्या किया?' 'आपने, जिसने मुझे कभी नहीं मारा था, मुझे ज़ोर से थप्पड़ मारा और साढ़े छह लाख का बंडल...' अपनी बात पूरी करने से पहले ही उसकी आवाज़ भर्रा गई।

रामकृष्णय्या ने कहा, "देखो, सुकन्या, तुम ऐसी स्थिति में भी नहीं समझीं। ऊपर से तुम चिल्लाने लगीं, ताकि बाहर इंतजार कर रहे लोग भी सुन लें। इसीलिए मैंने तुम्हें चुप कराने के लिए थप्पड़ मारा। लेकिन बताओ, उस कागज का मैं क्या कर सकता था सिवाय लकड़ी जलाने के?"

'तुम्हारा मतलब क्या है? साढ़े छह लाख रुपये से हम क्या नहीं कर सकते थे? क्या हमारा कोई बेटा नहीं है? क्या हम जीवित नहीं हैं? हमारे अलावा और किसे यह पैसा मिलना चाहिए था?'

रामकृष्णय्या ने तुरंत कोई जवाब नहीं दिया। यह उनका स्वभाव था। कभी-कभी वे एक-दो शब्द बोलकर चुप हो जाते। अब भी वे मद्रास की छत के उस बड़े से बीम को देखने लगे। फिर वे उठे और स्नानघर चले गए। सुकन्या जानती थी कि अगर

वह वहीं खड़ी रहेगी तो उसके पति वापस आकर जवाब देंगे; अगर नहीं तो कई दिन बाद जवाब देंगे। इसलिए वह वहीं खड़ी रही। रामकृष्णय्या ने स्नानघर में पानी डाला, हाथ-पैर धोए, गरारे किए, वापस आए, उसी जगह बैठ गए और उस बीम को देखने लगे। पाँच मिनट बाद उन्होंने कहा, 'जीते जी उन्होंने इसके बारे में कुछ नहीं कहा कि यह किसे दिया जाए। उन्होंने न तो इसे किसी को दिया और न ही यह बताया कि इसे किसे दिया जाए और न ही उन्होंने इसे लिखकर रखा।'

सुकन्या ने तर्क दिया, 'यदि बच्चों को पिता की संपत्ति मिलनी है, तो क्या इसे लिखित में देना चाहिए? क्या वसीयत होनी चाहिए? जब आपके पिता की मृत्यु हुई, तो क्या उन्होंने मरने से पहले यह लिखा था कि उनकी जमीनें उनके बच्चों की होंगी? क्या आप अभी इसका लाभ नहीं उठा रही हैं?'

हमेशा की तरह, वह चुप हो गया। सुकन्या अभी भी वहीं खड़ी थी। अंत में उसने कहा, 'देखो, नागप्पा अन्य लोगों की तरह नहीं जिया। तुम क्यों ज़िद कर रही हो कि मैं एक मृत व्यक्ति के स्वभाव के बारे में बात करूँ? उसकी मृत्यु चाबी को मुट्ठी में कसकर पकड़े हुए हुई। मेरे पास चाबी के प्रतीक स्वरूप सब कुछ भेजने का कोई और तरीका नहीं था सिवाय इसके कि मैं उसे उसके साथ भेज दूँ।'

सुकन्या ने इस तरह बात की मानो वह पलटवार कर रही हो, 'इसे उनके नाम पर किसी धर्मार्थ कार्य या धार्मिक कार्य के लिए दान किया जा सकता था।'

रामकृष्णय्या ने चौखट की ओर देखते हुए तुरंत उत्तर दिया, “हमें उनके नाम पर दान करने का क्या अधिकार है, जबकि उन्होंने जीवित रहते ऐसा नहीं चाहा था?” सुकन्या ने कोई उत्तर नहीं दिया। थोड़ी देर बाद रामकृष्णय्या ने कहा, “मनुष्य को अधिक बोलना नहीं चाहिए, बल्कि उसे आत्मज्ञान होना चाहिए” और फिर चुप हो गए।

सुकन्या के मन में कोई और तर्क नहीं आया। फिर भी वह संतुष्ट नहीं हुई। वह मन ही मन बुदबुदाती रही कि उसके पति का यह काम बेतुका है, हमेशा से बेतुका ही रहा है, और अंदर चली गई। पूरा दिन, रात और अगले दिन भी वह बेचैन रही। बिना किसी चर्चा के यह तय हो गया कि उसके पति को नदी किनारे किसी पवित्र स्थान पर जाकर सभी रीति-रिवाज पूरे करके वापस आना चाहिए। सुकन्या भी उनके साथ जाना चाहती थी।

रामकृष्णय्या ने अस्थियां ग्रहण करने की रस्म पूरी की और वापस आ गए। जब तीनों लौटने के लिए तैयार हुए, तो क्लर्क नानाजप्पा वहाँ मौजूद थीं। उन्होंने अपने

पति को अंदर बुलाया और पूछा, 'हम घर की चाबी किसके पास छोड़ें?'
वह सोच में डूबा खड़ा रहा। 'जल्दी बताओ,' उसने कहा, लेकिन उसने कोई जवाब नहीं दिया। वह अभी भी वहीं खड़ी थी। 'हमारी बस छूट जाएगी,' उसने फिर कहा।
अंत में रामकृष्णय्या ने कहा, 'न तो हमें इसे किसी को देने का अधिकार है, न ही इसे अपने पास रखने का। यह उचित होगा कि इसे गणेश जी को दे दिया जाए और उनसे कहा जाए कि वे श्मशान घाट जाकर इसे वहीं विसर्जित कर दें।'
उसने उसके चेहरे की ओर देखा, यह जानने के लिए कि क्या वह गुस्से में बोल रहा है। नहीं, उसका चेहरा हमेशा की तरह शांत और संयमित था। उसके भीतर फिर से गुस्सा उमड़ आया और उसने चिड़चिड़े स्वर में उससे पूछा, 'अगर ऐसा है, तो आप अपने पैसे खर्च करके उसके अंतिम संस्कार क्यों कर रहे हैं?'
रामकृष्णय्या ने तुरंत उत्तर दिया। "देखो सुकन्या, जब मैंने परिवार की उस लड़की से विवाह किया है जिसकी कोई संतान नहीं है और मैं इकलौता दामाद हूँ, तो क्या यह मेरा कर्तव्य नहीं है? इन अनुष्ठानों और श्राद्ध को करने से यदि मृत व्यक्ति प्रेत अवस्था से मुक्त नहीं होता, तो वह न इधर का न उधर का रहेगा। क्या ऐसा नहीं कहते? यदि कोई और इस अनुष्ठान को करे, तो मैं नहीं करूँगा।" इतना कहकर वे बाहर चले गए।
सुकन्या दो मिनट तक वहीं खड़ी रही और सोचती रही। अंत में, उसने क्लर्क को अंदर बुलाया, उसके हाथ में चाबियाँ दीं और कहा, 'कृपया सब कुछ संभाल लेना।' वह अपने पति के पीछे चली गई। गणेश ने एक पर्स पकड़ा हुआ था और वह अपनी माँ के पीछे-पीछे चल रहा था।

सावित्री क्रोध, शर्म, अपमान और बेइज्जती से अंदर ही अंदर जल रही थी। वह घर में अकेली थी, एक नीच और दुष्ट व्यक्ति ने उसके साथ बलात्कार किया था। उसने कई विकल्पों के बारे में सोचा, जैसे शिकायत दर्ज कराना, बिलिकेरे जाकर अपने भाई को उस बदमाश को पीटने के लिए कहना... नहीं, इनमें से कुछ भी नहीं। वह

खुद उसके पास जाएगी, चाहे वह कितना भी ताकतवर क्यों न हो, उसके घर के सामने खड़ी हो जाएगी, अपने पैरों से चप्पलें उतार देगी और... लेकिन इन सब से उस बदमाश को कभी शर्म नहीं आएगी। उसका गुस्सा उसे अंदर ही अंदर जला रहा था, उसे समझ नहीं आ रहा था कि वह अपने साथ हुए बलात्कार का बदला कैसे ले। अदालत, ग्राम पंचायत या पुलिस, वह न्याय के लिए कहीं भी जाए या उसे सजा दिलाने की मांग करे, मंजय्या अपनी बात पर अड़ा रहेगा, 'क्या मैं उसका पति नहीं हूँ?' इस तरह वह उसे और भी ज्यादा शर्मिंदा करेगा। उसी दिन शाम तक, उसके मन में कम से कम पचास बार यह विचार आया: उसे अपने भाई को सूचित करना चाहिए या खुद एक खंजर छिपाकर उसके पास जाना चाहिए, इससे पहले कि उसे पता भी चले... और अगर अदालत में उससे पूछताछ की जाए, तो उसे बताना चाहिए कि उसने ऐसा क्यों किया। क्या वह उस दिन का इंतज़ार कर रहा था, जब नंजप्पा और उसकी पत्नी हसन में एक शादी में शामिल होने जाएंगे और सुबह से शाम तक घर में कोई नहीं होगा? अगर वे मुख्य घर में भी होते, तो वह कितनी जल्दी, शेरनी की फुर्ती से, उसे ज़रा सी भी आवाज़ निकालने का मौका दिए बिना, उसे पकड़ लेता! जब उसे यह याद आता, तो खंजर से उसे दंडित करने का उसका इरादा और भी मज़बूत हो जाता। सावित्री उस दिन कक्षा में पढ़ा नहीं सकी। वह ठीक से खड़े होने की ताकत भी नहीं जुटा पाई। वह दोपहर और रात को खाना नहीं खा सकी। जब वह नींद न आने के कारण लेटती, तो सुबह जो कुछ हुआ था, वह दृश्य-दर-दृश्य उसके सामने आ जाता और वह खुद को दोषी ठहराती। यह सच था कि वह एक अय्याश, एक बदमाश था जिसने जानबूझकर आकर उसके साथ बलात्कार किया। लेकिन वह, जो अपनी शारीरिक शक्ति की सीमा तक विरोध कर रही थी, धीरे-धीरे उसकी उकसाहट के आगे क्यों झुक गई? उसे यह समझ और विवेक क्यों नहीं आया कि वह यह सब केवल उसे पिघलाने के लिए कर रहा था और उसे फिसलना नहीं चाहिए, उसके वश में नहीं आना चाहिए। उसे सत्रह साल पहले की बात याद आई, उसके घर में जब वह अपनी किशोरावस्था में थी, कैसे वह उसे इसी तरह की उकसाहट से फंसाता था; ओह, उस दिन भी वही हुआ था। आत्म-निंदा शुरू हुई; उसकी समझ कहाँ चली गई थी? उसकी तर्कशक्ति कहाँ गायब हो गई थी? उसे अपमान से ज़्यादा शर्म महसूस हुई। उसका गुस्सा अंदर ही अंदर दबा रहा था। वह सोचने लगी कि उसे किस तरह की

सज़ा मिलनी चाहिए। उसने खुद को उसी खंजर से मारने का सोचा, जो उसने उसके लिए सोचा था, और यह विचार उसे लगातार परेशान करने लगा।
काफी देर बाद, जब भोर होने वाली थी, उसे हल्की नींद आने लगी। उसने खुद को सोने दिया, जिससे उसके मन की उथल-पुथल शांत हुई। हालांकि वह सुबह अपने तय समय पर उठी, लेकिन तीन घंटे की नींद के कारण वह शांत थी। उसने उठकर खुद को तरोताज़ा किया। घर के काम करते हुए उसे वासना के वे अनेक रूप याद आए जो अकेले रहने के बाद से उसे सताते थे। शुरुआत में जब उसने उसका घर छोड़ा था, तब उसे कुछ भी परेशान नहीं करता था। लेकिन बाद में, जैसे कोई कुत्ता बचा हुआ खाना खाने का आदी हो जाता है, वैसे ही उसका मन मंजय्या के बचे हुए खाने को याद करके कामुक हो जाता था। उसका बड़ा घर, वह कमरा, पलंग और पलंग के दोनों ओर लगे दो बड़े दर्पणों में दिखाई देने वाला कामुक दृश्य। लेकिन यह किसी और पुरुष का रूप नहीं लेता था। उसके लिए, कामुकता का मतलब सिर्फ वही था, सिर्फ उसका रूप और आकार। लेकिन उसके लिए तो यह ठीक था, चाहे वह कोई मादा कीड़ा ही क्यों न हो। उसने अपने संकल्प को मजबूत करने की कोशिश की। उसे उस इच्छा को कुचल देना चाहिए था, और परमेश्वरय्या की पुत्री होने के नाते, यदि वह कम से कम इतना भी नियंत्रित नहीं कर सकती थी, तो उसके जीवन का क्या अर्थ और क्या फल था? इस विचार को आत्मसात करते हुए, उसने उस इच्छा को कम करने का प्रयास किया और धीरे-धीरे उसे पूरी तरह से समाप्त कर दिया। नहीं, यह झूठ था कि उसने उस इच्छा को पूरी तरह कुचल दिया था। जब वह उसके पिता के पास आया और उनसे गवाही देने का अनुरोध किया और कहा: 'देखिए, मेरे बरी होने के बाद, मैं आपकी पुत्री से क्षमा मांगूंगा, उसे अपने घर ले जाइए और सम्मानजनक जीवन व्यतीत कीजिए।' तो फिर, उसने अपने पिता द्वारा झूठी गवाही देने पर चुपचाप अपनी सहमति क्यों दे दी? उसने मान लिया था कि अपने पिता की मृत्यु के बाद, उसकी यौन इच्छा पूरी तरह से राख हो गई थी। उसके बाद एक दिन भी उसके मन में इसका ख्याल नहीं आया, सूक्ष्म रूप में भी नहीं। यदि ऐसा था, तो उसका मन और शरीर उसकी उत्तेजनाओं और उकसावों के आगे क्यों झुक गया? उसने खुद को दोषी ठहराते हुए कहा, 'धिक्कार है तुम पर, तुम एक नीच कीड़े हो, तुम्हारी प्रवृत्ति केवल निम्न स्तर की, पशुवत है।' उसका खून खौलने लगा और वह घृणा, नफरत और आत्म-घृणा में तब्दील हो गया।

शाम को स्कूल से लौटते समय, उसे मट्टिकेरे के अपने देवर सत्यप्पा की याद आई। जब वे ऐसी बीमारी से पीड़ित थे जिससे शारीरिक रूप से भी उन्हें कष्ट हो रहा था, तब उन्होंने अपने मन में स्वीकार किया कि गलती उनकी ही थी। उन्होंने उसकी तरह आत्म-निंदा नहीं की, बल्कि यह विश्लेषण करना शुरू किया कि जीवन के किस मोड़ पर उन्होंने गलत रास्ता चुना था। तब उसे याद आया कि वह उन पर कितना गुस्सा हुई थी, क्योंकि वे मंजय्या को दोष नहीं दे रहे थे। उस शाम और पूरी रात उसका मन अपने देवर के रवैये की तुलना अपने रवैये से करता रहा। मंजय्या ने सत्यप्पा को केवल मौखिक रूप से उत्तेजित किया था। लेकिन उसने उसे शारीरिक रूप से उकसाया, उसका बलात्कार किया; अपनी कुशलता का प्रयोग करके उसने उसे इस कृत्य में शामिल किया। उसने खुद से सवाल किया, 'क्या उसका जवाब देना गलत था जब उसने उस पर शारीरिक हमला किया और बिजली की तरह लगातार उत्तेजना पैदा की?' कुछ देर के लिए, उसके मन ने आत्मरक्षा का सहारा लिया। फिर उसने सोचा, उसके देवर को भी ऐसा ही महसूस हुआ होगा। इस तुलना में उलझे रहने के दौरान, उसके मन को ऐसी रक्षा में नीचता और अवसरवादिता दिखाई दी।

चार-पाँच दिन तक इसी तरह सोचते-सोचते उसके मन में ये सवाल उठने लगे: मंजय्या अचानक इस तरह क्यों आया? उसका क्या मकसद था? उसने उसकी कमजोरी का फायदा उठाया, उसे गहरे अंधकार में धकेल दिया और एक पल भी रुके बिना भाग गया। क्या वो फिर से ऐसे ही इरादे से आएगा? वो आया, उसने घात लगाई और उसे आखिरी चोट पहुँचाई! उस अनुभव को एक बार झेलने के बाद सावित्री ने ठान लिया कि वो कभी उसका शिकार नहीं बनेगी और उसके आगे नहीं झुकेगी। उसने सोचा: जब शिकार को मकसद समझ नहीं आता, तो उसे निगलना आसान होता है। लेकिन एक बार मकसद समझ आ जाए, तो उसे हराना आसान नहीं होता। उसने हिम्मत जुटाई और ठान लिया कि वो नामुमकिन को मुमकिन कर दिखाएगी। फिर भी, अपमानित होने और आत्मसम्मान खोने का एहसास ज़रा भी कम नहीं हुआ। उसे खाने से अरुचि हो गई, उसे लगा जैसे वो पापी, पतित स्त्री बन गई हो और उसने व्यभिचार किया हो। उसे अक्सर नींद नहीं आती थी। उसे लगा कि अगर वो ये बात किसी से बाँटे, तो उसे कुछ सुकून मिल सकता है। लेकिन किससे बाँटे? उसने अब तक अपने वैवाहिक जीवन के बारे में किसी से बात नहीं की थी। जब वह इस शहर में शिक्षिका के रूप में काम करने

आई थी, तब भी उसने इस बारे में बात नहीं की थी, क्योंकि मनजय्या के प्रति उसके मन में घृणा थी और उसे अपने पिता और भाई की सलाह न मानकर हठपूर्वक ऐसे व्यक्ति से शादी करने की अपनी गलती का एहसास हो गया था। लगभग तीन साल शिक्षिका के रूप में बिताने के बाद, उसे यह एहसास होने लगा कि इस विषय पर बात करना उसकी गरिमा को ठेस पहुंचाएगा। बिलिकेरे के घर में भी कोई इस विषय पर चर्चा नहीं करता था। फिर भी, चन्नारायपट्टाना में कई लोग उसके बारे में जानते थे। उस शहर की गलियों में अक्सर घूमने वाले और आवारा कुत्तों की तरह अय्याशी करने वाले मनजय्या को कौन नहीं जानता था? इसके अलावा, उस शहर में कई ऐसे परिवार थे जिनके बिलिकेरे से वैवाहिक संबंध थे। लेकिन वहाँ कौन था जिसे वह हाल की घटना बता सकती थी? और वहाँ कौन था जिसमें उसकी पीड़ा और उसके पतन की गहराई को सुनने और समझने की हिम्मत थी? उसे अपने बड़े भाई की याद आई। लेकिन उसने महसूस किया कि उसे यह बात बताकर उसे दुख नहीं पहुंचाना चाहिए। उसने इसके परिणाम की कल्पना भी कर ली थी कि अगर उसे इस बारे में पता चला, तो वह संभवतः तलवार और दरांती उठा लेगा। उसका अंतरात्मा उसे कुरेदने लगा। यद्यपि उसका बड़ा भाई अत्यंत धैर्यवान था, फिर भी मंजय्या द्वारा किए गए अन्याय के लिए वह ज़रूर दरांती उठा लेगा, पहले उसके घर के साथ, फिर उसकी बहन के साथ, फिर उसके पिता के साथ, और अब फिर से उसकी बहन के साथ। सावित्री ने दरबार की तमाम परेशानियों की कल्पना करते हुए अपने भाई को न बताने का फैसला किया। फिर वह यह बात किससे साझा करती? उसे एहसास हुआ कि वह अपनी भाभी को भी यह बात नहीं बता सकती, क्योंकि सावित्री का दर्द सुकन्या के दिल को नहीं पिघला पाएगा। उसने किसी को भी न बताने का फैसला किया, और अपने भाई की तरह सब कुछ अपने भीतर ही रखने का, चुपचाप इसे भुला देने का। लेकिन, जब वह उस रात सोने गई, तो उसे अपने मत्तिकेरे भाव की याद आ गई। उसे वापस गए कुछ समय हो चुका था। वह यह जानने के लिए उत्सुक थी कि वह क्या कर रहा है और कैसे अपना आत्मसम्मान फिर से बना रहा है। उसने अपनी सारी बातें बिना छिपाए स्वीकार कर ली थीं। उसने अपने दिल की सारी बात उससे कह दी थी। हाँ, उसे लगा, ऐसे व्यक्ति के सामने कबूल करना आसान होगा और वो समझ जाएगा। उसने सोचा कि दोनों एक ही तरह के पापी हैं, जिन्हें मंजय्या ने उकसाया और भड़काया और उन्होंने व्यभिचार किया। जब ये तुलना उसके मन में

उठी, तो लगभग उसी समय एक और विचार आया। उसे डर था कि कहीं उसे भी वही बीमारी न हो गई हो। वह काँप उठी। अब सारी तुलनाएँ और आत्मसम्मान धराशायी हो गए थे और केवल यही डर उसके मन को घेरे हुए था। आधी रात के बाद भी उसे नींद नहीं आई। इस घिनौनी घटना को आठ दिन हो चुके थे। लेकिन उसे कोई दर्द या जलन महसूस नहीं हुई थी। उसके देवर को अगले ही दिन लक्षण दिखाई देने लगे थे। यह सोचकर उसे कुछ राहत मिली। थोड़ी देर बाद उसे एक और तसल्ली मिली कि उसने छह महीने तक उसके साथ पारिवारिक जीवन बिताया था, तब भी मंजय्या का व्यवहार ऐसा ही था। लेकिन उसे कोई बीमारी नहीं हुई थी। हालाँकि, सुबह होने से पहले ही उसे एक उपाय मिल गया। उसने सुबह डॉक्टर हशीम से सलाह लेने का फैसला किया। वो एक सज्जन व्यक्ति थे। वह अपनी शर्म को काबू में करके उसे अपने अकेले रहने के बारे में बताएगी। वह उसे मंजय्या के स्वभाव के बारे में भी बताएगी, कि कैसे उसने उसके साथ बलात्कार किया और एहतियात के तौर पर उससे कुछ दवा मांगेगी, हालांकि फिलहाल उसे कोई दर्द या जलन नहीं हो रही थी।

वह अकेले पुरुष डॉक्टर के पास जाने से थोड़ा डर रही थी। लेकिन वह अपने साथ किस महिला को ले जाती? अगर वह किसी को साथ ले जाती, तो सावित्री को सब कुछ बताना पड़ता। जब उसमें इतना साहस आ गया था कि वह मंजय्या के दोबारा आने पर भी अपना बचाव कर सकती थी, तो उसे डॉक्टर के पास जाने से क्यों डरना चाहिए, वह भी इतने अच्छे आदमी के पास। बिना किसी झिझक या संकोच के उसने डॉक्टर को सब कुछ बता दिया। डॉक्टर ने कहा, 'मैं जानता हूँ, मंजय्या किस तरह का आदमी है। लेकिन मुझे नहीं पता था कि आप उसकी पत्नी हैं। मुझे लगता है कि आपको कोई बीमारी नहीं है। अगर जरा सा भी संक्रमण होता, तो लक्षण दिखाई देते। फिर भी, आप छह इंजेक्शन का कोर्स लें। मैं आपको पहला इंजेक्शन अभी लगा देता हूँ।' सावित्री ने अगले पाँच दिनों तक क्लिनिक जाने का फैसला किया और इस डर से छुटकारा पाने का ठान लिया।

चार दिन बाद, गणेश शाम को चन्नरायपट्टाना पहुँचे। जब वे बिलिकेरे जाते थे, तो चन्नरायपट्टाना बस स्टैंड से ही बिलिकेरे के लिए सीधी बस पकड़ लेते थे। लेकिन जब वे बिलिकेरे से हसन जाते थे, तो चन्नरायपट्टाना में अपनी आंटी के घर पर रात बिताते थे, सुबह पहली बस से निकलते, हसन पहुँचते और कक्षाएँ अटेंड करते। सावित्री उनके लिए नाश्ता बनातीं और दोपहर और शाम के लिए पर्याप्त भोजन

पैक करतीं। इसके साथ ही, वे उन्हें पचास, साठ, कभी-कभी सौ रुपये भी खर्च के लिए देतीं, क्योंकि वे सोचती थीं कि घर से बाहर पढ़ाई करने वाले लड़के को पैसों की ज़रूरत होती है। हालाँकि गणेश का अपनी आंटी के पास जाना मुख्य रूप से पैसों के लिए ही था, पर सावित्री ने कभी इस बात को समझा नहीं और न ही इस पर ध्यान दिया। इसके अलावा, उन्हें भी कभी-कभी उनसे खुलकर बातें करने का मन करता था। वे उन्हें अपने कॉलेज, हड़तालों, पढ़ाने का तरीका न जानने वाले लेक्चररों और अपने छात्र जीवन की ऐसी ही सभी बातों और उन सभी गतिविधियों में अपनी मुख्य भूमिका के बारे में बताते थे।

अब गणेश ने उन्हें एक महत्वपूर्ण समाचार दिया – उनके तीतर दादा का देहांत हो गया था। उन्होंने उनके निधन का पूरा ब्योरा दिया, बताया कि कैसे उन्होंने तिजोरी की चाबी मुट्ठी में थामे अंतिम सांस ली, कैसे शव ने चाबी को कसकर मुट्ठी में पकड़ रखा था, कैसे उनकी मां के लाख कोशिशों के बावजूद मुट्ठी नहीं खुली, शव की उंगलियां लोहे से भी अधिक मजबूत थीं और कैसे उन्होंने अपनी मां के साथ मिलकर साहसपूर्वक चाबी छीन ली। गणेश ने यह सब अभिनय करते हुए, हंसते हुए और उपहास करते हुए बताया। लेकिन उनकी माता नहीं हंसीं। वह गंभीरता से सुन रही थीं। फिर गणेश ने बताया कि उनके पिता ने उनसे तिजोरी खुलवाई और शव सहित साढ़े छह लाख रुपये जला दिए। यह बताते हुए गणेश ने कहा कि उनके पिता ने ऐसा क्रोध में आकर किया, क्योंकि दादा ने अपने पोते को तीन साल तक पालने के खर्च के रूप में ढाई हजार रुपये लिए थे।

सावित्री को इसके बारे में कुछ भी पता नहीं था और उसने पूछा, 'ढाई हजार की यह कहानी क्या है?'

गणेश ने कहा, "अत्ते, तुम्हें पता है, मुझे भी नहीं पता था। अप्पा किसी से कुछ नहीं बोलते। अम्मा ने भी मुझे नहीं बताया था। कल बिलिकेरे लौटने के बाद उन्होंने मुझे सब कुछ बताया और कहा, "तुम्हारे पिता ने मुझे दुख पहुँचाने के लिए साढ़े छह लाख रुपये जला दिए, सिर्फ अपने गुस्से में।""

सावित्री जानती थी कि उसके भाई ने अपने गीले खेत बेच दिए हैं। उसे बस इतना पता था कि उसके भाई पर कुछ कर्ज़ है। उसने अपने भाई से पूछा, "तुमने वह ज़मीन क्यों बेच दी जिससे तुम्हें भोजन मिलता था, मुझे बिना बताए? मेरे पास कुछ पैसे थे। इसके अलावा सोने की चूड़ियाँ और चेन भी थीं। तुम उन्हें बेचकर कर्ज़ चुका सकते थे।" लेकिन उसके भाई ने कहा, "नहीं, सावित्री, बात यहीं खत्म नहीं

होती। और तो और, मैं तुम्हारा बड़ा भाई हूँ, तो तुम्हें देना चाहिए। इसके बजाय, मैं तुमसे कैसे ले सकता हूँ, तुम जो अपनी आजीविका के लिए इतनी मेहनत करती हो?" उसने अपने ससुर को कर्ज़ चुकाने की बात नहीं की। सावित्री ने गणेश जी से पूछा, "गणेश जी, मुझे बताइए कि आपके अप्पा ने कर्ज़ चुकाते समय क्या कहा था – आपको जो कुछ भी याद है, मुझे बताइए।"

गणेश ने पूरी घटना का वर्णन किया। सुकन्या द्वारा पहाड़ी के रंगनाथ स्वामी से की गई प्रतिज्ञा, रामकृष्णय्या द्वारा अपने ससुर के समक्ष प्रणाम करके उनसे धन स्वीकार करने और उन्हें ऋणमुक्त करने का अनुरोध करना, नागप्पा को धन भेंट करना और नागप्पा द्वारा अपने दामाद से एक पुराना नोट बदलने का अनुरोध करना।

सावित्री ने फिर पूछा, "जब तुम्हारी अम्मा ने साढ़े छह लाख रुपये जलाने का कारण पूछा, तो तुम्हारे पिता ने क्या कारण बताया? जब यह सब हुआ, तब तुम भी तो वहाँ मौजूद थे, है ना? तुम्हें जो भी याद है, मुझे सब कुछ सही-सही बताओ।" गणेश ने अपनी अम्मा और अप्पा के बीच हुई बातचीत को सही क्रम में बताया और कहा, "अप्पा ने कुछ दार्शनिक बातें कहीं। "जब उनकी मृत्यु मुट्ठी में चाबी पकड़े हुए हुई, तो उस चाबी में जो कुछ भी है, उसे मृत व्यक्ति के साथ भेज देना चाहिए। उनके नाम पर दान करने का हमें क्या अधिकार है, जिसे उन्होंने जीते जी देने की इच्छा नहीं की थी?""

सावित्री के लिए अपने भाई के मन की बात समझना मुश्किल नहीं था, लेकिन थोड़ा समय लगा। फिर उसने पूछा, "देखो गणेश, क्या तुम भी यही सोचते हो कि तुम्हारे पापा ने वो साढ़े छह लाख रुपये इसलिए जला दिए क्योंकि तुम्हारे दादाजी ने तुम्हारे खाने के खर्च के लिए पैसे लिए थे? क्या तुम्हें मुट्ठी में चाबी कसकर पकड़े मरने का मतलब समझ नहीं आता, जबकि तुम्हारे पापा ने इतनी विस्तार से समझाया था?" गणेश ने थोड़ी सख्ती से कहा, "वो अलग बात है। साढ़े छह लाख! क्या ये कोई छोटी बात है, अत्ते?"

सावित्री आगे चर्चा करने के लिए तैयार नहीं थी। वह चुप हो गई। गणेश को अपने भाई की यह चुप्पी अपने पिता की चुप्पी जैसी लगी। लेकिन यह पूरी तरह से पिता की चुप्पी नहीं थी। सावित्री आमतौर पर उनसे खुलकर बात करती थी। लेकिन वह चुप हो गई। गणेश को लगा कि भाई-बहन एक ही स्वभाव के हैं और उन्हें कुछ शर्मिंदगी महसूस हुई। रात में गणेश जल्दी सो गए। लेकिन सावित्री सो नहीं पाई।

उनका मन नागप्पा की कुंजी, उन साढ़े छह लाख की ज्वाला और राख से भरा हुआ था। उनके मन से अपमान, तिरस्कार और तिरस्कार गायब हो गया। उनकी अंतरात्मा ने उन्हें बताया कि जहाँ तक उन्हें पता है, उनके बड़े भाई ने यह सब गुस्से में नहीं किया था। उन्होंने सोचा कि ऐसी बातें केवल मौन में ही समझी जा सकती हैं और तर्क-वितर्क से कुछ भी नहीं समझा जा सकता, और उन्हें अपने भाई की चुप्पी में गहरा अर्थ मिलने लगा। उन्हें पता चला कि नागप्पा के आगे के संस्कार पश्चिमवाहिनी में होंगे और गणेश समारोहों में शामिल होने के लिए छुट्टी लेकर वहाँ जाएँगे। सावित्री ने चार दिन की छुट्टी लेकर अपनी भाभी के घर रहने का फैसला किया। किसी के लिए भी गहन शोक का अनुभव करना स्वाभाविक था। उसने अगले दिन दोपहर चार बजे बस से बिलिकेरे जाने और सुकन्या को सांत्वना देने का निश्चय किया और अगली सुबह चन्नरायपट्टाना लौटने का निर्णय लिया। वह जल्दी उठी, गणेश के लिए नाश्ता और दोपहर के भोजन का पैकेट तैयार किया और उसे पचास रुपये दिए। वह भली-भांति जानती थी कि उसने जो पैसे दिए हैं, वे उसके पिता की जानकारी के बिना अतिरिक्त धन हैं। यह ठीक वैसा ही था जैसे कोई माँ अपने बच्चों को चुपके से पैसे देती है। उसकी बहन होने के नाते, उसने उसे पैसे दिए थे और गणेश को यह बात शुरू से ही समझ आ गई थी। लेकिन अब पहली बार उसके मन में एक प्रश्न उठा: उसके पिता और दादा के कितने गुण और संस्कृति उसके बड़े भाई के इकलौते बेटे, बीस वर्षीय इस लड़के में समाहित हैं? यद्यपि एक शिक्षिका के रूप में मिले प्रशिक्षण ने उसके चिंतन को वंशानुक्रम, शिक्षा, परिवेश और अन्य चीजों की ओर मोड़ा था, फिर भी यह प्रश्न उसके अंतरात्मा को झकझोरने लगा।

पश्चिमवाहिनी में कावेरी नदी के किनारे एक धर्मशाला में रामकृष्णय्या को रसोई और एक कमरा नाममात्र के किराए पर मिल गया। उन्हें इससे बड़े स्थान की आवश्यकता नहीं थी। एक पुजारी ने सभी खर्चों सहित 500 रुपये में चार दिनों के अनुष्ठान करने का अनुबंध किया। रामकृष्णय्या के परिवार में केवल चार सदस्य थे। वे अनुष्ठान करने के लिए नदी किनारे जाते थे। गणेश जी के पास कोई और काम नहीं था, इसलिए वे एक दिन मैसूर और दूसरे दिन श्रीरंगपट्टना घूमने के लिए बस से जाते थे। धर्मशाला में केवल सुकन्या और सावित्री ही रह जाती थीं। सुकन्या ने इतनी असंतुष्टि से बात की जितनी उसने पहले कभी नहीं की थी। सावित्री ने कभी

कल्पना भी नहीं की थी कि उसकी भाभी इस तरह से बात कर सकती है। सुकन्या ने शिकायत करते हुए कहा, 'जब उनके पिता का निधन हुआ, तो उन्होंने पूरे गाँव को आमंत्रित किया, साप्ताहिक बाजार में एकत्रित लोगों के लिए एक विशाल सामुदायिक भोज का आयोजन किया।' लेकिन जब मेरे पिता की मृत्यु हुई, तो हम पश्चिमवाहिनी में ऐसे आए हैं मानो किसी निर्धन के रीति-रिवाज निभाकर उन्हें परलोक विदा कर रहे हों।' सुकन्या को इस बात का ज्ञान था कि उनके पति ने उनके बीमार पिता को देखने के लिए तिपत्तूर जाते समय तीन सौ रुपये का ऋण लिया था और अब उन्होंने चालपति शेट्टी से पांच सौ रुपये का और ऋण ले लिया था। सावित्री को भी यह बात पता थी। लेकिन सावित्री चुप रही, यह सोचकर कि उसे अपनी भाभी का विरोध नहीं करना चाहिए, क्योंकि सुकन्या अपने पति के प्रति अपना क्रोध प्रकट कर रही थी। अगर इससे उसे कोई शांति मिल सकती है, तो उसे मिलनी चाहिए, सावित्री ने सोचा। सुकन्या ने कहा: 'क्या उन्होंने साढ़े छह लाख रुपये नहीं जलाए? अगर उसमें से केवल दस हजार रुपये ही खर्च किए जाते, तो मेरे पिता के सम्मान के अनुसार उनके अपने घर में ही सभी रीति-रिवाज और समाराधना संपन्न हो जाती।' देखो, सावित्री, तुम नहीं समझती कि तुम्हारे भाई के मन में गोदाम मालिक नागप्पा को अपमानित और बेइज्जत करने की ठान है।' इतने से संतुष्ट न होकर सुकन्या ने अपनी बात जारी रखी। 'यह सच है कि मेरे पिता पैसों के मामले में थोड़े कंजूस थे। अगर खर्च में कटौती न की जाए तो क्या बचत हो सकती है? क्या उन्होंने अपनी बेटी के लिए ही पैसे नहीं बचाए थे? इसके बजाय, इस घर की तरह, "मैं अन्नदान करूंगा, मैं मेहमाननवाज रहूंगा" का ऐलान करते हुए, हर राहगीर के लिए रोज़ाना खाना बनाते हुए, कर्ज लेते हुए, अनाज से भरे धान के खेत बेचते हुए... ओह! इस घर की बहू बनकर मुझे क्या सुख या आराम मिला?' सुकन्या के इस लहजे में बोलने पर सावित्री के मन में जवाब लगभग आ ही गया था। लेकिन वह चुप रहने के अपने फैसले पर अड़ी रही और सोचने लगी कि उसकी भाभी शव के साथ जले साढ़े छह लाख रुपये के कारण दुखी है। एक समय सावित्री ने भी सोचा था कि उसके भाई को उस पैसे को छूना भी नहीं चाहिए था, लेकिन उसे जलाना भी नहीं चाहिए था। सुकन्या ने आगे कहा, "यह भी सच है कि मेरे पिता ने अपने जीवनकाल में स्वेच्छा से कुछ नहीं दिया। क्या उन्हें यह नहीं पता था कि उनकी मृत्यु के बाद सब कुछ उनकी बेटी को मिलेगा? उन्होंने चाबी को कसकर पकड़ रखा था क्योंकि जब वे बीमार और बेहोश थे, तो नौकर या क्लर्क

चाबी चुराकर तिजोरी लूट सकते थे। अगर उन्हें पता होता कि उनकी बेटी आई है, तो वे उसे चाबी दे देते। उन्होंने उसे देने के इरादे से ही चाबी अपने पास रखी थी। लेकिन सही समय पर वे होश में नहीं थे। क्या यह उनकी गलती थी? आपके भाई को मेरे पिता की इतनी मेहनत से कमाई और बचत को जलाने का अधिकार किसने दिया? वह भी उस व्यक्ति को जिसने अपनी आजीविका के लिए अपनी ज़मीनें बेच दीं, जबकि उसके पास एक भी तांबे का सिक्का कमाने की क्षमता नहीं थी..."

सावित्री जवाब देने ही वाली थी कि, "जो कर्तव्य वह अब अपना सिर मुंडवाकर, उधार लेकर और मृत व्यक्ति के अंतिम संस्कार करके पूरा कर रहा है, उसी ने उसे शव जलाने का अधिकार भी दे दिया है।" लेकिन वह अपने निर्णय पर अडिग रही और चुप रही। उसकी चुप्पी ने सुकन्या को और भी क्रोधित कर दिया। सावित्री आश्चर्य और संदेह से घिरी हुई थी कि क्या उसकी भाभी वही है जिसे उसने अब तक देखा था।

बारहवें दिन की रस्में पूरी हो चुकी थीं, परिवार के चारों सदस्यों ने दोपहर का भोजन कर लिया था। उनके रात्रि भोजन के लिए तीन बर्तनों में चावल, सांभर और छाछ लाई गई। रामकृष्णय्या के लिए कुछ भुने हुए धान के दाने, दूध और दो केले रखे गए, क्योंकि अंत्येष्टि के बाद भोजन करना वर्जित था। सहायक रसोइया और पुजारी श्रीरंगपट्टना के लिए रवाना हो गए। जाते समय उन्होंने कहा कि अगले दिन मासिक धर्म है और सुबह आठ बजे से पहले वापस आना आवश्यक है। रामकृष्णय्या भी उनके साथ श्रीरंगपट्टना चले गए। सुकन्या और सावित्री चटाई पर लेट गईं। गणेश चबूतरे पर बैठे मैसूर से लाई गई एक फिल्म पत्रिका पढ़ रहे थे। नदी का पानी अपने आसपास की हर चीज की परवाह किए बिना एकसमान गति से बह रहा था।

क्लर्क नंजप्पा टिपटूर से वहाँ आए थे। उनके हाथ में एक हैंडबैग और छाता था, और उन्होंने धोती, कमीज और काली टोपी पहन रखी थी। उन्होंने गणेश जी को पहचान लिया। "ओह, क्या यह धर्मशाला है?" ऐसा कहते हुए वे अंदर आ गए। सुकन्या संतुष्ट और उत्साहित दोनों थीं। कम से कम उनके परिवार का एक व्यक्ति तो उनके अप्पा के समारोह में आया था। इसके अलावा, उन्हें यह सोचकर उत्साह हुआ कि नंजप्पा गोदाम के कारोबार के बारे में कोई खबर लाए होंगे। वह उठीं और उनका स्वागत किया। नंजप्पा ने बताया कि वे कैसे आए, चटाई पर बैठे और

बोले, "देखिए, मुझे लगा कि आप किसी नदी किनारे किसी पवित्र स्थान पर पूजा-अर्चना करने गई होंगी। यह पता लगाने के लिए कि आप कहाँ गई थीं, मैं बिलिकेरे गया, आपके पड़ोसी सुब्बन्नय्या से पूछताछ की और सीधे यहाँ आ गया। मुझे तुरंत वापस जाना होगा। मैं आपको टिपटूर के कारोबार से संबंधित बातें व्यक्तिगत रूप से बताने आया हूँ, क्योंकि यह एक अत्यावश्यक मामला है।"
सुकन्या ने कहा, "अच्छा हुआ कि आप आ गए। कृपया नदी में हाथ-पैर धो लीजिए। यहाँ चावल, सांभर और छाछ है।" नंजप्पा तुरंत उठे और नदी के पास गए। उन्होंने हाथ-पैर धोकर खुद को तरोताज़ा किया। दस दिन बीत चुके थे, इसलिए मृत्यु के कारण उत्पन्न अशुद्धि दूर हो गई थी। इसके अलावा, दूसरे परिवार में विवाह कर दी गई पुत्री होने के कारण सुकन्या वैसे भी उस अशुद्धि से मुक्त थी। उसने केले का पत्ता बिछाकर उन्हें भोजन परोसा।
नंजप्पा ने कहा, 'मैं खाते-खाते बात करूँगा, क्योंकि मुझे तुरंत वापसी की बस पकड़नी है। भावा कहाँ है?' उन्होंने पूछा और इधर-उधर देखा।
सुकन्या ने कहा कि वह श्रीरंगपट्टनम गये थे।
उन्होंने कहा, 'कोई बात नहीं। मैंने मन में निश्चय कर लिया था और भाव की उपस्थिति में भी आपको सूचित करने के लिए यहाँ आया हूँ। आप गणेश जी को भी यहाँ बुला लीजिए। इस मामले में उनका भी बहुत महत्व है।' सावित्री अपनी मर्जी से बाहर गईं, गणेश जी को अंदर भेजा, सीढ़ियों से नीचे उतरीं, नदी किनारे गईं, आधा फर्लांग चलकर एक चट्टान पर बैठ गईं, बहता पानी उनके पैरों को छू रहा था। नंजप्पा ने वर्णन करना शुरू किया। 'देखिए, मुझे अपने स्वामी के स्वभाव के बारे में आपको कुछ बताने की आवश्यकता नहीं है। भाव क्रोधित हो गए, लोहे की तिजोरी से पैसों के बंडल निकाले और उन्हें शव के साथ जला दिया। क्या कोई अपनी नाक वापस पा सकता है जो अपने ही चेहरे को अपमानित करने के लिए काट दी गई हो? अभी इस बारे में बात न करें। क्या आप जानती हैं कि गोदाम में क्या हुआ है? गोदाम का हिसाब बैंक में है। उस बही में हस्ताक्षर करने का अधिकार किसके पास है? आप यह भी जानती हैं। आपके पिता के पास केवल वही पैसा नहीं था जो जलकर राख हो गया। आप जानती हैं, आम तौर पर व्यापारी पैसा लोहे की तिजोरियों में रखते हैं, जब उसे बैंकों में जमा नहीं किया जा सकता, या वे उसे कहीं और रखते हैं।' गोदाम में खोपरा की बोरियाँ आ गई हैं। अगर हम खरीददारी के लिए तैयार रहें, तो और भी आ जाएँगी। हालाँकि अभी सीज़न नहीं है,

फिर भी कुछ बोरियाँ बिक्री के लिए बची होंगी। और आपूर्तिकर्ताओं को किसानों को भुगतान करने के लिए पैसों की ज़रूरत है। चेक पर हस्ताक्षर कौन करेगा? अगर आप उचित दस्तावेज़ प्रस्तुत करें जिसमें यह बताया गया हो कि गोदाम के मालिक नागप्पा का निधन हो गया है, तो उनकी चल और अचल संपत्ति के सभी अधिकार आपको, सुकन्या, उनकी इकलौती बेटी और कानूनी वारिस को हस्तांतरित कर दिए जाएँगे। इसके बाद बैंक के सभी खाते आपके नाम पर स्थानांतरित कर दिए जाएँगे। हमें आपूर्तिकर्ताओं को भुगतान करना है और खरीदारों से वसूल करना है। इससे संबंधित सभी खाते सही ढंग से रखे गए हैं। आपको यह भी पता होना चाहिए कि साहूकार खर्च करने में कंजूस थे, लेकिन हिसाब-किताब, वजन, तारीख और ब्याज दरों के मामले में बहुत सख्त और ईमानदार थे। इसीलिए हमारी दुकान के ग्राहक कभी दूसरी दुकान पर नहीं जाते थे। आज भी ऐसा ही है। मैं वहाँ रहूँगी और मुझे सभी लेन-देन की जानकारी है। आप, आपके पति या आपका बेटा टिपटूर आ जाएँ। आप गोदाम को आसानी से संभाल सकती हैं। ऐसा कारोबार खड़ा करने में कम से कम बीस साल और थोड़ी किस्मत भी चाहिए। अगर इतनी साख बनाने वाला गोदाम बंद हो जाए तो उसका क्या फायदा? इसके अलावा, मुझे भी नहीं पता कि मालिक ने किन-किन जगहों पर संपत्ति खरीदी है और उनके पास कितनी संपत्ति थी। वे सारे दस्तावेज़ या तो घर की तिजोरी में होंगे या बैंक के लॉकर में। मेरे अनुमान से इन संपत्तियों की कीमत दस लाख से ज़्यादा है। आपको मृतक के वारिस के रूप में इन सभी का पंजीकरण करवाना चाहिए और खाता अपने नाम पर करवा लेना चाहिए। न तो गोदाम बंद करना और न ही ग्राहकों से यह कहना कि हमारे पास पैसे नहीं हैं, उचित है। देखिए, एक व्यापारी को अपनी दुकान एक दिन के लिए भी बंद नहीं करनी चाहिए। उसे एक दिन के लिए भी यह नहीं बताना चाहिए कि उसके पास पैसे नहीं हैं। अब ये रस्में चल रही हैं। अगर नहीं होतीं तो आप आज ही मेरे साथ आ सकती थीं। खैर, आपके पति शायद तुरंत राजी न हों। लेकिन, क्या न्यायसंगत है कि जो कानूनी तौर पर पोते की संपत्ति होनी चाहिए, उसे सिर्फ इसलिए बर्बाद कर दिया जाए क्योंकि आपके पति राजी नहीं हैं?

सुकन्या उत्साहित और रोमांचित थी। यह सच था, वह जानती थी कि उसके पिता ने कई जगहों पर जमीनें खरीदी थीं। उसने कभी सोचा भी नहीं था कि वह गोदाम का कारोबार संभाल पाएगी। उसे लगा, अब यह नंजप्पा मानो भगवान की तरह उस

पर कृपा करने आया है। नंजप्पा ने कहा, 'लेकिन एक बात सुनो बहन, जब मालिक जी रहे थे, तब वे हमें कभी उदारता से वेतन नहीं देते थे। मुझे, जो इतने सारे काम देखता था और कड़ी मेहनत करता था, वे सिर्फ तीन सौ रुपये देते थे। उस पुत्तस्वामी को, जो उस दिन तुम्हें सूचना देने आया था, मालिक सिर्फ एक सौ दस रुपये दे रहा था। मैं तुम्हें अभी बता देता हूँ। मैं ईमानदारी से काम करूँगा, तुम्हें निर्देश दूँगा, तुम जो भी चाहो उसमें तुम्हारा मार्गदर्शन करूँगा और गोदाम का प्रबंधन करूँगा। लेकिन तुम्हें मुझे पाँच सौ रुपये प्रति माह देने होंगे; और पुत्तस्वामी को, जो वजन करने, वैगनों में सामान लादने और बाकी सभी काम देखता है, तुम्हें ढाई सौ रुपये देने होंगे। बाकी सभी कामगारों को भी उतना ही वेतन देना होगा जितना दूसरे गोदामों में दिया जाता है। मैं जाकर उन्हें यह बता दूँगा, ताकि वे यहाँ से न जाएँ और दूसरे गोदामों में काम न करें।'

सुकन्या ने सिर हिलाया। तब तक वह छाछ के साथ चावल खाकर अपना भोजन समाप्त कर चुकी थी और बोली, 'मैं तुरंत लौटती हूँ। जब हमारे स्वामी जी जीवित थे, तब वकील चंद्रशेखरय्या सभी कानूनी मामलों को देखते थे। मैं उन्हें सब कुछ बता दूँगी। आपके आने तक उन्हें सभी दस्तावेज़ तैयार करने होंगे। इसके अलावा, आप तय कर लीजिए कि गोदाम किसके नाम पर होना चाहिए। या तो पति, पत्नी और पुत्र के नाम पर, या माता और पुत्र के नाम पर, या केवल पोते के नाम पर। आप निर्णय लीजिए और आइए। क्योंकि जब तक यह तय और दर्ज नहीं हो जाता, आप बैंक के साथ कोई लेन-देन नहीं कर सकते।' उसने विस्तार से सब कुछ बताया और उठ खड़ी हुई। उसने हाथ धोए और जाने के लिए तैयार हो गई। 'चन्नरायपट्टाना या नागमंगला और बेलुरु होते हुए, मुझे बस ज़रूर मिल जाएगी। मैं श्रीरंगपट्टाना बस स्टैंड तक पैदल जाऊँगी,' उसने कहा, चप्पल पहनी और बाहर निकल गई।

सुकन्या उत्साहित और बेचैन हो गई। उसने सोचा कि उनके गरीबी के दिन खत्म हो गए हैं। अपने पिता के प्रति उसका प्रेम और स्नेह बढ़ गया। उसने अपने सामने खड़े गणेश से कहा, "हे मेरे पुत्र, आप यह समझ लीजिए। आपके दादाजी ने धन के मामले में कंजूसी करके अपनी बेटी और पोते के लिए सारा धन बचा लिया था। उन्होंने अच्छी तरह सोचा था कि अगर उन्होंने पहले ही धन और संपत्ति दे दी होती, तो उसके ये बिलिकेरे ससुराल वाले राहगीरों को खाना खिलाकर सब कुछ बर्बाद कर देते।"

सुकन्या को समझ नहीं आ रहा था कि क्या करे। उसने केले का पत्ता हटाया जिस पर नंजप्पा ने भोजन किया था और फर्श साफ किया। उसने अपने बेटे से तीन बार पूछा, 'क्या तुम्हें समझ आया?' इसी बीच रामकृष्णय्या फलों से भरा थैला लेकर लौटे। यह वह विशेष प्रसाद था जो वे रसोइयों द्वारा तैयार किए गए व्यंजनों के साथ मासीकाओं के भोजन के लिए लाए थे। उन्होंने थैला नीचे रखा और दीवार से टेक लगाकर बैठ गए। तब सुकन्या ने अपने बेटे से कहा, 'तुम्हारी आंटी नदी के किनारे बैठी होंगी। जाओ और उनसे वापस आने के लिए कहो।' दस मिनट के भीतर गणेश सावित्री के साथ लौट आए। सुकन्या ने नंजप्पा द्वारा बताई गई सारी बातें बताईं और सावित्री को बुलवाने का कारण भी बताया। 'सावित्री, आओ यहाँ बैठो। मैं तुम्हें बताती हूँ कि तिपपुर से क्लर्क क्यों आया था। तुम्हें पता है, तुम्हारे भाई ने हमारे बड़े बेटे के सामने, मेरे पिता के शव की गवाही में, मेरे गाल पर ज़ोर से थप्पड़ मारा था। मुझे पूरा यकीन है कि अब भी वह मुझे फिर मारेगा।' मैंने तुम्हें बुलवाया, क्योंकि अगर वो अब मुझे तुम्हारी मौजूदगी में ही पीट दे तो तुम गवाह बनोगे।

फिर, जब सन्नाटा छा गया, तो रामकृष्णय्या कुछ नहीं बोले। वे धर्मशाला के सामने बहती नदी को देखते हुए दरवाजे से बाहर देखते रहे। नदी की वही उदासीनता और उपेक्षा का भाव उनके चेहरे पर भी झलक रहा था। सुकन्या ने उत्तर पाने के लिए बहुत देर तक प्रतीक्षा की, फिर निराश होकर सावित्री से कहा, 'सावित्री, अपने भाई से उत्तर मांगो।' वह फिर प्रतीक्षा करती रही। एक मिनट बाद, रामकृष्णय्या ने कहा, 'मुझे नहीं पता था कि जो लोग समझ नहीं सकते, वे थप्पड़ खाने पर भी नहीं समझेंगे। कहने या बात करने के लिए कुछ नहीं बचा। मुझे गणेश जी से कुछ पूछना चाहिए।' वे अपने पुत्र की ओर मुड़े और बोले, 'देखो पुत्र, शांत मन से सोचो और मुझे बताओ। देखो, सरकार द्वारा उत्तराधिकार का अधिकार हस्तांतरित करने मात्र से ही मृतक की संपत्ति हमारी नहीं हो जाएगी।' जब गोदाम मालिक नागप्पा की आत्मा की प्रवृत्ति और संस्कृति में यह बात निहित नहीं थी कि उनकी मृत्यु के बाद उनकी संपत्ति किसी व्यक्ति या संस्था के पास रहे, तो फिर आपके द्वारा उनके प्रारब्ध में शामिल होने में किस प्रकार की बुद्धिमत्ता या तर्क है? यह एक प्रकार की चोरी होगी। चोरी इस प्रकार है जैसे चुपके से किसी दूसरे के बगीचे में घुसपैठ करना।

रामकृष्णय्या ने अपने पुत्र के चेहरे की ओर देखते हुए ये शब्द कहे और चुप हो गए। लेकिन सुकन्या ने तुरंत जवाब दिया, "बिलिकेरे के इन लोगों को मेरे पिता को यह नियम सिखाने की ज़रूरत नहीं है कि उनकी मृत्यु के बाद उनकी संपत्ति उनकी पुत्री की ही होगी। उन्हें किस प्रकार की वसीयत बनानी चाहिए थी? क्या उन्हें मंत्रों का जाप करना चाहिए था?"

रामकृष्ण ने उसकी ओर मुड़कर कहा, 'मैंने गणेश जी से पूछा है। उन्हें बोलने का मौका दीजिए। अंतिम निर्णय मैं आप दोनों पर छोड़ता हूँ।' उन्होंने फिर अपने बेटे के चेहरे की ओर देखा।

गणेश अपने पिता की आँखों में देखने से झिझक गए। उन्हें बेचैनी महसूस हुई, मानो कोई उन आँखों में बैठकर उन पर नज़र रख रहा हो। उन्होंने अपनी नज़र खंभे की ओर घुमाई और कहा, 'सिर्फ़ बीएससी की डिग्री लेकर मुझे क्या मिलेगा?'

रामकृष्णय्या ने उत्तर दिया, 'देखो, यह एक अप्रासंगिक बात है। यह तो ऐसा ही है जैसे यह तर्क देना कि मेरे पास जो नहीं है, उसके लिए मैं दूसरे के बगीचे में घुस जाऊँगा। अगर तुम्हें लगता है कि बीएससी काफ़ी नहीं है, तो तुम मैसूर या बैंगलोर में अपनी पढ़ाई जारी रख सकते हो। मैं तुम्हारा साथ दूँगा, चाहे मुझे कर्ज़ ही क्यों न लेना पड़े।'

सावित्री ने उत्साह से कहा, 'अगर तुम एमएससी की पढ़ाई करोगी तो मैं तुम्हें हर महीने दो सौ रुपये भेजूंगी।' लेकिन जैसे ही उसे स्थिति का एहसास हुआ, उसने तुरंत अपनी बात रोक ली। उसे लगा कि उसकी भाभी की तीखी निगाहें उस पर टिक जाएंगी।

गणेश ने खंभे की ओर देखते हुए उत्तर दिया, "हम सब कुछ क्यों त्याग दें क्योंकि तिप्तुर दादा कंजूस थे? उन्होंने न तो भोजन पर खर्च किया और न ही कपड़ों पर। आप इसलिए क्रोधित हैं क्योंकि उन्होंने मेरे वहां रहने के खर्च के रूप में आपसे ढाई हजार रुपये लिए थे। देखिए, आपने वह धान का खेत आठ हजार रुपये में बेच दिया था। गोदाम मुझे दे दीजिए, सिर्फ एक महीने के मुनाफे से मैं आपको वह धान का खेत वापस दिला दूंगा।"

रामकृष्णय्या ने फिर कुछ नहीं कहा। उनके भीतर का आश्चर्य और सदमा उनके चेहरे पर ज़ाहिर नहीं हुआ। लेकिन सावित्री के लिए यह असहनीय हो गया। हालांकि, उसने अपनी जीभ दबाकर फिर न बोलने का निश्चय कर लिया था। इतना कहने के बाद, गणेश जी को वहाँ रुकना शर्मनाक लगा और वे बाहर चले गए,

दरवाज़े के पास पड़ी चप्पलें पहनीं, सीढ़ियाँ उतरीं और नदी के किनारे वाली गली की ओर मुड़ गए। सुकन्या भी बाहर आईं और चबूतरे पर बैठ गईं।
उस रात सुकन्या सो नहीं सकी। गणेश भी करवटें बदलते रहे। किसी को नहीं पता था कि रामकृष्णय्या सोए थे या नहीं। भाई के शब्दों ने सावित्री के मन और बुद्धि को एक अलग ही स्तर पर पहुंचा दिया और उस ऊंचाई से मंजय्या द्वारा सहा गया अपमान और खुद को गिरा हुआ महसूस करना उसे महत्वहीन लगने लगा।
उसका भाई सुबह नहर की ओर गया था। उसकी भाभी और गणेश सज-धज कर यात्रा पर जाने के लिए तैयार थे। गणेश ने अपनी माँ का छोटा सा संदूक पकड़ा हुआ था। सुकन्या सावित्री के पास आकर बोली, "देखो सावित्री, अब गोदाम बंद हो गया है। हमें किसी वकील के पास जाना चाहिए, अदालत का आदेश लेना चाहिए, तभी हम व्यापार कर सकते हैं, बैंक खाते ट्रांसफर कर सकते हैं। गणेश और मैं तुरंत तिप्तूर जा रहे हैं। क्लर्क ने कहा कि एक दिन की देरी भी हुई तो ग्राहक कहीं और चले जाएंगे। हालाँकि मैं बेटी हूँ, लेकिन मैं कोई काम नहीं करूँगी और न ही अंत्येष्टि में महिलाओं की भागीदारी होगी। तुम्हारा भाई, जो दामाद है, आज मासीका और कल वैकुंठ करेगा। गणेश ने कहा है कि बैंक खाते हमारे पास आने के बाद, हमें अपने पिता की गरिमा के अनुरूप एक सामूहिक भोज का आयोजन करना चाहिए, जिसमें दुकान के ग्राहकों और तिप्तूर के सभी लोगों को आमंत्रित किया जाए। तुम्हें भी आना चाहिए।" सावित्री, तुम अपने भाई को बता दो कि वह यहाँ के अनुष्ठान पूरे करने के बाद परसों सीधे तिपतुर आ जाए।' यह कहकर सुकन्या तेजी से अपने बेटे के पीछे चल पड़ी।
पुजारी और रसोइये जो प्रतिदिन आते थे, थोड़ी देर में आ गए। आज मासीका का दिन था, जो श्राद्ध अनुष्ठानों में एक बहुत ही महत्वपूर्ण दिन होता है। रसोइयों ने अपने साथ लाई हुई सब्जियाँ काटना शुरू कर दिया। पुजारी ने दर्भा घास और अनुष्ठानों के लिए आवश्यक अन्य सामग्री व्यवस्थित करना शुरू कर दिया।
रामकृष्णय्या लौट आए। पुजारी ने उनसे कहा, 'आप स्नान कर लीजिए और ग्यारह बजे तक तैयार हो जाइए। मैं यहाँ सब कुछ तैयार रखूँगा, आप साइकिल से घर जाइए और वापस आ जाइए। अन्य ब्राह्मण भी, जो अनुष्ठानों में भाग लेने वाले हैं, तब तक आ जाएँगे। हालाँकि हम दोपहर से पहले ये अनुष्ठान शुरू नहीं कर सकते।'

रामकृष्णय्या बाहर आए और पानी के पास सीढ़ी पर बैठी सावित्री के पास जाकर पूछा, 'ऐसा लगता है कि वे दोनों आज ही तिपुर के लिए रवाना हो गए हैं। मुझे उनका संदूक और गणेश जी का थैला कहीं नहीं दिख रहा है।'
सावित्री ने बस 'हाँ' कहा। उसे कहीं न कहीं यह महसूस हो रहा था कि भाभी ने जो बताया है, वह अपने भाई को बताना नीचता और अपमान होगा। अब जब रामकृष्णय्या बोलने लगे, तो वह अपने अपमान और शर्मिंदगी से बाहर आ गई। उन्होंने फिर कुछ नहीं कहा, बल्कि पानी के पास बैठकर अपने दाँत साफ़ करने लगे। सावित्री उठी, सीढ़ियाँ चढ़ी और धर्मशाला लौट गई। पुजारी ने ज़रूर ध्यान दिया होगा कि मृतक की बेटी उस दिन उपस्थित नहीं थी। वह दोपहर में ज़रूर पूछेंगे कि वह कहाँ है और उन्हें जवाब देते समय सावित्री को बहुत शर्मिंदगी महसूस होगी।
बिना पूछे ही उसने कहा, 'मेरी भाभी के पिता के घर पर कुछ जरूरी काम था। वहां से कोई आई थी, वह अभी-अभी गई है और कल तक वापस आ जाएगी।'
पुजारी ने सिर उठाकर उसकी ओर देखा। उन्होंने कहा, 'कोई बात नहीं। अशुभ अनुष्ठानों में महिलाओं की कोई भूमिका नहीं होती। लेकिन हम उनके बिना कोई भी शुभ समारोह नहीं मना सकते। उनके बिना काम नहीं हो सकता।'
सावित्री को लगा कि यह बात सच है। फिर भी, उसने पुजारी के चेहरे की ओर देखा कि कहीं वह व्यंग्य से तो नहीं बोल रहा है। उसे लगा कि पुजारी ने बिना किसी संदर्भ के, केवल शास्त्र के बारे में ही बात की है।
उस शाम, रात और अगली सुबह तक धर्मशाला में केवल भाई-बहन ही रहे। सावित्री ने सोचा कि इस मामले पर अपने भाई से बात करना अनुचित होगा। फिर भी, वह मामले की गंभीरता को जानती थी और अपने भाई के मन की बात समझती थी। अब अगर वह कुछ पूछती, तो वह बस एक जानी-मानी बात को ही दोहराना होता। चारों ओर सन्नाटा छाया हुआ था। दोनों बिना बोले एक ही जगह पर बैठे थे: लेकिन उसे यह एहसास हो रहा था कि वे एक-दूसरे को समझ चुके हैं। सावित्री को अचानक एक विशेष शक्ति मिल गई थी। रात में कोई और काम नहीं था। इसके अलावा, उस सुनसान नदी किनारे पर, सूरज डूबते ही रात का माहौल हो जाता था। दोनों सोने चले गए। दो घंटे बीत जाने के बाद भी रामकृष्णय्या को नींद नहीं आई। उन्होंने जम्हाई तक नहीं ली और बस करवटें बदलते रहे। सावित्री

ने उनसे पूछा, 'अन्नाय्या, जब आपने नोट जलाए थे, तो क्या आप इसलिए नाराज़ थे कि आपके ससुर ने अपने पोते के खाने का खर्च उठाया था?'
उन्होंने तुरंत जवाब नहीं दिया। उन्हें यकीन था कि उन्होंने उनका सवाल सुन लिया है। कुछ देर बाद उन्होंने समझाया, 'देखो सावित्री, अगर मुझमें ज़रा सा भी क्रोध होता तो मैं ऐसा नहीं करता। यह बिल्कुल अलग बात है कि वह पैसा नागप्पा के प्रेत तक पहुँचा या नहीं। मैं तीन दिनों से उनके नाम पर ये अनुष्ठान कर रहा हूँ। लेकिन अगर तुम पूछो कि जो पिंड मैं अर्पित कर रहा हूँ, वह उनके प्रेत तक पहुँचेगा या नहीं... क्या तुमने देखा है? मैं क्या कहूँ? क्या मैं यह सब इस विश्वास के साथ नहीं कर रहा हूँ कि वह ज़रूर उन तक पहुँचेगा? उन्होंने उस चाबी को बड़ी उत्सुकता, चिंता और बेचैनी से खोजा, उसे मुट्ठी में कसकर पकड़ा और प्राण त्याग दिए। उस चाबी में जो वस्तु थी, उसे उनके साथ भेजने का क्या तरीका था? शास्त्रों में लिखा है कि यहाँ की वस्तुएँ पाँच तत्वों में से किसी एक के द्वारा वहाँ भेजी जा सकती हैं, अर्थात् पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु या आकाश। दाह संस्कार के समय अग्नि वाहक होती है। मैंने पैसा उसी के द्वारा भेजा।' नागप्पा के प्रेत ने इस बात पर सहमति जताई है कि उनके दामाद ने पूरी तरह से उचित व्यवहार किया है और वे प्रसन्न हैं। इसका विश्लेषण केवल प्रेत के दृष्टिकोण से ही किया जाना चाहिए। सरकारी कानून के अनुसार, किसका क्या अधिकार है और किसका नहीं, इस बारे में ये सभी व्यावहारिक या व्यावसायिक विचार स्वार्थ पर आधारित हैं।
रामकृष्णय्या ने इतना ही कहा और चुप हो गए। सावित्री ने उनसे और कुछ नहीं पूछा। सावित्री मन ही मन सोचने लगी: उसके अन्नाय्या नागप्पा की आलोचना ऊँच-नीच, पापी-संत जैसे किसी पैमाने पर नहीं कर रहे थे, बल्कि वे उसे उसका हक पहुँचाने के सीमित कर्तव्य के रूप में ही देख रहे थे। उसे लगा कि उसके अन्नाय्या भी उसके पिता जैसे ही हैं। जब सबसे बड़े पुत्र अन्नाय्या बीस वर्ष के थे, तब अप्पा ने अपनी पत्नी को खो दिया था। अब, जब उसके अन्नाय्या का पुत्र गणेश बीस वर्ष का है, तब उसकी भाभी ने अपने पति को छोड़कर अपने पिता के घर संपत्ति लेने चली गई। शायद उसके अप्पा और अन्नाय्या का भाग्य एक ही था। क्या उसकी भाभी बिलिकेरे वापस लौटेगी? नहीं, वह इतना बड़ा कारोबार अपने अभी तक अपरिपक्व मन वाले युवा पुत्र के कंधों पर नहीं छोड़ेगी। यह असंभव था कि उसके अन्नाय्या वहाँ जाएँगे। नागप्पा के जीवित रहते वे एक दिन के लिए भी वहाँ नहीं गए थे। वैसे भी, नागप्पा ने भी कभी अपने दामाद को आमंत्रित नहीं किया था। क्या वे

अब वहाँ जाएँगे? कुल मिलाकर, उसका भाई अकेला पड़ गया। यह सोचकर कि उसके भाई के लिए दिन में दो बार रागी के गोले बनाने वाला कोई नहीं है, उसका दिल पिघल गया। चाहे उसे कितनी भी कठिनाइयाँ और पीड़ाएँ सहनी पड़ें, चुप रहना और किसी को न बताना उसका स्वभाव था। लेकिन क्या उसके भीतर दुख और पीड़ा नहीं होगी? सावित्री अपने मन में इन बातों को लेकर मंथन करने लगी। कुछ समय बाद, उसके अन्नय्या ने कहा, 'देखो, वे अनुष्ठान तो मुझे ही करने थे। और उस धन को जलाने का अधिकार भी केवल मुझे ही था। सुकन्या कह रही है कि यह गलत था। अगर यह गलत था भी, तो मुझे वह साढ़े छह लाख कमाने होंगे, चुकाने होंगे और उसके कर्ज से मुक्ति पानी होगी। लेकिन चाहे मैं अपनी पूरी जिंदगी भर मेहनत कर लूँ, साढ़े छह लाख तो दूर की बात है, उसका दसवाँ हिस्सा भी नहीं कमा सकती। जब हम व्यापार के बारे में सोचते हैं, तो ब्याज को नहीं भूलना चाहिए। अगर यह दस प्रतिशत है, तो यह प्रति वर्ष पैंसठ हजार रुपये का ब्याज होगा।' फिर अर्जित ब्याज पर ब्याज और चक्रवृद्धि ब्याज तेजी से फैलने वाले जहर की तरह बढ़ेगा और मुझे उसके कर्ज के कुएं में डूबकर कई जन्मों तक कष्ट भोगना पड़ेगा।' रामकृष्णय्या ने यह कहकर जोर से हँस दिया। सावित्री समझ गई कि उस हँसी में उदासी, शोक और पीड़ा छिपी हुई थी। या क्या वह बिना किसी पीड़ा या दुःख के मज़ाक में हँस रहे थे? सावित्री को संदेह हुआ। उसके अन्नाय्या ने सुकन्या के साथ बाईस-तेईस वर्ष का वैवाहिक जीवन व्यतीत किया था। क्या वह अपनी पत्नी के स्वभाव को जानते थे या नहीं? या क्या उसे अपना असली स्वभाव प्रकट करने का कोई अवसर ही नहीं मिला? सावित्री सोचने लगी, ऐसा कैसे हो सकता है कि पुत्र भी अपने पिता के परिवार के गुणों से बिल्कुल विपरीत हो गया।
उसे भी नींद नहीं आई। एक सवाल उसे सता रहा था: उसके अन्नय्या के लिए खाना कौन बनाएगा? जब वो छोटे थे तब तो उन्हें खाना बनाना आता था। लेकिन कितने साल पहले! बात ये नहीं थी कि उन्हें खाना बनाना आता है या नहीं। बात ये थी कि इस उम्र में एक आदमी, अकेले रहते हुए, अपने लिए खाना बनाना, सारे घरेलू काम करना... सावित्री को दया आई। उसे एक विचार आया। क्यों न उसका तबादला बिलिकेरे में करवा लिया जाए? फिर कोई तो उसकी देखभाल करने वाला होगा। हाँ, क्यों नहीं? लेकिन उसे जल्दबाजी नहीं करनी चाहिए। उसकी भाभी कुछ दिन बिलिकेरे में और कुछ दिन तिप्तूर में रह सकती हैं। सुकन्या को ये नहीं लगना चाहिए कि सावित्री के दखल की वजह से उसका परिवार टूट गया है। बाद में उसने

कुछ महीने रुककर इस बारे में सोचने का फैसला किया। उसे आधी रात के बाद नींद आई।

वैकुंठ का समारोह और अन्य अनुष्ठान दोपहर दो बजे तक समाप्त हो गए। भाई-बहन ने ढाई बजे बस पकड़ी और पाँच बजे तक चन्नरायपट्टाना पहुँच गए। रामकृष्णय्या सीधे बिलिकेरे के लिए बस में सवार हो गए, क्योंकि घर को बंद हुए पाँच दिन हो चुके थे। सावित्री को अगले दिन स्कूल जाना था, इसलिए वह घर लौट गई।

सावित्री का सिर तकिये पर रखते ही उसे नींद आ गई। भोर से पहले जब वह उठी तो उसे जी मिचलाने लगा। उसने चार दिन तक समारोह के लिए तैयार किया गया खाना खाया था, लेकिन कोई भी ऐसा भोजन नहीं किया था जिससे उसका पेट खराब हो। खाना शुद्ध और साफ तरीके से पकाया गया था। फिर भी उसे जी मिचलाने की क्या ज़रूरत थी? ऐसा सोचते हुए वह बाथरूम गई और उल्टी करने की कोशिश की; लेकिन न तो उल्टी बाहर आई और न ही पेट में रुकी। जब वह सोचने लगी कि उसे इतनी तकलीफ क्यों हो रही है, तो उसे याद आया कि समारोह की हड़बड़ी में वह भूल गई थी कि उसके मासिक धर्म की तारीख एक हफ्ते से ज़्यादा लेट हो चुकी है। उसका पूरा शरीर कांप उठा। उसका मन, जो पूरी तरह नागप्पा की मृत्यु, उसके भाई और उसकी पत्नी और बेटे के बीच के झगड़े में उलझा हुआ था, अचानक वहीं लौट आया जहाँ उसने छोड़ा था और एक और भी भयानक स्थिति की कल्पना करने लगा। उसके साथ अपमान हुआ और बलात्कार हुआ। उसे छह दिन तक डॉक्टर से इंजेक्शन लगवाने की यातना सहनी पड़ी, क्योंकि उसे उस भयानक बीमारी के होने का डर था। अब, यह सब। सावित्री को लग रहा था कि उसके साथ हुए अन्याय का कोई अंत नहीं है। उसने सोचा कि गले में उंगली रखकर उल्टी कर दे, ताकि उसे कुछ राहत मिल सके। लेकिन उसे डर था कि कहीं सुबह-सुबह नंजप्पा या उसकी पत्नी को उल्टी की तेज़ आवाज़ सुनाई न दे। वह आधे घंटे तक बैठी रही, पर उल्टी नहीं कर पाई और फिर अंदर आकर लेट गई। उसे उठकर रोज़मर्रा के कामों में लगने की कोई इच्छा नहीं थी। उसे अपने गर्भवती होने का पूरा यकीन था। अगर सबको पता चल जाता, तो उसे मंजय्या द्वारा किए गए बलात्कार के बारे में सबको बताना पड़ता। लेकिन कौन उस पर विश्वास करता? वह दुष्ट उसे और अपमानित करने के लिए इससे इनकार कर देता। साथ ही, वह यह साबित करने की कोशिश भी कर सकता था कि अनगिनत

महिलाओं की तलाश में घूमने वाले उस व्यक्ति और सावित्री में कोई फर्क नहीं है। उसने सोचा, हे भगवान! एक औरत को कैसा जीवन जीना पड़ता है! ऐसा जीवन जिसमें हर अन्याय का बोझ उठाना पड़ता है।

उसे अपनी स्थिति को स्वीकार करने में लगभग एक सप्ताह लग गया। यह निश्चित था कि वह गर्भवती थी। लेकिन वह किससे बात करती? केवल उसका अन्नाय्या ही था, जिसके साथ उसका गहरा रिश्ता था। अगर वह उसे यह बात बताती, तो वह कोई आसान उपाय सुझाने वाला व्यक्ति नहीं था। वह निश्चित रूप से मंजय्या को पेड़ से बांधकर उससे पूछताछ करता। उसे और कुछ सूझ ही नहीं रहा था। उसे यह बात बताना बेहद शर्मनाक लग रहा था कि वह बेबस है और उसके साथ बलात्कार हुआ है। हाँ, यह भी एक तरह का बलात्कार ही था। उसने उससे झूठ बोला था। वह जिद्दी थी और उसने उससे शादी की थी - बाद में उसके साथ कई बलात्कार हुए - उसे लगा कि यह भी उसी तरह का एक बलात्कार है। उसने अपने अन्नाय्या को यह बात न बताने का फैसला किया। ऐसी स्थिति में किसी को भी जो स्वाभाविक लगता है, वही उपाय उसे भी सूझा। अगर इसे और बढ़ने दिया जाए, तो इसे निकालना मुश्किल हो सकता है। उसने डॉक्टर के पास जाने, उसे सब कुछ बताने और मामला खत्म करने का फैसला किया। उसे किस डॉक्टर से सलाह लेनी चाहिए? पूरे दिन सोचने के बाद, उसे डॉक्टर हशीम याद आए। वह सक्षम, सज्जन और एक अच्छे डॉक्टर थे। उसे यकीन था कि अगर वह उसे सब कुछ बता देगी, तो यह बात कभी बाहर नहीं फैलेगी और कोई बदनामी नहीं होगी। उसे अगले दिन सुबह दूसरे मरीजों की भीड़ से पहले ही उसके क्लिनिक जाना चाहिए। अगर वह डॉक्टर ही होता, तो उसे दोबारा सफाई देने की शर्मिंदगी नहीं झेलनी पड़ती। वह पहले से ही मंजय्या द्वारा उसके साथ किए गए अन्याय को जानता था और उसे छह इंजेक्शन देकर उसका इलाज कर चुका था। उसे बस इतना कहना था: 'डॉक्टर साहब, मैं इस स्थिति में हूँ। कृपया मेरी मदद कीजिए।' बाकी सब उसकी जिम्मेदारी होगी। सावित्री ने अगले दिन सुबह आठ बजे से पहले डॉक्टर से मिलने का फैसला किया।

उस रात अचानक उसके भीतर एक ऐसी पीड़ा उठी जो उबलकर सतह पर आ गई। बलात्कार की उस अपमानजनक घटना के बाद भी उसने इतना तीव्र दुःख नहीं सहा था। यह ऐसा दुःख था जिसने उसे सिसक-सिसक कर रोने पर मजबूर कर दिया। जहाँ तक उसे याद था, वह इतनी बेकाबू होकर केवल अपने अप्पा की

मृत्यु पर ही रोई थी। बहुत पहले, जब वह छोटी बच्ची थी, सीताक्का की मृत्यु पर वह ज़रूर बहुत रोई होगी। फिर, जब वह कुँवारी के बाहर खड़ी होकर मंजय्या के व्यभिचार और यौन क्रीड़ाओं को सुन रही थी, जब वह उसे छोड़कर घर से चली गई, तो उसके भीतर क्रोध, घृणा और प्रतिशोध की भावना इतनी तीव्र रूप से जल रही थी कि उसने सब कुछ जला देने का सोचा, लेकिन उसने ऐसी पीड़ा कभी नहीं सही थी। यह ऐसा दुःख था जो केवल रोने से ही शांत हो सकता था। लेकिन वह ज़ोर से रो नहीं सकती थी। नंजप्पा की पत्नी तुरंत आती। वह पूछती, 'बच्ची, तुम क्यों रो रही हो?' और सावित्री के कंधे पर हाथ रखकर उसे सांत्वना देने की कोशिश करती। फिर सिसकियाँ और तेज़ हो जातीं और उसे कारण बताने के लिए मजबूर होना पड़ता। सावित्री ने अपनी साड़ी का किनारा मोड़कर मुँह में ठूँस लिया और फूट-फूटकर रोने लगी। इससे उसका दुख थोड़ा कम हुआ और वह बिस्तर पर चली गई। थोड़ी देर बाद, उसके दुख का कारण उसे स्वयं समझ में आ गया। हाँ, यह बलात्कार का परिणाम हो सकता है, किसी नीच व्यक्ति ने किया हो सकता है, लेकिन उसके भीतर एक नया जीवन पनप रहा था। वह प्रार्थना कर रहा था और सुरक्षा, उसके रक्त, मांस और दूध के पोषण के लिए गुहार लगा रहा था। भीतर के उस नए जीव की बेचैनी सुबह की मतली के रूप में प्रकट हो रही थी। पैंतीस वर्ष की आयु में, इसने उसके जीवन को जन्म दिया था और वह उसका अपना जीवन बनकर उभरा था। वह इसे क्यों मार डाले? वह निकम्मा नीच व्यक्ति चाहे जितना दावा करे कि यह उसका नहीं है, करे। जब वह व्यक्ति, जिसके पास केवल झूठ ही पूंजी है, इतना साहस रखता है, तो मैं, जिसके पास मजबूत सत्य है, एक साहसी स्त्री क्यों न बनूँ? मेरे सामने खड़े इस सत्य को कौन नकार सकता है? अपने बच्चे को पालने का फैसला जब उसके मन में पक्का हो गया तो उसे सुकून मिला। रोना बंद हो गया और आँखों में आए आँसू मानो शांति और संतोष के आँसू थे। उसे उन्हें पोंछने का मन ही नहीं हुआ। पूरी रात उसने अपने गर्भ में उस बच्चे के दिन-प्रतिदिन बढ़ने की सुखद अनुभूति की कल्पना की। उसने अपने मन में उस बच्चे के जन्म की हज़ारों तस्वीरें उकेरीं, जो खुशी से चिल्ला रहा था, हाथ-पैर ऐसे पटक रहा था मानो आसमान की ओर उड़ रहा हो। उसके मन में यह सवाल ही नहीं उठा कि वह लड़का है या लड़की। सावित्री को याद आया, अगर उसके अप्पा ने उसे उस तरह से सज़ा दी होती जो उनके स्वभाव के लिए नामुमकिन था, अगर वे इतने गुस्से में अपनी बेटी को लात मारते, तो उन्हें इतना गहरा दुख हुआ होता कि धरती

हिल जाती। हालाँकि उन्होंने उसे समझाया, फिर भी वह अपनी बात पर अड़ी रही। यहाँ तक कि जब अन्नय्या ने उसे डांटा और सब कुछ समझाया, तब भी वह अड़ी रही। यह सरासर हठ था। सावित्री ने बार-बार यही हठ दोहराया कि वह अपने बच्चे को बचाएगी। यही फैसला सौवीं बार उसके मन में आया। उसने सोचा, क्या एक बार फैसला करना ही काफी नहीं था? उसे बार-बार इसे पक्का करने की कोशिश क्यों करनी चाहिए? दूर कहीं मुर्गे की बांग सुनाई दी, तब तक एक दृढ़ निर्णय से मिली संतुष्टि और सुकून ने उसके मन की उथल-पुथल को शांत कर दिया और उसे नींद आ गई।

सुबह जब वह उठी तो काफी देर हो चुकी थी। उसे चिंता सताने लगी कि कहीं उल्टी करते समय कोई तेज़ आवाज़ न आ जाए, हालाँकि उसने खुद को रोका। चाहे तेज़ आवाज़ आए, आज ही मैं उल्टी कर दूँगी, लेकिन किसी तरह उसे लगा कि उसे अपने फैसले में जल्दबाजी नहीं करनी चाहिए। इसलिए, जैसा वह रोज़ करती थी, आज भी उसने बड़ी सावधानी से उल्टी की पीड़ा को सहा, घर के काम निपटाए और स्कूल चली गई। दोपहर तक, उसका मन दूसरी दिशा में सोचने लगा। आखिर यह उसका बच्चा होगा। ज़रूर आँखों, नाक, भौंहों या माथे में समानता होगी। उसे सरकारी रिकॉर्ड में, स्कूल में और जीवन भर उसका नाम पिता के रूप में लिखवाना होगा। उसे हमेशा अपने बच्चे से कहना होगा: तुम्हारा पापा ऐसा ही था। तुम्हें उसके जैसा नहीं बनना चाहिए। उसे जीवन भर उसकी यादों से जूझना पड़ा था। एक तरह से, अब तक वह बिना किसी चिंता के जी रही थी। अब उसे लगा कि उसे इतनी चिंता क्यों करनी चाहिए। एक-दो घंटे के भीतर, यह विचार और मजबूत हो गया और हावी हो गया। दिन के आखिरी घंटे में पढ़ाते समय, उन्हें अचानक कक्षा छोड़कर सीधे डॉक्टर के क्लिनिक जाने की तीव्र इच्छा हुई। किसी तरह उन्होंने हिम्मत जुटाई और उन्हें याद आया कि डॉक्टर ने इंजेक्शन लगाते समय उनसे कहा था कि सुबह आना, क्योंकि शाम को बहुत भीड़ होती है। उन्होंने अगले दिन सुबह क्लिनिक जाने का फैसला किया।

लेकिन रात में जब वह अपने लिए खाना बना रही थी, तो उस अजन्मे बच्चे के प्रति स्नेह और प्रेम उमड़ पड़ा। बेशक वह पापी था, लेकिन एक माँ होने के नाते, क्या उसे दुनिया की रोशनी में आँखें खोलने से पहले ही उसका जीवन समाप्त कर देना चाहिए? पूरी रात वह इस पाप के भय से ग्रस्त रही। पिछली रात उसने जो निर्णय सौ बार लिया था, वह इस रात भी बार-बार मजबूत होता जा रहा था। उसे लगा कि

उस बच्चे के बिना शांति संभव नहीं है, उसके जीवन का कोई निश्चित उद्देश्य नहीं है, कोई अर्थ नहीं है। उसे बचाने का निश्चय करके वह भोर तक सो गई।
लेकिन अगली सुबह एक और विचार उसके मन में घर कर गया। वह उसके पास क्यों आया और उसने ऐसा क्यों किया? क्या उसे पेशेवर युवतियों या उस तरह की महिलाओं की कमी थी? उसने यह जानबूझकर किया होगा, शायद उसने उसे परेशान करने और उसके ज़रिए उस पर अपना अधिकार जमाने की योजना बनाई होगी। जब यह कारण उसके मन में आया और जब उसे यकीन हो गया कि इसके अलावा कोई और कारण संभव नहीं है, तो उसके मन में बदले की आग फिर भड़क उठी। वह यह सोचकर बेहद परेशान हो गई कि किस उद्देश्य से, किस प्रारब्ध में वह अपना बचाव करती रहे, उस आदमी के बच्चे के साथ जीवन भर संघर्ष करती रहे, जिसने उसके और उसके पिता के साथ इतना अन्याय किया, जो उसके पिता की मृत्यु का कारण भी था। हमेशा की तरह, जब वह स्कूल से घर आती, तो डॉक्टर का क्लिनिक भरा होता। उस दिन भी खाना बनाते समय, यही भावना उसके मन में उमड़ पड़ी। उसके मन में एक सवाल उठा: अगर वह बच्चे को बचा भी लेती है, तो क्या वह उसे बिना क्रोध या पछतावे के पाल-पोस पाएगी? भोर होने के बाद भी उसे नींद नहीं आई। उसने मुर्गे की बांग सुनी और फिर कौवों की आवाज़ सुनी। जब उसने आँखें खोलीं तो सुबह हो चुकी थी। उसकी आँखों में जलन हो रही थी और पूरे शरीर में दर्द था। वह बहुत कमजोर महसूस कर रही थी। उसे समझ आ गया था कि यह चार रातों की नींद न आने का नतीजा है, इसलिए वह तुरंत उठी, उल्टी करने का काम पूरा किया, नहाया, नाश्ता किया, दोपहर का खाना पैक किया, कपड़े बदले, घर को ताला लगाया और क्लिनिक की ओर चल पड़ी।
क्लिनिक खुला था। एक लड़का झाड़ू लगा रहा था, लेकिन डॉक्टर नहीं आई थी। सावित्री पर्दे के पीछे, महिलाओं के लिए आरक्षित जगह पर बैठ गई। जब डॉक्टर आई, तो सौभाग्य से कोई और मरीज़ नहीं था। वह मरीज़ों की जाँच वाली जगह पर बैठ गई और चार-पाँच वाक्यों में अपनी बात कह दी। डॉक्टर ने दो मिनट सोचा और बोली, 'देखिए, मुझे गर्भपात का कोई अनुभव नहीं है। आजकल तो बहुत से अयोग्य लोग भी यह काम करते हैं। नर्स और फार्मासिस्ट भी यह करके पैसे कमाते हैं। लेकिन बाद में मरीज़ को अपनी मृत्यु तक कष्ट सहना पड़ता है। और आप एक बात और जानती हैं: ऐसे मामलों का इलाज करने के बाद आपको चुप रहना

चाहिए, लेकिन इन ग्रामीण डॉक्टरों में ऐसी वफ़ादारी नहीं होती। अगर आप हसन भी जाएँगी, तो वे आपसे आपके घर, रिश्तेदारों आदि के बारे में पूछेंगे। इसलिए बेहतर है कि आप किसी बड़ी जगह पर जाएँ जहाँ आपको कोई न जानता हो। वैसे, क्या आपका कोई पुरुष रिश्तेदार नहीं है? आप ऐसे किसी व्यक्ति के साथ जा सकती हैं और अगर वह कहे, 'यह मेरी पत्नी है, हमारे पहले से ही दो बच्चे हैं और हमारे लिए इतना ही काफ़ी है!' तो फिर कोई बात नहीं होगी।' अगर वो गर्भपात करवाने का अनुरोध करे तो आसान होगा। किसी अच्छे नर्सिंग होम में स्त्री रोग में एमएस की डिग्री प्राप्त महिला डॉक्टर इसका इलाज करेंगी। आपको डरने या शर्म महसूस करने की ज़रूरत नहीं है। मैं आपका मामला मैसूर के एक नर्सिंग होम में सुझा दूँगा और कहूँगा, 'यह पत्र लाने वाली महिला को मैंने भेजा है।' हालाँकि थोड़ा खर्चीला है, लेकिन काम बिना दर्द के और एनेस्थीसिया की मदद से हो जाता है। यह सिर्फ़ पंद्रह मिनट का काम है। आपको अपने साथ एक पुरुष को ले जाना होगा। अब मुझे याद आया, आपके देवर हैं और वो आपको अच्छी तरह जानते हैं। आप उन्हें सब कुछ बताएँ और उनसे साथ चलने का अनुरोध करें। फिर कोई समस्या नहीं होगी। मैं उनके नाम से एक पर्ची लिख दूँगा। लेकिन इलाज के तुरंत बाद बस से वापस मत लौटना। आपको दो दिन नर्सिंग होम में रहना होगा। तब तक मैं आपको कुछ गोलियाँ दे दूँगा ताकि आपको नींद आ जाए।' ऐसी स्थिति में, वो भी पेट में ये सब होने पर, भला किसे नींद आएगी? डॉ. हशीम सावित्री के देवर का नाम भूल गए थे। उसने उससे पूछा, मत्तिकेरे सत्यनारायणप्पा ने नर्सिंग होम का पता लिखा, उसे पर्ची और नींद की गोलियां दीं।

क्लिनिक से बाहर आते ही सावित्री को शांति और संतोष का अनुभव हुआ। जी हाँ, डॉक्टर की बात सही थी। हसन और चन्नारायपट्टाना तो जाने-माने स्थान थे। मैसूर दूर था और एक बड़ा शहर था। उसने सोचा कि अगर वह अपने मन की बात खुलकर कहेगी तो उसे तसल्ली मिलेगी। वह स्कूल गई। उसने अपने पैतृक स्थान पर कुछ घरेलू काम का बहाना बनाकर एक सप्ताह की छुट्टी के लिए आवेदन किया, हेडमास्टर को छुट्टी का पत्र दिया, अपनी कक्षाएँ पूरी कीं और शाम को घर लौट आई। उसने अगली सुबह पहली बस से मट्टीकेरे जाने का फैसला किया, मट्टीकेरे गेट पर उतरकर पाँच मील पैदल चलने का निश्चय किया। पच्चीस साल पहले वह उस जगह गई थी। सीताक्का की मृत्यु के बाद वह मट्टीकेरे से बिलिकेरे लौट आई थी और रामचंद्र के विवाह में भी शामिल नहीं हुई थी। उसने कुछ

साड़ियाँ और अन्य आवश्यक सामान एक थैले में भरा और सो गई। नींद की गोली खाने से उसे अच्छी नींद भी आई। यात्रा के दौरान, उसने सोचा: हालाँकि उसने इस बात से छुटकारा पाने का फैसला किया था क्योंकि वह उसकी याद या विचार नहीं रखना चाहती थी, लेकिन उसने बड़े प्रयास से यह संकल्प लिया कि वह उसे क्रोध, तिरस्कार और घृणा के साथ याद नहीं करेगी। फिर उसने बस की खिड़की से पेड़ों, पौधों और गांवों को देखने में अपना ध्यान लगाया।

वह गाँव के पास गई और सत्यनारायणप्पा के बारे में पूछताछ की। उसे बताया गया कि सत्यप्पा अपने बाग में बनी झोपड़ी में रहते हैं। वह लोगों से बाग का रास्ता पूछते हुए आगे बढ़ी। यह निस्संदेह वही गलियों, इमली के पेड़ों और गड्ढों से भरा रास्ता था, निचले इलाके थे, लेकिन अब पूरी जगह, एक इंच भी खाली जगह छोड़े बिना, कृषि भूमि में परिवर्तित हो चुकी थी। उसके भावा बाग में बनी एक झोपड़ी में रहते थे। एक बात जो उसे नहीं पता थी, वह थी बाग में तीन और झोपड़ियों का होना; बड़ी-बड़ी झोपड़ियाँ, जिनमें पुरुष, महिलाएं और बच्चे रहते थे। वहाँ बीस संकर सिंधी गायें थीं।

बाग में खाली जगह के चारों ओर, एक विशेष प्रजाति की घास छाती तक ऊंची उगी हुई थी। सावित्री तुरंत समझ गई कि यह सत्यप्पा के सामाजिक उत्थान के कार्यों का परिणाम है। अपने देवर द्वारा समझाने के बाद, उसे सारी बातें समझ में आ गईं। उसके देवर ने तीन ऐसे परिवारों को यहाँ लाया था जिनके पास एक इंच भी ज़मीन नहीं थी। उन्होंने अपने पैसों से गायें खरीदी थीं। घास उगाना, पशुओं की देखभाल करना, गायों का दूध दुहना - ये सब काम सामूहिक प्रयास से करना पड़ता था। दिन में दो बार, उनमें से एक को साइकिल से दूध लेकर टिपटूर जाना पड़ता था और होटलों में पहुँचाना पड़ता था। दूध की बिक्री से होने वाला लाभ इन तीनों परिवारों का होता था। इस व्यवसाय से प्रत्येक परिवार प्रति वर्ष पंद्रह हज़ार तक की बचत कर पाता था। चार साल की बचत से उन्हें बंजर ज़मीन खरीदनी पड़ी और अपना इंतज़ाम खुद करना पड़ा। सत्यप्पा ने कहा, 'मैंने कोई बड़ा प्रयोग नहीं किया है। अगर यह सफल होता है, तो मैं अपने गाँव में दुग्ध उत्पादन शुरू करने की कोशिश करूँगा। इसके अलावा, हमें यहाँ एक पशु चिकित्सालय खोलने का प्रयास करना चाहिए।' सत्यप्पा ने सावित्री को अपनी योजना समझाई। उन्होंने आगे कहा, 'देखो साती, मैंने आधी ज़मीन रामचंद्र को दे दी है। मैंने उनसे कहा था कि वे ऐसा काम शुरू करें। तुम्हें रोज़ टिपटूर तक दूध ढोने की परेशानी नहीं उठानी

पड़ेगी। मैं अपने आदमियों के साथ भेज दूंगा। लेकिन वे मुझसे नाराज़ हो गए, मुझसे बात करना बंद कर दिया, क्योंकि मैंने उनकी आधी संपत्ति ले ली है। इसके अलावा, वे मेरे खिलाफ कई अफवाहें फैलाते हैं।' सत्यप्पा ने कहा और हँस पड़े। उन्होंने अपनी अगली योजना भी बताई: 'देखो, जब ये तीन परिवार आत्मनिर्भर हो जाएंगे, तो मैं ऐसे ही तीन-चार और परिवारों को लाऊंगा।'

सत्यप्पा खाना पकाने लगे। सावित्री चूल्हे के सामने बैठी थीं। चावल, सांभर और रागी के गोले बनाते हुए वे बोले, "मैंने इन गायों की गारंटी ली है और बैंकों से कर्ज लिया है। मेरी असली समस्या पैसों की नहीं, बल्कि इन लोगों को सुधारने की है। अगर मैं आसपास नहीं होता, तो ये मेरे बाग से नारियल चुरा लेते हैं। टिपटूर ले जाते समय ये दूध में पानी मिलाकर उसकी मात्रा बढ़ा देते हैं। उन्हें यह समझाना मुश्किल है कि वे काम करके कमा सकते हैं और चोरी या झूठ बोलने की कोई जरूरत नहीं है। और ये सब उनकी बर्बादी का कारण बनेंगे। कभी-कभी मुझे इतना गुस्सा आता है कि इन सबको भगा देने का मन करता है। लेकिन मैं यहाँ काम कर रहा हूँ, यह समझते हुए कि कर्म योग की पूर्ति उन्हें आर्थिक रूप से ऊपर उठाने में नहीं, बल्कि उनके आंतरिक परिवर्तन में है। वैसे भी, क्या पाँच-छह महीनों में इन्हें सुधारना संभव है, जो इतने सालों से अन्याय के शिकार हैं और शिक्षा-ज्ञान से वंचित हैं? मैं इनके बच्चों को पढ़ाता हूँ और उन्हें स्कूल भी भेजता हूँ।" सत्यप्पा ने अपने विचार व्यक्त किए।

सावित्री को लगा कि उसके भाव के प्रयास में कुछ सार्थकता है। दोपहर का भोजन करते समय सत्यप्पा ने पूछा, "साती, मुझे क्षमा करना, मुझे लगता है कि तुम बिना किसी उद्देश्य के यहाँ तक नहीं आई हो। मैंने तुम्हारे बारे में कुछ नहीं पूछा, बल्कि मैं तुम्हें केवल अपने और अपने काम के बारे में बता रहा हूँ।" सावित्री का चेहरा शर्म से लाल हो गया। लेकिन, क्योंकि उसे बताना ही था, उसने मन बना लिया और सब कुछ बता दिया। उसने शुरू किया, "आपको एक बार मंजय्या से पीड़ा सहनी पड़ी थी। वैसी ही पीड़ा अब मुझे भी सहनी पड़ी है," और विस्तार से बताया। उसकी बातें सुनते हुए सत्यप्पा के चेहरे पर दर्द था, लेकिन कोई आश्चर्य नहीं। थालियाँ धोने, फर्श साफ करने और चटाई पर बैठने के बाद सत्यप्पा ने कहा, "हशीम बहुत ही सभ्य और सम्मानित डॉक्टर हैं। जैसा कि उन्होंने कहा है कि मैसूर जाना बेहतर है, मैं तुम्हारे साथ चलूँगा। लेकिन तुम एक बार फिर सोच लो। क्या

तुमने यह निर्णय समाज के डर से नहीं लिया है?" या फिर मंजय्या के प्रति घृणा और तिरस्कार के कारण?
सावित्री ने उत्तर दिया, "भाव, क्या तुम्हें लगता है कि मुझमें समाज को, यानी अपने बीस-तीस परिचितों को जवाब देने का साहस नहीं है? यह सच है कि मुझे घृणा, तिरस्कार, शत्रुता और क्रोध महसूस होता है। लेकिन क्या तुम कहते हो कि मुझे ये सब भावनाएँ केवल उसी के प्रति रखनी चाहिए और उसके बच्चे पर इनका ज़रा सा भी असर नहीं पड़ने देना चाहिए? तुम महात्मा बनने की कोशिश कर रहे हो, लेकिन मैं ऐसी कोई इच्छा नहीं रखती। कृपया अभी शुरू करो। अगर हम चन्नरायपट्टाना या तिपत्तूर पहुँच गए, तो वहाँ से मैसूर के लिए बस मिल जाएगी।"
सत्यप्पा ने कहा, "ठीक है, फैसला तुम्हारा है। चलो तिपतुर चलते हैं। मुझे वहाँ से कुछ पैसे लाने ही होंगे। मैं इस झोपड़ी में पैसे नहीं रखता। क्या तुम जानते हो क्यों? इनमें से कोई चुरा सकता है और बाकी लोग चोर को पकड़ने में सहयोग नहीं करेंगे।"
'मैं अपने साथ पर्याप्त पैसे लाई हूँ। आपको कुछ लेने की ज़रूरत नहीं है,' हालाँकि सावित्री ने ज़िद की, सत्यप्पा नहीं माने। दोनों पाँच मील चलकर बस स्टॉप तक पहुँचे। तिपतुर पहुँचने पर सत्यप्पा गोदाम गए और पैसे ले आए। सावित्री गोदाम के पास भी नहीं गईं। उन्होंने नागप्पा की मृत्यु और अपनी भाभी और गणेश जी के तिपतुर आने के बारे में बताया था। सत्यप्पा सावित्री को एक होटल ले गए, जिसके लिए उन्होंने दूध का इंतजाम किया था, और उनसे कहा कि जब तक वे गोदाम से वापस न आ जाएँ, तब तक वे वहीं रहें।
उसके लौटने के बाद सावित्री ने पूछा, 'तुम इसी होटल से पैसे ले सकते थे।'
सत्यप्पा ने कहा, 'नहीं, ऐसा नहीं है। दूध का हिसाब-किताब पूरी तरह से उस बाग में रहने वाले परिवारों का है। मैं हिसाब-किताब संभालता हूं और उसकी देखरेख करता हूं, लेकिन उस पैसे को हाथ नहीं लगाता।'
टिपटूर से दोपहर की बस आठ बजे मैसूर पहुँची। वे सीधे नर्सिंग होम गए। डॉक्टर हशीम की पर्ची मिलने के बाद मरीज़ को तुरंत भर्ती कर लिया गया। ड्यूटी पर मौजूद डॉक्टर ने कहा, 'महिला डॉक्टर कल सुबह आकर उनका इलाज करेंगी। मरीज़ को यहीं रहने दीजिए। पुरुषों को रात में रुकने की अनुमति नहीं है। आप कहीं और रहने का इंतज़ाम कर लीजिए।' फिर उन्होंने एक नर्स को अगली सुबह मरीज़ को एनेस्थीसिया देने के लिए तैयार करने को कहा। सत्यप्पा ने अपना हैंडबैग

लिया और पास के एक होटल में कमरा बुक किया। वे अगली सुबह छह बजे तक नर्सिंग होम वापस आ गए। क्लिनिक में भर्ती करते समय लिखा गया, 'मट्टिकेरे सत्यनारायणप्पा की पत्नी सावित्राम्मा गर्भपात कराना चाहती हैं।' जब सत्यप्पा सुबह आए, तो उनसे मरीज़ को एनेस्थीसिया देने की सहमति ली गई। बिना किसी जटिलता के सब कुछ हो गया और बीस मिनट के भीतर सावित्री को वार्ड में लाया गया। थोड़ी देर में उन्हें होश आ गया। जब उनके भावा ने उन्हें सांत्वना देने के लिए उनके कंधे को छुआ, तो उन्हें रोने जैसा महसूस हुआ और वे सिसक-सिसक कर रोने लगीं। थोड़ी देर बाद उसे नींद आने लगी और उसने रोना बंद कर दिया।

दोपहर में सावित्री को फलों का रस पिलाने के बाद सत्यप्पा भोजन करने के लिए होटल लौट गए। जब तक वे लौटे, सावित्री पूरी तरह होश में आ चुकी थीं। बेहोशी का असर खत्म हो चुका था, लेकिन उनका चेहरा गंभीर लग रहा था। वे चुपचाप लेटी हुई थीं, मानो किसी बात पर विचार कर रही हों। जब उनके भाव वार्ड में आए, तो उन्होंने उनसे एक शब्द भी नहीं कहा। भाव ने एक कुर्सी खींची और चुपचाप बैठ गए। आधे घंटे की खामोशी के बाद, सावित्री ने मानो उसी क्षण निर्णय लिया हो, कहा, 'भाव, आप मुझे भी होटल के कमरे में ले चलिए। मैं यहाँ नहीं रहना चाहती।' सत्यप्पा ने कहा, 'लेकिन डॉक्टर हशीम ने कहा है कि आपको कम से कम दो दिन नर्सिंग होम में रहना चाहिए।'

'उसे बोलने दो। देखो, जब तुम होटल में खाना खाने गई थीं, तब उस नर्स ने मुझे बताया कि गर्भपात करने वाली महिला डॉक्टर ने कहा था, "इस महिला ने अभी तक एक भी बच्चे को जन्म नहीं दिया है, लेकिन वह गर्भ को नष्ट करवाना चाहती है क्योंकि उसके पास जो बच्चे हैं वे उनके लिए काफी हैं। उसने कहा, "इन दोनों के बीच का रिश्ता अजीब लगता है। वह पचास साल से ऊपर का है, और यह महिला लगभग चौंतीस या पैंतीस साल की है।" वह महिला डॉक्टर बहुत ज्यादा बोलने वाली लगती है। ऑपरेशन थिएटर में मौजूद नर्स ने यह बात दूसरी नर्सों को बता दी और वे सभी, एक-एक करके, किसी न किसी बहाने से, यहाँ आतीं, मुझसे मिलतीं और चली जातीं। क्या तुमने किसी को तुम्हें घूरते हुए नहीं देखा?"

सत्यप्पा उस महिला डॉक्टर के व्यवहार से बहुत नाराज़ थे। उन्होंने सोचा, हमारे देश के लोग, चाहे ग्रामीण हों या शहरी, झूठ बोलते हैं और अनैतिक व्यवहार करते हैं। इस डॉक्टर जैसी पढ़ी-लिखी पेशेवर महिलाएं भी अलग नहीं हैं। सावित्री उनके चेहरे को देख रही थी, इसलिए उन्होंने तुरंत जवाब दिया, 'उन्हें आने दो, मुझे भी

देखने दो। हमें शर्मिंदा नहीं होना चाहिए। जिस काम के लिए हम यहां आए थे, वह पूरा हो चुका है। कम से कम दो दिन यहां रुकिए और ठीक से इलाज करवाइए। फिर हम दो दिन होटल में रुकेंगे। जब आप पूरी तरह ठीक हो जाएंगी, तब हम बस या टैक्सी से चले जाएंगे। लेकिन अभी ऐसी बातों से अपना मन विचलित मत होने दीजिए।' एक मिनट बाद उन्होंने कहा, 'देखो साती, मैं तीन परिवारों को लाकर अपने बाग में बसा चुका हूं, तुम जानती हो। लगता है मेरे बेटे रामचंद्र ने खुद कहा है कि उसके पिता ने एक स्त्री का स्वाद चखने के बाद अब तीन स्त्रियों को अपने बाग में लाया है ताकि वे जब चाहे उसे अपनी सेवा दे सकें। जब बेटा खुद ऐसा कहता है, तो क्या बाकी गांव वाले इस पर विश्वास नहीं करेंगे? मैं क्या करूं?' मैं चुप रहता हूँ जैसे मैंने कुछ सुना ही न हो!

सावित्री रामचंद्र पर क्रोधित हो उठी। वह जानती थी कि उसके भाव में कोई छल नहीं था। वास्तव में, वह सच्चाई को गहराई से समझने का प्रयास कर रहा था। उसने सोचा, धन-संपत्ति की लालसा बेटे को एक ईमानदार पिता के बारे में इतनी नीच सोच रखने के लिए कैसे उकसा सकती है!

जब वह होटल के कमरे में गई, तो सावित्री ने सत्यप्पा से अपने सारे निजी विचार साझा किए, जो वह किसी और को नहीं बता सकती थी। सत्यप्पा भी अपने पुराने अनुभवों से उसके विचारों का विश्लेषण और समर्थन करते थे और कभी-कभी उसकी दलीलों और विचारों में कमियां भी बताते थे। सावित्री को लगा कि उसने तब तक अपने अंतर्मन की बातें किसी से साझा नहीं की थीं। सत्यप्पा दरवाजे के पास वाले बिस्तर पर लेट जाते और सावित्री खिड़की के पास वाले बिस्तर पर। बातचीत के दौरान, आधी रात के करीब सावित्री ने सत्यप्पा से कहा, 'आपने मुझे बताया था, भावा, कि उसकी उकसाहट से उत्तेजित होकर आप इस उम्र में पागल हो गए और उससे मिलने के लिए चौदह मील पैदल चलकर बिलिकेरे गए और उस घटना के परिणाम भी बताए। मैं भी आपको अपना एक अनुभव बताना चाहती हूं। मुझे पता है कि आप इसे सहानुभूति से समझ सकते हैं। आप इतने अनुभवी हैं कि मुझे भविष्य में सही रास्ता दिखा सकते हैं। मुझे उम्मीद है कि आपको याद होगा, जब आप अप्पा के अंतिम संस्कार में शामिल होने बिलिकेरे आए थे, तब हम रात में काफी देर तक पिछवाड़े के शेड में बैठकर बातें कर रहे थे।' फिर आपने मुझसे पूछा, "जब मंजय्या ने अपनी माँ की उम्र की नौकरानी केम्पम्मा को इतनी ज़ोर से थप्पड़ मारा, तो आपको उसकी क्रूरता पर घिन आई? हालाँकि कांची चोर था,

लेकिन क्या उसकी हत्या करना सरासर बर्बरता नहीं थी?! फिर भी, अगर आपके अप्पा झूठी गवाही देकर उसे बरी कर देते, तो आप उस क्रूर दरिंदे के साथ अपना पारिवारिक जीवन जारी रखने के लिए कैसे राज़ी हो गईं? अगर आप उसके साथ दोबारा रहने के लिए राज़ी नहीं होतीं, तो अप्पा कभी झूठी गवाही नहीं देते।" आपने मुझसे यह सवाल पूछा था। क्या आपको याद है? तब मैंने इसका जवाब नहीं दिया था। मुझे जवाब देने में शर्म आ रही थी। आख़िरकार, तब हम कितने एक-दूसरे से परिचित थे? अब मुझे लगता है कि मुझे आपके सवाल का जवाब देना ही चाहिए। लेकिन मैं शर्मिंदा भी हूँ।
सत्यप्पा ने अंधेरे में उसे हिम्मत देते हुए कहा, 'कोई बात नहीं। मुझे सब कुछ बताओ।'
'क्या मैंने तुम्हें नहीं बताया था कि शादी के बाद छह महीने तक उसने मुझे भरपूर कामुक सुख दिया था। उसके घर से निकलने के बाद, ऐसा लगा जैसे सत्रह साल तक भूखी रही हो। फिर भी, मैंने अपने मन पर काबू रखा। लेकिन जब भी यौन इच्छा जागती, मेरा मन उसी की ओर चला जाता। उसके सिवा कोई और रास्ता नहीं था। मेरा मन कभी किसी और पुरुष की कल्पना भी नहीं कर सकता था। उसके लिए अनगिनत स्त्रियाँ थीं, लेकिन उसे छोड़ने के बाद भी, वही मेरे लिए एकमात्र पुरुष था। जब मुझसे पूछा गया, तो मैंने अप्पा के झूठी गवाही देने पर सहमति दे दी, यह सोचकर कि कम से कम अब मुझे एक मौका तो मिल गया है और मैं फिर से पारिवारिक सुख का आनंद ले सकती हूँ। यह पहला शर्मनाक पहलू है और दूसरा...' सावित्री बोलते-बोलते रुक गई।
सत्यप्पा ने जोर देकर कहा, 'मुझे बताओ, कुछ भी मत छुपाओ।'
उसने आगे कहा, "तुम्हें पता है, मंजय्या ने मेरा बलात्कार किया, उसने मुझे पहलवान की तरह इतनी कसकर पकड़ा कि मुझे बोलने, चिल्लाने या छटपटाने का मौका ही नहीं मिला। उसे औरतों की नब्ज़ जानने और उसे धड़कने देने का भयानक ज्ञान है। जैसे एक वेश्या को पुरुष की कमजोरी का पता होता है और वह उसे अपने इशारों पर नचाती है, वैसे ही हर व्यभिचारी औरतों को अपने इशारों पर नचाने में माहिर होता है। मंजय्या उसी तरह का आदमी है। उस बलात्कार के अंत में, मैं हार गई, मैं कमजोर पड़ गई और मैंने भी इसमें हिस्सा लिया। और उस आदमी ने यह समझ लिया। यही हार मेरी शर्म का कारण है। काश मैंने खुद को हारने न दिया होता, तो मुझे इतनी बेइज्जती और शर्म न सहनी पड़ती। जब तुम

मंजय्या की वजह से हुई उस बीमारी से पीड़ित हुई, तो मैंने उसे बुरा-भला कहा, लेकिन तुमने सारा दोष अपने ऊपर ले लिया और उसे दोष नहीं दिया। इस अनुभव के बाद, मैंने भी सोचा कि सबसे पहले मुझे अपनी कमजोरी को समझना होगा और उसे दूर करना होगा।" इसके बिना, उसे सिर्फ अपशब्द कहना – बदमाश, धूर्त आदि – व्यर्थ है। यह महज़ गाली-गलौज होगी।

सत्यप्पा ने तुरंत जवाब नहीं दिया। पाँच मिनट बाद उन्होंने कहा, 'मैं समझ गया। इसमें कुछ भी असामान्य नहीं है। आइए कल साथ बैठकर इस पर विचार करें और इसका समाधान निकालें। क्योंकि यह एक ऐसी समस्या है जो भविष्य में भी आपको परेशान करेगी।'

सावित्री ने फिर कुछ नहीं कहा। थोड़ी देर बाद वह सो गई।

दोनों के नहाने के बाद, रूम सर्विस से नाश्ता और कॉफी मंगवाई गई और वेटर प्लेट और कप ले गया। सत्यप्पा ने कहा, 'देखो साती, तुम अभी सिर्फ पैंतीस साल की हो, खूबसूरत हो और कमाती भी हो। बड़े शहरों में कहते हैं कि उच्च शिक्षित महिलाएं आमतौर पर इसी उम्र में शादी करती हैं। अगर तुम गंभीरता से सोचो और फैसला करो, तो दोबारा शादी कर सकती हो। मैं तुम्हारे लिए दूल्हा ढूंढूंगा। अगर अखबारों में विज्ञापन दूं, तो अच्छे दूल्हे या उनके माता-पिता जवाब देंगे। मैं अपना नाम और पता लिखकर विज्ञापन दूंगा। मैं दहेज दूंगा – सिर्फ सवा रुपये की सांकेतिक राशि और कन्यादान का पुण्य प्राप्त करूंगा।' इतना कहकर वह हंस पड़ा। उसे भी हंसी आ गई। बहुत दिनों बाद वह हंसी थी और इससे उसका मन थोड़ा हल्का हुआ। थोड़ी देर बाद सत्यप्पा ने आगे कहा, 'देखो, यह एक उपाय है। या अगर तुम दोबारा शादी न करने का फैसला करो, तो मेरी तरह किसी काम में पूरी तरह से जुट जाओ। तुम स्कूल में कुछ घंटे पढ़ाकर, तनख्वाह लेकर, अपने लिए खाना बनाकर और खाकर संतुष्ट नहीं रह सकती।' यह स्वाभाविक है कि मन हमें अनेक दिशाओं में भटकाता है। तुम्हें पता है, हमें मन पर दोषारोपण का बोझ नहीं डालना चाहिए। ज़रा सोचो: हमने अपने मन को क्या काम सौंपा है? हमने अपने शरीर, मन और बुद्धि की शक्ति को किस प्रकार के साधना कार्य में लगाया है ताकि वे आलसी न हो जाएँ? यह दुख की बात है कि मन इस प्रकार स्वयं को व्यस्त नहीं रख पाता। देखो साती, मेरे मन में एक विचार आया। हमारे घर के पास बंजारा हट्टी नाम का एक गाँव है। गाँव के चारों ओर ज़मीनें हैं। सरकार ने पिछड़े लोगों को कुछ रियायतें दी हैं। लेकिन इन लोगों का सुधार केवल रियायतें, मुफ्त

ज़मीनें और अधिकारियों के बैंगलोर में रहने से कैसे हो सकता है? इस गाँव में चोरी और शराबखोरी आसपास के किसी भी गरीब गाँव से ज़्यादा फैली हुई है। एक नाम मात्र का स्कूल भी है। फिर भी बच्चों को शिक्षा नहीं मिलती। गाँव के बड़े-बुजुर्ग खुश होते हैं अगर शिक्षक स्कूल का दरवाजा न खोले। शिक्षक भी उसी तरह का है। अगर तुम सहमत हो, तो मैं विभाग में किसी से अनुरोध करके तुम्हारा तबादला उस जगह करवा दूँगा। आप उस गाँव में या मेरे बाग में रह सकते हैं। दोनों जगह सिर्फ़ डेढ़ मील की दूरी है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि आपको उसी गाँव में रहना चाहिए। क्या आप वहाँ की स्थिति जानते हैं? जब तक माता-पिता में शिक्षा, स्वच्छता और सक्रियता की भावना जागृत नहीं होगी, तब तक बच्चों में ये भावनाएँ विकसित नहीं हो सकतीं। जब तक उन्हें सही राह पर न चलाया जाए और दुग्ध उत्पादन, नारियल उद्योग या रेशम उत्पादन में न लगाया जाए, तब तक उनका सुधार या विकास नहीं हो सकता। यदि उनमें काम के प्रति निष्ठा विकसित हो जाए, तो बच्चों का पालन-पोषण आसान हो जाएगा। दस वर्षों के भीतर गाँव के बच्चे अपने गाँव का नेतृत्व संभाल सकते हैं। ऐसे में, यह कहना कि "स्कूल में बच्चों को वर्तनी और गणित सिखाकर ही मेरा कर्तव्य पूरा हो गया", सरासर झूठ है। यदि आप बंजारा हट्टी में रहें, तो आप सबसे पहले स्कूली बच्चों को और उनके माध्यम से माता-पिता को एक उद्देश्य और लक्ष्य दिखा सकते हैं। आप शाम को बड़ों को भी लिखना-पढ़ना सिखा सकते हैं। आप अपनी आजीविका के लिए सरकार से वेतन लेंगे। लेकिन आपका उद्देश्य पूरे गाँव और लोगों का सुधार और परिवर्तन करना होना चाहिए। यह तभी संभव होगा जब आप उनमें से एक हों। खैर, मैं यहीं रहूंगा। मैं भी वयस्कों के साथ काम करता हूं और शाम को उन्हें पढ़ाता हूं। बस सोचिए, क्या यह आपको स्वीकार्य है?

सत्यप्पा चुप हो गए। फिर जैसे उन्हें अचानक याद आया हो, उन्होंने कहा, 'मैं साबुन ले आता हूँ। मुझे कपड़े धोने हैं।' उन्होंने कमीज़ पहनी, चप्पलें पहनीं और बाहर चले गए। वे सीढ़ियों से नीचे उतरे, होटल के सामने वाली दुकान से साबुन खरीदा, वापस आए और बोले, 'साती, कृपया यह मत सोचो कि पुनर्विवाह अपमानजनक है। कोई भी निर्णय लेने से पहले यह समझने की कोशिश करो कि तुम वास्तव में क्या चाहती हो।' उन्होंने ऐसा कहा और अपने कपड़े धोने के लिए उठा लिए। सावित्री पास आई, सत्यप्पा से कपड़े लेकर बोली, 'भाव, अब मैं

बिल्कुल ठीक हूँ। मैं धो सकती हूँ। मुझे दे दो।' उसने अपने कपड़े भी उठा लिए। लेकिन सत्यप्पा ने उसे कपड़े ले जाने नहीं दिए और बोले,
'देखो, तुम अभी भी कमजोर हो। मैं तुम्हारे कपड़े भी धो दूंगी। पुरुष और स्त्री जैसे कोई भेद नहीं होने चाहिए और रोगी की देखभाल करते समय तो बिल्कुल भी नहीं होने चाहिए।'
दो दिन होटल में ठहरने के बाद सत्यप्पा और सावित्री सुबह की बस से चन्नरायपट्टाना के लिए रवाना हुए। सावित्री को घर लाने के बाद सत्यप्पा ने बताया कि वह दोपहर में बस से अपने गाँव के लिए निकलेंगे। तब सावित्री ने कहा, "देखिए भावा, लोककथा में लिखा है कि एक महान जादूगर का जीवन उस तोते में बसता है जिसे सात पिंजरों में रखा जाता है, जो सात गुफाओं के अंदर, सात पहाड़ियों के बीच, सात द्वीपों के बीच, सात समुद्रों के पार स्थित हैं। आपका जीवन भी आपके उपवन में ही है। मेरे पास अभी तीन दिन की छुट्टी है और काम करने की ताकत अभी तक नहीं आई है। अगर आप रुकें, मेरे लिए खाना बनाएँ और मेरी सेवा करें, तो मैं इस कमजोरी से उबर जाऊँगी।" ऐसा कहते हुए वह हँस पड़ी। सत्यप्पा ने उसके चेहरे की ओर देखा। उसके चेहरे पर शांति और संतोष था, दुख का कोई बोझ नहीं था।
उन्होंने कहा, 'मैं जो खाना बनाऊंगा, वह केवल एक मरीज के लिए ही उपयुक्त होगा। क्या आप इसे खाएंगे?'
'अगर ऐसा है तो मैं खाना बनाऊंगी। आप अपने अमृत जैसे कोमल हाथों से मुझे परोसें। मैं इसे खाकर जल्दी ठीक हो जाऊंगी,' उसने कहा और इससे पहले कि वह समझ पाता कि वह क्या कर रही है, उसने झट से उसका हैंडबैग अंदर के कमरे में ले जाकर छिपा दिया।
सत्यप्पा वहाँ तीन दिन रुके और मट्टिकेरे के लिए रवाना हो गए। सावित्री को एक ऐसी अनुभूति हुई जिसे वह समझ नहीं पा रही थी, लेकिन जिसने उसे भीतर से भर दिया। उसे इस बात का गहरा सुकून मिला कि आखिरकार उसे एक ऐसा साथी मिल गया है जिसके साथ वह अपने विचार, अपनी चिंताएँ बाँट सकती है, जो उसकी समस्याओं का समाधान कर सकता है और जो उसके अकेलेपन को दूर कर सकता है। वह उन्हें हमेशा याद करती रहेगी। मंजय्या, उसका अन्याय, बलात्कार, उसने जो कुछ भी किया था, सब उसके मन से मिट गया। वे सब घटनाएँ बीते दिनों की लग रही थीं। वह अपने भावा के कहे हर शब्द को याद

करने लगी और उनमें नया अर्थ खोजने लगी। एक दिन सत्यप्पा ने कहा था, 'तुम्हारी बड़ी बहन सीता हर तरह से बहुत अच्छी स्त्री थी। लेकिन उसने एक गलती की, उसे कौन माफ कर सकता है?' सावित्री ने पूछा, 'मेरी बहन ने क्या गलती की थी, भावा?' उन्होंने कहा था, 'मर जाना और मुझे अकेला छोड़ जाना।' जब उन्होंने ये शब्द कहे, तो उनकी आँखों में छब्बीस साल पहले की यादें चमक उठीं। अब सावित्री का मन उस स्मृति से भर गया। जब सीताक्का की मृत्यु हुई, तो उन्होंने रोती हुई छोटी सावित्री को गले लगाया और वे भी रो रहे थे। सावित्री ने सोचा, उनके और उनके बीच कितने वर्षों का अंतर था? जी हाँ, उन्नीस वर्षों का। तब वह साढ़े नौ वर्ष की थीं और वे साढ़े अट्ठाईस वर्ष के। इस प्रकार, अंतर्मन की सुरंगों में भटकता हुआ मन, दस-पंद्रह दिनों के भीतर स्मृतियों, भावनाओं और आवश्यकताओं के स्पष्ट रूप में प्रकट होने लगा। उन्नीस वर्षों का अंतर ही क्यों? क्या उन्होंने मंजय्या से विवाह नहीं किया था, जबकि वे उनसे सत्रह वर्ष बड़े थे? उनके भाव और उनके बीच के संबंध में एक सहायक तर्क उत्पन्न हुआ। आयु महत्वहीन थी। आयु शरीर से संबंधित थी। वह शारीरिक संबंध नहीं चाहती थीं और उन्होंने भी इसका अनुभव किया था, कष्ट सहा था, इससे घृणा की थी और इससे ऊपर उठ चुके थे। उन्होंने सोचा, ऐसा क्यों नहीं हो सकता? उन्होंने इस बारे में बिल्कुल नहीं सोचा था कि इस संबंध में उनके भाव के क्या विचार होंगे, जब तक कि पंद्रह दिनों में उनकी भावना और अधिक प्रबल नहीं हो गई। अब, जब उसने इस दृष्टिकोण से अपनी यादों की समीक्षा की, तो उसे उसमें ऐसी कोई भावना या विचार नहीं मिले। वह निराश हो गई। जब उसने अपना पूरा जीवन गाँवों की सेवा और ग्राम सुधारों में लगा दिया था, तो क्या वह फिर से पारिवारिक जीवन अपनाना चाहेगा? क्या वह इस स्थिति तक नहीं पहुँच गया था कि परिवार बंधन है? उसका मन अटकलें लगाने लगा, हालाँकि उसने कभी नहीं कहा था कि परिवार का मतलब बंधन होता है। फिर, दोबारा परिवार बनाने पर उसे क्या आपत्ति हो सकती है? उसने सोचा कि वह उससे कहे, 'आप अपने गाँव की सेवा करें। अपनी ज़मीनों में जो भी पैदावार होती है, उसे उसी काम में लगाएँ। मुझे कोई आपत्ति नहीं है। मेरा तबादला या तो मट्टीकेरे या आस-पास के किसी गाँव में करवा दीजिए। हम अपनी तनख्वाह से अपना जीवन चला लेंगे। उसे और क्या आपत्ति होगी?' आठ दिनों तक, ये सांत्वनाएँ और तर्क उसके मन में घूमते रहे। इसी बीच उसे यह महसूस होने लगा कि अगर उनकी शादी भी हो जाए तो उन्हें शारीरिक संबंध नहीं

रखना चाहिए क्योंकि इससे दोनों का अपमान होगा। वह ये सब उसे कैसे समझाएगी? अगर वह समझा भी दे, तो अगर वह कहे, 'साती, तुम्हारी भावनाएँ अभी अपरिपक्व हैं।' तुम मुझसे उन्नीस साल छोटे हो। मैंने तुम्हें अपने कंधों पर उठाया है, बेटी की तरह तुम्हारे साथ खेला है,' ये सोचकर उसका मन शांत हो गया। उसे यह सोचकर तसल्ली मिली कि उसे सहारा मिल गया है। लेकिन उस सहारे के स्वरूप को न जानने की अनिश्चितता में उसका मानसिक संतुलन बिगड़ गया। उसे लगा कि उसे एक बार अपने घर आने के लिए पत्र लिखना चाहिए। लेकिन, अगर वह ये सब न चाहे तो क्या होगा? फिर क्या होगा? इन चिंताओं में वह निष्क्रिय हो गई। एक सप्ताह की उथल-पुथल के बाद उसने अपने भाव को पत्र लिखा, जिसमें उसने अपने भीतर उमड़ रही सारी भावनाओं को व्यक्त किया।

साप्ताहिक बाजार में लक्कू की दुकान, जिसे मंजय्या ने स्थापित करने में उसकी मदद की थी, का कारोबार फलने-फूलने लगा। हालांकि, शुरुआत में मंजय्या उसके साथ थी और चन्नरायपट्टाना और हसन से क्या सामान लाना है, उस पर कितना लाभ तय करना है, यह तय करने में उसकी मदद करती थी, लेकिन लक्कू ने जल्द ही व्यापार के रहस्य सीख लिए। उसने शुरू से ही नारियल के व्यापार में महारत हासिल कर ली थी। अब वह खुले नारियल भी खरीदने लगी। चूंकि वह पैसों के बदले नारियल लेती थी और बदले में बीड़ी, माचिस, कॉफी पाउडर, साबुन और दैनिक उपयोग की अन्य वस्तुएं देती थी, इसलिए जिन लोगों के पास नकद पैसे नहीं होते थे, वे उसकी दुकान पर आने लगे। नारियल उसे मात्र आठ आने में मिलता था। सूखने के बाद वह खोपरा बन जाता था और उसे डेढ़ रुपये मिलते थे। इसके साथ ही, उसने भैंसों की देखभाल और गौशाला की सफाई के लिए एक लड़के को काम पर रखा और दूध के व्यापार से भी कमाई करने लगी।

दुकान शुरू करने के बाद, वह कभी-कभी असमंजस में पड़ जाती थी। अगर कांची की मृत्यु के एक साल बाद मंजय्या उसे पत्नी के रूप में स्वीकार करने वाला

था और वे पति-पत्नी की तरह साथ रहने वाले थे, तो उसे सुबह से शाम तक दुकान में क्यों बैठना चाहिए? वह खुद से सवाल करती और एक बार मंजय्या से भी पूछा। उसने कहा, 'देखो लक्कू, तुम हमेशा अपनी रोजी-रोटी के लिए काम करती रही हो। क्या तुम एक साल तक खाली बैठ सकती हो? खैर, अगर तुम दुकान में नहीं बैठना चाहती, तो ठीक है, छोड़ दो। मैं तुम्हारा ख्याल रखूंगा।' मंजय्या के इस जवाब से लक्कू के आत्मसम्मान को ठेस पहुंची। उसने सोचा, उसे काम क्यों छोड़ना चाहिए और उसने दुकान का कारोबार जारी रखने का फैसला किया। उसके दिवंगत पति कांची को व्यापार या हिसाब-किताब की जानकारी नहीं थी। इसलिए सारे लेन-देन का हिसाब-किताब उसी के पास था। लेकिन मंजय्या, जैसा कि वह जानती थी, सांप की तरह चालाक था, क्या वह उसे मालिकाना हक देगा? उसे कहीं न कहीं यह डर सता रहा था कि अगर वह पैसों के मामलों में अपनी आजादी खो देगी तो उसका दिमाग चकनाचूर हो जाएगा। कभी-कभी वह सोचती थी कि मंजय्या के साथ रहने के बाद भी उसे अपनी दुकान का कारोबार नहीं छोड़ना चाहिए। फिर वही सवाल मन में उठता: क्या वह व्यक्ति मुझे अपनी विशाल संपत्ति - बाग, जलमग्न भूमि और शुष्क भूमि - की देखभाल करने के बजाय दुकान में बैठे रहने देगा?

हाँ, मंजय्या से मिलना या उसके साथ शारीरिक संबंध बनाना उसके लिए बहुत दुर्लभ था। वह लक्कू के घर खुलेआम नहीं आता था क्योंकि, जैसा कि उसने कहा, वह नहीं चाहता था कि यह बात अब लोगों को पता चले। वह गाँव के सभी लोगों के सो जाने के बाद, आधी रात को उसके घर आता और भोर होने से पहले या उससे भी पहले चला जाता। अगर वह उसे रोज़ आने के लिए कहती, तो वह कहता कि वह गाँव में है ही नहीं और उसे उसके घर नहीं आना चाहिए। मंजय्या ने उसे बताया था कि उनके रिश्ते के बारे में पुत्तेल्लैया को पता नहीं चलना चाहिए। लक्कू दिन के समय अपनी दुकान से बाहर नहीं निकल सकती थी। वह दो बार बाग में स्थित उसकी झोपड़ी में गई थी। लेकिन बाग के मुख्य द्वार से गुजरते समय, अगर गाँव का कोई भी उसे गाँव की ओर जाते हुए देख लेता, तो उसे शर्मिंदगी महसूस होती, यह सोचकर कि वह भी उन वेश्याओं नागी, चन्नी, मल्ली और सिद्दी जैसी है जो पैसों के लिए मंजय्या के साथ सोती थीं। तो एक दिन उसने सीधे-सीधे कहा, 'देखो, क्या किसी पत्नी को उस जंगल की झोपड़ी में अपने पति के साथ सोने आना चाहिए? अब से मैं वहाँ नहीं जाऊँगी।' मंजय्या ने कहा, 'हाँ, तुम सही कह रही हो,'

और उसकी प्रतिष्ठा को तुरंत पहचान लिया। लक्कू खुश हुई, लेकिन उसके साथ सोने का मौका और कम होता चला गया। जब मंजय्या गाँव में होता, तो वह उसकी दुकान पर आता, थोड़ी देर बैठता और उससे दो-तीन मिनट बातें करता। उनका रिश्ता इस स्तर तक पहुँच गया था। जब उसके द्वारा जगाई गई शारीरिक इच्छा उसे पागल कर देती और उसे फिर से उसकी चाहत होने लगती, तो वह शब्दों से इशारा करती, 'लक्कू, मुझे भी ऐसा ही महसूस हो रहा है, टिपटूर चलो। चलो मजे करें, या हसन चलते हैं और आनंद लेते हैं... चलो।' वह ऐसे मान जाता जैसे तैयार हो। लेकिन वह कितनी बार उन दूर-दराज जगहों पर जा सकती थी, अपनी दुकान बंद करके, भैंसों को नौकरों की देखभाल में छोड़कर? इसलिए, वह अपनी इच्छा को नियंत्रित करने की कोशिश करती। वह सोचती थी कि इस मामले में मंजय्या की कोई गलती नहीं है, यह तो सिर्फ उसकी ही गलती थी। लेकिन जब लक्कू को पता चला कि वह आदमी अपने बगीचे में बनी झोपड़ी में दूसरी औरतों के साथ सोना बंद नहीं कर रहा है, तो वह गुस्से से भर उठी। उसने मन ही मन कहा, 'देखो, मैं ऐसी पत्नी नहीं हूँ जो चुप रहूँ अगर तुम अपना यह घिनौना व्यवहार जारी रखो।' अगली बार जब वह उसकी दुकान पर आया, तो उसने सीधे उससे इस बारे में पूछा। मंजय्या ने कहा, 'लक्कू, क्या इतने सालों पुराने रिश्तों को अचानक तोड़ देना ठीक है? लोग पूछते हैं, तुमने हमें क्यों छोड़ा? वे चालाक हैं। वे सोचेंगे, उसने कोई नया रिश्ता बना लिया है। वे तुम्हारे और मेरे बारे में जानते हैं। वे यह बात पूरे गाँव में फैला देंगे। हालाँकि वे मेरी झोपड़ी में आते हैं, मैंने उनके साथ शारीरिक संबंध बनाना बंद कर दिया है। सुनो, लक्कू जैसी औरत पाकर कौन दूसरी औरतों के साथ सोना चाहेगा?' मंजय्या ने टालमटोल भरी बातें कीं। लक्कू ने गाँव वालों के सामने किसी पुरुष के साथ रहने की विधवा रस्म नहीं निभाई थी, इसलिए वह उसका गला पकड़कर उससे सवाल नहीं कर सकी। मंजय्या ने आगे कहा, "देखो, बाजार के दिन जब तुम्हारी दुकान लोगों से भरी हो, तो लक्कू, मल्ली, नागी या सिद्दी तुम्हारी दुकान पर आ सकती हैं और तुमसे पूछ सकती हैं, 'अरे लक्कू, मंजय्या को हमारे साथ सोने से रोकने का तुम्हें क्या अधिकार है?' फिर तुम्हारी इज्जत का क्या? ये औरतें वेश्याएं हैं जिन्हें अपनी बातों की परवाह नहीं। इसलिए, मुझे धीरे-धीरे उनसे अपना रिश्ता तोड़ना होगा।"

सात-आठ महीने बीत गए और लक्कू को लगा कि मंजय्या उसके साथ रहने की रस्म नहीं निभाएगा। उसे गुस्सा आया। साथ ही, उसने मंजय्या जैसे व्यक्ति के साथ

ऐसे रिश्ते के बारे में खुद भी दोबारा सोचना शुरू कर दिया। इस बीच, उसका व्यापार भी खूब फला-फूला और उसकी दुकान की अच्छी-खासी प्रतिष्ठा हो गई। उसने सोचा कि अगर वह कुछ और सामान खरीद ले, दुकान को सजा-संवार ले, तो वह उस इलाके में मशहूर सिद्धलिंगप्पा की दुकान को भी पीछे छोड़ सकती है। सिद्धलिंगप्पा को गाँव में साहूकार कहा जाता था, क्योंकि उसका व्यापार अच्छा चल रहा था। अगर वह व्यापार में उससे आगे निकल जाती, तो लोग उसे भी एक धनी महिला, एक साहूकार्ति कहेंगे। मंजय्या ने उसकी इच्छा को और बढ़ाया। उसके पास एक खाली जगह थी, उसकी दुकान के पास एक खेत। उसने सुझाव दिया कि वह वहाँ एक दुकान बनाएगा और वे दोनों मिलकर एक जनरल स्टोर चला सकते हैं। लक्कू ने कहा, 'आप दुकान बनाइए और मुझे दे दीजिए। मैं अकेले ही व्यापार संभालूँगी।' वह बिना सोचे-समझे मान गया और बोला, 'देखिए, आपका नाम ही लक्ष्मी है, धन की देवी।' मैंने ऐसा इसलिए कहा क्योंकि अगर मैं तुम्हारे साथ व्यापार करूँ, तो मेरी किस्मत अच्छी हो जाएगी। खूब कमाओ और सब कुछ अपने पास रखो। मेरे लिए तो दिन में दो वक्त का खाना ही काफी है।' इतनी उदारता से राजी होते हुए उन्होंने कहा कि वे विधवा से शादी करने की रस्म नहीं निभाएंगे। लेकिन अगर वो खोपरा बेचने के बहाने तिपतुर न जा सके और कभी-कभार उनके साथ रात न बिता सके, तो वो बहुत नाराज़ हो जाएगी। वो समझ चुकी थी कि इस मामले में उसके बिना रहना मुमकिन नहीं है। वो इतनी उदारता दिखाएंगे कि कभी-कभार ही सही, रात में उनके घर आ जाएँगे।

धीरे-धीरे लक्कू के मन में दो बातें घर कर गईं: एक, अपनी दुकान को बढ़ाना और एक धनी महिला कहलाना। दूसरी, हसन में पढ़ रही अपनी बेटी लता को मनचाही शिक्षा दिलाना। लता सोलह वर्ष की हो चुकी थी और अब सत्रह वर्ष की हो रही थी। वह बिल्कुल अपने पिता कांची की तरह दिखती थी, चेहरे की बनावट और शरीर का गठन, नुकीली नाक और नुकीली ठोड़ी। वह अपने पिता की तरह मूर्ख नहीं थी और लक्कू को अपनी बेटी की बुद्धिमत्ता पर हमेशा गर्व था। वह सोचती थी कि लता को हाई स्कूल में पढ़ना चाहिए। अपनी माँ के अलावा उसे इतनी बुद्धिमत्ता कहाँ से मिली? क्या लता को जन्म देने वाली माँ ही तो थी? हालाँकि बिलिकेरे में ही हाई स्कूल था, लता ने गाँव के स्कूल में पढ़ने से साफ इनकार कर दिया और हसन के एक स्कूल में दाखिला लेकर अपनी मौसी के घर रहने लगी। लक्कू ने भी स्नेह से इस बात को मान लिया, ताकि उसकी बेटी शहर का जीवन जी सके, फिल्में देख

सके, आदि। लक्कू का जन्म और पालन-पोषण भी हसन में ही हुआ था। फिल्मों की बात तो छोड़िए, उस समय तो उसे ठीक से खाना भी नहीं मिलता था। हसन में कॉफी प्रसंस्करण का विकास अभी तक नहीं हुआ था। वह जगह तब कितनी छोटी थी और अब कितनी बदल गई है! लक्कू की बड़ी बहन कॉफी प्रसंस्करण कारखाने में काम करती थी और उसका पति आरा मिल में। उसकी बड़ी बेटी की शादी हो चुकी थी और उसके बच्चे थे। उसके बेटों में से केवल एक ही पढ़ाई करता हुआ प्रतीत होता था, बाकी सभी आवारा और आलसी थे। जब लक्कू इन सब बातों के बारे में सोचती, तो उसे अपनी बेटी की याद आती, जो अपनी मौसी के घर रागी के गोले और रोटियाँ खाती थी, हालाँकि लक्कू हर महीने नियमित रूप से पैसे भेजती थी। उसे एक विचार आया - क्या यह बेहतर नहीं होगा कि लता किसी छात्रावास में दाखिला ले ले? वह जानना चाहती थी कि इसका कितना खर्च आएगा। उसने मंजय्या से पूछा और उसे पता चला कि यह प्रति माह डेढ़ सौ रुपये होगा। उसने दुकान को बड़ा करने के बाद लता को छात्रावास में दाखिला दिलाने का फैसला किया। हालाँकि, वह अपनी बहन की जानकारी के बिना अपनी बेटी को पैसे देती और कहती, 'दोपहर में खुद को भूखा मत रखना।' 'जाओ और किसी होटल में इडली या डोसा खाओ।' जब वह हसन नहीं जा सकी, तो उसने मंजय्या के माध्यम से पैसे भेजना शुरू कर दिया।

शुरू में लक्कू बहुत परेशान थी, उसे चिंता थी कि क्या लता अपनी मां को मंजय्या के साथ रहने देगी। लक्कू ने अपनी बेटी को बताया था कि उसके पिता पेड़ से गिरकर मर गए थे - वही कहानी जो उसने अदालत में गवाह के तौर पर कही थी, और बेटी ने स्वाभाविक रूप से अपनी मां की बात पर पूरी ईमानदारी से विश्वास कर लिया था। उसने अपनी बेटी को बिलिकेरे न आने की चेतावनी दी थी, यहां तक कि छुट्टियों में भी नहीं, क्योंकि वहां की वेश्याएं तरह-तरह की कहानियां गढ़ती रहती हैं। लक्कू ने अपनी बेटी को बार-बार समझाया था कि अगर मंजय्या ने मदद न की होती, तो वह दुकान नहीं खोल पाती। फिर भी लक्कू के मन में डर बैठा हुआ था कि क्या उसकी बेटी मंजय्या के साथ रहने के उसके फैसले को मानेगी। लेकिन उसने इस समस्या का भी हल अपने मन में ढूंढ लिया था। अगर लता सहमत नहीं होती, तो वह पलटकर पूछती, 'तुम्हारी पढ़ाई का खर्च कौन उठाएगा?' लेकिन अब जब उसने यह मान लिया था कि इस तरह का रिश्ता ज़रूरी नहीं है, तो उसे राहत मिली, क्योंकि उसे अपनी बेटी को दोबारा शादी करने की बात बताने

की परेशानी नहीं उठानी पड़ी। अगर वह मंजय्या के साथ पूरा दिन आराम से बिताना चाहती, तो वह हसन के बजाय टिपटूर जाना पसंद करती, क्योंकि वहीं उसकी बहन और परिवार रहता था। साथ ही, वह उसी कस्बे में पली-बढ़ी थी। अगर कोई उससे मिल जाता, या लता को पता चल जाता... तो ये डर लक्कू को सताते रहते थे।

लेकिन लक्कू ने एक बात पक्के इरादे से तय कर ली थी: अगर वह उसे अपने साथ लिव-इन पार्टनर के रूप में नहीं रख सकती, तो उसे उसे सिर्फ अपने पास ही रखना होगा – और उसे किसी और वेश्या के साथ सोने नहीं देना होगा। कांची की वार्षिक मृत्यु रस्म खत्म हो जाए, तब उसे गली में किसी भी औरत के शब्दों से डर नहीं लगेगा। वह मंजय्या को दिन दहाड़े आने को कहेगी। अगर वह रात में आता है, तो उसे पूरी रात वहीं सोना होगा और सुबह होने के बाद घर लौटना होगा। लता हसन को छोड़कर इस गाँव में नहीं आएगी। उसने सोचा कि अगर वह और मंजय्या अपना रिश्ता छुपा कर रखेंगे, तो नागी, मल्ली और सिद्दी और खुद में क्या फर्क रह जाएगा। आखिर में अगर वह आदमी यह बात नहीं मानता और फिर भी गली की वेश्याओं की तलाश में जाता है, तो उसने अपना तुरुप का पत्ता इस्तेमाल करने और उसे सबक सिखाने का फैसला किया। वह मन ही मन योजना बनाती: दिन दहाड़े, मेले के दिन, वह अपनी दुकान के सामने उसकी धोती पकड़कर उससे पूछेगी, 'देखो, अगर मैंने झूठी कसम खाकर तुम्हें न बचाया होता, तो तुम्हें फांसी हो जाती। क्या तुम्हें याद नहीं कि तुमने बीच के पेड़ के नीचे गांव की देवी की कसम खाई थी?' अगर वह फिर भी अड़ियल रहता, तो वह ग्राम पंचायत को बुला लेती। उसे थामे रखने और उसे अपने चंगुल से न छूटने देने का उसका दृढ़ निश्चय और भी मजबूत हो गया था। लेकिन वह आदमी उससे कहीं ज्यादा चालाक था, बेहद चालाक और धूर्त। जब यह विचार उसके मन में आता, तो वह असमंजस में पड़ जाती, समझ नहीं पाती कि क्या करे। एक पल के लिए वह उसके प्रति उदासीन होने का सोचती। लेकिन जब उसे लगता कि उसके साथ धोखा हो सकता है, तो उसे ऐसा न होने देने का उसका हठ और भी प्रबल हो जाता।

कांची की मृत्यु को एक वर्ष बीत चुका था। मंजय्या पर अपना अधिकार जमाने का लक्कू का संकल्प और भी गहरा हो गया था। अगर उनका साथ औपचारिक रूप से रह रहा था, तो कोई बात नहीं। अगर नहीं, तो भी वह किसी और के साथ सोने को तैयार नहीं थी। उसके मन में एक ज़िद पैदा हो गई थी कि या तो मंजय्या को

साहसपूर्वक उसके घर आना होगा या फिर उसे खुलेआम उसके घर जाना होगा। वह मंजय्या को अपना फैसला बताना चाहती थी। लेकिन वह उससे मिल ही नहीं पाई। वह हमेशा चन्नरायपट्टाना, हसन, तिपपुर या कहीं और ही रहता था। जब उसने पुत्तेल्लैया से पूछा, तो उसने लक्कू से ही सवाल किया, 'कौन जाने, कब आएगा, कहां जाता है... क्या मैं ही उसकी मालकिन हूं?' उसने उसे भुलाने की बहुत कोशिश की, यह सोचकर कि वह तो गांवों में घूमने वाला कुत्ता है, उसे क्यों उसे अपने पास बांधकर रखना चाहिए। लेकिन कभी-कभी अचानक ही उसे हिम्मत और मजबूरी दोनों आ जाती थीं। वह सोचती थी कि वह लक्कू के बारे में क्या जानता है? वह उसे यह एहसास दिलाना चाहती थी कि वह कैसी है।

एक शाम अंधेरा हो चुका था। लक्कू ने अपनी दुकान का दरवाजा बंद किया, कुंडी खींची और उस पर बड़ा ताला लगा रही थी। चन्नरायपट्टाना से आखिरी बस उसकी दुकान के सामने बस स्टैंड पर रुकी। यात्रियों के उतरने के बाद, वहाँ इंतज़ार कर रहे छह यात्री बस में चढ़ गए और बस चल पड़ी। उतरने वाले यात्रियों में से एक लड़की उस तरफ से आ रही थी, जिसके हाथ में एक थैला था। लक्कू तुरंत समझ गई कि यह लता है। अपनी बेटी को देखकर वह खुश हुई। साथ ही वह हैरान भी थी क्योंकि लता अचानक आ गई थी। उसने पूछा, 'क्या तुम्हारी छुट्टियाँ हैं लता?' लता ने कहा 'हाँ', लेकिन लक्कू ने देखा कि लड़की उदास और पीली लग रही थी। चलते समय भी लता सिर झुकाए पीछे-पीछे चल रही थी, मानो कोई उसका चेहरा न देखे। वह अपनी माँ के कदमों से कदम नहीं मिला रही थी। लक्कू सोच में पड़ गई कि ऐसा क्यों है और शायद लता को शर्म आ रही हो क्योंकि वह शहर से गाँव आई है। फिर भी उसे शक था और उसने सोचा कि क्या हसन की लड़कियाँ ज़्यादा साहसी नहीं होतीं? जब तक वे घर पहुँचे, रुद्र भैंसों का दूध दुहने की तैयारी कर रहा था। लक्कू ने उसे आदेश दिया था कि जब तक वह दुकान से वापस न आ जाए, तब तक भैंसों का दूध न दुहे। दूध दुहने के बाद, वह उसे नापकर उसमें आवश्यकतानुसार पानी मिलाएगी, एक बड़े बर्तन में नापने वाले पात्र से भरकर नियमित ग्राहकों को भेज देगी। यह सब करने के बाद, लक्कू अंदर आई, लेकिन लता अभी भी दीवार से टेक लगाकर खड़ी थी। वह बैठी तक नहीं थी, न ही उसने अपनी गर्दन उठाई थी। माँ ने उसे प्यार से समझाया और पूछा, 'बेटी, तुम ऐसे क्यों खड़ी हो?' लेकिन लता कुछ नहीं बोली। लक्कू अपनी बेटी के पास गई, अपना बायाँ हाथ लता के कंधे पर रखा, अपने दाहिने हाथ से उसकी ठोड़ी ऊपर उठाई

और देखा कि उसकी बेटी की आँखें आँसुओं से भरी हुई थीं। लक्कू ने फिर से आग्रह किया, 'बताओ, क्या हुआ?' लेकिन लता कुछ नहीं बोली। फिर, उसने अपनी माँ की पकड़ से खुद को छुड़ाया, कहा, 'मैं आपको बाद में बताऊँगी,' और बाथरूम में चली गई। लक्कू रसोई में दाखिल हुई। हालाँकि लक्कू की बेटी हसन में अपनी मौसी के घर रोज़ रागी के गोले और रोटियाँ खाती थी, फिर भी दोपहर में बनाए रागी के गोले उसे खिलाने का मन नहीं हुआ और उसने चावल उबलने के लिए रख दिए। तरोताज़ा होने के बाद, लता अपनी माँ के पास आने के बजाय सीढ़ी चढ़कर उस मचान पर बैठ गई जहाँ खोपरा सूखने के लिए फैला हुआ था। रुद्र दूध बाँटने के बाद घड़ा लेकर लौटा। उसने भैंसों के लिए चारा और पानी रखा और अपने मालिक की रोज़ की बात सुनकर बाहर चला गया, 'कल सुबह जल्दी आना। ये मत कहना कि मैं सो गया था और सुबह जल्दी नहीं उठ पाया।' तभी लक्कू ने दरवाज़ा बंद किया, सीढ़ी के दो पायदान चढ़ी और पुकारा, 'नीचे आ जाओ, लताक्का,' अपनी बेटी का हाथ पकड़कर उसे नीचे खींच लिया। मचान पर कोई बत्ती नहीं थी। बल्ब नीचे हॉल में जल रहा था। जब बेटी धीरे-धीरे नीचे उतर रही थी, तो माँ ने सीढ़ी को पकड़ रखा था ताकि सीढ़ी फिसल न जाए। चूल्हे पर चावल उबल रहे थे। जब उसकी बेटी नीचे उतरी, तो लक्कू ने अपनी बेटी का हाथ पकड़ा, उसे चटाई पर बिठाया, उसके कंधों को गले लगाया और विनती की, 'कृपया मुझे बताओ मेरी प्यारी, तुम मुझे बताने से क्यों डर रही हो?'

जब उसकी मां ने लता के सिर पर प्यार से हाथ फेरा, तो उसे फिर से रोने का मन हुआ। लेकिन उसने अपनी बात कहने का फैसला किया, खुद को संभाला, मां के चेहरे की ओर देखते हुए उसने आश्वासन मांगा और कहा, 'अम्मा, मुझे मत मारो, सच में अम्मा, मैंने कोई गलती नहीं की है।'

'नहीं, नहीं बेटा, क्या मैंने कभी ऐसा किया है, तुम्हें पीटा है? तुम मुझे बताओ क्या हुआ।' माँ की चिंता बढ़ती जा रही थी।

लता ने कहा, 'मुझे मासिक धर्म नहीं आया है।'

'तुमने ऐसा क्यों किया? वो बदमाश कौन है?' लक्कू ने अपनी बेटी का चेहरा पकड़कर उसकी आँखों में देखते हुए चिल्लाकर कहा।

बेटी की निगाहें मां की निगाहों पर टिकी हुई थीं। 'ये मंजय्यारु हैं। उन्होंने मुझसे शादी करने का वादा किया था, मुझे यकीन दिलाया था।'

'क्या! क्या उसने तुम्हें भी बहकाया, ये सब कहकर और तुम्हें यकीन दिलाकर?! वो एक साल से मुझसे बच रहा है, कहता है या तो मुझसे शादी करेगा या मेरे साथ रहने लगेगा।' लक्कू ने अपने शब्दों को दबा लिया, पर वो अपनी बेटी की आँखों से नज़रें नहीं हटा सकी। बेटी को पहले समझ नहीं आया। जब उसने मुँह खोलकर 'अम्मा' कहा, तो मानो उसके जबड़े जाम हो गए हों, उसका मुँह और आँखें दोनों ही खुली रह गईं।

अंदर पक रहे चावल जलकर काले हो गए थे। चूल्हे की आग बुझ गई। एक-दूसरे की आँखों में टिकी आँखें कुछ देर तक उसी स्थिति में रहीं। दोनों के भीतर घिनौनी, बेहद शर्मिंदगी उमड़ पड़ी और ज़हर की तरह फैल गई। उन्हें लगा कि इस जन्म में एक-दूसरे को देखना उनके लिए नामुमकिन है। बेटी ने अपना सिर झुका लिया, घुटने ऊपर उठाए और अपना चेहरा उनके बीच छिपा लिया। माँ शर्म से अंधी होकर उठी और बत्ती बंद कर दी। उस घने अंधेरे में वे एक-दूसरे से छिप सकती थीं। जब भी बेटी घर आती, माँ उसे अपने बिस्तर पर सुलाती थी; लेकिन अब दोनों को लगने लगा था कि बिस्तर साझा करना, एक घर साझा करना, या यहाँ तक कि एक ही दुनिया में रहना भी घिनौना और अकल्पनीय है। थकी-हारी और दुखी माँ दीवार के पास ज़मीन पर लेट गई। बेटी, जिसने अपना सिर घुटनों के बीच छिपा रखा था, चटाई पर लुढ़क गई। लता अपनी माँ को सब कुछ बताने की उम्मीद में वहाँ आई थी। उसने सोचा था कि वह अपनी माँ की गोद में अपना चेहरा छिपा लेगी, और उसे अपने साथ हुई सारी बातें बताएगी, कि कैसे उसने मंजय्या पर विश्वास किया... लेकिन अब, ये सारे विचार गायब हो गए। अपनी माँ का चेहरा देखकर उसे वैसी ही घृणा हुई जैसी गंदगी को देखकर होती है। लक्कू के साथ भी यही हाल था। अनजाने में ही उसके मुँह से मंजय्या और उसके साथ सोने की बात निकल गई और वह गंदगी से भी बदतर हो गई।

जब उसने पीछे मुड़कर देखा, तो उसे अस्वस्थ महसूस हुआ और वह फूट-फूटकर रोना चाहती थी, जी भर के रोना चाहती थी।

लेकिन अगर वह रोती, तो उसकी बेटी जान जाती कि उसकी माँ वहाँ है, इसलिए लक्कू ने निराशा से अपने सिसकियों को रोका। बेटी को ज़ोर से उल्टी करने का मन हुआ। लेकिन अगर वह ऐसा करती, तो उसकी माँ जान जाती कि बेटी वहाँ है। इसलिए उसने बेचैनी से अपनी उल्टी को रोका। माँ अपने हाथ-पैर फैलाना चाहती थी। लेकिन उसने उन्हें और भी कसकर मोड़ लिया, क्योंकि अगर वह फैलाती और

वे बेटी को छू लेते, तो वह अपनी माँ की अशुद्धता से अपवित्र हो जाती। बेटी करवट बदलना चाहती थी। उसे डर था कि गलती से छूने पर घृणा की आग भड़क उठेगी। पूरी रात अंधेरे की खामोशी में डूबी रही, एक ऐसी खामोशी जिसमें दोनों को अपनी साँसों की लय तक का एहसास नहीं हुआ। न कानों को कुछ सुनाई दिया और न आँखों को कुछ दिखाई दिया।

मंजय्या दो दिन तक सावित्री पर एक बार फिर विजय प्राप्त करने की खुशी में झूमता रहा। फिर वही उदासी छा गई। जीत के बाद अब क्या करे? एक विचार आया: अगर वह हारी हुई सावित्री को हमेशा के लिए अपने वश में रख सके तो यह सचमुच बहुत फायदेमंद होगा। लेकिन, उसे हमेशा के लिए अपने वश में रखने का मतलब था कि वह भी हमेशा उसके नियंत्रण में रहे। अगर ऐसा नहीं हुआ तो क्या वह मानेगी? इस विरोधाभासी विचार ने उसे सोचने पर मजबूर कर दिया कि फिलहाल एक बार ही काफी है। वह इस बात से संतुष्ट था कि उसने उसे सबक सिखा दिया। वह जिसने उसकी जरा भी परवाह नहीं की और स्वतंत्र जीवन जीने का सपना देखा था। इसके साथ ही उसे गर्व भी महसूस हुआ, खासकर उसे समझाने पर। मंजय्या एक सच्चा मर्द था, उस मट्टीकेरे से कहीं बेहतर। उसने सोचा, क्या उस मट्टीकेरे में उसके साथ खिलवाड़ करने की हिम्मत थी? अगर ये विचार उसे परेशान कर रहे थे, तो इनके साथ-साथ सरोजक्षी की याद उसे सौ गुना ज्यादा सताने लगी। अगर उस वेश्या ने खुद डिप्टी चीफ को गिरफ्तार कर लिया होता तो उसका हौसला और बढ़ जाता। मंजय्या के मन में यह चुनौती जाग उठी कि वह किसी और दिन जाए, उसे अपने वश में करे और सावित्री की तरह उस पर भी अपना अधिकार जमाए। लेकिन वह उसे देखते ही बहुत सतर्क हो जाएगी, क्योंकि वह पहले ही एक बार कोशिश कर चुका था और वह तैयार रहेगी। इसके अलावा, एक अनुभवी महिला उससे भी तेज़ होगी। जब यह विचार उसके मन में आता, तो वह हतोत्साहित हो जाता। इस प्रकार मंजय्या बिलिकेरे, हसन और

चन्नारायपट्टाना में मानो खोया हुआ सा भटक रहा था। हाल ही में वह या तो चन्नारायपट्टाना के ट्रैवलर्स बंगले में रहता या सड़कों पर। उसे बिलिकेरे में पहले की तरह घर पर रहना मुश्किल लग रहा था और वह ऊब गया था। इसी बीच उसे टिप्पुर के गोदाम मालिक नागप्पा की मृत्यु की खबर मिली। तुरंत उसने नागप्पा के व्यवसाय में दखल देने का सोचा। वह बिलिकेरे लौटा, नागप्पा के साथ किए गए अनुबंध पत्र को निकाला, उसे ध्यान से पढ़ा और टिप्पुर की ओर चल पड़ा। उसने इसे वकील गुरुशांतप्पा को दिखाया और आपत्ति दर्ज कराई। मंजय्या ने स्वर्गीय नागप्पा के साथ एक समझौता किया था। वह नागप्पा के गोदाम में प्रति वर्ष दस लाख खोपरा की आपूर्ति करेगा। समझौते के अनुसार, नागप्पा को कुल लाभ में से प्रति रुपये एक आना मंजय्या को देना था। इस प्रकार मंजय्या का दावा था कि गोदाम में उसकी साझेदारी है। अब मंजय्या ने दावा किया कि गोदाम उसे सौंप दिया जाना चाहिए। उसने वकील से इस संबंध में मुकदमा दायर करने को कहा। गुरुशांतप्पा ने कहा, 'इस मुकदमे को जीतने का कोई फायदा नहीं है।' लेकिन मंजय्या ने जोर देकर कहा, 'देखिए वकील साहब, जीत केवल कानून की ताकत से नहीं होती, बल्कि विरोधी की कमजोरी से होती है। कृपया इसे समझिए। यदि दामाद ने अपने ससुर के साढ़े छह लाख रुपये को छुआ तक नहीं और उसे जलाकर राख कर दिया, तो वह कभी भी उस पर हाथ नहीं लगाएगा। इसलिए कोई दावेदार नहीं होगा। इस एक कड़ी को पकड़कर और उसे कसकर खींचकर, क्यों न इस कारोबार को मेरे पास लाया जाए?' मंजय्या ने वकील को चुनौती दी, मेज पर नोटों का एक बंडल रखा और वकील ने याचिका पर मंजय्या के हस्ताक्षर ले लिए। मंजय्या ने सोचा कि वह अक्सर तिप्तूर आता रहेगा और लक्कू को भी वहाँ बुला सकता है। अगर उसे गोदाम मिल जाए तो वह तिप्तूर, तुरुवेकेरे, चिक्कनायकानहल्ली और अन्य तालुकों में भी खोज कर सकता है। वह उत्साहित और खुश था। लेकिन सब कुछ उसके खिलाफ हो गया, हालांकि यह पूरी तरह अप्रत्याशित नहीं था। नागप्पा की बेटी और पोते ने गोदाम के लेन-देन पर अपना अधिकार जताया। अदालत ने तुरंत अंतरिम फैसला सुनाते हुए गोदाम का मालिकाना हक स्वर्गीय नागप्पा की बेटी और पोते को दे दिया, लेकिन मंजय्या की आपत्तियों पर बाद में विचार करने का प्रावधान किया। अदालत ने यह भी कहा कि याचिकाकर्ता और गोदाम मालिक के बीच समझौता केवल कमीशन के आधार पर था, न कि साझेदारी का। अगर इसे साझेदारी का अनुबंध भी मान लिया जाए, तो

याचिकाकर्ता को केवल एक आना कमीशन मिलेगा। स्वाभाविक रूप से, बेटी और पोते को पंद्रह आना मिलेंगे। इस प्रकार, व्यवसाय का पूरा अधिकार तुरंत उन्हें सौंप दिया जाता है। यदि इस पर शीघ्र निर्णय नहीं लिया गया, तो ग्राहक चले जाएंगे, गोदाम बंद करना पड़ेगा और पूर्ण नुकसान होगा। इसलिए यह आदेश दिया गया है। मंजय्या की याचिका की वैधता की जांच इसी न्यायालय द्वारा समय आने पर की जाएगी और निर्णय दिया जाएगा।' मंजय्या चन्नरायपट्टाना जाने वाली बस में सवार हो गए।

मंजय्या का मन एक बार फिर ऊब से घिर गया। उसने सोचा कि जब एक योजना उसके मन में आई थी, तब उसे अदालत नहीं जाना चाहिए था, लेकिन अब बहुत देर हो चुकी थी: उसे सुकन्या और गणेश को बता देना चाहिए था कि उसका स्वर्गीय नागप्पा के साथ एक समझौता हुआ था। अगर वह अदालत जाता, तो फैसला उसके पक्ष में होता। उसे उन्हें धमकाकर कहना चाहिए था कि उन्हें व्यापार का अनुभव नहीं है। वह गोदाम के कारोबार में उनकी मदद करेगा और चालाकी से इस कारोबार में शामिल हो जाएगा। उसे दुख हुआ। लेकिन वह जानता था कि सुकन्या कभी उस पर विश्वास नहीं करेगी। सुकन्या उसके बारे में क्या सोचेगी? वह यह सोचकर निराश हो गया कि उसे उसके साथ क्यों जुड़ना चाहिए? आखिर क्या उसमें कोई सुंदरता है!

मंजय्या सोच रहा था कि हाल ही में उसका भाग्य साथ नहीं दे रहा था। वह अपने किसी भी काम में सफल नहीं हो पा रहा था। सोचते-सोचते उसे कहीं न कहीं यह आभास हुआ कि अगर वह सरोजक्षी को पा ले, तो शायद उसकी किस्मत पलट जाए। लेकिन इसके लिए उसे क्या करना चाहिए? यही सोचते हुए मंजय्या चन्नरायपट्टाना में रुक गया। उसे पता था कि अप्पाजप्पा नेलमंगला में ड्यूटी पर रिपोर्ट कर दी है। सरोजक्षी अपने बच्चों के साथ चन्नरायपट्टाना में रह रही थी। वह यहाँ कब तक रहेगी? मंजय्या ने सोचा, क्यों न वह फल और फूल लेकर जाए, उससे विनम्रता से बात करे और किसी उपयुक्त अवसर की तलाश करे? शाम हो चुकी थी। उसने अगले दिन अपनी योजना को अंजाम देने का फैसला किया और गली में टहलने निकल गया। वह चौराहे से बस एक फर्लांग ही चला था कि तभी पीछे से एक लड़का आया और पूछा, 'क्या आप बिलिकेरे मंजय्या हैं?' मंजय्या पीछे मुड़ा। लड़के ने कहा, 'डॉक्टर हाशीम आपको बुला रहे हैं।' मंजय्या ने सोचा कि ज़रूर किसी परिचित मरीज़ से संबंधित कोई बात होगी। जब वह डॉक्टर हाशीम

के क्लिनिक पहुँचा, तो वहाँ बहुत सारे मरीज़ थे। उसे देखकर डॉक्टर ने कहा, 'मंजय्या, मैं अभी बहुत व्यस्त हूँ। क्या तुम नौ बजे तक आ सकते हो? मुझे तुमसे कुछ बात करनी है।' फिर वे पर्दे के पीछे चले गए जहाँ वे मरीज़ों की जाँच करते थे। मंजय्या यह सोचते हुए बाहर चला गया कि आखिर क्या बात है।

मंजय्या ने होटल में खाना खाया और नौ बजे डॉक्टर हशीम के क्लिनिक गया। वहाँ कोई मरीज़ नहीं था। डॉक्टर ने कहा, 'मैंने आपको सड़क पर चलते देखा था। मुझे तुरंत याद आया और मैंने लड़के के साथ संदेश भेजा। कृपया बैठ जाइए। आपकी सेहत कैसी है?' मंजय्या के बैठते ही डॉक्टर ने सीधे उससे बात की। 'आपको पता है, यहाँ जो महिला हैं, वो आपकी पत्नी हैं। मुझे बिल्कुल भी पता नहीं था। लगता है कि आपको उन्हें छोड़े हुए सत्रह साल हो चुके हैं। वो बहुत ही सभ्य और सम्मानित महिला हैं। उस दिन, जब वो अकेली थीं, आपने जाकर उनके साथ बलात्कार किया। आप अदालत में यह तर्क दे सकते हैं कि चूंकि वो आपकी पत्नी हैं, इसलिए इसे बलात्कार नहीं माना जा सकता। सत्रह साल तक कोई रिश्ता न होने के बाद, अचानक आप उनके पास जाते हैं, जब वो अकेली होती हैं और जबरदस्ती अपनी हवस मिटाते हैं और कहते हैं कि यह बलात्कार नहीं है, आप चाहे जो भी परिभाषा दें, अदालत आपको सज़ा देगी। क्या आपको कानून की जानकारी है?'

ये शब्द अचानक उसके चेहरे पर आ गिरे, जिससे मंजय्या स्तब्ध रह गया। जब वह अभी संभल ही रहा था, डॉक्टर ने आगे कहा, "देखिए, कानून चाहे जैसा भी हो, कौन संभ्रांत महिला अदालत जाती है? यह महिला भी अदालत नहीं जाएगी। लेकिन आपके द्वारा उसके साथ बलात्कार करने के चार-पाँच दिन बाद, वह महिला मेरे पास आई। उसने अत्यंत शर्मिंदगी के साथ मुझसे पूछा कि क्या उसे कोई बीमारी हो गई है, क्योंकि उसके पति ने उसे छुआ था और मुझे बताया था कि आपने क्या किया। हालांकि, बीमारी का कोई लक्षण नहीं था। फिर भी एहतियात के तौर पर मैंने उसे छह इंजेक्शन दिए। देखिए, पति का क्या सम्मान और प्रतिष्ठा रह जाए अगर पत्नी को इस बात का डर हो कि पति के साथ सोने से उसे बीमारी हो जाएगी?" डॉक्टर ने मंजय्या के चेहरे की ओर देखा। वह मानो अवाक रह गया था, उसके मुंह से शब्द अटक गए थे। मानो उसने इस बात पर ध्यान ही न दिया हो, डॉक्टर ने अपनी बात पूरी की।

'देखो मंजय्या, तुम्हारी कहानी यहीं खत्म नहीं होती। तुमने उस दिन उसका बलात्कार किया था, अब वो गर्भवती है। पैंतीस साल की, पति उसे छोड़कर चला

गया है और उसकी देखभाल करने वाला कोई नहीं है। वो काम करती है और अपना गुजारा चलाती है। अगर किसी औरत को बच्चा हो जाए, तो क्या वो कहेगी कि उसे बच्चा नहीं चाहिए? लेकिन अगर वो उस बच्चे को अपना लेती है, तो इसका मतलब है कि जिसने उसे जन्म दिया है, उससे रिश्ता तोड़ लेना। इसलिए, उसकी यादों से भी छुटकारा पाने के लिए, उस औरत ने गर्भपात कराने का फैसला किया और मेरे पास आई। मैंने कहा, मैं ऐसा नहीं करता और उसे किसी बड़े शहर के नर्सिंग होम जाने के लिए कहा और पता भी दे दिया। देखो, अगर कोई पत्नी अपने पति की याद दिलाने वाले बच्चे को ही खत्म करने का फैसला कर ले, तो वो आदमी कैसा होगा? सोचो ज़रा। ये हद है और तुमने हद पार कर दी है मंजय्या...'
डॉक्टर चुप हो गए।
मंजय्या को लगा जैसे किसी ने उसे ज़ोर से थप्पड़ मारा हो। अब तक किसी ने भी उससे ये बात नहीं कही थी, वो भी उसके सामने। लेकिन हाशीम डॉक्टर था, इसलिए वो सच्चाई से इनकार नहीं कर सकता था। हालांकि, उसने तुरंत ये सोचकर अपना बचाव करने की सोची कि सावित्री की बदतमीज़ी की वजह से ही उसका उससे अलगाव हुआ था, लेकिन वो बोल नहीं पाया।
कुछ देर बाद डॉक्टर बोले, "देखो मंजय्या, मैं एक डॉक्टर हूँ। मरीज़ का सम्मानपूर्वक इलाज करना, उनसे प्रसन्नतापूर्वक बात करना और उन्हें चाहे जो भी बीमारी हो, डांटना नहीं, मेरा कर्तव्य है। मैं मरीज़ों का इलाज बिना कोई अतिरिक्त लाभ लिए करता हूँ, चाहे वे यौन संचारित रोग के मरीज़ ही क्यों न हों। सुना है, तुम कहते हो कि डॉ. हशीम सिर्फ़ यौन संचारित रोग के डॉक्टर हैं। लेकिन मंजप्पा, यह समझ लो। सिर्फ़ इसलिए कि मैं व्यभिचार जैसी बीमारी का भी कर्तव्य समझकर इलाज करता हूँ, यह मत सोचो कि मैं व्यभिचार का समर्थन करता हूँ।"
डॉक्टर के आखिरी शब्दों से मंजय्या को ठेस पहुंची। लेकिन उसके मन में कोई जवाब नहीं आया। साथ ही, वह इस डॉक्टर से बहस या झगड़ा करने से भी बचना चाहता था, जो यौन संचारित रोगों का इतनी आसानी से इलाज कर सकता था। डॉक्टर ने अपनी घड़ी देखी और कहा, 'अब मेरे घर जाने का समय हो गया है। मुझे कुछ काम है,' और उठ गए। मंजय्या को राहत मिली। उसने डॉक्टर को शुभ रात्रि कहा और बाहर आ गया।
ट्रैवलर्स बंगलो की ओर चलते हुए मंजय्या मन ही मन डॉक्टर को कोस रहा था। 'अरे, इस कमीने ने मुझे इतना उपदेश दिया, सिर्फ इसलिए कि मैंने उसे यौन रोग

विशेषज्ञ कह दिया। उसका नाम ही यही है, कौन नहीं जानता कि यही उसकी खासियत है? सब उसे इसी नाम से पुकारते हैं। शायद मैंने भी उसे यही कहा होगा। लेकिन किस कमीने ने मेरी बात उसे बताई होगी?' मंजय्या इसी सवाल में उलझा हुआ था। लेकिन जब वह ट्रैवलर्स बंगलो में अकेला लेट गया, तो उसके मन में सावित्री के गर्भपात का फैसला घूमने लगा। अब तक मंजय्या ने कभी बच्चों और ऐसी बातों के बारे में नहीं सोचा था। अब भी उसे इस बात का कोई दुख नहीं था, न ही उसे इस बात की कोई परवाह थी कि उसका होने वाला बच्चा गर्भ में ही नष्ट हो गया। सच तो यह था कि उसके साथ सोने वाली कई औरतें गर्भवती हो गईं, चाहे उसके ज़रिए या किसी और के ज़रिए। ऐसी औरतों की कमी नहीं थी जो सारा दोष उस पर डालतीं और कहतीं, 'यह तुम्हारा है।' इसका मतलब था कि गर्भपात की ज़िम्मेदारी और खर्चा उसी पर था। इसके अलावा, इससे उसे गर्व भी महसूस होता था। उनकी मांग को नज़रअंदाज़ किए बिना उसने गर्भपात में उनकी मदद की थी। यह भी आसान था। हसन की मणिअंबल एक भरोसेमंद महिला डॉक्टर थीं। फीस भी तय थी। वह कभी भी कोई आपत्तिजनक सवाल नहीं पूछती थीं, जैसे क्यों, क्या, कहाँ, कौन, आपका नाम क्या है, आदि। वह एक कुशल और सक्षम डॉक्टर थीं, जिन्होंने अनुभव से निपुणता हासिल की थी और दो मिनट में काम खत्म करके मरीज़ों को भेज देती थीं। डॉ. हशीम ने एक नर्सिंग होम के बारे में बताया था। वह उसे कहाँ भेज सकता था? उसका दिमाग जैसे चकरा गया, जब उसने इस संभावना पर विचार किया कि सावित्री अभी भी नर्सिंग होम नहीं गई होगी। उसका दिमाग सावित्री के गर्भपात के फैसले के इर्द-गिर्द घूमने लगा, जिसने उसे उसके रिश्ते और उसके चरित्र की याद दिला दी थी। उस कुटिल ने उसे ठुकरा दिया था। वह उसे एक निकम्मा इंसान समझती थी, जिसे याद रखना भी बेकार था। सिर्फ़ वह ही नहीं, उसके परिवार के सभी लोग उसे ऐसा ही समझते थे। यह बात मंजय्या के दिमाग में कौंध गई, जैसे आग पर हवा का झोंका। वे बात नहीं करते। बस सन्नाटा। ऐसा सन्नाटा जो साफ़-साफ़ कहता है कि हमारे बीच कोई रिश्ता नहीं है। उसके पिता भी ऐसे ही रहते थे और उसका भाई भी। लगता है वह तो बिल्कुल बात ही नहीं करता। जब मंजय्या को ये सब याद आया, तो उसे एहसास हुआ कि वह जीता ही नहीं और उसे लगा कि उसकी जीत का भ्रम पूरी तरह झूठा था। उसे काफ़ी देर तक नींद नहीं आई। हार का एहसास, धूल चाटने जैसा दर्द, उसे सता रहा था।

उसने इससे छुटकारा पाने की कोशिश की, खुद को प्रेरित करने की कोशिश की, अपना आत्मविश्वास वापस पाने की कोशिश की।
यह सोचकर कि अगर मंजय्या हार गया तो वह पुरुष नहीं रहेगा, उसे गहरा दुख सताने लगा। किसी तरह भोर होते-होते वह सो गया।
जब वह सुबह करीब नौ बजे उठा, तो उसका बिस्तर से उठने का मन नहीं हुआ। एक तरह की उदासी उसके मन में छाई हुई थी। उठने का क्या फायदा? वह सोचने लगा: एक गर्भवती पत्नी को तो अपने पति के पास आना चाहिए, उससे विनती करनी चाहिए, लेकिन अगर वह खुद फैसला करती है... तो यह कितनी गुस्ताखी और घमंड है! या क्या यह झूठ था कि वह उससे गर्भवती हुई थी? क्या उसने मेरा नाम बताया, उस मट्टीकेरे नाम के आदमी से गर्भवती हुई? क्योंकि उसका एक पति था, जिसका नाम मंजय्या था। उसने यह सोचकर अपने मन को शांत करने की कोशिश की कि विवाहित महिलाओं को यह सुरक्षा और सहारा मिलता है। लेकिन इस विचार ने उसके स्वाभिमान को और भी गहरे धंसा दिया और उसने बड़ी मुश्किल से इस विचार को मन से निकाल दिया। यह सच था कि उस समय वह उसके साथ सोया था। और क्या उस नागी ने नहीं बताया? वह निकम्मा मट्टीकेरे क्या कर सकता था? ये बातें तुरंत उसके मन में आईं। क्या उसने गर्भपात करवा लिया है? वह कितने दिन पहले हशीम के पास गई थी? उसने भी ये सब नहीं पूछा था। अगर अब भी वो वहाँ जाता, और उसने उसे नहीं हटाया होता – हाँ, नहीं हटाया होता... उसका विचार वहीं अटक गया। अगर वो सीधे उसके मुँह पर कहती, 'हाँ, ये बच्चा मुझे तुम्हारी याद दिलाता है। मैं ये याद नहीं रखना चाहती।' तो फिर? उस सुबह वो उसे क्यों ढूँढ़ने गया था? आखिर वो कितनी सुंदर थी? वो बदतमीज़ औरत! वो पैंतीस साल की बुढ़िया थी। औरतें तो तीस साल की उम्र तक ही जवान और मासूम रहती हैं। मंजय्या ने सोचा, अब से उसे ये नियम बना लेना चाहिए कि वो तीस साल की उम्र पार कर चुकी किसी औरत को छुएगा भी नहीं। उसे लगा कि ये सही है। उसके इस फैसले से एक और अच्छा विचार भी कौंधा। इससे शायद वो सरोजक्षी की यादों से छुटकारा पा लेगा। हाँ, उसकी उम्र क्या होगी? तीस, इकतीस, बत्तीस। वैसे भी तीस साल की उम्र पार कर चुकी औरत तो बुढ़िया ही होती है। तो सरोजक्षी तो इस लायक ही नहीं। ये सोचते ही उसका मन हुआ कि उठकर चेहरा धो ले और कॉफी मंगवा ले। लेकिन जब तक उसने अपनी कॉफी खत्म की, तब तक वह निराश महसूस कर रहा था।

डॉक्टर से मिले पंद्रह दिन बीत चुके थे। मंजय्या को किसी चीज़ में दिलचस्पी नहीं थी। वह इस भावना से छुटकारा नहीं पा पा रहा था कि सावित्री और सरोजक्षी ने उसे हरा दिया है। उसने बिलिकेरे में चुपचाप रहने का फैसला किया, इन सब बातों की परवाह न करते हुए, लेकिन दो दिनों के भीतर ही वह ऊब गया। वह कुछ ज़रूरी काम से हसन गया। लेकिन उस काम में भी उसे सफलता नहीं मिली। उसने सोचा कि आठ दिनों में सब ठीक हो जाएगा, जब वह वहाँ फिर आएगा, और चन्नरायपट्टाना आ गया। वहाँ वह क्या कर सकता था? ओह! कितने महीने हो गए जब उसने कंठमणि को देखा था? उसने उसके पास जाने के बारे में सोचा। लेकिन किसी तरह वह जाना भी नहीं चाहता था। उसने अपना दोपहर का भोजन समाप्त किया, ट्रैवलर्स बंगलो गया और लेट गया। उसने झपकी ली। जब वह उठा, तो उसका मन रामकृष्ण के विचारों से भरा हुआ था। टिप्पुर के वकील गुरुशांतप्पा ने कहा था कि टिप्पुर में सभी जानते हैं कि कैसे उसने अपने ससुर के साढ़े छह लाख रुपये शव सहित जलाकर राख कर दिए थे। पैसे जलाकर उसने क्या हासिल किया? पैसा सिर्फ सुख-सुविधाएं खरीदने के लिए होता है। नागप्पा में इतनी उदारता नहीं थी कि वह पैसा बांटकर सुख-सुविधाएं खरीद सके। उसका सारा कारोबार सिर्फ पैसा जमा करने में ही लगा रहता था। कम से कम अगर इस दामाद ने वह पैसा खर्च कर दिया होता और बंबई और बैंगलोर की सैर कर ली होती...

ओह, वह कितनी तरह की लड़कियों के साथ मौज-मस्ती कर सकता था! कितना धन होता! वह बुढ़ापे तक आनंद ले सकता था। उस राशि का ब्याज ही काफी होता, वह उसका उपयोग कर सकता था और मूलधन भी बचा सकता था। वह किसी वेश्या के घर में पलंग पर बैठकर श्रद्धा और भक्ति से अपने ससुर के प्रेत को तिलोदक अर्पित कर सकता था और कह सकता था, 'देखो, माँ, तुमने अपने जीवनकाल में अपने दामाद को खुश नहीं रखा। तुमने भी जीवन का आनंद नहीं लिया। देखो, अब मैं आनंद ले रहा हूँ, हम दोनों की कमी पूरी कर रहा हूँ।' यह सोचकर मंजय्या जोर से हँस पड़ा। उसके मन को शांति मिली। उसने सोचा, 'काश मैं नागप्पा का दामाद होता। ओह, कितना अफसोस! नागप्पा की बेटी को ऐसे उबाऊ रामकृष्ण से शादी करके कितना सुख मिलता! यह मौन, यह संन्यास, नोटों के बंडल जलाने की यह मूर्खता केवल उन्हीं पुरुषों में होती है जिनके शरीर में पर्याप्त रस नहीं होता।' मंजय्या को सुकन्या पर दया आने लगी, यह सोचकर कि

वह भूख से अंदर ही अंदर व्याकुल हो रही होगी। लेकिन मंजय्या का मन फिर से रामकृष्ण की ओर मुड़ गया। वह सोचने लगा, 'जो व्यक्ति इस सरल सत्य को भी नहीं समझता कि पैसा केवल लेन-देन के लिए होता है, वह वेदांत को कैसे समझ सकता है?'

इसी प्रकार, मंजय्या को रामकृष्ण के प्रति गहरी सहानुभूति हुई, जिन्हें उनकी पत्नी ने ठुकरा दिया था। इसके साथ ही, उन्हें सुकन्या पर भी दया आई, क्योंकि वह अपने पिता के घर यह सोचकर चली गई थी कि उसे पति से वह सब नहीं मिल सकता, कम से कम यह धन-संपत्ति तो उसके पास रहे। तभी किसी ने पुकारा - 'मंजय्या साहब।' वे उठे और दरवाजा खोला। देखो! वहाँ उस्मानी खड़ा था। उसे देखकर मंजय्या उत्साहित हो गए। उस्मानी एक अच्छा वक्ता था, साथ ही उसके पास कोई रोचक खबर भी होगी। उस्मानी जल्दी में था। वह अपनी साइकिल बाहर ही छोड़कर आया था। उस्मानी ने मंजय्या को प्रणाम किया और कहा, 'साहब, आपके जाने के बाद विभाग में कोई रौनक या उत्साह नहीं रहा। अब मुझे जाना होगा। रेंजर से मिलना है। वर्तमान रेंजर मुनिरंगप्पा बहुत सख्त मिजाज के आदमी हैं। मैं आपको एक संदेश देने आया हूँ। मैं उस महिला से मिला, आपके मित्र अप्पाजप्पा की पत्नी से। उसने बताया कि आपके पास तीन बर्तन हैं, जो उसके हैं।' उसने मुझसे कहा कि मैं तुम्हें बता दूं कि उन्हें वापस कर दो। नेलमंगला में रेंजर ने अभी तक क्वार्टर खाली नहीं किया है। इसलिए, यह महिला यहाँ रह रही है ताकि उसके बच्चों की पढ़ाई में कोई बाधा न आए। उसने मुझसे कहा: "मंजय्या को घर आने के लिए कह दो।" उस्मानी ने शरारती मुस्कान के साथ कहा।

'क्या? उस्मानी, क्या तुम मजाक कर रहे हो?' मंजय्या ने कहा।

नहीं, नहीं साहब। मैं अपनी माँ की कसम खाता हूँ। देखिए साहब, जो हुआ सो हुआ, दोस्ती क्यों तोड़नी चाहिए? अब, भले ही उनके पति का तबादला हो गया है, फिर भी मैं उनके घर मुफ्त में लकड़ी भेजता हूँ। उसी तरह, आप उनके घर क्यों नहीं जा सकते?' उन्होंने गंभीरता से कहा और तेज़ी से अपनी साइकिल पर सवार होकर चले गए।

तुरंत मंजय्या गुस्से से आग बबूला हो गया। अरे, उसने खबर भेजी है कि मेरे पास उसके तीन बर्तन हैं। उसने वहाँ जाकर देखने का फैसला किया। वह तुरंत उठा, चेहरा धोया, बाल संवारे, इस्त्री किए हुए कपड़े पहने और साइकिल पर सवार हो गया। दोपहर के चार बज रहे थे। सरोजक्षी हॉल में बैठकर किताब पढ़ रही थी।

जब दरवाजे के पास कोई परछाई दिखी, तो वह उस तरफ मुड़ी। उसका चेहरा उत्साह से खिल उठा और उसे समझ नहीं आ रहा था कि क्या बोले। उसका चेहरा अनिश्चितता और शर्म से सिकुड़ा हुआ लग रहा था। एक पल के लिए दोनों को समझ नहीं आया कि क्या कहें।
फिर उसने कहा, 'तुमने अपनी साइकिल धूप में खड़ी कर दी है, इसे अंदर ले आओ वरना पहिए पंक्चर हो जाएंगे।' उसने उसके चेहरे की ओर देखा। 'जी हां, मैं तुम्हें ही बता रही हूं,' उसने कहा।
मुझे वापस जाना होगा।
'अगर तुम्हें वापस जाना ही था, तो तुम यहाँ क्यों आए? अब, जैसा मैं कहता हूँ वैसा करो।'
मंजय्या उसकी साइकिल अंदर लाई और उसे दरवाजे के पीछे रख दिया। वह उसके लिए पानी लाई और पूछा, 'नाश्ते में क्या खाना चाहोगे?'
नहीं, मुझे कुछ नहीं चाहिए। मैंने अभी-अभी अपना नाश्ता किया है...
'ठीक है, तो तुम यहीं खाना खाओगे, मैं तुम्हारा पसंदीदा पकवान बनाऊँगी। बताओ तुम्हें क्या पसंद है?' उसने फिर सरोजक्षी के चेहरे की ओर देखा। 'तुम मेरे चेहरे को क्यों देख रहे हो? कितने दिन हो गए जब मैंने तुम्हारे लिए खाना बनाया था। तुम आज रात यहीं रुको। मैं तुम्हें जाने नहीं दूँगी, चाहे तुम जाना भी चाहो।' सरोजक्षी खुलकर हँसी। मंजय्या को हिम्मत मिली और उसने कहा, 'ओह, अगर ऐसा है तो मैं नहीं जाऊँगी।'
लेकिन, उसने आगे कुछ नहीं कहा। सरोजक्षी को भी कुछ समझ नहीं आया। सरोजक्षी अंदर गई और पाँच मिनट बाद लौटकर बोली, 'जब भी तुम हमारे यहाँ आते थे, फूल और फल लाते थे। आज खाली हाथ क्यों आए हो?' इस चूक पर उसके माथे पर शिकन आ गई। मंजय्या ने अपनी नज़रें झुका लीं। वह उसके पास गई, उसका चेहरा अपने हाथों में लिया, फिर उठाया और बोली, 'देखो, तुम्हें यह महसूस नहीं करना चाहिए कि तुमने कोई गलती की है। आखिर तुमने किया क्या था? तुमने प्यार माँगा, जब तुम्हें वह नहीं मिला, तो तुम्हारे जैसे पुरुषों का गुस्सा होना स्वाभाविक है। मुझे उम्मीद है, अब तक तुम समझ गए होगे कि अप्पाजप्पा को गवाह के कटघरे में खड़ा न होने देना वाकई अच्छा हुआ। तुमने यह सब मुझे सबक सिखाने के लिए किया क्योंकि मैंने तुम्हारे प्यार का जवाब नहीं दिया। लेकिन एकमात्र गलती थी, इतने लंबे समय तक अपने गुस्से को दबाए रखना। क्या तुम

नहीं समझे, जब मैंने अप्पाजप्पा के साथ संदेश भेजा था कि तुम्हें खुद गहने बेचने आना चाहिए? मैंने सोचा था कि मंजय्या बहुत बुद्धिमान है।' अगर मुझे पता होता कि तुम इतने मंदबुद्धि हो, तो ये सब कुछ नहीं होता। बताओ, तुम क्यों नहीं आए? जब तक मैंने उस्मानी के ज़रिए संदेश नहीं भेजा, तब तक तुम क्यों नहीं आए?
"देखिए, उस निंगप्पा ने किसानों को उकसाया, मेरे खिलाफ झूठा मुकदमा रचा और किसानों से झूठी गवाही दिलवाई। मुझे उस ठेके के खोने का कोई अफसोस नहीं है। मेरी रोजी-रोटी के लिए मुझे उस पर निर्भर रहने की जरूरत नहीं है। लेकिन मुझे सच में बहुत दुख है कि आपने मुझे गलत समझा। यह सच है कि मुझे आप पर गुस्सा आया था। मैंने उस दिन आपको थप्पड़ मारा था, लेकिन बाद में मुझे बहुत बुरा लगा। मैं भी अप्पाजप्पा को गवाह बनाने के जोखिम को समझता था। अप्पाजप्पा के खिलाफ शिकायत मैंने नहीं करवाई थी। आपको मुझ पर विश्वास करना चाहिए," उसने कहा और उसका हाथ पकड़ लिया।
सरोजक्षी ने भी उसी मजबूती से उसका हाथ थाम लिया और एक मिनट तक चुपचाप खड़ी रही। वह अब भी सीधे उसके चेहरे की ओर नहीं देख रहा था। उसने कहा, 'उस दिन तुमने मुझसे अनौपचारिक रूप से बात की थी। क्या तुम्हें याद है? मुझे तो अच्छी तरह याद है। लेकिन आज तुमने मुझसे फिर से औपचारिक बहुवचन में बात करना क्यों शुरू कर दिया?' मंजय्या का चेहरा थोड़ा खिल उठा। सरोजक्षी बोली, 'आजकल जब भी मुझे तुम्हारी याद आती है, तो मैं कल्पना करती हूँ जैसे तुमसे बात कर रही हूँ। फिर, मैं तुम्हारे बारे में सोचती हूँ और एकवचन में ही बात करती हूँ। किसी भी तरह के अनादर के साथ नहीं। यह मेरे लिए स्वाभाविक है। देखो, जब हम साथ होते हैं, तो हमें एक-दूसरे से एकवचन में ही बात करनी चाहिए। अगर बहुवचन में बात करें, तो ऐसा लगता है कि हमारे बीच कुछ दूरी है। रिवाज के अनुसार, पुरुष को स्त्री से बड़ा होना चाहिए। लेकिन दोस्ती तब बढ़ती है जब हम बराबर उम्र के लोगों की तरह व्यवहार करते हैं। इसलिए, मुझे अच्छा लगता है जब मैं तुमसे एकवचन में बात करती हूँ। और तुम्हें भी मुझसे इसी तरह बात करनी चाहिए।'
तब तक बच्चे स्कूल से लौट चुके थे। उनके आने की आहट सुनकर सरोजक्षी मंजय्या से पाँच-छह कदम दूर हटकर दरवाजे के पास आईं और वैजयंती का स्नेह भरी आवाज़ में स्वागत किया। 'अरे, मेरी नन्ही सी बच्ची आ गई!' और शशिकांत के कंधे पर प्यार से थपथपाया। बच्चे अंदर आए और मंजय्या को देखकर आश्चर्यचकित

रह गए। उनके मन में एक धुंधली सी याद थी। बहुत दिनों बाद ये चाचा आए थे। वे अंदर चले गए। सरोजक्षी उनके पीछे गईं और उन्हें नाश्ता देकर बाहर आईं और उनके सामने कुर्सी पर बैठ गईं। मंजय्या को समझ नहीं आ रहा था कि क्या बात करें। सरोजक्षी को याद आया कि अब तक तो सिर्फ वही बात कर रही थीं। लेकिन अब उन्हें भी कोई विषय सूझ नहीं रहा था। जब शशिकांत नाश्ता करके बाहर आया, तो सरोजक्षी ने उसे बुलाया और कहा, 'शशि प्यारे, क्या तुम एक किलो मांस लाओगे? आज चाचा आए हैं, चलो उनके लिए कोई खास पकवान बनाते हैं।'
'अरे नहीं, अम्मा। मुझे बाहर जाकर खेलना है!'
उसने अपने बेटे को प्यार से समझाया, 'नहीं बेटा, मेरे लिए पैसे ले आओ और फिर जाकर खेलो। क्या तुम्हें पुलाव नहीं चाहिए?' और अंदर जाकर पैसे ले आई और लड़के को दे दिए। वैजयंती खेलने के लिए पड़ोस के घर चली गई।
सरोजक्षी अंदर खाना बना रही थी। बच्चे गली में दूसरे बच्चों के साथ खेल रहे थे। मंजय्या हॉल में कुर्सी पर अकेला बैठा था। उसका मन सरोजक्षी के स्पर्श की यादों से भरा हुआ था। वह अकेली थी... उसकी बराबरी कोई नहीं कर सकता था और उसने खुद उसे रात वहीं रुकने के लिए कहा था। इस आश्वासन ने उसके मन को भर दिया। उसकी झिझक कम हो गई। अंधेरा छाने लगा था। वह बाहर आई, बत्ती जलाई और अंदर चली गई। बच्चे अंदर आए, हॉल में उस खंभे के पास बैठ गए जहाँ मंजय्या बैठा था, और पढ़ने-लिखने और अपना होमवर्क करने लगे। वह बच्चों को देख रहा था। लड़का सुंदर था और वह छोटी लड़की उतनी ही प्यारी और मनमोहक थी जितनी उसने किसी फिल्म में देखी थी। खाना पकाने की खुशबू पूरे घर में फैल गई। मंजय्या को लगा कि इससे पहले 'संतोष रेस्टोरेंट' बेकार था। कुछ देर बाद सरोजक्षी ने बच्चों को रसोई में बुलाया और उन्हें खाना परोसा। फिर चांदी की थाली में खाना लाकर उसे चायदानी पर रख दिया। उसने भी उसके सामने बैठकर खाना खाया। वह अंदर गई, बच्चों को सुलाया, बाहर आई और बोली, 'चलो, आओ और सो जाओ।' उसने उसके चेहरे की ओर देखा। उसने बड़ी सहजता से कहा, 'तुम्हारा बिस्तर तैयार है।' वह उठा और अंदर चला गया। उसने सामने का दरवाजा बंद किया, कुंडी लगाई, लाइट बंद की और उसके पीछे-पीछे चली गई। बच्चे एक कमरे में सो रहे थे। दूसरे कमरे में वन विभाग की लकड़ी से बना एक बड़ा डबल बेड था, जिस पर आरामदायक गद्दा था। उस पर डबल साइज का मच्छरदानी लगा हुआ था। सब कुछ एकदम साफ-सुथरा था। पलंग के बगल में

पान के पत्तों से भरी एक थाली रखी थी। उसने बच्चों के कमरे का दरवाजा बंद किया, मंजय्या के कमरे में आई और उसका दरवाजा भी बंद कर दिया और पूछा, 'क्या तुम कमीज और कोट पहनकर सोते हो?' उसने अपना कोट और कमीज उतार दी, उसने उन्हें हैंगर पर टांग दिया, उसका हाथ पकड़ा और उसे मच्छरदानी के अंदर ले गई, पर्दे के किनारों को बिस्तर के नीचे जोड़ दिया, अपना सिर उसकी गोद में रखा, उसे गले लगाया और बोली, 'देखो, उस दिन तुमने मुझे थप्पड़ मारा था और चले गए थे।' क्या बिना किसी अधिकार के इस तरह मारना संभव था? मेरे साथ भी ऐसा ही हुआ था। मैंने भी तुम्हें थप्पड़ मारा था। क्या तुम्हें लगा कि मैंने बिना किसी अधिकार के तुम्हें थप्पड़ मारा था? अब इस बात को समझ लो। तुम्हारा अधिकार मुझमें है और मेरा तुममें। क्या तुम्हें पता है कि मैं तुम्हें कितना याद करता हूँ और तुम्हारे लिए कितना तड़पता हूँ? अब बताओ, तुम क्यों नहीं आए?
वह नीचे झुका और उसे गले लगा लिया, लेकिन कुछ बोल नहीं पाया। उसने उसे फुसलाते हुए कहा, 'अरे, मेरे मंजू, बोलो, बोलो मेरे स्वामी।' वह उत्तेजित हो गया। तुरंत ही उसने कहा, 'अरे, तुम बड़े शरारती हो, तुम्हारा दिमाग तुरंत उस तरफ चला जाता है, जबकि मैं चाहती हूं कि हम एक-दूसरे को गले लगाकर बात करें। तुम्हें मेरे सभी सवालों के जवाब देने होंगे। मैं तुम्हारे हर सवाल का जवाब दूंगी। चलो, मुझे अपना हाथ दो।' उसने अपना दाहिना हाथ उसके दाहिने हाथ में रखा, दबाया और कहा, 'मैं तुमसे वादा करती हूं। तुम्हें मुझसे झूठ नहीं बोलना चाहिए, मैं तुमसे झूठ नहीं बोलूंगी। उस दिन, तुम्हें याद है? मैंने तुमसे पूछा था कि तुमने कितनी महिलाओं का शिकार किया है?' मेरा इरादा न तो तुम्हें ताना मारने का था और न ही तुम्हें दोष देने का। हां, यह इस बात की सराहना थी कि मेरा मंजू एक सच्चा मर्द था, उस पौरुष के बिना कोई इतनी महिलाओं का शिकार नहीं कर सकता था। अचानक तुम गुस्से में आ गए और मुझसे पूछा, "कितनी महिलाओं के साथ सोए? तुम्हारे दोनों बच्चों का बाप कौन है?" देखो, मैं तुम्हारे सवाल पर नहीं, बल्कि तुम्हारे पूछने के तरीके पर गुस्सा हूं। क्या तुम समझते हो? अगर समझते हो तो “हाँ” कहना होगा। बच्चों को कहानियाँ सुनाना भी मुमकिन नहीं, अगर कोई प्रतिक्रिया न मिले। तुम्हारी प्रतिक्रिया के बिना क्या मैं अपना दिल खोलकर तुम्हारे सामने सब कुछ कह सकता हूँ? चलो, “हाँ” कहो। उसने उसके चेहरे की ओर देखा। मंजय्या ने कहा, “हाँ, बताओ।” “नहीं, ऐसे नहीं, यह काफ़ी नहीं है, तुम्हें कहना होगा, ‘अरे, तुम्हें मुझे बताना ही होगा। मुझे सुनना ही होगा। अगर नहीं

बताओगे तो मैं तुम्हें लात मारूँगी, तुम्हारी हड्डियाँ तोड़ दूँगी।' कहो ना, कहोगे या नहीं?" उसने उसे ज़बरदस्ती कहा।
वह भी गुस्से में आ गया, 'अरे मुझे बताओ, नहीं तो मैं तुम्हारी हड्डियां तोड़ दूंगा।'
अगर ऐसा है, तो सुनो, तुम्हारे और मेरे बीच कोई राज़ नहीं है। देखो, अब तक मैंने किसी को नहीं बताया कि मैंने क्या किया है। यह पहली बार है। मैं तुम्हें बताऊंगी। बाद में तुम्हें भी मुझे अपनी कहानी बतानी होगी। क्या तुम्हें कभी एहसास हुआ है कि अगर कोई औरत किसी दूसरे मर्द के साथ किए अपने किए के बारे में बताने का फैसला करती है, तो कितना भरोसा चाहिए होता है? इतनी सारी औरतों के अनुभव से तो तुम्हें पता ही होगा। मेरे पड़ोसियों को पता है कि तुम आज यहाँ आई हो, अपनी साइकिल अंदर रखी है और आज रात यहीं रुकी हो। शायद वे तुम्हें जानते हैं और तुम्हारी प्रतिष्ठा भी जानते हैं। बहुत से लोग उस कंथामणि के घर तुम्हारे आने-जाने के बारे में जानते हैं। फिर भी, अगर मैंने तुम्हें यहाँ रात रुकने के लिए कहा है और हिम्मत करके अपने घर में रखा है, तो बताओ, यह हिम्मत कहाँ से आई? बताओ कहाँ से?
'प्यार से,' उसने कहा और पहली बार उसे चूमा।
'नहीं, यह महज़ प्रेम से संभव नहीं है। यह विश्वास से संभव है। पूर्ण आपसी विश्वास के बिना प्रेम का कोई अर्थ नहीं है। तुम यह समझते हो। चलो, लेटकर बातें करते हैं, हमारे बीच कुछ भी नहीं होना चाहिए, नहीं, कपड़े भी नहीं।' उसने स्वयं उसके सारे कपड़े उतार दिए। नग्न लेटे हुए वह शर्मिंदा था, उसका चेहरा पीला पड़ गया था। उसने कहा, 'अरे, तुम तो एक अनुभवी शेर हो जिसने सैकड़ों स्त्रियों को नंगा किया है और स्वयं उनके सामने नंगा हुआ है। तुम्हें इस तरह शर्मिंदा क्यों होना चाहिए? अगर तुम्हें अकेले नग्न होने में शर्म आती है तो मेरे कपड़े भी उतार दो।' लेकिन उसने उसके कपड़ों को हाथ नहीं लगाया। 'अहा, मेरा छोटा सा कितना शर्मीला है!' वह पास आई, उसे चूमा, अपने सारे कपड़े उतार दिए और बोली, 'देखा? हम दोनों को हमेशा ऐसे ही रहना चाहिए, सदा-सदा, अपनी मृत्यु तक। चलो लेट जाओ,' उसने कहा और उसे बिस्तर पर लिटा दिया, उसे कसकर गले लगाया और बोली: 'यह प्रकाश आँखों को भेदता है, है ना?' मैं इसे टाल देती हूँ, रुको,' उसने बिस्तर का स्विच दबाया और कमरा अंधेरा हो गया। उसे थोड़ा आराम महसूस हुआ। फिर वह बोली, 'देखो, मैं पहले अपनी कहानी का हिस्सा बता दूँ। अप्पाजप्पा के अलावा, मुझे सिर्फ़ दो और पुरुषों का अनुभव है। अप्पाजप्पा मेरे

पति हैं, इसलिए उन्हें छोड़ दो।' उसने धीरे-धीरे लक्कप्पा और सुब्बय्या से जुड़ी घटनाओं का वर्णन किया। उसने अपने पति के निलंबन के संबंध में सुब्बय्या से हुई अपनी मुलाकात के बारे में बताया और अप्पाजप्पा को नेलमंगला स्थानांतरित करने के सुब्बय्या के इरादे के बारे में भी बताया। उसने आगे कहा, 'मुझे पक्का नहीं पता कि शशिकांता अप्पाजप्पा की है या लक्कप्पा की। लेकिन वैजयंती के जन्म से पहले ही मुझे यकीन था कि वह सुब्बय्या की है और मैंने उसे बताया भी था। लेकिन, इस बार मुझसे बात करते समय, ऐसा लगा जैसे उसे यह याद ही नहीं था। क्या किसी स्त्री के लिए ऐसे पुरुष के प्रति घृणा महसूस करना काफ़ी नहीं है? क्या मैं उससे उसकी ज़िम्मेदारी उठाने के लिए कहती? या क्या मैं उससे उसके लिए पैसे या कपड़े माँगती?' आप उसका क्या नाम रखेंगे, अगर आपको यह पूछना भी याद नहीं रहा कि वह लड़का है या लड़की, आपने क्या नाम चुना, क्या आप मुझे नहीं बताएंगे – अगर ये सब बातें आपके दिमाग में कभी आती ही नहीं, तो आप उसे क्या नाम देंगे? मुझे बताइए आप उसे क्या नाम देंगे?' सरोजक्षी चुप हो गईं। चारों ओर सन्नाटा छा गया। दस मिनट तक वह उस खामोश अंधेरे में अकेली रहीं, फिर अचानक उन्होंने उसे गले लगाया, कसकर पकड़ लिया और अपनी कहानी सुनाना शुरू किया। 'देखो मंजू, इन दो के अलावा मैंने किसी और पुरुष को नहीं जाना। जब तक मैंने तुम्हें नहीं देखा था, मेरे मन में असली पुरुष की कोई अवधारणा ही नहीं थी। जैसे ही मैंने तुम्हें देखा, मेरे मन में आया, हाँ, यही सच्चा पुरुष है, शुद्ध पुरुष, क्या तुम जानते हो कि मेरे मन में कितनी बेचैनी थी? तुम्हारे साथ रहने की, हमेशा के लिए तुम्हारे साथ रहने की। ओह। तुम्हारे पास महिलाओं की कोई कमी नहीं है। सैकड़ों हैं। लेकिन सरोजक्षी के लिए सुलभ होने में तुम्हें इतने दिन लग गए। अब बताओ, इन दिनों तुमने क्या किया? मुझे सब कुछ बताओ। तुम्हें ईमानदारी से बताना होगा। मैं अपनी कसम खाती हूँ।' मैंने आपको ये सब इसलिए बताया क्योंकि मुझे भरोसा था कि आप मुझे किसी नैतिक पैमाने पर नहीं परखेंगे, ठीक वैसे ही जैसे मैं आपको किसी पैमाने पर नहीं तौलती। मुझे सौ महिलाओं के विवरण में कोई दिलचस्पी नहीं है। बेशक, विवरण में क्या है? लेकिन आपने ये सब क्यों किया? इसकी शुरुआत कैसे हुई और ये सब कब हुआ था? आपने उन महिलाओं में क्या खोजा? क्या आपको मुझमें कुछ नया, कुछ अलग दिखा? हाँ, सच, आपको मुझे सच ही बताना होगा। क्या आप जानते हैं कि मैं इतनी ज़ोर देकर सच क्यों पूछ रही हूँ? आज शाम आपने कहा कि निंगप्पा ने किसानों को उकसाया

और उनसे झूठी गवाही दिलवाई। मुझे पता है ये झूठ है। आपको भी पता है। लेकिन आपने ऐसा क्यों कहा? अगर तुमने खुलकर कहा होता: "हाँ, मैं तुम्हें सबक सिखाना चाहता था, इसलिए मैंने ऐसा किया!" तो मैं क्या करता? मैं तुम्हारी हिम्मत की सराहना करता और उसे स्वीकार करता। मैं तुम्हारे सामने आत्मसमर्पण कर देता। तुम्हें यह भी बताने की ज़रूरत नहीं है। तुमने कितनी ही औरतें देखी हैं, कितनी ही के साथ सोया है। उनमें तुम्हें क्या नहीं मिला, जो तुम्हें इस सरोजा में मिला? मुझे शुरू से ईमानदारी से बताओ, मैं सुनना चाहता हूँ।

मंजय्या मन ही मन सोचने लगा। आखिर वह इतनी सारी स्त्रियों के साथ क्यों जा रहा था? वह उनमें से हर एक में क्या खोज रहा था? सरोजा के पूछे इस सवाल ने उसके मन में त्रिशूल की तरह चुभन पैदा कर दी। लेकिन उसे जवाब नहीं मिल रहा था। सरोजा, जो काफी देर से अंधेरे में चुपचाप लेटी हुई थी, बोली, "अभी बताने की जरूरत नहीं है। कल बता देना, परसों बता देना, या रात में, परसों, या किसी और दिन। तुम्हें अपने स्थान पर जाने की कोई मजबूरी नहीं है। पुत्तेल्लैया और पुरदम्मा हैं, जो तुम्हारे घर और जमीन की देखभाल करते हैं। एक समस्या है जो मुझे तुम्हें बतानी है। मैं यह तुम्हें दुविधा में डालने के लिए नहीं कह रही हूँ। यह एक सच्चाई है।" उसने अपना नग्न शरीर उससे सटाया, उसे ऐसे गले लगाया जैसे निचोड़ रही हो, उसे गहराई से चूमा और बोली, "क्या तुम मुझ पर विश्वास करते हो? तुम पर कोई नैतिक या बाध्यकारी बात नहीं है। मैं तुम्हें अपनी समस्या बताती हूँ: मैं नेलमंगला चली जाऊँगी।" सुब्बय्या वहाँ आता है। वह मुझे बैंगलोर जाने के लिए कहता है। ज़रूर कहेगा। वह मुझसे बैंगलोर में मिलने की उम्मीद करता है। इसमें उसकी कोई गलती नहीं है। तीन साल तक हमारी इतनी अच्छी दोस्ती रही, तो एक तरह का अधिकार भाव विकसित हो गया था। क्या मैं उस अधिकार के बिना उसके पास जाकर अपने पति का निलंबन रद्द करने के लिए कह सकती थी? अगर वह न होता और कोई दूसरा अधिकारी होता, तो क्या मुझमें उससे मिलने की हिम्मत होती? वह मुझे बैंगलोर बुलाता है। मैं क्या करूँ? अगर मैं उससे कहूँ कि वह मुझे मजबूर न करे, तो मैं मन बना लेती हूँ कि वह इतना बुरा इंसान नहीं है कि मेरे पति को नुकसान पहुँचाए। मुझे पूरा यकीन है। लेकिन मुझे एक पुरुष पर भरोसा करना है, एक पुरुष के सहारे की ज़रूरत है। मेरे पति अप्पाजप्पा, छह फुट लंबे, बंदूक लिए हुए, मुझे घने जंगल में सुरक्षा दे सकते हैं। लेकिन वह भावनात्मक रूप से मेरा सहारा नहीं बन सकते। इसलिए सुब्बय्या की दोस्ती को ठुकराना मेरे लिए मुमकिन

नहीं है। लेकिन मेरा मन तुम्हारे बारे में सोच रहा है। मेरे लिए तुम ही हो, एकमात्र पुरुष।' वह उसके पास आई, उसे ज़ोर से चूमा, अपने होंठ उसके कानों के पास ले गई और फुसफुसाते हुए बोली, 'ओह मंजू, क्या तुम जानती हो कि मैं क्या महसूस करती हूँ? मैं अप्पाजप्पा से झूठ क्यों बोलूँ? वह न सच सुनता है, न झूठ। फिर भी, उसके खाने पर जीकर, खुद को उसकी पत्नी कहकर, किसी और से प्रेम करके, मैं झूठ का जीवन क्यों जीऊँ? मैं तुम्हारे घर आऊँगी, तुम्हारे लिए खाना बनाऊँगी, तुम्हारे कपड़े धोऊँगी और इस तरह, क्या तुम समझे 'इस तरह' का मतलब है कैसे? मैं वहीं रहकर तुम्हारी सेवा करूँगी। मैं तुम्हारी कसम खाती हूँ। लेकिन कोई दूसरी औरत मेरे घर में नहीं आनी चाहिए। तुम जिस औरत को चाहो, उसे अपने जंगल वाली झोपड़ी में बुला सकते हो। हसन, चन्नारायपट्टाना या किसी भी दूसरी जगह पर जितनी चाहो उतनी औरतें रख सकते हो। मैं उस पुरुष को क्यों रोकूँ जिसमें राज करने की शक्ति है? मैं इस मामले में कभी ईर्ष्या नहीं करूँगी और न ही झगड़ा करूँगी।' देखो, मुझ जैसी स्त्री को कभी उतनी ईर्ष्या, शंका, पाप या अपराध का बोध नहीं होगा जितना उस स्त्री को होता है जो परिवार के बंधन में, एक पवित्र स्त्री के बंधन में रहती है। जहाँ तक मेरे बच्चों की ज़िम्मेदारी की बात है, मैंने ही उन्हें जन्म दिया है। अप्पाजप्पा उनके कानूनी पिता हैं, है ना? वही उनके खर्चे संभालते हैं। क्या तुम्हें पता है कि वह मुझ पर कितना निर्भर हैं क्योंकि मैं उनके साथ हूँ और उनका सहारा हूँ? मैं अपने बच्चों का पालन-पोषण उनकी तनख्वाह से कर रही हूँ। जब मैं उन्हें छोड़कर तुम्हारे साथ रहने लगूँगी, तो मैं अपने बच्चों का पालन-पोषण उनकी कमाई से क्यों करूँ? मैं तुम पर भी बोझ नहीं डालूँगी। दस साल पहले मुझे अपनी नानी के परिवार से अच्छी-खासी रकम मिली थी। मैंने उसे चक्रवृद्धि ब्याज योजना के तहत बैंक में निवेश किया था। अब वह मूल मूल्य से तीन गुना हो गई है। मुझे सालाना इतना ब्याज मिलेगा जो मेरे बच्चों के भरण-पोषण और शिक्षा के लिए पर्याप्त होगा। नहीं, मैं तुम पर ज़रा सा भी बोझ नहीं डालूँगी। मेरे लिए इतना ही काफी है कि हम दोनों साथ रहें। 'तुम मेरे लिए और मैं तुम्हारे लिए।' उसने कहा और अपने नग्न शरीर का पूरा भार उस पर डाल दिया, आराम से लेट गई। फिर उसने कुछ नहीं कहा। वह चुपचाप सुन रहा था। लगातार बोलते-बोलते वह थक गई थी। उसने बस अपनी आँखें बंद कर लीं और उसे नींद आने लगी। पाँच-छह मिनट बाद जब वह उठी, तो बोली, 'अरे, मैं कितनी मूर्ख औरत हूँ। हम दोनों की खुशी की चाह में, यहाँ बिस्तर बिछा रही हूँ, ओह,

कितने लंबे समय से चाह रही थी। मैंने सब कुछ एक ही साँस में कह दिया। अगर मैं कल बोलती तो क्या खोती? इसीलिए कहते हैं कि औरतें बुद्धिमान नहीं होतीं। मंजू, मेरे प्यारे मंजू, तुम्हें मुझे डाँटना चाहिए। तुम्हें कहना चाहिए, "अरे मूर्ख औरत। मैं तुम्हें लात मारूँगी और तुम्हारी हड्डियाँ तोड़ दूँगी" और तुम्हें भी मुझे लात मारनी चाहिए। आओ मंजू, आओ मेरे स्वामी,' उसने कहा और उसे गले लगा लिया। मानो उसने अपने सारे भाव उड़ेल दिए हों, उसने उसके माथे, आँखों, होंठों, छाती, गर्दन, नाभि और शरीर के हर हिस्से पर चूमा। उसने अपने स्पर्श को अपनी कल्पना के अनुरूप उत्तेजक बना दिया। लेकिन मंजय्या ऐसे अकड़ गया जैसे ठंड से जम गया हो। उसने बार-बार 'मंजू, मंजू' पुकारा, उसे गर्माहट दी, अपने शरीर की गर्मी दी, लेकिन मंजू पर कोई असर नहीं हुआ। 'क्यों?' उसने अपने होंठ उसके कानों के पास लाकर पूछा। उसने कोई जवाब नहीं दिया। थोड़ी देर बाद उसने कहा, 'मंजू, परेशान मत हो। अगर मन साथ न दे तो पुरुषों के लिए मुमकिन नहीं होता। मैं समझती हूँ। गलती मेरी है।' यह कहकर वह करवट बदलकर चुपचाप लेट गई।

फिर दस मिनट बीत गए। तब उसने कहा, 'शशिकांत आमतौर पर रात में एक बार जागकर शौचालय जाता है। हो सकता है वह जाग जाए, बत्ती जला दे और मुझे ढूंढते हुए आ जाए। मैं जाकर उस कमरे में सो जाती हूँ। तुम भी थोड़ी देर सो लो। बच्चों के स्कूल जाने के बाद कल बात करते हैं।' वह उठी और बत्ती जला दी। उसे बहुत शर्मिंदगी महसूस हुई, उसने अपने पैरों के पास पड़ी चादर को अपने ऊपर खींच लिया। उसने अपने सारे कपड़े करीने से पहने, मच्छरदानी का किनारा बिस्तर के नीचे दबाया और चली गई। सरोजक्षी ने दूसरे कमरे का दरवाजा खोला और वैजयंती के साथ लेट गई, लेकिन उसे नींद नहीं आई। थोड़ी देर बाद शशिकांत जाग गया। वह उसे बाथरूम ले गई, वापस आई और बिस्तर पर चली गई। काफी देर बाद भी उसे नींद नहीं आई। बाहर सन्नाटा था। घर के अंदर भी सन्नाटा था। बच्चे गहरी नींद में सो रहे थे। उसने मंजय्या के कमरे से बिस्तर की सरसराहट की आवाज सुनी। उसने सोचा कि मंजय्या करवटें बदल रही है। उसने उठकर उस कमरे में जाने का सोचा, लेकिन उसके अंदर एक अजीब सी बेचैनी महसूस हुई। उसे शक था कि वह उसकी तरह खुलकर बात नहीं करेगा। जब वह सोच ही रही थी, तभी उसे सामने के दरवाजे की कुंडी खींचने की आवाज़ सुनाई दी। वह तुरंत उठी, हॉल में आई और लाइट जला दी। मंजय्या सज-धज कर

चुपचाप दरवाजा खोल रहा था। उसे बहुत गुस्सा आया। लेकिन ज़रा भी गुस्सा न दिखाते हुए, वह मुस्कुराई और बच्चों के सुनने से बचने के लिए धीरे से बोली, 'अरे मंजू, तुम इस तरह चुपके से बाहर क्यों जा रही हो? इधर आओ।' उसने दरवाजा बंद कर दिया, लाइट बंद कर दी, उसका हाथ पकड़ा और उसे अंधेरे में फिर से उस कमरे में खींच ले गई जहाँ वह बड़ा पलंग था और वे लेटे हुए थे। वह बेबस होकर उसके पीछे-पीछे चला गया। पहले की तरह उसने उसे पलंग पर बिठाया, अंधेरे में उसके कपड़े उतारे, उसे पलंग पर लिटाया, खुद भी कपड़े उतारे, उसे गले लगाया और पूछा, 'देखो, मैंने जो कहना था कह दिया। अब तुम जो चाहो कहो, इतने चुप क्यों हो?'

मंजय्या चुप रही। उसने दोनों हाथों से उसका चेहरा पकड़ा, हिलाया और पूछा, 'मंजू, तुम्हें बोलना ही होगा, बच्चे सुबह होने तक नहीं उठेंगे, चाहे तुम परमाणु बम ही क्यों न दाग दो। चिंता मत करो। अपने मन की बात कहो। हाँ, बोलो। मैं तुमसे यह अपेक्षा नहीं करती कि तुम मेरी हर बात मानो। मैंने तुमसे सिर्फ इसलिए कहा है ताकि हम अपने रिश्ते को स्पष्ट कर सकें। बस इतना ही। देखो, तुम समझ सकते हो कि सुब्बय्या ने अप्पाजप्पा का तबादला नेलमंगला क्यों करवाया है। वहाँ से बैंगलोर के लिए अनगिनत नियमित बसें और सिटी बसें चलती हैं। यह पास होगा और मेरे लिए नेलमंगला से बैंगलोर आना-जाना आसान होगा। लेकिन वह कोई दुष्ट व्यक्ति नहीं है। अगर मैं उसकी योजना से सहमत न होऊं तो वह मेरे पति को नुकसान नहीं पहुंचाएगा। लगातार तीन साल तक वह मेरे साथ बहुत दोस्ताना रहा। इसके अलावा उसने मुझे वैजयंती जैसी प्यारी बच्ची दी है। फिर भी मेरा मन तुम पर ही अटका है। मुझे उसके साथ सोने में घिन आती है। एक साल से ज्यादा हो गया है जब तुमने मुझे मारा और चले गए। शायद तुम भूल गए हो।' लेकिन मुझे दिन, तारीख और महीना सब याद है। कहते हैं कि ऐसी बातों में औरतों की याददाश्त ज़्यादा सटीक होती है। 'मेरे मंजू, ये हाथ...' उसने कहा, उसका दाहिना हाथ टटोला, उसे अपने होठों तक लाया, दस बार होठों से दबाया ताकि हाथ गीला हो जाए और बोली, 'इस हाथ के सिवा और किस हाथ को मुझे मारने का अधिकार है? अरे, मुझे फिर मारो, मेरे नन्हे। कम से कम मजे के लिए ही सही, मुझे फिर मारो,' उसने कहा, उसका हाथ पकड़ा और उसी से अपने गाल पर मारा। वह रबर की गुड़िया की तरह अकड़ा हुआ था। उसने उसे पास खींचा और बोली, 'छोड़ो, देखो मैं तुम पर बोझ नहीं बनूंगी। मैं यहाँ सिर्फ तुमसे मिलने के लिए रुकी थी।

अगर मैं कहूँ कि बच्चों के स्कूल जाने के लिए यहाँ रहना सुविधाजनक होगा या कोई और वजह बताऊँ, तो अप्पाजप्पा मुझे नेलमंगला जाने के लिए मजबूर नहीं करेंगे। सब कुछ मेरी मर्जी के मुताबिक है। मैं यहाँ की मालकिन हूँ। अगर तुम्हें कभी भी लगे कि मैं तुम पर बोझ हूँ, तो मैं अप्पाजप्पा को पत्र लिखकर मुझे नेलमंगला भेजने के लिए कह दूँगी।' उससे पहले, एक बात, मंजू। अगर तुम "हाँ" कहोगे तो मैं तुम्हें बता दूँगी। "हाँ" कहो। तुम्हें "हाँ" कहना ही होगा। नहीं तो देखो यहाँ,' उसने धीरे से उसके गाल पर थप्पड़ मारा और चूमा। उसने गुफा से आती हुई धीमी आवाज़ में "हाँ" कहा। "मुझे इसे व्यक्त करने में शर्म आती है। लेकिन तुम इतने समझदार हो कि समझ जाओगे," उसने कहा और अपना सिर उसकी छाती पर रख दिया। मंजय्या चुप रहा। "अरे मूर्ख मंजू, क्या मुझे तुम्हें यह भी बताना चाहिए? क्या तुम जानती हो कि मेरा प्यार तुम्हारे लिए कितना गहरा है? मुझे नहीं पता तुम्हारे साथ कैसा है। लेकिन मैं तुम्हें याद किए बिना एक घंटा भी नहीं रह सकता। एक महीने के अंदर मैं नेलमंगला जा रहा हूँ। मैं उस दौरान तुमसे एक बच्चा चाहता हूँ – बिल्कुल तुम्हारे जैसा सुंदर और शरारती। मुझे ऐसा बेटा दो कि जब वह बड़ा होकर जवान हो जाए, तो उसे देखने वाली हर औरत उस पर मोहित हो जाए।" 'मेरे लिए इतना ही काफी है।' उसने उसे हाथों और पैरों से कसकर पकड़ लिया और बोली, 'मंजू, मेरे लिए इतना ही काफी है। क्या तुम जानते हो, स्त्री के लिए प्रेम का प्रतीक बच्चा होता है, ठीक वैसे ही जैसे उसका प्रिय पुरुष। लेकिन पुरुषों के साथ ऐसा नहीं है। उनके लिए ऐसा कोई बंधन नहीं होता।' वह उत्तेजित हो गई और उसे उकसाने लगी। लेकिन वह अब भी निष्क्रिय और गतिहीन था। उसकी आत्मा सूख गई थी और एक गहरे अंधकार में डूब गई थी। काफी देर तक उसने उसे इसी तरह गले लगाया। लेकिन धीरे-धीरे उसकी उत्तेजना कम होती गई। अचानक वह सिसक-सिसक कर रोने लगी। उसकी आँखों में आँसू भर आए, जो उसके कंधे और तकिए पर बहने लगे। उसे समझ नहीं आ रहा था कि उसे दिलासा दे या नहीं। वह खुद उससे दूर हट गई, अपना चेहरा तकिए पर रख लिया और ऐसे रोई जैसे उसके पूरे शरीर के अंदर से दबाव आ रहा हो। फिर आवाज़ की परवाह न करते हुए, उसने अपना मुँह खोला और आठ-दस बार ज़ोर-ज़ोर से रोई जैसे अंदर से कोई आवाज़ निकल रही हो। फिर वह शांत हो गई और धीरे-धीरे स्थिर हो गई। वह कुछ देर तक लेटी रही। सन्नाटा, पूर्ण सन्नाटा। ऐसा लग रहा था मानो मंजय्या ने ऐसा सन्नाटा पाल रखा हो कि साँस की आवाज़ भी बाहर नहीं निकल पा

रही हो। कुछ समय बीत गया। सरोजक्षी ने अचानक पलंग का स्विच ऑन कर दिया। आँखों को चौंधिया देने वाली तेज़ रोशनी पूरे कमरे में फैल गई। उस रोशनी के साथ ही उसकी आँखों, दाँतों और बालियों की चुभती हुई चमक भी थी। मंजय्या ने अपनी आँखें बंद कर लीं। उसे शर्म आ रही थी और उसने अपने पैरों के पास कंबल खींच लिया। सरोजक्षी ने कंबल हटाकर मच्छरदानी के किनारे से नीचे फेंक दिया। वह भी पूरी तरह नग्न होकर पलंग के किनारे बैठ गई और बोली, "जिन पुरुषों में पौरुष नहीं होता, वे अपनी शक्ति का अधिक बखान करते हैं। ऐसे ही लोग अपनी शक्ति के बारे में मनगढ़ंत कहानियाँ बनाते हैं और उन्हें फैलाते हैं। प्रकृति और रूप धोखा देते हैं। जिस दिन से मैंने तुम्हें देखा है, मेरे मन ने मुझसे झूठ बोला, मेरे मन में यह भ्रम पैदा किया कि तुम सचमुच एक मर्द हो। अब, मेरा भ्रम पूरी तरह टूट गया है। दरअसल, तुम्हारी पत्नी ने तुम्हें इसलिए छोड़ा होगा क्योंकि तुममें मर्दानगी नहीं है, क्योंकि तुम नपुंसक हो।" चूंकि वह एक नेक महिला है, इसलिए शायद उसने यह बात किसी को नहीं बताई होगी। इसे जाने दो। उठो, कपड़े पहनो, अपनी साइकिल लो और निकल जाओ। मुझे यह धोखे का रिश्ता नहीं चाहिए।' उसने अपने कपड़े उठाए जो उसने पलंग पर फेंके थे और उस कमरे में चली गई जहाँ बच्चे सो रहे थे।

मंजय्या ऐसे लेटा हुआ था मानो उठने की भी ताकत न बची हो। उसे ऐसा लग रहा था जैसे उसका पूरा शरीर लकवाग्रस्त हो गया हो। उसके शरीर का हर अंग, हाथ-पैर, बांहें और जांघें, उसकी इच्छा का पालन करने की शक्ति खो चुके थे। उसका दिमाग पानी में भीगे पतले कागज की तरह धंसा हुआ था। उसने अपने पूरे जीवन में कभी ऐसी स्थिति का सामना नहीं किया था। वह लेटा रहा। बत्ती जल रही थी। थोड़ी देर बाद वह अचानक डर गया: कहीं वह फिर से इस कमरे में न आ जाए! डर से उसका तंत्रिका तंत्र उत्तेजित हो गया। अचानक वह उठ खड़ा हुआ। उसने फर्श से अपने कपड़े उठाए, जल्दी से पहने, हॉल में आया और बत्ती जला दी। आधे मिनट के भीतर उसने कुंडी खींची, चप्पलें पहनीं और साइकिल को धक्का देकर बाहर निकल गया। उसे पीछे मुड़कर देखने से डर लग रहा था, कहीं वह आकर वहां खड़ी न हो जाए। वह दरवाजा बंद करना भी भूल गया। वह साइकिल पर चढ़ा और तेजी से पैडल मारने लगा मानो उसकी अब तक रुकी हुई ताकत अचानक लौट आई हो।

एक दिन सुबह दस बजे लक्कू गली से गुज़री और अपनी दुकान के सामने खड़ी बस में चढ़ गई। वह चिल्लाई, मानो आदेश दे रही हो, 'अरे ड्राइवर, चलना शुरू करो। देर मत करो, जल्दी चलाओ।' न सिर्फ ड्राइवर और कंडक्टर, बल्कि बस में बैठे यात्री भी डर गए। उसके बाएं हाथ की मुट्ठी में निचोड़ा हुआ मांस जैसा कुछ था, जिस पर खून का धब्बा काला पड़ रहा था। कोई नहीं जानता था कि वह क्या था। उसके दाहिने हाथ में पकड़ी हुई दरांती भी खून से सनी थी। खून की बूँदें उसकी साड़ी की तहों पर गिरी थीं और सूख रही थीं। बस में कई यात्री बिलिकेरे के थे। उनमें से दो ने पूछा, 'अरे लक्कू, क्या बात है?' 'अरे, तुम कौन होते हो मुझसे स्पष्टीकरण मांगने वाले? अरे, तुम ड्राइवर, बस को सीधे चन्नरायपट्टाना पुलिस स्टेशन ले जाओ और उसके सामने रोक दो। अगर तुमने इसे इधर-उधर मोड़ा, तो मैं इस दरांती से तुम्हारा सिर काट दूंगी, देखो,' उसने कहा और दरांती उठा ली। लेकिन उसने अपनी बाईं मुट्ठी नहीं छोड़ी। लक्कू का चेहरा देखकर हर कोई सोचता था कि वह पागल हो गई है। ड्राइवर समझ गया कि उसने कोई घिनौना काम किया है और तुरंत बस में चढ़ गया। हालांकि, ऐसी स्थिति में पुलिस को सूचना देना उसका कर्तव्य था। अब वह खुद उससे बस को पुलिस स्टेशन ले जाने की मांग कर रही थी। इसलिए ड्राइवर ने कंडक्टर को भी यही इशारा किया और बिना किसी को उतारे या चढ़ाए बस को सीधे चन्नरायपट्टाना की ओर चला दिया। बस में बैठे सभी यात्री एक-दूसरे को देख रहे थे, सबके चेहरों पर डर और घबराहट साफ झलक रही थी।

जैसे ही बस थाने के सामने रुकी, लक्कू अपने बाएं हाथ में वह चीज़ और दाहिने हाथ में दरांती लिए नीचे उतरी और थाने की ओर दौड़ी। दरवाज़े पर खड़े कांस्टेबल ने उसे रोकने की कोशिश की और कहा, "अरे, कौन हो? रुको, यहीं इंतज़ार करो।" लेकिन लक्कू चिल्लाते हुए अंदर घुस गई, "अरे, जल्दी से उस इंस्पेक्टर को बुलाओ। मैं यहाँ इंतज़ार करने नहीं आई हूँ। मैं रिपोर्ट करने आई हूँ।" इंस्पेक्टर

नारायण मूर्ति उसे देखते ही तुरंत खड़े हो गए। लक्कू ने अपने बाएं हाथ में पकड़ी चीज़ और दाहिने हाथ में दरांती मेज पर रख दी और बोली, "अरे नारायण मूर्ति, मैंने सुना है आप सख्त आदमी हैं। मैं यहाँ कोई झूठ बोलने नहीं आई हूँ। पहले इसे देखिए और समझिए कि यह क्या है।" उसने यह कहकर कुर्सी पर ऐसे बैठ गई जैसे वह उनके बराबर हो। इंस्पेक्टर झुके और उसे गौर से देखा। अरे, लक्कू जो काटकर यहाँ लाई थी, वह एक पुरुष का लिंग था। चूंकि उसने उसे हाथ में दबाकर रखा था, इसलिए कटे हुए हिस्से से खून बह रहा था, इसी वजह से उसका आकार छोटा और आकृति बिगड़ी हुई लग रही थी। केवल सामने से ही उसकी पहचान हो पा रही थी। उसने लक्कू का चेहरा देखा और उसे पहचान लिया। उसे साफ याद था कि वह वही महिला थी जो एक साल पहले अपने पति की हत्या के मामले में अभियोजन पक्ष की गवाह थी और जिसने कटघरे में उसे धोखा देकर मंजय्या को बचाया था और जज को उस पर कड़ी सजा सुनाने के लिए मजबूर किया था। उसे पुलिस विभाग की गुप्त रिपोर्ट से मंजय्या और उसके बीच के रिश्ते, उसकी दुकान और बाकी सभी जानकारियों के बारे में पता था।

नारायण मूर्ति ने पूछा, 'अरे महिला, यह किसका है? तुमने इसे काटकर यहाँ क्यों लाया?'

'देखिए इंस्पेक्टर साहब, यह लक्कू झूठ नहीं बोलेगी। हालांकि, यह सच है कि मैंने एक बार झूठ बोला था। अब आपको मेरी कही हर बात को हूबहू, शब्द-दर-शब्द, वैसे ही लिखना होगा। अगर मैं कभी भी टालमटोल करूं या दोहरी बातें करूं, तो जज या आप नहीं, बल्कि मैं खुद, देखिए,' उसने मेज से हंसिया उठाई, अपनी जीभ बाहर निकाली, ऐसा अभिनय किया जैसे वह उसे काट देगी और बोली, 'मैं अपनी जीभ काट दूंगी। अब से मैं सिर्फ एक ही शब्द बोलूंगी और वह होगा सच। एक कागज उठाइए और बैठ जाइए। अगर नहीं बैठे तो मैं लिखना शुरू ही नहीं करूंगी।'

इंस्पेक्टर ने कलम और कागज उठाया और उसका बयान लिखना शुरू कर दिया। 'यह मंजय्या का है। यह सोचकर कि उसके पास कोई जादुई छड़ी है, अगर वह उसे एक माँ और उसकी बेटी दोनों के शरीर में डाल दे, तो माँ क्या कर सकती है? इसलिए, मैंने इसे काटकर यहाँ लाया।'

इसका मतलब है कि उसने आपको फंसाया और आपके साथ संबंध बनाए, और फिर आपकी जानकारी के बिना आपकी बेटी को भी बहकाया। और आपको इस

बारे में पता चल गया। है ना?
'ओह, तुम तो वाकई बड़ी चतुर हो,' लक्कू ने कहा और उस समय उसके मन में जो कुछ आया, वह सब बताया। मंजय्या और उसके बीच का रिश्ता, कैसे उसने उसकी बेटी को अपने वश में किया, उसे बहकाया और उसकी बेटी पर उसकी हवस का क्या अंजाम हुआ।
इंस्पेक्टर ने उसकी कही हुई बातें नोट कर लीं और उससे पूछा, 'देखिए, मंजय्या बहुत ताकतवर आदमी था। जब आपने उसे पकड़ा और इस तरह से काटा, तो क्या वह चुप रहा? क्या उसने आप पर हमला नहीं किया? आपने कैसे काटा? मुझे पूरी घटना विस्तार से, एक-एक करके बताइए।'
लक्कू ने अपनी कहानी सुनाना शुरू किया। 'आज सुबह मंजय्या अपने बाग में जा रहे थे। आजकल वो गाँव में ज़्यादा देर नहीं रुकते। लगता है वो कल शाम को ही लौट आए। मैंने उन्हें अपनी दुकान से देखा। मैंने दुकान बंद की, उनके पीछे गई और 'अय्यारे' कहकर पुकारा। वो रुक गए और बोले, 'क्या बात है लक्कू?' मैंने कहा, 'तुम अपनी चुनी हुई पत्नी को कैसे भूल सकते हो?' और मुस्कुराई जैसे दिखा रही हो कि मैं कामुक हो गई हूँ। फिर उन्होंने कहा, 'चलो, टिपटूर चलते हैं।' मैंने सिर झुका लिया और शरमाते हुए कहा, 'भूखे पेट खाने के बजाय, क्या मैं टिपटूर पहुँचने तक इंतज़ार करूँ?' और फिर बोली, 'वैसे भी तुम बाग जा ही रहे हो, तो मुझे भी चलने दो।' किसी तरह वो हिचकिचाए। वो तो कभी ऐसे बैल नहीं थे जो गाय के पास आने पर हिचकिचाते हों। लेकिन मैं नहीं रुकी, मैं उनके पीछे गई, बाग का दरवाज़ा खोला और बोली, 'तुम तुरंत झोपड़ी में जाओ।' अगर हम बाहर रहे तो पास के बाग से कोई हमें देख सकता है।' वह मेरे साथ आया। मैं उसे झोपड़ी के अंदर ले गई। झोपड़ी के बीच में एक पत्थर का खंभा था। मैंने उसे खंभे की तरफ पीठ करके खड़ा कर दिया। बिना किसी झिझक के, मैंने उसे गले लगाया, चूमा और कामुकता से उसे अपने वश में कर लिया। मैंने उसे मदहोश कर दिया। मैंने उसे खंभे से सटाकर कसकर गले लगाया। इंस्पेक्टर, आप समझ रहे हैं ना? मैंने पहले से ही सोच-समझकर योजना बनाई थी कि मुझे ऐसा ही करना है। और ऐसा ही हुआ। मैं तेज़ी से खंभे के पीछे गई। इससे पहले कि उसे कुछ समझ आता, मैंने पीछे से उसके दोनों हाथ खंभे की तरफ खींच लिए। उसके कंधे के पास हाथ मुड़ गए। दर्द से वह 'अय्यय्यप्पा' चिल्लाया। मैंने झट से उसकी धोती उतार दी और धोती के एक किनारे से उसके दोनों हाथ पीछे कसकर बांध दिए। दूसरे

किनारे से उसके पैर खंभे से बांध दिए। जब मैंने उसकी धोती खींची, तो उसकी कमर से हंसिया गिर गई। यह उसकी हंसिया है। मुझे पता था कि वह इसे अपने साथ अपने बाग में ले जाएगा। अगर वह इसे न लाया होता, तो देखो...' उसने कहा और पान के पत्ते, सुपारी, तंबाकू पाउडर और चूने से भरी अपनी छोटी थैली से एक चाकू निकाला और बोली, 'मैं इसे इससे काट देती। मैंने उसका लिंग काटने का फैसला कर लिया था। अरे इंस्पेक्टर, जैसा मैंने कहा है, आप इसे लिख लीजिए। यह लक्कू झूठ नहीं बोलती।'

निरीक्षक ने पूछा, 'क्या आपने इसे तुरंत काट दिया?'

लक्कू ने हैरानी से कहा, "आप क्या कह रहे हैं? क्या आपको लगता है कि कोई न्यायाधीश बिना सुनवाई के और अपराधी को उसके अपराध का एहसास कराए बिना सज़ा सुना सकता है?" मैंने मंजय्या से कहा, "तुमने मुझे चाहा, मेरे साथ संबंध बनाए और फिर मेरी बेटी के साथ भी संबंध बनाए। क्या यह सही है? क्या यह न्यायसंगत है? मेरी बेटी का क्या होगा जो अब तुम्हारी वजह से गर्भवती है?" मैंने उससे हर संभव तरीके से पूछताछ की और अंत में फैसला सुनाया, "देखो, यही सज़ा मैं तुम्हें देता हूँ। तुम अपनी इस जादुई छड़ी से दोहरा खेल खेल रहे हो, अब तुम्हें इसका दंड भुगतना होगा।" अदालत का फैसला सुनाने के बाद, मैंने उसे अपने बाएं हाथ में इस तरह पकड़ा और काट दिया, जबकि वह रोता-चिल्लाता रहा, "ओह लक्कम्मा, लक्कू, ऐसा मत करो, कृपया मत करो। मैं तुम्हारी कसम खाता हूँ। मैं तुम्हारे चरणों में गिरता हूँ, ऐसा मत करो।" उस समय मैंने पुलिस स्टेशन आने के बारे में नहीं सोचा था। काटने का काम पूरा होने के बाद ही मुझे यह बात समझ में आई कि ऐसे मामलों की सूचना पुलिस को देनी चाहिए। मुझे लगा कि मैं मंजय्या की तरह झूठ बोलने वाली और छुप-छुपकर चलने वाली वेश्या नहीं हूँ। इसलिए मैंने इसे अपनी बाईं मुट्ठी में कसकर पकड़ा, दाहिने हाथ में दरांती पकड़ी और दौड़ती हुई आई। बस मेरी दुकान के सामने खड़ी थी। मैं उसमें चढ़ी, ड्राइवर को बस सीधे चन्नरायपट्टाना पुलिस स्टेशन ले जाने को कहा और मैं यहाँ आ गई।

इंस्पेक्टर ने पूछा, 'ठीक है, क्या आपने वहां से निकलने से पहले उस धोती को खोला था जिससे आपने उसे बांधा था?'

'क्या मैं यह नहीं कह रहा कि जैसे ही मैंने उसे काटा, मैं दौड़कर आया?' लक्कू, एक ही बात को बार-बार दोहराते-दोहराते थककर, गुस्से से चिल्लाया।

निरीक्षक ने पूछा, 'क्या आपको नहीं पता था कि अगर आपने गांठें नहीं खोलीं तो वह वहीं मर जाएगा? अगर खून बहना बंद नहीं किया गया और उचित दवाइयां नहीं दी गईं तो खून लगातार बहता रहेगा।'
'क्या ऐसा है?' लक्कू ने अपना मुंह चौड़ा खोल दिया और डर, आश्चर्य और चिंता की मिली-जुली भावनाओं के साथ बैठ गई।
इंस्पेक्टर तुरंत उठा और कांस्टेबल को आदेश दिया, 'जीप तैयार करो। हमें रास्ते में सरकारी डॉक्टर को लेना है और बिलिकेरे जाना है। लक्कम्मा, उठो। तुम्हें भी आना चाहिए।' दो कांस्टेबल दौड़ते हुए आए, उन्होंने लक्कम्मा का हाथ पकड़ा और उसे जीप की ओर ले जाने की कोशिश की। लक्कम्मा ने खुद को उनके चंगुल से छुड़ा लिया और चिल्लाई, 'कमीने, मुझे छोड़ दो। मैं क्या भागती हुई चोर हूँ, जो मुझे पकड़ रहे हो?' इंस्पेक्टर ने कांस्टेबलों को उसका हाथ छोड़ने को कहा। उन्होंने उसका हाथ छोड़ दिया। वह जीप में चढ़ गई और पीछे की सीट पर बैठ गई। दो कांस्टेबल और दो अन्य उसके बगल में बैठ गए। बस के सभी यात्री वहीं खड़े रहे। सरकारी डॉक्टर इंस्पेक्टर के बगल में आगे बैठ गया, फार्मासिस्ट अपने किट के साथ लक्कम्मा और अन्य कांस्टेबलों के साथ बैठ गया और जीप बिलिकेरे की ओर चल पड़ी। पहली नहर पार करने के बाद, जीप मंजय्या के बाग के मुख्य द्वार पर रुक गई। लक्कू के उतरने के बाद, उसे आगे रखते हुए, वे सभी उपवन के अंदर चले गए। लक्कू सबसे पहले कुटिया में दाखिल हुई। दरवाजा खुला हुआ था। उसने ताली बजाई और चिल्लाई, "हे भगवान, हे शिव, वह मर गया, हा हा हा, वह मर गया। अरे, इतने सारे कौवे, इतने हट्टे-कट्टे, उन्हें कैसे पता चला कि कुटिया के अंदर क्या है? हाँ, यमधर्म ने ही उन्हें भेजा होगा। "जाओ, ऐसी कुटिया में एक शव है। जाओ, उसे कुतर कर खा जाओ,"" उसके बोलते ही वे सभी कुटिया में दाखिल हुए और जो देखा वह भयानक था। खंभे से बंधा मंजय्या का शव धंसा हुआ और लटक रहा था। घाव से खून बहकर सरसराती चटाई पर गिरा था, जमीन पर रिसकर काला पड़ गया था। कौवे एक ही जगह पर चोंच मारने और गहरी खुदाई करने में एक-दूसरे से होड़ कर रहे थे। लेकिन उन्होंने अपनी चोंच शरीर के किसी अन्य हिस्से को नहीं छुई थी।
इंस्पेक्टर ने पहले कौवों को भगाने का सोचा। उसने कहा, 'सब लोग झोपड़ी के दरवाजे से अंदर आ जाओ, एक कोने में खड़े हो जाओ, ताली बजाओ और 'हा, हा, हा' चिल्लाओ।' कौवे अनिच्छा से ही सही, बाहर उड़ गए। लेकिन वे नारियल के

पेड़ों के नीचे बाहर इंतजार करते रहे। स्थिति को देखते ही वे समझ गए कि डॉक्टर को अपनी दवाइयों की किट खोलने की जरूरत नहीं है। फिर भी उन्हें शव का पोस्टमार्टम करना था और रिपोर्ट लिखनी थी। उन्होंने उस धोती को काटा जिससे शव बंधा हुआ था और उसे झोपड़ी के बाहर ले आए। चन्नरायपट्टाना के डॉक्टर ने कहा, 'इस इलाके में एक सरकारी डॉक्टर है। पोस्टमार्टम उनके अधिकार क्षेत्र में आता है। मैं आपके साथ यह सोचकर आया था कि अगर शव में जान है तो मैं उसे प्राथमिक उपचार देकर तुरंत चन्नरायपट्टाना ले जाऊँगा।' फिर इंस्पेक्टर ने कांस्टेबलों को जीप के साथ बिलिकेरे के डॉक्टर, पटेल और गाँव के चार महत्वपूर्ण लोगों को लाने के लिए भेजा ताकि वे महाजर और मृतक के रिश्तेदारों (यदि कोई हों) के सामने गवाह बन सकें। तब तक गाँव में किसी को भी इस खबर की जानकारी नहीं थी। पूरा गांव उपवन में इकट्ठा होने लगा। नारायण मूर्ति एक फुर्तीले व्यक्ति थे। डॉक्टर द्वारा शव को काटना शुरू करते ही उन्होंने तुरंत सोचा कि शव किसे सौंपा जाए। मंजय्या के परिवार के बारे में जानकारी होने के कारण उन्होंने वहां जमा ग्रामीणों से पूछा, 'अंतिम संस्कार किसका अधिकार है? या मुझे बताएं कि इसे कौन संपन्न करेगा। देखिए, हर शव, चाहे वह कोई भी हो, उसके जाति और रीति-रिवाज के अनुसार ही उसका अंतिम संस्कार होना चाहिए।'

कोई आगे नहीं आया। तब इंस्पेक्टर ने कहा: 'क्या इस गाँव में मृतक से संबंधित या उसकी जाति का कोई व्यक्ति नहीं है? यदि कोई भी अंतिम संस्कार नहीं करता है, तो हम पुलिस शव को जला देंगे। लेकिन पहले यह दर्ज किया जाना चाहिए कि रिश्तेदारों की जाँच करने के बावजूद, कोई भी अंतिम संस्कार करने के लिए आगे नहीं आया।'

जब इंस्पेक्टर ने ये शब्द कहे, तो पटेल चन्नेगौड़ा आगे आए और बोले, 'देखिए इंस्पेक्टर साहब, एक व्यक्ति रिश्तेदार है, मंजय्या का साला रामकृष्णय्या।'

'मंजय्या ने रामकृष्णय्या की बहन से शादी की थी, लेकिन उसने अपने पति की बेवफाई के कारण उसे छोड़ दिया। उसे छोड़े हुए सत्रह या उससे अधिक वर्ष बीत चुके हैं। इसके अलावा, मंजय्या को जेल जाने से बचाने के लिए, रामकृष्णय्या के पिता मंजय्या के पक्ष में गवाही देने गए, झूठी गवाही देने के लिए पश्चाताप किया और आत्महत्या कर ली। यदि ऐसा है, तो क्या रामकृष्णय्या आकर ऐसे रिश्तेदार का अंतिम संस्कार करेंगे? आप अपने नियमों के अनुसार कार्य करें और काम जल्द से जल्द पूरा करें। हम रिकॉर्ड पर अपने हस्ताक्षर कर देंगे।'

इंस्पेक्टर ने कहा, 'आप रामकृष्णय्या को किसी भी तरह यहाँ ले आइए।' तब पटेल जीप से गाँव के लिए रवाना हुए।
जब तक डॉक्टर ने पोस्टमार्टम पूरा करके रिपोर्ट लिखी, जीप रामकृष्णय्या को लेकर वापस आ गई। पटेल ने उन्हें सब कुछ बता दिया था। पटेल भीड़ के बीच से रास्ता बनाते हुए रामकृष्णय्या को इंस्पेक्टर के पास ले गए। इंस्पेक्टर ने पूछा, 'क्या यह मृत व्यक्ति आपका रिश्तेदार है?' रामकृष्णय्या ने कोई जवाब नहीं दिया। पटेल ने उन्हें यहाँ हुई घटना की जानकारी दे दी थी। उनके चेहरे को देखकर कोई भी समझ सकता था कि उनके भीतर एक गहरा संघर्ष चल रहा है। ऐसा लग रहा था मानो उनका चेहरा क्रोध, रोष, तिरस्कार और घृणा जैसी भावनाओं को दबा रहा हो। इंस्पेक्टर ने फिर वही सवाल पूछा, तब रामकृष्णय्या ने मानो कोई फैसला कर लिया हो, कहा, 'रिश्तेदार न भी हो, किसी भी शव को, चाहे वह बदमाश का ही क्यों न हो या समाज से बहिष्कृत का, अंतिम संस्कार के बिना नहीं छोड़ा जाना चाहिए। मैं अंतिम संस्कार करूँगा। मुझे बताइए कि मुझे क्या लिखना और हस्ताक्षर करना चाहिए।' वे भीड़ की ओर मुड़े, सबको देखा और अंत में गाँव के पुजारी देवरय्या जोइस को पहचान लिया। वे उनके पास गए, अपनी जेब से पैसे निकाले, पचास रुपये गिने, जोइस के सामने रखे और कहा, 'ये लीजिए।' जल्दी से गांव जाओ और किसी तरह ज़रूरी सामान का इंतज़ाम करके यहां ले आओ। शव का पोस्टमार्टम हो चुका है और वह एक लोथड़ बन गया है, इसलिए हमें उसके लिए अंतिम संस्कार की अर्थी बनाने और इस मांस के गट्ठे को गांव के तालाब के पीछे वाले श्मशान घाट तक ले जाने की ज़रूरत नहीं है। वैसे भी यह उनका उपवन है। यहां एक तालाब भी है, इसलिए पानी की सुविधा भी है। चलो यहीं अंतिम संस्कार कर लेते हैं। मेरे घर के पीछे दो बड़े लकड़ी के गट्ठे पड़े हैं। लेकिन अब उन्हें काटने का समय नहीं है। कृपया पूछिए कि क्या किसी के घर से जलाऊ लकड़ी मिल सकती है?' जोइस ने पैसे लिए और चला गया। वहां खड़े पुत्तेलय्या ने कहा, 'मेरे स्वामी के घर के पीछे पर्याप्त सूखी जलाऊ लकड़ी, नारियल के छिलके और नारियल के पत्ते हैं।' रामकृष्णय्या ने कहा, 'अगर है तो दौड़ो, उसे एक गाड़ी में भरकर यहां ले आओ, दौड़ो।' पुत्तेलय्या तुरंत बाहर निकल गया।
अपना काम पूरा करने के बाद, इंस्पेक्टर ने चारों ओर देखा और पास खड़े कांस्टेबल से पूछा, 'आरोपी महिला कहाँ है?' उसने कहा, 'वह झोपड़ी में सो रही है महोदय। दो पुलिसकर्मी उसकी सुरक्षा कर रहे हैं।' इंस्पेक्टर झोपड़ी के अंदर गया

और देखा कि लक्कू सरसराती चटाई पर पीठ के बल लेटी हुई गहरी नींद में सो रही थी। वह ज़ोर-ज़ोर से खर्राटे ले रही थी। मंजय्या के गुप्तांग से निकला खून काला पड़ गया था और लक्कू के सिर के पास फैला हुआ था। बाहर क्या हो रहा है, इसकी परवाह किए बिना, वह बेफिक्र होकर सो रही थी। इंस्पेक्टर ने पूछा, 'वह कब से सो रही है?' एक कांस्टेबल ने कहा, 'लाश को बाहर निकालने के एक मिनट बाद ही उसने कहा, 'मुझे नींद आ रही है। शोर मत करो,' और लेट गई। जल्द ही वह सो गई और खर्राटे लेने लगी। हम अपनी सुरक्षा का कर्तव्य निभा रहे हैं क्योंकि आपने हमें आदेश दिया था कि उसे ज़बरदस्ती न पकड़ें।'
इंस्पेक्टर ने कहा, 'अब उसे जगाओ। उसे जीप के अंदर सोने दो।'
बड़ी मुश्किल से उन्होंने उसे जगाया। आखिरकार वह उठी और कांस्टेबलों के साथ चलने लगी। वहाँ जमा सभी ग्रामीणों की निगाहें लक्कू पर टिकी थीं। लेकिन उसे उनकी मौजूदगी का कोई एहसास नहीं था। वह दस कदम चली और बोली, 'देखिए, नारायण मूर्ति इंस्पेक्टर!' इंस्पेक्टर उसके पास आया। उसने अपने दाहिनी ओर एक नारियल के पेड़ की ओर इशारा करते हुए कहा, 'देखिए, मंजय्या ने मेरे पति के शव को इसी पेड़ के नीचे घसीटा था और उसके तने के नीचे पत्थर रख दिया था। मैंने झूठी गवाही दी थी कि मेरे पति पेड़ से फिसलकर गिर गए और उनकी मृत्यु हो गई। क्या आपको याद है? यह वही पेड़ है। उस रात मैं घर पर थी। मैं टिपटूर या पापटूर या कहीं और नहीं गई थी।' फिर उसने कांस्टेबलों को कोसते हुए अपनी आँखें बंद कर लीं: 'इन्होंने मुझे सोते हुए जगा दिया। इन्हें चप्पलों से मारो!' वह आँखें बंद करके उनके पीछे-पीछे चली, जीप में चढ़ी, लंबी सीट पर लेट गई और जल्द ही सो गई। इंस्पेक्टर ने कहा, 'इसे मत जगाओ।' आप सब जैसे-तैसे एडजस्ट करके जीप के फर्श पर बैठ गए' और पुलिसकर्मी भी जैसे-तैसे एडजस्ट हो गए। बाग में जमा हुए लोगों में से कोई भी उस जगह से नहीं गया। जोइस, पुत्तेल्लैया और अन्य लोग जल्दी से ज़रूरत का सारा सामान ले आए। लेकिन कटे हुए शव को कौवों से बचाना मुश्किल था। छह लोग चारों ओर खड़े होकर 'हा हा हा' चिल्ला रहे थे और लाठियाँ पीट रहे थे।
वहाँ जमा हुए कुछ युवक मंजय्या के अंग विच्छेदन का उपहास उड़ा रहे थे। रामकृष्णय्या ने उनकी ओर मुड़कर क्रोधित होकर कहा, "क्या तुम्हें इस तरह बोलने में शर्म नहीं आती? क्या तुम जानते हो कि किसी व्यक्ति द्वारा किया गया पाप उसके बारे में चुगली करने वाले के मुँह में ही भोगता है?" वे सब चुप हो गए।

बिलिकेरे गाँव के लोगों की उपस्थिति में रामकृष्णय्या ने अपना सिर मुंडवाया और मंजय्या की चिता को अग्नि दी। जब आग भड़क उठी तो कौवे उड़ गए।
जब पटेल ने रामकृष्णय्या को बुलाया, तब वे चन्नरायपट्टाना जाने की तैयारी कर रहे थे। उन्होंने स्नान और खाना बना लिया था और भोजन करने ही वाले थे। अगर पटेल को पंद्रह मिनट की भी देर हो जाती, तो वे रामकृष्णय्या से नहीं मिल पाते। उन्हें मंजय्या के भाग्य के बारे में ज़रा भी जानकारी नहीं थी और न ही उन्हें पता था कि पूरा गाँव उनके उपवन में इकट्ठा हो गया है। हालाँकि पड़ोसियों को इस घटना की जानकारी मिल गई थी और पुरुष और बच्चे अपनी जिज्ञासा को दबा न पाने के कारण उपवन में चले गए थे, फिर भी कोई भी आकर रामकृष्णय्या को सूचना देने नहीं आया था। बड़ों ने स्वयं उन्हें सूचित करने की ज़हमत नहीं उठाई, क्योंकि वे किसी भी बात में कोई दिलचस्पी नहीं दिखाते थे और बिल्कुल भी बात नहीं करते थे। इसके अलावा, मंजय्या के हाथों उन्हें बहुत अन्याय सहना पड़ा था। इसके अलावा, जब टिपटूर के लोगों से यह बात फैली (हालांकि उसने खुद कभी नहीं बताई थी) कि उसने अपने ससुर के साढ़े छह लाख रुपये उनके शव समेत जलाकर राख कर दिए हैं, उसकी पत्नी और बेटा उसे छोड़कर टिपटूर की विशाल संपत्ति के मालिक बन गए हैं, तो लोग उससे डरने लगे। कुछ लोगों ने यह अफवाह फैला दी कि वह बहुत गुस्सैल हो गया है। कुछ फुसफुसाते हुए कहने लगे कि वह पागल हो गया है। इस तरह, लोगों से उसका संवाद, जो पहले बहुत कम था, अब पूरी तरह बंद हो गया था। वह अपनी ज़मीनों पर घूमता, दिन में एक बार खाना बनाता और दो बार खाता। वह किताबें पढ़ने में मग्न रहता। एक बार पढ़ने के बाद, वह फिर से उनमें डूब जाता और अंतर्मुखी जीवन जीने लगता। सावित्री दो बार आई, चार दिन रुकी और चली गई। उसके रहते हुए भी वह चुप ही रहता था।
रामकृष्णय्या ने अंतिम संस्कार पूरा किया, घर आए, ताला लगाया, चाबियाँ होन्ना को दीं और आखिरी बस से चन्नरायपट्टाना के लिए रवाना हो गए। जब तक वे पहुँचे, चन्नरायपट्टाना में बिलिकेरे मंजय्या की मृत्यु, बल्कि जिस तरह से उनकी मृत्यु हुई, उसके बारे में सभी को पता चल चुका था। जब सावित्री स्कूल से लौटीं, तो मुख्य घर में रहने वाली नंजप्पा की पत्नी उनके घर आई थीं और उन्हें यह खबर दी थी। सुब्बन्नय्या की बेटी मीनाक्षी ने सावित्री को बताया था कि मंजय्या के बरी होने के बाद लक्कू और मंजय्या के बीच संबंध विकसित हो गए थे। सावित्री को भी लगा - अगर इस दुष्ट ने माँ के साथ संबंध बनाकर बेटी को भी अपने वश में कर लिया

और उसे बहकाया, तो माँ अपने दिल के गुस्से को कैसे शांत कर पाएगी? सावित्री का मन गहरे निराशा में डूब गया। उन्होंने उससे पूरी तरह दूरी बना ली थी। फिर भी उनके मन में एक गंभीर प्रश्न था, 'वह ऐसा क्यों बन गया?' वह चटाई पर लेट गईं, रात के लिए खाना बनाने का उनका कोई मन नहीं था। तब तक उसका भाई आ गया। जब उसने टोपी उतारी तो वह उसका मुंडा हुआ सिर देखकर हैरान रह गई। 'अरे, क्या हुआ? तुमने अपना सिर क्यों मुंडवा लिया?'

'मंजय्या का निधन हो गया। चूंकि अंतिम संस्कार की अग्नि प्रज्वलित करने के लिए कोई उत्तराधिकारी नहीं था, इसलिए मैंने अग्नि प्रज्वलित की।' रामकृष्णय्या ने आगे कुछ नहीं कहा, बस दीवार से टेक लगाकर बैठ गए। थोड़ी देर बाद उन्होंने कहा, 'देखो, चाहे वह कितना भी दुखी रहा हो... तुम स्नान कर लो। मैं पश्चिमवाहिनी जाऊंगा, नौवें दिन की रस्में अदा करूंगा और उसके प्रेत को मुक्त करूंगा ताकि वह यात्रा के अगले चरण तक आसानी से पहुंच सके।'

सावित्री के मन में तुरंत एक क्रोधित प्रश्न उठा: अपने पूरे जीवन में उस व्यक्ति ने इस परिवार को इतना कष्ट और अन्याय दिया था। उसके अन्नय्या ने ऐसे दुष्ट व्यक्ति के लिए ये सब रस्में क्यों निभाईं? लेकिन वह जानती थी कि अगर उसने यह प्रश्न अपने भाई से खुलकर पूछा तो वह क्या कहेगा। वह कहेगा, 'कोई और वारिस नहीं था, इसलिए मैंने किया।' ऐसा ही टिप्पुर के नागप्पा के साथ भी हुआ था। यह ज्ञात नहीं है कि क्या उसे नागप्पा के प्रति कोई द्वेष था। शायद नहीं। मंजय्या के बारे में, शायद उसे कोई क्रोध नहीं था। इस प्रकार वह समझ गई कि वह जो भी बोलेगी, वह चुप रहेगा और वह स्नान करने चली गई। स्नान करने, बाल सुखाने और बाहर आने के बाद, उसने कहा, 'शुद्ध रूढ़िवाद के अनुसार, उसकी मृत्यु से तुम्हें मुझसे अधिक अपवित्रता हुई है। इसलिए दस दिनों तक मुझे तुम्हारे द्वारा बनाया गया कोई भी भोजन नहीं खाना चाहिए। तुम कह सकती हो कि इतना सब हो जाने के बाद पवित्रता या अपवित्रता में क्या विश्वास रह गया है।' मैंने उनके अंतिम संस्कार और अन्य रीति-रिवाजों को निभाने का फैसला किया है, लेकिन इस एक का उल्लंघन क्यों किया जाए? मैं अपने पिता का श्राद्ध करने में विश्वास रखती हूँ, लेकिन मैं इन लोगों के रीति-रिवाजों में विश्वास न करने की बात कैसे कह सकती हूँ? इसलिए मैं रसोई में जाकर खाना बनाती हूँ। आप यहीं रहिए।

उसने बहस न करने की इच्छा से उसका विरोध नहीं किया। रामकृष्णय्या ने चावल और सांभर के लिए चूल्हा रखा, चूल्हा जलाया और सावित्री के मार्गदर्शन में चूल्हा

उस पर रखा, रसोई के दरवाजे के पास बैठ गए और बोले, 'देखो सावित्री, मेरा इरादा तिप्तूर जाने का था। उससे पहले मैं तुमसे भी बात करना चाहता था। बात यह है कि गणेश गोदाम के कारोबार में माहिर हो गया है। लगता है कि वह यहाँ कितना माल खरीदना है और कहाँ और कब बॉम्बे, कानपुर, दिल्ली और अन्य जगहों पर भेजना है, यह तय करने में अपने दादा से भी ज्यादा चतुर है। उसने पहले ही डेढ़ लाख रुपये कमा लिए हैं। कहा जाता है कि तिप्तूर में कोई दूसरा व्यापारी इतनी कम उम्र में इतनी समझदारी से अपना गोदाम नहीं चलाता। लेकिन, गणेश ने बुरी स्त्रियों की संगति शुरू कर दी है। एक स्त्री के साथ वह घूम रहा है, जो रेलवे वैगन क्लर्क नल्लाथंबी की पत्नी है और बाकी दो कॉलेज की लड़कियां हैं। सुकन्या बिलिकेरे आई और बोली, 'आपका बेटा भटक रहा है।' पिता होने के नाते आपको आकर उसे समझाना चाहिए। अगर आप भी तिप्तूर आकर उस घर में रहें, तो वह ऐसे काम करने से डर जाएगा। लेकिन मैंने कोई जवाब नहीं दिया। वह दो दिन रुकी और लौट गई। अब रेशमी साड़ियों के अलावा वह कुछ नहीं पहनती। वह हमेशा गहनों से सजी रहती है। यही उसकी खुशी है। परसों गोदाम का क्लर्क नंजप्पय्या आया था। उसे खुद सुकन्या ने भेजा था। लगता है गणेश की प्रेम-संबंधी गतिविधियाँ बढ़ गई हैं। हसन में पढ़ाई के दौरान भी वह कमोबेश ऐसी गतिविधियाँ करता था। लेकिन अब जब उसके पास इतना धन है, तो उसे कैसे रोकें? कई दूल्हों के पिता रिश्ता तय करने के लिए कह रहे हैं। अगर हम एक सुंदर लड़की चुनकर उसकी शादी करवा दें, तो शायद वह सही रास्ते पर लौट आए। लेकिन अगर पिता उनके साथ नहीं रहेगा, तो माँ खुद दूल्हों से कैसे बात करेगी? सुकन्या ने पूछा था, "क्या अपने बेटे को गृहस्थ जीवन में स्थापित करने में मदद करना आपका कर्तव्य नहीं है?" सावित्री, पिता होने के नाते मेरा यह कर्तव्य है कि मैं इसे पूरा करूँ। लेकिन क्या जो लोग एक बार इस लत के शिकार हो जाते हैं, वे शादी के बाद भी इसे छोड़ पाते हैं? मुझे संदेह है। क्या किसी को सुधारने की कोशिश में उसकी बेटी को गिनी पिग बनाना उचित है? इसलिए मैंने वहां जाकर गणेश जी से आमने-सामने बात करने का सोचा है। इस आदत वाले लोग बड़ी चालाकी से झूठ बोलते हैं। मुझे लगता है कि कोई भी व्यक्तिगत या आमने-सामने की बातचीत एकतरफा ही होगी। मैं यहां आपसे सलाह लेने आई थी कि क्या किया जा सकता है और फिर त्रिपतुर के लिए रवाना हो जाऊंगी। लेकिन अब, मंजय्या के अनुष्ठान पूरे होने तक मैं नहीं जाऊंगी।

गणेश के आचरण के बारे में जानकर सावित्री को गहरा दुख हुआ। वह यह सोचकर दुखी हुई: हे भगवान, क्या उनके परिवार में एक और मंजय्या का जन्म हुआ है? वह खुद को कोसने लगी, यह सोचकर कि इस लड़के ने उसके स्नेह से दिए गए पैसे को इस उद्देश्य के लिए खर्च कर दिया। स्त्रियों के साथ? कुछ समय बाद उसके अन्नय्या ने विचार करते हुए, मानो वह इच्छा के सार को समझा रहे हों, 'काम ही मूल है, स्रोत है - यह संपत्ति का रूप ले सकता है या विपरीत लिंग के प्रति इच्छा के रूप में प्रकट हो सकता है। एक दूसरे का पूरक है।' यद्यपि सावित्री अपने भाई द्वारा समझाए जा रहे सिद्धांत की पृष्ठभूमि को समझ सकती थी, वह उसकी गहराई को पूरी तरह से नहीं समझ पाई। उसका मन गणेश और मंजय्या की तुलना करने में व्यस्त था।

तब तक मत्तिकेरे भावा आ गए। सावित्री उन्हें देखते ही समझ गई कि वे उसका पत्र मिलने के बाद आए हैं। सत्यप्पा का आना रामकृष्णय्या के लिए आश्चर्य की बात थी। चूल्हे ने सीटी बजाकर खाना तैयार होने की सूचना दी। रामकृष्णय्या ने सत्यप्पा का हालचाल पूछा और मेहमान के लिए थोड़ा अतिरिक्त चावल पकाने के लिए रसोई में चले गए। सावित्री ने सत्यप्पा से पूछा, 'क्या आपने खबर सुनी?'

“हां, बस में लोग इसके बारे में बात कर रहे थे। मैं लक्कू से मिलने और बात करने के लिए पुलिस स्टेशन गई थी। लेकिन उन्होंने कहा कि इंस्पेक्टर की अनुमति के बिना मैं उससे नहीं मिल सकती और मुझे बताया गया कि अगर मैं कल सुबह आठ बजे आऊं तो मुझे अनुमति मिल जाएगी। बाहर खड़े एक कांस्टेबल ने सब कुछ समझाया।” सावित्री ने पूछा, “क्या आप लक्कू को जानती थीं?”

नहीं, मैंने ऐसा नहीं किया। लेकिन एक महिला ने बेहद गुस्से में आकर ऐसा किया है। हमें इस बात पर चर्चा नहीं करनी चाहिए कि उसने जो किया वह सही था या गलत। लेकिन जब वह पुलिस हिरासत में होगी तो उसकी मदद कौन करेगा? उसका वकील कौन है? वह अपना बचाव कैसे करेगी? मुझे लगा कि मुझे हर संभव तरीके से उसकी मदद करनी चाहिए। इसलिए मैं वहां गया।

सावित्री उदास थी। देखो, उसका मन उसके भावों की तरह नहीं सोचता था। रामकृष्णय्या चुपचाप बैठे रहे। चावल पकने के बाद उन्होंने दोनों को खाना परोसा और खुद भी भोजन किया। सत्यप्पा ने बर्तन धोए और रसोई साफ की, हालांकि रामकृष्णय्या ने उन्हें रोकने की कोशिश की। ये दोनों आंगन में लेट गए और सावित्री कमरे में। सत्यप्पा ने कहा, 'देखो रामकृष्णय्या, अगर तुम लक्कू की मदद

करते हो, तो इसका मतलब यह नहीं है कि तुम मंजय्या की हत्या का समर्थन या अनुमोदन करते हो। देखो, तुम इसी गांव के हो जबकि मैं अजनबी हूं। कृपया कल सुबह मेरे साथ चलो। पहले हमें पता चल जाए कि क्या हुआ। इसके अलावा हमें यह भी पता लगाना होगा कि वह गर्भवती लड़की कहां है। उसकी मानसिक स्थिति कैसी है? उसका क्या होगा? हमें उसके लिए कुछ करना होगा।'
सत्यप्पा के इन शब्दों ने सावित्री के हृदय को तुरंत छू लिया।
रामकृष्णय्या को भी लगा कि यह सही है। अगली सुबह आठ बजे जब ये तीनों पुलिस स्टेशन पहुँचे, तो इंस्पेक्टर ने उन्हें लक्कू से मिलने की अनुमति दे दी। लक्कू को उस कमरे से बाहर लाया गया जहाँ उसे कैद किया गया था और उससे मिलने के लिए एक अलग कमरा तैयार किया गया। उस कमरे में दो बेंच थीं। लक्कू एक बेंच पर बैठी और उसके सामने ये तीनों बैठ गए। इंस्पेक्टर ने कांस्टेबलों को वहाँ न रुकने का आदेश दिया, उन्हें बाहर भेज दिया और कमरे का दरवाजा बाहर से बंद कर दिया। लेकिन वह खिड़की के बाहर छिपकर बातें सुन रहा था। उसकी योजना यह थी कि वह यह देखकर जानकारी जुटाए जिससे जाँच में मदद मिल सके कि लक्कू ने कल जो बयान दिया था और आज वह इन लोगों को जो बताएगी, उसमें कोई समानता है या नहीं। क्या वह कोई नई बात बताएगी या ये लोग कुछ ऐसा खुलासा करेंगे जिससे जाँच में मदद मिलेगी?
सावित्री को देखते ही लक्कू बोलने लगी, "अरे, क्या बात है अव्वा? क्या आप मुझे अपनी सौतन समझती हैं? लेकिन मैं आपको सच बताती हूँ। सुनो, मैं आपको देखकर ईर्ष्या कर रही थी और सोच रही थी कि आप मेरी प्रतिद्वंदी हैं। मुझे सच में आश्चर्य होता था कि मंजय्या इतनी सुंदर पत्नी को छोड़कर मुझसे प्यार क्यों करता है। शुरू में तो मैंने उसकी बात पर विश्वास किया था – कि आप खेती का कोई काम नहीं करतीं, इसलिए उसने आपको छोड़ दिया। लेकिन फिर मैंने सोचा कि इतने सारे खेतों वाले आदमी की पत्नी होकर उसे खेतों में काम क्यों करना चाहिए।"
लक्कू को देखकर वे समझ गए कि वह मानसिक रूप से असामान्य स्थिति में है।
तब सत्यप्पा ने पूछा, 'लक्कम्मा, कृपया हमें बताइए, मंजय्या के साथ आपका रिश्ता कैसे शुरू हुआ? बीच में क्या हुआ? आपने उसका अंग कैसे और क्यों काटा? अंग काटने से पहले आप दोनों ने और क्या बातें कीं? कृपया मुझे सब कुछ बताइए क्योंकि मुझे सच्चाई जाननी है। हम चाहते हैं कि आप बरी हो जाएं। इसलिए मैं

हसन जाकर आपके मामले के लिए एक अच्छा वकील नियुक्त करूंगा। आपको पैसों की चिंता करने की जरूरत नहीं है, चाहे कितना भी खर्च हो।'
'अरे, मुझे किस तरह के वकील की ज़रूरत है? वकील तो झूठ बोलने वालों के लिए होते हैं। मंजय्या को वकील की ज़रूरत इसलिए थी क्योंकि वो झूठा था। देखो, अगर तुम वकील रख भी लो, मैं तो सिर्फ़ सच ही बोलूँगा। मैं जज से कहूँगा, 'जी जी, मैंने इसे ऐसे पकड़ा था और काट दिया था।' तुम्हें पता है, कोई वकील मुझे झूठ नहीं बुलवा सकता।' लक्कू ज़ोर से हँस पड़ा।
सत्यप्पा ने कहा, 'अच्छा, हमें बताओ यह सब कैसे हुआ? अब क्या तुमने नाश्ता कर लिया?'
"हाँ, आप जानते हैं, यह नारायण मूर्ति अपने पिता की ओर से एक सच्चे सज्जन हैं। उन्होंने यह सुनिश्चित किया कि मुझे कल रात का खाना मिल जाए। नाश्ते में इडली, डोसा और कॉफी थी। हाँ, मेरा पेट भरा हुआ है।" और लक्कू ने अपना वर्णन शुरू किया: कांची का मंजय्या के बाग में घुसकर नारियल के गुच्छे चुराना, मंजय्या का उसके घर आना, उसके इशारे और दोहरे अर्थ वाले शब्द, फिर खुद कांची को मंजय्या के बाग में भेजना और बाकी सारी बातें। बाहर खिड़की के पास छिपे इंस्पेक्टर को कल से ज़्यादा जानकारी मिली। लेकिन कल जो उसने कहा था और अब जो वह बता रही थी, उसमें कोई खास अंतर नहीं था। लक्कू इस तरह से बता रही थी कि यह पता लगाना मुश्किल लग रहा था कि वह उन तीनों को घटनाएँ बता रही है या खुद को। एक बार बताते-बताते उसने कहा, "देखो अव्वा, तुम्हारे अप्पा ने फांसी लगाकर आत्महत्या कर ली, क्योंकि उन्होंने अपनी ज़बान से सिर्फ एक झूठ बोला था।" अगर ऐसा है, तो इस लक्कू को कितनी बार फांसी दी जानी चाहिए? मैं उस न्यायाधीश से कहूँगी, "अरे, इसे ऐसे ही दर्ज कर लो।" फिर उसने अपना वर्णन जारी रखा। उसने उसकी पूंजी तुरंत नहीं काटी। उसने पहले मंजय्या को उस झोपड़ी के खंभे से बांध दिया। उसने उससे पूछा, "चाहे तुम मुझसे विवाह करो, मुझे अपनी पत्नी बनाओ या न करो, यह मायने नहीं रखता। लेकिन मेरे साथ सोने के बाद, तुम्हारा मन मेरी बेटी के साथ भी सोने के लिए कैसे राजी हो गया?" जब मैंने उससे पूछा कि क्या यह उचित और न्यायसंगत है, तो उसने कहा, "लक्कू, मैं तुम्हारी कसम खाता हूँ, मैं सचमुच उससे विवाह करूँगा। कृपया मुझे छोड़ दो।" मैंने कहा, "अरे नीच, माँ के साथ सोने के बाद बेटी से विवाह करना कैसा धर्म है?" क्या आप जानते हैं कि उसने क्या कहा? "क्या तुम परमेश्वरय्या से बेहतर धर्म जानते

हो?" मैंने कहा, "तुम उसका नाम यहाँ क्यों घसीट रहे हो?" वह एक धर्मनिष्ठ व्यक्ति हैं।' 'जी हाँ, इसीलिए तो, जैसे उन्होंने सहमति दी, वैसे ही आप भी सहमत हो जाइए।' मैंने पूछा, 'उन्होंने किस बात पर सहमति दी?' मंजय्या ने कहा, 'देखिए, मैंने परमेश्वरय्या की पत्नी जनकम्मा के साथ संबंध बनाए थे। तब वह पैंतीस वर्ष की थीं और मैं बाईस वर्ष का। किसी को इसकी भनक तक नहीं लगी। एक दिन परमेश्वरय्या स्वयं पिछले द्वार से अंदर आए और हमें देख लिया। मैं वहाँ एक पल भी नहीं रुका और भाग गया। उसके बाद वह स्त्री गाँव के तालाब के ऊँट के पास गहरे पानी में गिर पड़ी। वह फिसलकर नहीं मरी। वह अपने पति से बुरी तरह डर गई थी और मर गई। इस बारे में किसी को नहीं पता, लेकिन परमेश्वरय्या को पता था। फिर भी, क्या उन्होंने अपनी बेटी का विवाह मुझसे नहीं किया? यदि यह धर्म न होता, तो क्या वह ऐसा करते? उनकी तरह आप भी अपनी बेटी का विवाह मुझसे कर दीजिए। मेरी सारी संपत्ति उससे उत्पन्न होने वाली संतान की होगी।' उन्होंने ईश्वर की कसम खाई। लेकिन क्या मैं उन पर भरोसा करता हूँ? मैंने कहा, 'अरे मंजय्या, परमेश्वरय्या का धर्म उनका अपना है। मेरा धर्म मेरा है,' और मैंने उसे अपने हाथ में लेकर काट डाला। वहीं से मैं खुद चन्नरायपट्टाना पुलिस स्टेशन आई...' उन्होंने आगे बताया।

हालांकि तीनों को तुरंत यह महसूस हो गया था कि मंजय्या झूठा है, वह किसी भी परिस्थिति में अपने लिए सुविधाजनक झूठ गढ़ सकता है, लेकिन एक मिनट बाद रामकृष्णय्या और सावित्री के मन में अपनी माता की मृत्यु का तरीका याद आ गया। जब अम्मा का निधन हुआ तब उनकी उम्र पैंतीस वर्ष थी और रामकृष्णय्या हसन में पढ़ने वाला उन्नीस वर्षीय युवक था। सब कहते थे कि अम्मा ऊंट-चट्टान पर कपड़े धोने गई थीं, फिसल गईं, गहरे पानी में गिर गईं और उनकी मृत्यु हो गई। कहा जाता था कि उस महीने, माहवारी के बाद, माताजी वहां स्नान करने गई थीं। लेकिन उस समय माहवारी के बाद, वह सात दिन एक अलग कमरे में रहती थीं और पिताजी खाना बनाते थे। क्या माहवारी के बाद कोई भी महिला सात दिन बिना स्नान किए अपवित्रता में बैठेगी? और क्या कोई महिला जो स्नान करना चाहती हो, उस ऊंट-चट्टान पर जाएगी, जिसके चारों ओर अठारह फीट गहरा पानी था? ये प्रश्न रामकृष्णय्या के मन में उठने लगे। वह सोचने लगे। अप्पा और अम्मा एक-दूसरे से प्यार करते थे। फिर भी उनकी मृत्यु के बाद, अप्पा ने उनके बारे में एक शब्द भी नहीं कहा। उससे पहले अप्पा इतने चुप नहीं रहते थे। उस घटना के बाद वे

एकदम अंतर्मुखी हो गए। मंजय्या ने सत्रहवें या अठारहवें वर्ष से ही व्यभिचार करना शुरू कर दिया था। जब अम्मा का निधन हुआ तब मंजय्या बाईस वर्ष का था। ये सारी बातें रामकृष्णय्या के मन में आईं और धीरे-धीरे स्पष्ट होने लगीं। सावित्री की स्मृति भी अतीत के धुंधले गलियारों में खो गई; और उसे अस्पष्ट रूप से याद आया: मैं तब पाँच वर्ष की बच्ची थी। जैसे ही दिन निकलता, मैं या तो सुब्बन्नय्या के घर या गंगाधरेश्वर मंदिर की चारदीवारी में दौड़ जाती। अम्मा हमेशा मुझे डांटती थीं – तुम्हारे पैर कभी घर में नहीं टिकेंगे। मंजय्या कभी-कभी हमारे घर आता था और अम्मा से स्नेहपूर्वक बातें करता था। वह लगभग अन्नाय्या की उम्र का था। अम्मा के निधन से कुछ दिन पहले, अगर वह आता भी था, तो दोपहर तीन बजे तक आता था। अप्पा दोपहर के भोजन के बाद बगीचे में चले जाते थे। सीताक्का का स्कूल पाँच बजे तक खत्म हो जाता था। मैं घर पर ही रहती थी। अम्मा मुझे खेलने की याद दिलातीं और कहतीं, 'देखो यहाँ। रंगमणि और शारदा मंदिर के प्रांगण में खेल रही हैं। तुम भी जाओ और खेलो।' वह मुझे खोपरा के टुकड़े और गुड़ देतीं, मुझे भेज देतीं और मैं नाचते हुए दौड़ पड़ती। बस इतना ही सुनकर लक्कू की बात पर यकीन कैसे हो सकता है? माँ के निधन के बाद मंजय्या हमारे घर नहीं आया। हम इतने बड़े नहीं हुए थे कि उससे पूछ सकें कि क्यों। मेरा अंदाज़ा है कि शायद अप्पा ने उसे हमारे घर आने से मना कर दिया होगा, क्योंकि मंजय्या पहले ही भटक गया था और बड़ी हो चुकी सीता घर में अकेली रह जाती थी। लेकिन मैं बस इतना सुनकर लक्कू की बात पर कैसे यकीन करूँ? तब तक सावित्री को याद आ गया था कि उसके अप्पा, जिन्होंने कभी किसी जानवर को भी नहीं पीटा था, ने कितनी बेरहमी से उसे लात मारी थी, जब उसने ज़िद की थी कि वह सिर्फ मंजय्या से ही शादी करेगी! सावित्री ने सोचा, केवल इस कारण कि उसकी बेटी ने एक अय्याश से शादी करने की ज़िद की, उसके अप्पा जैसा व्यक्ति अपना सारा संयम और शिष्टाचार खो बैठा और अपनी बेटी को इतनी बेरहमी से बार-बार लात मारी। सचमुच अप्पा ने अपना आपा पूरी तरह खो दिया था। जब सावित्री को ये सारी घटनाएँ याद आईं, तो उसे लगा जैसे वह बेहोश हो रही हो। उसने अपने अन्नय्या के चेहरे की ओर देखा। उसे तुरंत समझ आ गया कि भले ही वह चुपचाप बैठे थे, लेकिन अंदर ही अंदर वह उबल रहे थे। सावित्री बेंच पर गिर पड़ी। अगर उसके भाई ने उसे तुरंत न पकड़ा होता, तो वह ज़मीन पर गिर जाती और उसे चोट लग जाती। रामकृष्णय्या उठे और उसे बेंच पर लिटाया। सत्यप्पा उठे

और तौलिए से उसे हवा करने लगे। लेकिन लक्कू बोलती रही जैसे उसने कुछ देखा ही न हो।
हां, मेरी बेटी से गलती हुई। उम्र का असर था और उसने भूल कर दी। ऐसी गलती के बाद स्वाभाविक है कि वह अपनी मां को अपना चेहरा दिखाने में शर्म महसूस करे। मैंने भी गलती की। उम्र के कारण ही मुझसे गलती हुई। लेकिन ऐसी गलती करने के बाद मुझे अपनी बेटी को अपना चेहरा दिखाने में शर्म आती है। देखिए, अगर यह पता चल जाए कि दोनों ने एक ही आदमी के साथ यह अपराध किया है, तो क्या मां और बेटी एक-दूसरे का चेहरा देख पाएंगी? लेकिन उसे मेरे रिश्ते के बारे में पता नहीं था और मुझे उसके रिश्ते के बारे में। लेकिन, यह जानते हुए कि वह मां और बेटी दोनों के साथ यह खेल खेल रहा था, क्या उसे यमधर्मराय में मुकदमे के लिए नहीं भेजा जाना चाहिए? ओह, लक्कू इस जीवन में अपनी बेटी का चेहरा नहीं देख पाएगी। मैं हाथ जोड़कर न्यायाधीश से विनती करती हूं, 'माननीय न्यायाधीश, मेरी बात सुनिए। मुझे फांसी की सजा दीजिए या मुझे मृत्यु तक जेल में डाल दीजिए। लेकिन मुझे बरी मत कीजिए और मुझे अपने बच्चे का चेहरा देखने की सजा मत दीजिए।'
सावित्री को होश आया। उसके अन्नय्या ने उसका हाथ पकड़ा, उसे उठने में मदद की और उसे उस कमरे से बाहर ले गए। सत्यप्पा लक्कू के साथ ही रहे। जब वह बाहर आई और धूप में खड़ी हुई, तो सावित्री को लगा जैसे वह इस रोजमर्रा की दुनिया में आ गई हो। लेकिन सभी इमारतें, पेड़, सड़कें जिनसे वह परिचित थी, मानो काले रंग से रंगी हुई लग रही थीं। उसके अन्नय्या के शब्द, 'चलो, घर चलते हैं,' उसे एक आदेश की तरह लगे। अगर ऐसा न होता, तो उसे समझ नहीं आता कि क्या करे। वह उनके पीछे चल पड़ी। घर पहुँचकर, वे दीवार से टिककर आँगन में बैठ गए। सावित्री अपने कमरे में गई और लेट गई। उसे ऐसा लगा जैसे वह किसी गुफा में प्रवेश कर रही हो। एक भयानक शर्मिंदगी का एहसास, जो उसने पहले कभी किसी भी स्थिति में नहीं झेला था, उसके भीतर से उठने लगा। उसे लगा कि अब तक जो मजबूत सहारा उसके पास था, वह उसके पैरों तले से खिसक गया है और गायब हो गया है और वह एक अथाह खाई में गिर गई है। हालांकि उसने अपनी मां को दोषी ठहराने के बारे में सोचा, 'उस औरत, अम्मा ने मेरी जिंदगी बर्बाद कर दी,' सावित्री अपने मन में उन शब्दों को स्पष्ट रूप से व्यक्त नहीं कर सकी।

तब तक अन्नय्या आकर उस कमरे के दरवाजे के पास बैठ गए। उनका चेहरा गंभीर और कठोर था, पहले से कहीं अधिक गंभीर। एक प्रकार की हठधर्मिता और कठोरता ने उनके चेहरे को पत्थर जैसा बना दिया था। फिर भी धीमी आवाज़ में उन्होंने पूछा, 'देखो सावित्री, यह तुम्हारी समझ की उम्र नहीं थी। कहते हैं कि अम्मा उस कमरे में सात दिन बैठी रहीं जहाँ वे माहवारी के दौरान बैठती थीं। और माहवारी के बाद कौन सी स्त्री ऊँट-पत्थर पर नहाने जाएगी? और उनकी मृत्यु के बाद अप्पा ने एक दिन भी उनके बारे में बात नहीं की। उससे पहले वे इतने चुप नहीं रहते थे। इसके बाद तो वे बिल्कुल चुप हो गए। ये वे बातें हैं जो मुझे याद हैं। क्या तुम्हें कोई और यादें हैं?'

सावित्री को ऐसा लगा मानो कुएँ की तलहटी में डूबे किसी व्यक्ति के सिर पर तीन पत्थर गिर पड़े हों। उसने अपने भाई को दया भरी निगाहों से देखा, मानो उससे विनती कर रही हो कि वह किसी से कुछ न कहे। लेकिन वह उसकी यादों के कुछ पहलुओं को जानने की उम्मीद कर रहा था और उसके चेहरे को निहार रहा था। उसका चेहरा गुस्से से फूला हुआ था। थोड़ी देर बाद उसने कहा, 'देखो अन्नाय्या, अब और कोई परीक्षा या विश्लेषण न करें। क्या तुम जानते हो कि एक माँ का चरित्र और आचरण अपनी बेटियों को कितनी शक्ति देता है? ओह, अब तो मुझे सीधे खड़े होने की भी हिम्मत नहीं होगी।' उसने चादर ओढ़ ली, खुद को ढका और लेट गई।

रामकृष्णय्या चुपचाप बैठे रहे। अब उन्हें पूरा विश्वास था कि किसी से भी, यहाँ तक कि सावित्री से भी, कुछ भी पूछने या पुष्टि करने की कोई आवश्यकता नहीं है। उन्हें अपने मन में सन्नाटा महसूस हुआ। अचानक उन्हें लगा कि उनके लिए एकमात्र समझदारी भरा रास्ता पूरी तरह चुप रहना ही है। वे काफी देर तक वहीं बैठे रहे। वे जानते थे कि सावित्री भी चुपचाप लेट गई हैं। उनके लिए भी नींद आना असंभव था। इसलिए वे चुपचाप, धीरे से उठे, दरवाजा बंद किया और बाहर चले गए। धूल भरी सड़क पर कदम रखते हुए, उन्होंने साप्ताहिक बाजार की सीमा पार की और तालाब के किनारे चलने लगे। चन्नरायपट्टाना तालाब का तीन-चौथाई हिस्सा पानी से भरा हुआ था और लहरें शोर मचा रही थीं। यह तालाब, यह पानी, दोनों बिलिकेरे के तालाब और पानी के समान थे। लेकिन यहाँ न तो ऊँट-चट्टान थी, न ही ऊँट-चट्टान के आसपास जितना गहरा पानी था। ये समानताएँ और अंतर उनके मन में आए। फिर वे अपने अप्पा के बारे में सोचने लगे और उनके अप्पा के मौन का अर्थ

उनके मन में कौंध गया। क्या वे मौन हो गए थे? या वे स्थिर हो गए थे? हाँ, यह सच था कि वह एकदम शांत हो गए थे। निष्क्रिय। क्या हुआ था, यह किसी को पता नहीं था। उन्होंने किसी को कुछ नहीं बताया। ओह, उनके भीतर कितना गहरा दुख उमड़ रहा होगा? उनकी चुप्पी शांति से नहीं थी। इस समझ के साथ, रामकृष्णय्या धूप में खड़े होकर अपने पिता के उस अंतर्मन की कल्पना करने लगे, जो उन्होंने तीस वर्षों तक अपने आत्महत्या करने तक सहा था। तालाब का लाल पानी ज़ोर से टकरा रहा था, टकरा रहा था और अपनी बेचैनी और असंतोष को दूर करने के व्यर्थ प्रयास में नाच रहा था। रामकृष्णय्या को लगा कि उनके अप्पा भी भीतर ही भीतर लगातार टूट रहे होंगे। जब सावित्री ने केवल मंजय्या से ही विवाह करने की ज़िद की, तो उन्होंने उसे लात मारी, क्योंकि भीतर का असहनीय दर्द क्रोध के रूप में प्रकट हुआ था, लेकिन उन्होंने कम से कम तब ही सच क्यों नहीं बताया? काश अप्पा ने यह कहा होता, तो सावित्री का मोह भस्म हो जाता, नष्ट हो जाता। उन्होंने मुझे कम से कम अलग से बुलाकर ही क्यों नहीं बताया? क्या यह मृत व्यक्ति के सम्मान की रक्षा करने की उदारता थी? या जीवित लोगों की भावनाओं को ठेस न पहुँचाने के लिए? अगर उन्होंने किसी से अपने मन की बात कही होती, तो उनके भीतर की वह बेचैनी, वह उथल-पुथल शांत हो जाती। हे अप्पा, अप्पा, आपने सच क्यों नहीं बताया? इसे अपने भीतर क्यों दबाए रखा? रामकृष्णय्या नीले आकाश को निहारते वहीं खड़े रहे। उस विशाल नीले विस्तार में, पीड़ा, दर्द और शोक खामोशी से जल रहे थे। उस जलती हुई सुनसान ऊँचाई पर, उन्होंने कुछ पक्षियों को देखा। जब उन्होंने गौर से देखा, तो क्या वह कौआ था? जब वह देख रहे थे, तो 'का, का' की आवाज करते हुए दो-तीन कौओं ने उनका ध्यान खींचा। वे उनके सिर के ऊपर उड़ रहे थे। रामकृष्णय्या ने कल ही अपना सिर मुंडवाया था और उनका गंजा सिर धूप में जल रहा था। शायद नाई के उस्तरे से बने लाल घाव से आकर्षित होकर, वे कौए उनके सिर पर चोंच मारने के लिए घात लगाए बैठे थे। वह उस घाव को ढकने के लिए तौलिया तक नहीं लाए थे। रामकृष्णय्या ने मन ही मन कहा, 'अप्पा, आपके आत्महत्या किए हुए एक साल हो गया है।' क्या तुम कम से कम प्रेत बनकर भी नहीं आ सकते और बता सकते कि तुमने मुझसे और सावित्री से यह बात क्यों छुपाई?' उसने बार-बार यही शब्द दोहराए। उसके गंजे सिर का ऊपरी भाग और घाव जल रहे थे। घाव को ढके बिना रहना असंभव समझते हुए, उसने कमीज उतारकर अपना सिर ढँक लिया। उसका मन मंजय्या की ओर चला गया। उसे याद

आया कि भाग्य की इस क्रूर विडंबना का उसे कल तक पता नहीं था, जब उसने स्वयं ही अपना सिर मुंडवाकर मंजय्या का अंतिम संस्कार करने का निर्णय लिया था, क्योंकि उसका कोई और नहीं था। उसने निर्विरोध भाव से अंतिम संस्कार किया था, मृत व्यक्ति के पापों और गुणों की परवाह किए बिना, चाहे वह व्यक्ति कितना भी नीच क्यों न हो। लेकिन अब वे संस्कार भी खोखले और अर्थहीन लगने लगे थे। जब मंजय्या का शव जल रहा था, तब जोइस पुत्तभट्ट ने पास खड़े सुब्बन्नय्या से कहा, 'देखो, वे जीजा-साले हैं, यह बिल्कुल भाइयों के रिश्ते जैसा है। उसका कर्तव्य है और वह इसे निभा रहा है।' ये शब्द रामकृष्णय्या के कानों तक पहुँचे। अब, उसे यह बात याद आ गई और उसके इस कृत्य का निरर्थक होना और भी बढ़ गया, जब उसे अपने इस कृत्य का एक और आयाम दिखाई दिया... लोगों की नज़र में, किसी भी प्रकार का अलगाव अंततः रिश्ते से ही जुड़ा होता है।

रामकृष्णय्या कुछ देर धूप में खड़े रहे। उनके मन में उस ठंडे पानी में नहाने का ख्याल आया। वे अपने साथ तौलिया तक नहीं लाए थे। कोई बात नहीं, वे गर्म धूप में बैठकर खुद को सुखा सकते थे। उन्होंने धोती और कमीज उतारी, सिर्फ़ अंडरवियर में पानी में उतरे और डुबकी लगा दी। फिर ऊपर आकर पास की एक चट्टान पर बैठ गए। पानी के फैलाव को देखकर उनका मन तैरने का हुआ। उन्हें तैरना बहुत पसंद था। पता नहीं क्यों, कुछ दिनों से वे बिलिकेरे गाँव के तालाब में तैरने नहीं गए थे। ओह, कितना आनंद आता था जब वे ऐसे पानी में उतरते थे जहाँ कपड़े धोने वालों का शोर नहीं होता था, फिर चुपचाप तैरते हुए अपनी पीठ के बल लेट जाते थे! वे सोचने लगे, उन्होंने यह शौक क्यों छोड़ दिया? जब उन्होंने उस स्त्री की ज़िद मानकर गणेश को दादाजी के घर पढ़ने भेजा था, नहीं, नहीं, इसका इससे कोई संबंध नहीं था। उन्हें लगा कि यह उनकी अपनी गलती थी। कुछ देर तक उनका मन उन घटनाओं के बारे में सोचता रहा। फिर वह पानी से बाहर आया, अपनी धोती और कमीज़ ठीक की, उन पर एक पत्थर रखा ताकि हवा में उड़ न जाएँ, फिर पानी में कूद गया और तैरने लगा। थोड़ी दूर तैरने पर ही उसे थकान महसूस होने लगी। फिर वह पीठ के बल तैरने लगा। वह इतना आनंदित हुआ मानो किसी दूसरी दुनिया में पहुँच गया हो। अचानक उसके मन में अपने पिता और अपने बीच एक समानता कौंध गई – अगर उसकी पत्नी पानी में डूबकर न मरी होती, तो क्या अप्पा उसे स्वीकार करते? क्या वह उसके साथ रहते? इन जिज्ञासु प्रश्नों के साथ-साथ उत्तर भी कौंध गए: नहीं, उसने स्वयं अप्पा को मुक्त किया, एक

तरह से उस पर दया दिखाई। उसे ऐसा सोचना अजीब लगा। लेकिन फिर एक और विचार आया: उसने अपने पति को मुक्त करने के इरादे से अपनी जान नहीं दी थी। और यह सुकन्या भी, उसने सोचा, तिपतुर जाकर उसे मुक्त कर दिया था, उसे लगा कि यह भी सच है। लेकिन यह सवाल उसे परेशान करने लगा: क्या अप्पा को सचमुच अपनी पत्नी की मृत्यु से मुक्ति मिली? क्या मुझे सुकन्या के तिपतुर जाने से मुक्ति मिली?

जब वह किनारे से दूर जाकर तालाब के भीतरी हिस्से में पहुँचा, तो लहरों का शोर कम हो गया और तैरना आसान हो गया। लहरें आँखों और नाक से नहीं टकरा रही थीं। वह लेटकर भी संतुलन बनाए रख सकता था और डूबता नहीं। जब वह खुली आँखों से आकाश में सूर्य को घूर रहा था, तो उसे याद आया: यह दूसरा दिन था और कल मंजय्या की अस्थियाँ ग्रहण करने की रस्में थीं। इस याद के साथ ही उसे ऐसी घृणा महसूस हुई मानो उसने गंदगी को छू लिया हो। लेकिन उसने अपने मन को नियंत्रित करना शुरू किया। क्या उसे अपनी घृणा को दबाकर टिपटूर व्यापारी की अंतिम संस्कार की रस्में नहीं निभानी चाहिए थीं? उसने इस उदाहरण में एक रास्ता खोज निकाला। लेकिन एक आपत्ति यह थी कि ये दोनों रिश्ते अलग-अलग थे। उसने सोचा, जिसे हम रिश्ता कहते हैं, वह या तो बेतुका है या झूठ। अगर मुझे यह पता होता, तो मैं मंजय्या की अंतिम संस्कार की रस्में नहीं निभाता। फिर उसके मन में एक सवाल उठा: लेकिन ऐसा करने के बाद, वह आगे की रस्मों से कैसे पीछे हट सकता था? जब वह तैर रहा था और कुछ भी तय नहीं कर पा रहा था, अचानक उसकी माँ की याद उसके मन में कौंध गई। तीस साल पुरानी याद थी और इतने समय में तस्वीर धुंधली पड़ गई थी। माँ की जगह सावित्री का चेहरा और आँखें, जो उसकी माँ जैसी थीं, उसके मन में उभर आईं। वह ऐसी मानसिक स्थिति में था कि कुछ समझ नहीं पा रहा था। वह मंजय्या से शादी करने पर इतनी अड़ी क्यों थी? अप्पा ने सावित्री को इतना क्यों पीटा कि वह अपाहिज हो गई? शायद माँ का खून या मन बहने लगा था। सावित्री की तस्वीर उसकी आँखों के सामने आ गई। अचानक उसका मन हुआ कि वह किनारे पर पहुँचकर घर भागे और सावित्री को लात मारकर उसकी हड्डियाँ तोड़ दे ताकि वह मर जाए। ऐसा सोचते हुए वह लगातार पानी में लात मारने लगा और बहता चला गया। जैसे पागल हो गया हो, इतनी तेज़ी से लात मारने के कारण उसके पैरों में दर्द होने लगा। जब वह खड़ा हुआ और देखा कि किनारा अभी भी कितनी दूर है, तो उसे एहसास हुआ कि वह

उल्टी दिशा में तैर रहा है और तालाब का बांध अभी भी बहुत दूर है। बिना किसी उद्देश्य के पानी में तैरने पर उसे शर्म आ रही थी। पैरों को आराम देने के लिए, वह पलटा और पीठ के बल तैरने लगा। तब तक वह तालाब के केंद्र से आगे तैर चुका था और लहरें लगभग शांत हो चुकी थीं। चारों ओर सन्नाटा था। तैरने में भी संतुलन था। शरीर में रक्त का प्रवाह कम होने के बाद, उसे भीतर और बाहर दोनों ओर शांति का अनुभव हुआ। काफी देर बाद उसके मन में एक और विचार आया। उसने मन ही मन कहा: 'अनुष्ठान करके मैंने टिपटूर व्यापारी के प्रति अपनी घृणा को दूर कर लिया। अब मंजय्या के अनुष्ठानों को पूरा करके, जिन्हें मैंने पहले ही शुरू कर दिया था, मुझे उसके प्रति अपनी घृणा को दूर करना होगा। क्या मन को शुद्ध करने के लिए हमें कर्मों का पालन नहीं करना पड़ता? ये सभी भावनाएँ - क्रोध, निंदा, तिरस्कार और घृणा - को धोकर, पोंछकर सुखाना होगा...' और यह विचार उसके मन में दृढ़ता से बैठ गया। अचानक उसे एहसास हुआ, अरे, कितना समय बीत चुका है। सावित्री को घर पर अकेला छोड़कर जाने की याद से उसे एहसास हुआ कि उसे और भी दुख होगा।

कुछ देर बाद सत्यप्पा भी पुलिस स्टेशन से बाहर आ गए। जब उन्होंने कहा कि वे फिर आएंगे, तो लक्कू ने पूछा, 'क्यों, यहाँ आपका क्या काम है?' बाहर आकर वे इंस्पेक्टर से मिले और बोले, 'देखिए इंस्पेक्टर साहब, लक्कू को वकील दिलाने में कोई मदद नहीं कर रहा है। अगर यह मेरा जिला होता तो मैं सबसे काबिल, भरोसेमंद और समझदार वकील को जानता होता। कृपया मेरी मदद कीजिए।'
इंस्पेक्टर ने कहा, "देखिए, हसन में मलाली वेंकटरामय्या नाम का एक वकील है। वह बहुत बुद्धिमान और काबिल है, लेकिन उसकी फीस बहुत ज़्यादा है। ज़ाहिर है, हम पुलिसवाले उसे पसंद नहीं करते। लेकिन इस मामले को देखते हुए लगता है कि बचाव पक्ष के लिए कोई अच्छा वकील ज़रूर होगा। अभियोजन इंस्पेक्टर होने के नाते, मुझे इस मामले में ज़्यादा कुछ नहीं कहना चाहिए।" सत्यप्पा ने इंस्पेक्टर के नज़रिए की सराहना की। उसने भी मलाली वेंकटरामय्या के बारे में सुना था और जानता था कि मंजय्या को उसी ने बचाया था। इसलिए, वह सीधे बस स्टैंड गया और हसन जाने वाली बस में चढ़ गया।
बस चलते समय सत्यप्पा को इस बात का कोई भ्रम नहीं था कि वकील और उनके बीच क्या होने वाला है। उन्होंने वकीलों, अदालतों, स्टांप शुल्क, बस के किराए

और झूठे गवाहों के खर्चों से बचने के लिए ग्राम अदालतें शुरू की थीं। लेकिन अब गांवों में न्याय पाने के दौरान होने वाली परेशानियों के अपने अनुभव से उन्होंने यह निर्णय लिया कि ये अदालतें बेहतर हैं। उन्होंने बस स्टैंड पर किसी से वकील के बारे में पूछा, उन्हें बताया गया कि वकील आमतौर पर उस समय अदालत में होते हैं, और वे अदालत चले गए। वहां उन्हें पता चला कि मलाली वेंकटरामय्या बड़े मामलों या अंतिम बहस के दिन ही अदालत में उपस्थित होती हैं और बाकी सभी काम उनके कनिष्ठ संभालते हैं और मलाली घर पर रहती हैं। सत्यप्पा एक ऑटो से वकील के घर गए। रास्ते में ऑटो चालक ने मलाली वकील के बारे में आश्चर्य, श्रद्धा, सम्मान और प्रशंसा के साथ बात की। 'जी हां, महोदय, आपको ऐसा साहसी वकील कहीं नहीं मिलेगा।' आप देखिए, सिर्फ हमारे हसन में ही नहीं, चिक्कमगलूर, शिमोगा, तुमकुर और मांड्या से भी लोग आकर उसे अपना मामला पेश करने के लिए मनाते हैं और उससे वहां जाने का अनुरोध करते हैं। यहां तक कि अगर कोई व्यक्ति जज के सामने हत्या कर दे, इस वकील के पास आए, अपने किए का सच-सच ब्यौरा दे और उसके सामने आत्मसमर्पण कर दे, तो यकीन मानिए, वह बच जाएगा। अगर यह वकील अदालत में जिरह शुरू कर दे, तो पुलिसवाले, डॉक्टर, सब गवाहों के कटघरे में ही डर के मारे कांपने लगेंगे। वह पचास हजार से कम के मामले में हत्या का केस हाथ भी नहीं लगाएगा। आप कहां से हैं साहब? किस तरह की हत्या हुई है?' ऑटो चालक ने वकील के बारे में और जानकारी दी।

मलाली वेंकटरामय्या अब अपने पुराने, विशाल और हवादार घर में नहीं रहते थे। उन्होंने वह घर सरकार को किराए पर दे दिया था और नए हिस्से में एक आलीशान इमारत बनवाकर वहीं रहने लगे थे। जी हाँ, वह सचमुच एक महल जैसी इमारत थी, जिसके चारों ओर एक बड़ा बगीचा था। बगीचे में सीमेंट की बेंचें, फूलों के पौधे, पेड़-पौधे और एक बैडमिंटन कोर्ट भी था। सत्यप्पा ने ड्राइवर को किराया दिया और घर में प्रवेश किया, आगंतुकों के लिए बनी जगह पर बैठ गए। एक सहायक बाहर आया और सत्यप्पा को रुकने के लिए कहा। वे काफी देर तक इंतजार करते रहे, लेकिन किसी ने उन्हें अंदर नहीं बुलाया। उन्होंने सहायक से फिर पूछा, जो दोबारा बाहर आया था। सहायक ने कहा, 'मैंने बॉस को आपका नाम और जिस काम के लिए आप आए हैं, वह बता दिया है। देखिए, हमारे सांसद

और पाँच विधायक अंदर एक चुनावी मामले पर चर्चा कर रहे हैं। उनके बाहर आने के बाद मैं आपको बता दूँगा।'
तीन बजते ही सभी छह लोग बाहर आ गए। उनके चेहरों पर भी वकील के प्रति श्रद्धा और सम्मान का भाव स्पष्ट था। फिर वकील नाश्ता करने अंदर चले गए। आधे घंटे बाद सहायक ने सत्यप्पा को वकील के कक्ष में भेजा। मलाली वेंकटरामय्या द्वारा इस्तेमाल की जाने वाली मेज और कुर्सी की कीमत पंद्रह से बीस हजार रुपये थी। कार्यालय में सोफे और अन्य फर्नीचर की कीमत का अंदाजा कौन लगा सकता है? दीवार में लगे लगभग पच्चीस बुककेसों में कानून की मोटी-मोटी किताबों के ढेर लगे थे। यह ऐसा प्रदर्शन था कि कक्ष में प्रवेश करने वाला मुवक्किल भयभीत या अचंभित हो जाता। सत्यप्पा ने वकील को प्रणाम किया, अपना परिचय दिया, मेज के सामने एक कुर्सी पर बैठ गए और मंजय्या की हत्या के बारे में बात शुरू की। तब वकील ने कहा, 'अरे, क्या यह वही मंजय्या है? जब मैंने आज सुबह हसन के अखबारों में पढ़ा, तो मुझे लगा कि यह वही होगा। पिछले साल बाग में हुई हत्या के मामले में मैंने उसे सजा से बचाया था। अब उसी की पत्नी ने उसके साथ यह किया है - जी हां, जी हां, जी।' मुझे सब पता है। मुझे अनावश्यक विवरण नहीं चाहिए। बस मुख्य बातें बताइए।' सत्यप्पा जब अपनी कहानी सुनाते रहे, तो वकील अपने मन में कुछ सरल लगने वाली बातों को स्पष्ट कर रहे थे; आरोपी मानसिक रूप से मुकदमे का सामना करने के लिए अयोग्य है, हत्या करते समय उसका दिमाग उसके वश में नहीं था; गवाह... मनोचिकित्सक का प्रमाण पत्र जिसमें कहा गया है कि अब भी उसका दिमाग खराब है, अब भी वह अदालत में केवल सच बोलने पर अड़ी है और यही इस बात का प्रमाण है कि वह मानसिक रूप से विक्षिप्त है; अपने पति की हत्या के मामले में झूठी गवाही देने का अपराधबोध, उसने असामान्य मानसिक स्थिति में उसका लिंग काट दिया था, उस आदमी का जिसने माँ और बेटी को धोखा दिया था और दोनों के साथ सोया था। लेकिन उसे मारने का उसका कोई इरादा नहीं था, निश्चित रूप से उसका ऐसा कोई इरादा नहीं था। लेकिन वकील ने सत्यप्पा से खुलकर कुछ नहीं कहा। सत्यप्पा के अपनी कहानी पूरी करने के बाद, वकील ने कहा, 'देखिए, यह बहुत जटिल मामला है। इस मामले की जड़ें कई जगहों तक फैली होंगी।' हमें उन्हें ढूंढना होगा और मुकदमा जीतना होगा। हालांकि आप तुमकुर जिले से हैं, लेकिन आपको यह जरूर पता होगा कि मलाली कभी पराजित नहीं होती और उसने अपना दाहिना

हाथ फैलाकर सभी उंगलियां दिखाईं। सत्यप्पा को ठीक से समझ नहीं आया कि पांच उंगलियां थीं या पचास।
उन्होंने कहा, 'कृपया मुझे स्पष्ट रूप से बताएं।'
वकील ने कहा, 'पचास।'
सत्यप्पा ने कहा, 'देखिए महोदय, मेरा इस आरोपी से किसी भी तरह का कोई संबंध नहीं है। मैं उसे जानता तक नहीं। मैं निम्न मध्यम वर्ग से ताल्लुक रखने वाला एक किसान हूं और महात्मा गांधी के सिद्धांतों में विश्वास रखता हूं।'
वकील को गुस्सा नहीं आया। उन्होंने अपना दाहिना हाथ हजारों किताबों की ओर घुमाते हुए कहा, "देखिए, इन कानून की किताबों की कीमत लाखों-लाखों रुपये है। मेरे सहायकों और मुझे हर मामले के लिए इनमें खोजबीन करनी पड़ती है और यह देखना पड़ता है कि अन्य अदालतों ने किन मामलों पर क्या फैसला सुनाया है। अगर आपको ऐसा वकील चाहिए जो बिना फीस लिए आपका केस लड़े, तो इस कस्बे की एक चौथाई आबादी ऐसे वकील मौजूद हैं। खैर, आप तीस हजार रुपये दे दीजिए।"
'सर, मैं कर्तव्य की भावना से प्रेरित होकर न्याय के लिए लड़ने आया हूं।'
'तो क्या आप मेरा शोषण करके न्याय पाना चाहते हैं?' वकील ने ऐसे पूछा मानो किसी चाकू से काट रहा हो।
"जी नहीं महोदय, मैं आपसे यह अनुरोध नहीं कर रहा कि आप बिना फीस लिए इस मामले को संभालें। मुझे पता है कि आपके भी कुछ खर्चे होते हैं। मैं यहाँ एक असहाय महिला की मदद करने के इरादे से आया हूँ, लेकिन मेरी आर्थिक स्थिति भी इसका एक हिस्सा है। आपसे निवेदन है कि फीस तय करते समय इस बात का ध्यान रखें। मुझे भली-भांति पता है कि आपकी बौद्धिक क्षमता के लिए एक लाख रुपये भी पर्याप्त नहीं होंगे," सत्यप्पा ने बहुत ही विनम्रता से लेकिन दृढ़ता से कहा।
'अगर ऐसा है तो मुझे पच्चीस रुपये दे दो और बाकी खर्चा खुद उठा लो। ठीक है, देखो, तुम खुद उस लड़की का गर्भपात मत कराओ। पुलिस को सूचना दो, सरकारी जिला सर्जन से प्रमाण पत्र लो कि लड़की इतने महीने और दिन की गर्भवती है, गर्भपात के लिए उसकी सहमति लो और उसके बाद ही गर्भपात कराओ। नहीं तो महत्वपूर्ण सबूत नष्ट हो जाएंगे। तुम उस लड़की को यहाँ लाओ, ठीक है? अभी मैं व्यस्त हूँ। तुम परसों यहाँ आना। मैं एक बार फिर उस नारायण मूर्ति को खूब पसीना बहाने पर मजबूर कर दूंगा,' उसने कहा और उठ गया।

सत्यप्पा समझ गया कि फीस को लेकर अब और मोलभाव की गुंजाइश नहीं है। उसने वकील से विदा ली और बाहर आ गया।

चूंकि यह कस्बे के बाहरी इलाके में स्थित एक इलाका था, इसलिए सत्यप्पा को ऑटो नहीं मिल सका। वह पैदल ही बस स्टैंड तक गया और एक होटल में खाना खाया। जब तक वह चन्नरायपट्टाना पहुंचा, रात के 8 बज चुके थे। उसे पता ही नहीं चला कि बस चन्नरायपट्टाना पहुंच चुकी है, क्योंकि उसका दिमाग पैसों के इंतजाम के बारे में सोच में डूबा हुआ था। अगर वकील को पूरे पच्चीस हजार देने थे, तो बाकी खर्चों के लिए कम से कम पांच हजार और चाहिए थे। इतनी बड़ी रकम का इंतजाम कैसे किया जाए? अगर उसने मलाली की जगह किसी साधारण वकील को रखा, तो लक्कू का क्या होगा? वह बस से उतरा और सावित्री के घर की ओर चला, लेकिन घर बंद था। वे कहां गए होंगे? उसे याद आया कि उसने भी उन्हें नहीं बताया था कि वह हसन जा रहा है। जब उसने सामने वाले घर में पूछताछ की, तो उसे पता चला कि भाई-बहन आखिरी बस से बिलिकेरे के लिए निकल गए हैं। जब उसे पता चला कि उन्होंने चाबी नहीं दी है, तो वह मुख्य गली में आ गया। उसका बैग सावित्री के घर में था। यह बात भी भूलकर, वे अचानक बिलिकेरे के लिए क्यों निकल पड़े? सत्यप्पा ने सोचा कि शायद लक्कू की बेटी लता से मिलने गए होंगे। दो मिनट बाद उन्हें याद आया कि पुलिस के कमरे में सावित्री बेहोश हो गई थी। क्या उसे इस बात का बहुत दुख हुआ था? रामकृष्ण मानें या न मानें, सावित्री को चक्कर जरूर आया होगा और वह बेहोश हो गई होगी। लेकिन सत्यप्पा को इस बात का जवाब नहीं मिल रहा था कि वे बिलिकेरे क्यों गए। साढ़े आठ बज चुके थे और बिलिकेरे के लिए कोई बस नहीं थी। उन्होंने पैदल बिलिकेरे जाने का फैसला किया। पाँच मिनट के अंदर वे एक होटल गए, रास्ते में खाने के लिए चार इडली और चटनी पैक करवाई और चल पड़े। उन्हें बस का रूट पता था। पैदल ढाई घंटे का सफर था। आधे घंटे में चांदनी हो जाएगी। वे चलते रहे।

रास्ते में, सत्यप्पा के मन में लक्कू की कही बातें और मंजय्या द्वारा अपनी जान बचाने के लिए साती की माँ के साथ अपने रिश्ते के बारे में कही गई बातें घूम रही थीं। मंजय्या जैसे व्यक्ति के लिए कुछ भी वर्जित नहीं था। सत्यप्पा को नहीं पता था कि साती की माँ किस तरह की स्त्री थी। इन दोनों बेटियों के स्वभाव को देखते हुए, मंजय्या की माँ के बारे में कही बातें सरासर झूठ थीं। क्या सबूत था, क्या प्रमाण था, सिवाय इसके कि मंजय्या ने इतने वर्षों बाद अपनी जान बचाने के लिए यह बात

कही थी? सत्यप्पा ने सोचा, साती स्वभाव से अत्यंत भावुक थी। चाँदनी निकलने के बाद, रास्ता साफ़ हो गया और वह आकाश, ज़मीन, पेड़ देख सका और अपनी याददाश्त के सहारे अंदाज़ा लगा सका कि वह कहाँ है। अब उसे लगा कि साती ने ही रामकृष्ण को ज़बरदस्ती बिलिकेरे वापस लाया होगा। वह जल्दी से बिलिकेरे पहुँचने के लिए बेचैन हो गया। उसने बिलिकेरे के तालाब में वह ऊँट-पत्थर देखा था। सीता ने उसे वह जगह दिखाई थी जहाँ से उसकी माँ फिसलकर मर गई थी। इतना ही नहीं, उसने रोते हुए उसे वहाँ तैरने से भी रोका था। सत्यप्पा के मन में भी शंका थी; औरतें, कपड़े धोने की तो बात ही छोड़िए, नहाने के लिए ऐसी जगह क्यों जाएँगी? भूख लगने पर वे चलते-चलते इडली खाते रहे और रात के 11:15 बज रहे थे जब वे बिलिकेरे के बाहरी इलाके में पहुँचे। सीधे घर जाने के बजाय, वे गाँव के तालाब की ओर मुड़ गए। उन्होंने खुद को यह कहकर तसल्ली दी कि चाँदी जैसी चाँदनी में पानी के उस विशाल विस्तार को निहार सकते हैं, लेकिन उनकी अंदरूनी बेचैनी कम नहीं हुई। चारों ओर देखते हुए वे तालाब के पास गए, ऊँट-चट्टान तक पहुँचे और तालाब के उस गहरे हिस्से के साफ पानी को निहारा। वे कुछ देर वहाँ खड़े रहे, चाँदी की थाली की तरह हल्की चमकते पानी के विस्तार को निहारते रहे और फिर लौट आए। गाँव से नाले के किनारे की ओर आते हुए उन्होंने दूर से किसी को अपनी ओर आते देखा। वे तेज़ी से बाईं ओर मुड़े और एक इमली के पेड़ के पीछे छिप गए। उन्होंने देखा कि वह एक औरत थी। दृढ़ कदमों से, बिना इधर-उधर मुड़े, वह ऐसे आ रही थी मानो किसी निश्चित लक्ष्य की ओर खिंची चली जा रही हो। सत्यप्पा का शक सही साबित हुआ। जी हाँ, यह साती ही थी। वह तब तक छिपा रहा जब तक वह आगे नहीं बढ़ी। सत्यप्पा ने सोचा; पहले उसे जाने दो और उस चट्टान पर खड़े होने दो। जब वह मृत्यु के कगार पर पहुँचेगी, तब उसे मेरे शब्दों का अर्थ समझ आएगा। उससे पहले, मैं जो कुछ भी कहूँगा, वह उसके दिमाग में नहीं आएगा। वह फिर से उसी रास्ते पर मौत की तलाश में आ जाएगी। उसने सोचा, जो भी आत्महत्या करता है, वह असल काम करने से पहले तीन-चार मिनट तक स्थिर खड़ा रहता है। सावित्री आगे बढ़ी। सत्यप्पा ने अपनी चप्पलें पेड़ के नीचे छोड़ दीं और दबे पांव धीरे-धीरे तालाब की ओर बढ़ा। सावित्री ने नाला पार किया, तालाब के किनारे पर चढ़ी, पानी में उतरी और ऊँट-चट्टान पर खड़ी हो गई। सत्यप्पा उसके पीछे-पीछे गया। उसे पूरा भरोसा था कि अगर उसके पहुँचने से पहले वह गहरे पानी में गिर भी गई, तो वह तैरकर उसे ऊपर खींच लेगा। वह

चट्टान पर एक मूर्ति की तरह खड़ी थी। सत्यप्पा समझ गया कि वह अपने विचारों के अंतिम क्षण में थी और यही वह आखिरी पल था जो तीव्र उन्माद और भावनाओं को क्रिया में बदल देगा। धीमी आवाज़ में उन्होंने 'साती' कहकर पुकारा। ऐसा लगा जैसे उसने सुना ही न हो। फिर उन्होंने थोड़ी ऊँची आवाज़ में 'साती' कहकर पुकारा और तेज़ी से उसके पास चले गए। जब तक वह मुड़कर देखती, वे उसके बिल्कुल करीब पहुँच चुके थे और दोनों को आमने-सामने खड़ा होना पड़ा। सत्यप्पा ने उसे छुआ तक नहीं। उन्होंने उसे पकड़ा तक नहीं। वे बस उसके चेहरे को देखते हुए खड़े रहे। वह आश्चर्य और निराशा की अवस्था से बाहर निकल चुकी थी और एक मूर्ति की तरह स्थिर खड़ी थी। सत्यप्पा ने कहा, 'बैठ जाओ साती, मुझसे बात करने के बाद तुम जाकर खुद को डुबो सकती हो।' उनके शब्द उसके कानों तक पहुँचे ही नहीं। उन्होंने हाथ फैलाए, उसके कंधे पकड़े, उसे बिठाया और उसके सामने बैठ गए। उसके पीछे और बाईं ओर चमकता हुआ, आकर्षक सफेद पानी फैला हुआ था। दाईं ओर भी थोड़ी दूरी तक पानी फैला हुआ था और वहाँ टंकी के निकास की दीवार थी। फिर भी सावित्री को अपने सामने बैठे हुए अपने भाव का एहसास नहीं था।

सत्यप्पा बोलने लगे, 'देखो साती, सुबह तुम और रामकृष्ण घर गए थे। मैंने लक्कू की सारी बातें सुन लीं। उसका मन सामान्य स्थिति से भटक गया है और पूरी तरह से एक अलग ही सांचे में ढल गया है। ऐसी हालत में किसी स्त्री के लिए अच्छा वकील कौन रखेगा? मैं हसन गया था और मलाली वेंकटरामय्या को वकील बना लिया है। उनकी फीस पच्चीस हजार और अतिरिक्त खर्चे पांच-छह हजार रुपये हैं। इतनी रकम का इंतजाम कैसे करूं, यह सोचते हुए मैं चन्नरायपट्टाना आया, लेकिन तब तक तुम दोनों बिलिकेरे के लिए निकल चुके थे। अब मैं पैदल चलकर यहां आया हूं। अचानक मेरे मन में आया कि तुम बिलिकेरे क्यों आई थी और फिर मुझे लगा कि तुम जरूर इस जगह पर आओगी। जानती हो कैसे? तुम्हें पता है, मैंने आत्महत्या करने का फैसला किया था। तब मैंने सोचा था कि जिस जगह मैंने पाप किया है, वहीं अपनी जान दे दूं। पहले मैंने मंजय्या के उपवन की कुटिया में फांसी लगाने का सोचा था। ठीक इसी जगह पर तुम मंजय्या से मोहित हुई थी।' और इसी जगह तुम्हारी माँ ने अपनी जान गंवाई थी। इसलिए मुझे लगा कि तुम ज़रूर यहाँ आओगे। तो मैं डर गया: अगर मेरे आने से पहले तुम पानी में गिर गए होते तो क्या

होता? मैं लगभग दौड़ता हुआ आया, यहाँ खड़ा हुआ, चाँदनी में इस गहरे पानी को देखा और वापस जाने लगा। क्या तुम सुन रहे हो?
सावित्री कुछ नहीं बोली। लेकिन सत्यप्पा को पता था कि उसकी चेतना, उसकी समझ, इस दुनिया की ओर मुड़ रही है और उसके शब्द उसके मन में प्रवेश कर रहे हैं। कुछ देर तक वह चुप रहे। फिर उन्होंने कहा, 'मुझे नहीं पता कि तुम वही करती जो लक्कू ने किया। अगर तुम्हें पहले पता होता, तो क्या तुम ऐसा नहीं करती? अब बताओ, क्या उसे सजा से बचाना तुम्हारा कर्तव्य नहीं है? कुल तीस हजार रुपये चाहिए। मैं जितना संभव होगा उतना जुटा लूँगा। क्या तुम बाकी पैसे दोगी? या हम तुम्हारे कुछ गहने इस्तेमाल कर सकते हैं। हम उन्हें बेचकर पैसे जुटा सकते हैं।' सावित्री चुप रही। सत्यप्पा ने फिर पूछा, 'बताओ साति, क्या तुम पैसे दोगी? मुझे पता है तुम दोगी।'
सावित्री ने अपना हाथ अपने गले पर रखा, अपनी सोने की मांगल्य माला उतारी, हाथों से सोने की चूड़ियाँ उतारीं और सब कुछ समेटकर उसके सामने रख दिया। उसने गहने लेकर कहा, 'साती, मुझे पता था कि तुम ज़रूर दोगी। अगर हम इसे बेच दें तो पंद्रह-बीस हज़ार मिल जाएँगे। अगर मैं इन्हें अपनी जेब में रखूँ तो झुकते समय गिर सकते हैं।' ऐसा कहते हुए उसने उसकी साड़ी का किनारा पकड़ा, उसमें गहने रखे और तीन गांठें बाँध दीं। वह चुपचाप बैठी रही। कुछ देर बाद उसने पूछा, 'लक्कू की बेटी लता इसी गाँव में रहती है। वह एक जवान लड़की है। मुझे नहीं पता कि उसने अब तक क्या किया होगा और कौन उसे दिलासा दे रहा है। हम दोनों को जाकर उसकी देखभाल करनी चाहिए।'
सावित्री अब होश में आकर बोली, मानो उसे समझ आ गया हो कि उसने क्या कहा है। 'भाव, मैं तुम्हारी योजना समझ गई। तुमने ये गहने मेरी ही साड़ी में बाँधे हैं। इसका मतलब है कि मुझे तुम्हारे साथ चलकर इसे किसी जौहरी को बेचना चाहिए। मैं यह ज़िम्मेदारी नहीं लेना चाहती। वैसे भी मैं मरने वाली हूँ और सोना पहने मरना नहीं चाहती थी। घर पर इसे उतारकर यहाँ आने का ख्याल ही नहीं आया। कम से कम ये लक्कू के काम आ जाएँ। इसीलिए मैंने इन्हें उतारकर तुम्हें दे दिया। कृपया इन्हें ले लो,' ऐसा कहते हुए वह गाँठ खोलने लगी।
सत्यप्पा ने उसका हाथ पकड़कर कहा, "अगर तुम इन्हें उदासीनता से और इस सोच के साथ दोगी कि 'मैं तो वैसे भी मरने वाला हूँ, मुझे इनकी परवाह क्यों करनी चाहिए', तो यह पुण्य कर्म नहीं होगा। तुम्हें खुद आना चाहिए। इन्हें बेचकर पैसे दे

दो। इतना ही नहीं, तुम्हें अदालत जाकर उसका समर्थन भी करना होगा। कृपया समझो।"
सावित्री ने अपना सिर घुमाकर उसके चेहरे की ओर देखा। वह दृढ़ आँखों से उसे निहार रहा था। तभी अचानक वह रोने लगी। अब सत्यप्पा को हिम्मत मिली। उसने कहा, "भाव, मुझे वह स्त्री अच्छी तरह याद है, जिसे मैं अपनी माँ कहती थी। जब वह गुज़र गई, तब मैं केवल पाँच वर्ष की थी। उसके बाद, जब मैं दस या बारह वर्ष की थी, तो हमारी गली के कई लोग कहते थे, "तुम बिल्कुल अपनी माँ की प्रतिरूप हो, आँखें, नाक, भौंहें, ठोड़ी, सब कुछ। मानो वह स्वयं पुनर्जन्म लेकर आई हो। देखो, अन्नय्या भी कई दिनों तक मुझे अम्मय्या कहकर बुलाते थे। तब मुझे गर्व महसूस होता था। लेकिन अब..." उसने कहा और तुरंत उठकर पानी की ओर मुड़ गई।
सत्यप्पा भी उतनी ही फुर्ती से उठे, उनका हाथ पकड़ा और बोले, 'सुनो साती, मेरी बात ध्यान से सुनो। वह औरत तुम्हारी माँ है और मेरी सास। लक्कू ने जो कहा, वह सच भी हो सकता है और मंजय्या का गढ़ा हुआ झूठ भी। चाहे वह सच ही क्यों न हो, मैं अपनी सास का अनादर नहीं करूँगा। मुझे एक बात बताओ। क्या अब से तुम्हारी अन्नाय्या तुम्हारी माँ की वार्षिक रस्म करना बंद कर देंगी?'
उन्होंने कहा, "नहीं, मुझे लगता है कि वह नहीं रुकेंगे। आप जानते हैं, उन्होंने मंजय्या के अंतिम संस्कार का भार अपने कंधों पर ले लिया है। मैंने उनसे पूछा, "यह जानने के बाद भी क्या आप अन्य संस्कार करेंगे?" उन्होंने उत्तर दिया, "हाँ, मैं करूँगा। चाहे माता हों या पिता, यदि उन्होंने कोई पाप किया है तो यह उनकी जिम्मेदारी है। लेकिन, यदि हम इस कारण श्राद्ध करना छोड़ दें, तो यह हमारे कर्तव्य का उल्लंघन होगा। क्योंकि कोई और नहीं था, इसलिए मैंने मंजय्या का अंतिम संस्कार किया। जिसने अंतिम संस्कार किया है, उसे अन्य संस्कार भी करने चाहिए। अब मैं अपने कर्तव्य से कैसे बच सकता हूँ, क्योंकि मुझे पता चला कि उनका और मेरी माता का नाजायज संबंध था? उस प्रेत को परलोक में प्रवेश दिलाने में सहायता करना मेरा कर्तव्य है। उसके गुणों और पापों का न्याय करना यमधर्म का कर्तव्य है।"
सत्यप्पा ने सावित्री की बांहें पकड़ीं, उसे नीचे खींचा और कहा, 'तुम्हें भी उनके जैसा सोचना चाहिए। आओ, यहाँ बैठो, मैं तुम्हें बताता हूँ।'

उसने विरोध किया, उसकी पकड़ से भागने की कोशिश की और कहा, 'नहीं, नहीं भावा, मुझे मजबूर मत करो, मैं जीना नहीं चाहती, मुझे मरना होगा।'
उसने पूछा, 'मरने से तुम्हें क्या लाभ होगा?' उसे कोई जवाब नहीं सूझा। उसने फिर पूछा, 'बताओ, तुम्हें क्या लाभ होगा? तुम्हें मुझे जवाब देना चाहिए। अगर तुम मुझे यकीन दिला दोगी, तो मैं तुम्हें नहीं रोकूंगा।'
सावित्री ने कहा, 'आप चतुर हैं और मुझसे ऐसे सवाल पूछ रहे हैं जिनका मैं जवाब नहीं दे सकती और मुझे चुप करा रहे हैं।'
नहीं, साती, यह कोई चालाकी नहीं है। मैं भी गले में फंदा डालकर पेड़ पर बैठा था। नीचे कूदने से पहले, मेरे मन में भी यही सवाल उठा था। इसका कोई जवाब नहीं था। बल्कि, अगर मैं जीवित रहता तो करने के लिए सैकड़ों काम होते।
मुझे पता है तुम क्या कहने वाले हो।
मैं अभी ग्राम सुधार की बात नहीं कर रही हूँ। पहला काम लक्कू और उसकी बेटी की देखभाल करना है। दूसरा काम आपको करना चाहिए। सिर्फ़ आप ही कर सकती हैं। आपको नहीं पता कि तिपतुर में क्या हो रहा है। क्या आपको पता है, गणेश जी मंजय्या का छोटा रूप बनते जा रहे हैं? मुझे पता है क्योंकि मैं अक्सर तिपतुर जाती हूँ। आपके घर में मंजय्या! अरे परमेश्वरय्या के पुत्र रामकृष्णय्या ने अपने घर में मंजय्या को जन्म दिया है! मुझमें मंजय्या को सुधारने की शक्ति नहीं थी। ऐसे व्यक्ति को सुधारने के लिए किसी महान महात्मा की उपस्थिति आवश्यक थी। दुर्भाग्य से, हमारे आस-पास ऐसा कोई महात्मा नहीं था। अगर होता, तो मंजय्या की इस तरह मृत्यु न होती। गणेश जी अभी युवा हैं और उन्हें सुधारा जा सकता है। आपको उनके पास जाना चाहिए, उनका हाथ थामना चाहिए, उन्हें अपने पास अकेले बिठाना चाहिए और मंजय्या से विवाह करने के कारण आपको जिन कष्टों और कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, उन्हें बताना चाहिए और उनसे पूछना चाहिए कि क्या वे भी मंजय्या जैसा बनना चाहेंगे। आप जानते हैं साती, आपके कथन और सलाह से जो प्रभाव या परिवर्तन आएगा, वह उसके पिता रामकृष्णय्या की सलाह से नहीं होगा। क्या आप समझते हैं?
'हां,' उसने कहा।
'आपको क्या समझ आया?'
'गणेश का मन उसके पिता के शब्दों की तुलना में मेरी सलाह और मेरी कठिनाइयों के वर्णन से कहीं अधिक पिघलता है!'

इतना ही नहीं, रामकृष्ण का जीवन निर्वृत्ति का है। वे सब कुछ त्याग सकते हैं। वे किसी भी चीज से खुद को अलग कर सकते हैं। लक्कू की बातों के बाद भी, उन्होंने मंजय्या का श्राद्ध करने का निश्चय किया। क्या साधारण लोगों के लिए बिना क्रोध और पश्चाताप के साढ़े छह लाख को जलाकर राख करना संभव है?! भला किसके लिए संभव है? यही उनकी शक्ति है। लेकिन, ऐसे लोगों को देखकर लोग डर जाते हैं और उनसे दूर चले जाते हैं। वे पास नहीं आते। क्या आप लोगों के पास जाए बिना उन्हें प्रभावित कर सकते हैं? अपने बेटे का मन जीतने में भी यही बात लागू होती है। देखिए, मैंने धीरे-धीरे रामचंद्र को विश्वास में ले लिया है और उनसे दोस्ताना तरीके से बात कर रही हूँ। रहने दीजिए। एक और बात। कानूनी तौर पर आप मंजय्या की पत्नी हैं। उनकी सारी संपत्ति आपकी है। लोहे की तिजोरी की चाबी, जो शव की कमर में बंधी कमरबंद में थी, पुलिस के पास है। तिजोरी में चांदी, सोना और कई अन्य कीमती सामान हो सकते हैं। यहां इतने सारे गीले खेत, सूखी जमीनें और बाग हैं। आप इन सबका क्या करेंगे?
'हे भाव, कृपया मुझमें इच्छा या लोभ उत्पन्न करने का प्रयास न करें। हालांकि मुझे उससे इतनी घृणा हुई है कि मैं उसकी संपत्ति को छूना भी नहीं चाहती।'
साती, देखो तुम तो रामकृष्ण की बहन की तरह बोल रही हो। तुम इसे हाथ भी मत लगाओ और मान लो कि तुम एक कानूनी दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर कर दो कि तुम्हारा उस संपत्ति से कोई संबंध नहीं है। फिर सरकार उसे अपने कब्जे में ले लेगी। तब क्या होगा? सरकार सारी संपत्ति नीलाम कर देगी और कुछ मंत्रियों के ऐशो-आराम के लिए एक छोटा सा विमान खरीद लेगी। इससे क्या फायदा होगा? मैं कहता हूँ, तुम उस धन का एक पैसा भी मत छूना। तुम्हें अपनी आजीविका केवल अपने वेतन से ही कमानी चाहिए। तुम्हें मंजय्या के धन का उपयोग जन कल्याण के लिए करना चाहिए। उसके बाग में वह झोपड़ी है, जिसका तुमने वर्णन किया था, याद है? तुमने वहाँ उसके द्वारा प्रतिदिन किए जाने वाले पाप और झूठ का वर्णन किया था। तुम्हें उसी स्थान पर एक परोपकारी संस्था शुरू करनी चाहिए। यदि तुम भय या शर्म से, या पाप से भयभीत होकर आत्महत्या कर लेती हो, तो वह आत्महत्या तुम्हारी प्रबल शक्ति पर विजय प्राप्त कर लेगी। बैठ जाओ, अभी और भी चर्चा करनी है। हसन में दो मील और चन्नारायपट्टाना से आठ मील पैदल चलने के कारण मुझे खड़े-खड़े थकान महसूस हो रही है।

सावित्री बैठ गई। सत्यप्पा उसके सामने बैठ गए और बोले, "देखो, हम दोनों को लक्कू की बेटी से मिलना चाहिए और उससे बात करनी चाहिए। हो सकता है वह तुमसे मुझसे ज़्यादा खुलकर बात करे। लगता है मंजय्या ने उसे कहा था कि वह उसके गर्भ में पल रहे बच्चे को गिरा देगा। इसीलिए वह डर गई और अपनी माँ के पास आ गई। मान लो, अब वह कहे, 'नहीं, मैं अपने बच्चे को नहीं गिराना चाहती। मैं उसे जन्म दूंगी और उसका पालन-पोषण करूंगी।' तो उसकी जीविका और बच्चे के पालन-पोषण के लिए कुछ देना होगा। उसे मंजय्या की संपत्ति में भी हिस्सा देना होगा। एक महात्मा घोर पापी से भी जन्म ले सकता है। अगर उचित वातावरण बनाया जाए और अच्छी शिक्षा दी जाए, तो वह बच्चा महान व्यक्ति बन सकता है। बच्चे को बचाना है या नहीं, यह फैसला लता को करना चाहिए। तुम्हें यह सब काम करना है। इसके अलावा, क्या तुम जानती हो कि मैं क्यों आया हूँ? मुझे तुम्हारा पत्र मिला।" उन्होंने उसके चेहरे की ओर देखा। उसके चेहरे के भाव से वे समझ गए कि उसकी याददाश्त उसी बात पर चली गई है। फिर उन्होंने कहा, 'अब बिलिकेरे में तुम्हारे कंधों पर बहुत सारी जिम्मेदारियाँ हैं। इसके अलावा, तुमने खुद ही सब कुछ स्पष्ट रूप से लिख दिया है। तुमने शारीरिक संबंध न रखने का फैसला कर लिया है। जब यह फैसला हो गया है, तो हम शादी करें या न करें, यह मायने नहीं रखता। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि मुझे तुम्हारी ज़रूरत नहीं है। तुम नहीं जानती कि मैं तुम्हें कितनी बार याद करता हूँ और तुम पर कितना निर्भर हूँ। मुझ पर तुम्हारा पूरा अधिकार है। चलो धीरे-धीरे तय करते हैं कि भविष्य में हमें क्या करना चाहिए। उठो, चलो घर चलते हैं। रामकृष्ण चिंतित हो सकते हैं और तुम्हें ढूंढते हुए आ सकते हैं।'

नहीं, मैं अपने कमरे में दरवाजा बंद करके सो गया था। मैंने दरवाजा बंद किया और बाहर आ गया।

क्या उसे यह नहीं पता कि सामने का दरवाजा या पीछे का दरवाजा अंदर से बंद नहीं होता?

सावित्री को अपनी गलती का एहसास हो गया। चांदनी में उसके चेहरे पर यह स्पष्ट दिख रहा था। सत्यप्पा ने कहा, 'क्या ऐसी मूर्ख स्त्री से संघर्ष करना मेरा कर्मफल नहीं है?' और हंस पड़ा। सावित्री के चेहरे की कठोरता थोड़ी कम हो गई।

हे नियन्त्रु, शुद्ध साक्षी होना कितना कठिन है – केवल जानना और कुछ न कह पाना, कुछ न कर पाना और कुछ न सुधार पाना? साक्षी के पास तो हो रहे या होने वाले अन्याय को रोकने की भी शक्ति नहीं होती। काश, मैं लता को बता पाती कि यह मंजय्या किस प्रकार का व्यक्ति था, तो उसे इस विपत्ति का सामना न करना पड़ता। जब मेरा पुत्र रामकृष्ण स्वयं आकाश में मुझसे विनती कर रहा था, प्रार्थना कर रहा था और मुझे खोज रहा था, "अप्पा, अप्पा, आपने मुझे क्यों नहीं बताया? आपने इसे क्यों छिपाया, अपने अंतर्मन में क्यों दबाए रखा?" मैं उसे उत्तर नहीं दे सकी। हे नियन्त्रु, मैंने आपका नियम समझ लिया है। जब तक मनुष्य इस संसार में विद्यमान है, तब तक उसके पास कुछ भी कहने, करने, रोकने और सुधारने की शक्ति होती है: यह सब उस अवस्था में कैसे संभव है जिसमें संबंध आपस में जुड़े हुए हैं? क्या ये सभी विभिन्न प्रकार के संबंध नहीं हैं? लेकिन मुझे अपने विचारों और टिप्पणियों को उस उद्देश्य तक सीमित रखना होगा जिसके लिए आपने मुझे अदृश्य रूप में उस दुनिया में वापस भेजा था। नियान्त्रु, मैं तुम्हें पहले मुख्य बात बता दूं। मंजय्या का यह आरोप कि अदालत में गवाह बनकर मैंने उसकी मदद करने के बजाय उसे ज़्यादा नुकसान पहुंचाया, सच है। अगर कोई गवाह न्यायाधीश के सामने हकलाता है, लड़खड़ाता है और बेहोश होने की तरह खड़ा रहता है, तो उस गवाह का महत्व न केवल नकार दिया जाएगा, बल्कि नुकसानदायक भी होगा। दरअसल, उसे लक्कू की गवाही के साथ बरी कर दिया गया था। उसने सावित्री को अपने घर पारिवारिक जीवन के लिए न ले जाने के अपने फैसले को सही ठहराने के लिए यही कारण दिया है। लेकिन, नियान्त्रु, मेरे शब्दों की सच्चाई और झूठ का फैसला परिणामों से नहीं होना चाहिए। मैं उस शनिवार को तिपतुर नहीं गया था, न ही मैंने मंजय्या को देखा था। लेकिन मेरे जीवन की गंभीरता खोने के लिए इतना ही काफी था। तब मुझे यह ज्ञान नहीं था कि मनुष्य का एक आंतरिक मन होता है। मैं जानता था कि केवल वही मन है जिसे मैं सचेत रूप से जानता हूं। फिर मैं सोचने लगा, क्या मैंने बदनामी या अपमान के डर से आत्महत्या करने का फैसला किया था? मैंने किसी दुर्गम पर्वत गुफा में, किसी सुनसान समुद्र तट पर या किसी वीरान

जंगल के बीचोंबीच आत्महत्या क्यों नहीं की? क्या मैंने उस जगह पर फांसी लगा ली जहाँ सारे गाँव वाले मुझे देखें और सब लोग मेरी सच्चाई को स्वीकार करें और कहें, "देखो, उसने सिर्फ एक झूठ बोलने पर खुद को ऐसी सजा दी?" क्या यह भी एक तरह की घोषणा है? नियान्तु, अब मुझे संकेत मिल रहे हैं कि जो सत्य स्वयं को प्रकट करता है, उसकी जड़ में झूठ की गहरी जड़ें होती हैं।
लेकिन यह सच है कि मैंने आत्महत्या कर ली क्योंकि सत्य खो जाने के बाद मुझे जीवन में कोई सहारा नहीं बचा था। लेकिन, नियान्तु, मैं तुम्हें बताना चाहता हूँ कि मैंने सत्य को अपने जीवन का आधार क्यों माना। जहाँ तक मुझे याद है, मैंने जानबूझकर कभी झूठ नहीं बोला। यह बात मुझमें शुरू से ही समाई हुई थी। अपनी पत्नी के व्यभिचार को देखने के बाद, झूठ और सत्य के बीच का अंतर मेरे मन में स्पष्ट होने लगा। मुझे यकीन हो गया कि मनुष्य या तो सत्य को अपनाएगा या झूठ को, बीच का कोई रास्ता नहीं है। तब मैं चालीस वर्ष का था, मेरी पत्नी पैंतीस वर्ष की थी। वह पाँच बच्चों की माँ थी, जिनमें से दो मर चुके थे और तीन जीवित थे। बेटा उन्नीस वर्ष का, बेटी पंद्रह वर्ष की और सबसे छोटी बेटी केवल पाँच वर्ष की थी। मैं अपने परिवार से खुश और संतुष्ट था। मैं अपने खेतों में खेती करके, मेहमानों का स्वागत करके और जो कुछ मेरे पास था, उससे संतुष्ट होकर खुशी-खुशी अपना जीवन व्यतीत कर रहा था। मैंने कभी अपनी पत्नी पर शक नहीं किया, क्योंकि शक का मतलब होता है रिश्ते में झूठ ढूँढना। भला कौन सा सामान्य बुद्धि वाला पति अपनी उस पत्नी पर शक करेगा जो अपने पति के लिए उपयुक्त और मददगार हो और बच्चों से स्नेह करती हो? हर दिन मेहमानों के खाना खाने और उनके साथ दोपहर का भोजन समाप्त करने के बाद, मैं थोड़ी देर आराम करता और फिर बाग में चला जाता। मैं सूर्यास्त तक और पक्षियों के अपने घोंसलों में लौटने तक काम करता और फिर घर लौट आता। एक दिन दोपहर के भोजन के बाद जब मैं बाग में गया, तो एक मजदूर ने मुझसे बीस रुपये अग्रिम मांगे। उसने गिड़गिड़ाते हुए कहा कि उसे पैसों की बहुत ज़रूरत है, क्योंकि उसकी पत्नी बीमार है। मैं पैसे लेने घर गया और सामने का दरवाज़ा खोला। वह अंदर से बंद था। मैं कभी ज़ोर से आवाज़ नहीं लगाता था। यह सोचकर कि शायद वह पीछे के आंगन में बर्तन धो रही होगी, मैंने पीछे के आंगन का छोटा गेट खोला और अंदर गया। वह वहाँ नहीं थी। मैंने सोचा कि वह सो रही होगी, उसे जगाना नहीं चाहिए, और एक पल के लिए वहीं खड़ा रहा। मुझे उस मजदूर को पैसे देने ही थे, क्योंकि उसकी

पत्नी बीमार थी। मेरे दिमाग में एक योजना आई। पीछे के दरवाजे पर लगी कुंडी को धीरे से उंगली से खोलना संभव था। रात में हम कुंडी या ताला खोल देते। मैंने उंगली से कुंडी हटाई, अंदर आया, सीधे अंदर चला गया। मैंने यह सब चुपचाप किया ताकि उसकी नींद में खलल न पड़े। उसी खामोशी से मैंने कमरे का दरवाजा खोला और अंदर चला गया। और हे भगवान, मैंने क्या देखा! पैंतीस साल की मेरी पत्नी, जिसने पाँच बच्चों को जन्म दिया था और तीन को बचाया था, अपने बेटे से थोड़े बड़े मंजय्या के साथ शारीरिक संबंध बना रही थी। मुझे देखकर उसका चेहरा पीला पड़ गया! मंजय्या बिजली की तरह उठा, थोड़ी सी जगह मिलते ही, उसने मुझे धक्का दिया और भाग गया! ये सब बातें अब यहाँ अनावश्यक हैं। इस घटना ने मुझे पूरी तरह से चकनाचूर कर दिया। देखो नियान्तु, विश्वास रिश्ते की नींव है। सच्चाई विश्वास का मूल सिद्धांत है। जिस व्यक्ति में ये दोनों ही नष्ट हो गए हों, उसके जीवन में क्या सहारा या क्या औचित्य रह सकता है? इस घटना के सातवें दिन, मेरी पत्नी गाँव के तालाब के गहरे पानी में डूब गई और उसकी मृत्यु हो गई। लेकिन मुझे बच्चों का पालन-पोषण करने और उन्हें अपने पैरों पर खड़ा करने के लिए जीवित रहना पड़ा। मैं जीने के लिए किस सहारे पर निर्भर रह सकता था? क्या यह स्वाभाविक नहीं है कि मनुष्य उस चीज़ का विशेष ध्यान और लगाव के साथ अभ्यास करे जिससे वह वंचित रहा हो? इसलिए, सत्य ही मेरा परम सहारा बन गया। परन्तु, नियान्त्रु, यह मत सोचो कि यदि मुझे ऐसा आघात न लगा होता तो मैं सत्य को ग्रहण न कर पाता। किसी भी नई चीज़ को, जो स्वाभाविक रूप से आप में न हो, धारण करना और उसे परम सद्गुण में विकसित करना संभव नहीं है। नियान्त्रु, सत्य और असत्य पर चर्चा करना मेरा उद्देश्य नहीं है!

'उसके बाद तुमने उससे क्या पूछा?' प्रेत ने तुरंत पहचान लिया कि यह भावहीन और अधिकारपूर्ण आवाज नियान्त्रु की थी।

नहीं, मैंने उससे कुछ नहीं पूछा। मैंने पैसे लिए और वापस बाग में चला गया। मैं उस दर्द, पीड़ा, दुख और निराशा का वर्णन नहीं कर सकता जो मैंने सहन की। मैंने मन को दृढ़ किया और घर लौट आया। मेरी पंद्रह वर्षीय बेटी सीता खाना बना रही थी। उसने बताया कि पंद्रह दिन बाद उसकी माँ को फिर से माहवारी आ गई है। मेरी पत्नी माहवारी वाली महिलाओं के लिए निर्धारित अलग स्थान पर बैठी थी। मैंने उस तरफ मुड़कर नहीं देखा। मेरी बेटी खाना बना रही थी। मेरा बेटा हसन में पढ़ रहा था। मेरी पाँच वर्षीय दूसरी बेटी हमारे घर और पड़ोस के घरों में खेल रही

थी। तीन दिन बीत गए, चार, पाँच, छह और फिर सात। हमेशा की तरह, माहवारी वाली महिला को गाँव के तालाब में जाकर स्नान करना चाहिए और खुद को शुद्ध करना चाहिए। लेकिन, मेरी पत्नी बाहर नहीं गई। ऐसा लग रहा था कि उसने अपनी बेटी द्वारा परोसे गए भोजन का आधा ही खाया। मैंने उससे नहीं पूछा कि क्यों। हमारे बीच न तो पूछने के लिए कुछ बचा था और न ही कहने के लिए। मैं उन शब्दों को कहाँ से ला सकता था जो थे ही नहीं? मैंने उसे एक शब्द भी नहीं कहा, न ही फटकारा, और न ही उसकी ओर अपना चेहरा दिखाया। सात दिन बीतने के बाद, आठवीं सुबह, शायद भोर होते ही, उसने अपनी बेटी सीता से कहा कि वह गाँव के तालाब में स्नान करने जा रही है। भोर होते-होते, दो-तीन लोग दौड़ते हुए आए और मुझे बताया, 'आपकी पत्नी ऊँट-पत्थर पर स्नान करने गई थी, फिसल गई, डूब गई और मर गई।' 'क्या मैं उसकी मृत्यु का कारण था?' यह सवाल मुझे सताता रहा। सच में, मैंने कभी सोचा भी नहीं था कि वह ऐसा कुछ करेगी। मैं पूरी तरह से अपने दुख और चिंता में डूबा हुआ था। फिर मैंने एक बात तय की। मृत महिला की प्रतिष्ठा और उसके बच्चों के मन में अपनी माँ के प्रति जो आदर था, उसे नष्ट करके क्या हासिल किया जा सकता था? और तो और, उस आदर को नष्ट करने का मुझे क्या अधिकार था? इस प्रकार, जिस प्रकार सत्य मेरे जीवन का आधार बन गया, उसी प्रकार मौन भी मेरा स्वभाव बन गया।

चित्रगुप्तों की आवाज ने बीच में दखल देते हुए कहा, 'जब सावित्री ने मंजय्या से विवाह करने पर जोर दिया, तो तुमने मन ही मन इस सत्य को प्रकट करने का निर्णय ले लिया था।'

हां, मैंने उसे बताने का फैसला कर लिया था। लेकिन वह जिद्दी लड़की थी। मंजय्या के इतिहास और स्वभाव को भली-भांति जानते हुए भी, वह उससे शादी करने पर अड़ी रही। बार-बार कहने का कोई फायदा नहीं था। अगर मैंने यह सच बता दिया होता, तो मैं इसे टाल सकती थी। लेकिन इस सच के सामने आने से उसे और मेरे बेटे रामकृष्ण को कितना दुख सहना पड़ता? क्या यह उचित था कि बच्चों के मन में पिछले बारह वर्षों से अपनी मृत मां के प्रति जो सम्मान का भाव था, उसे नष्ट कर दिया जाए? यह सवाल मुझे सताता रहा। अगर सावित्री मंजय्या से शादी करके अपना जीवन बर्बाद कर लेती है, तो यह उसकी जिम्मेदारी है: लेकिन मैंने सच न बताने का फैसला किया। लेकिन तब मुझे यह ख्याल नहीं आया कि सच को छिपाना भी एक तरह की मानसिक कैद है।

प्रेत ने इतना ही बताया और चुप हो गया। चारों ओर सन्नाटा छा गया। उसे आशंका थी कि नियान्त्रु शायद कुछ सवाल पूछेगा। थोड़ी देर बाद नियान्त्रु ने कहा, 'तुम कुछ कहना चाहते हो। जो मन में है कहो।'

'नियंत्रु, बस दो ही बातें हैं: मैंने इस भ्रम में आत्महत्या की कि इससे समस्या हल हो जाएगी। जीते जी इंसान कहीं भी जा सकता है, जो चाहे सोच सकता है, लेकिन आत्महत्या करने वाले का मन एक ही अपरिहार्य स्थिति में सिमट जाता है और सीमित हो जाता है। अब मुझे लगता है कि अगर मैं जीवित रहता, तो प्रायश्चित के रूप में करने के कई तरीके खोज सकता था। दूसरी बात यह है: मेरी पत्नी जानकी मासिक धर्म वाली महिलाओं के लिए आरक्षित स्थान पर सात दिनों तक सिर झुकाकर बैठी रही। तब, मुझे लगता है, मैं पूरी तरह से अपने टूटे हुए विश्वास के दर्द में डूबा हुआ था। मैंने यह समझने की जरा भी कोशिश नहीं की कि उसने ऐसा क्यों किया। मैंने यह समझने की कोशिश नहीं की कि उसके साथ क्या हो रहा था। अगर मैंने समझने की कोशिश की होती और उससे खुलकर बात की होती, तो शायद वह भी आत्महत्या न करती। मेरी आत्महत्या को पलायनवाद माना जा सकता है। लेकिन अब मुझे लगता है कि उसकी आत्महत्या के पाप का कम से कम एक हिस्सा मुझ पर भी लागू होता है।' हे प्रभु, नियान्त्रु, मैंने बाद में सोचा – मेरी पत्नी मंजय्या की ओर क्यों आकर्षित हुई, जो उसके पुत्र की उम्र का था? मुझे इसका उत्तर नहीं मिला। आज भी मैं इसका कारण जानना चाहता हूँ। आपने मुझे उस दुनिया के पात्रों के मन में झाँकने और वहाँ क्या घटित होता है, यह जानने की विशेष शक्ति दी है। लेकिन जानकी यहाँ है। मुझे नहीं पता कि वह किस हालत में है और आप सब कुछ जानते हैं। आप स्वयं बताइए, उसने ऐसा क्यों किया?!

नियान्त्रु ने कहा, 'मैं जानकी की प्रेत को यहाँ बुलाऊँगा। तुम उससे आमने-सामने बात करो।'

परमेश्वरय्या के प्रेत ने अपनी अनिच्छा या असहमति को मौन के माध्यम से व्यक्त किया।

नियान्त्रु की आवाज ने पूछा, 'क्यों, क्या तुम्हें जानने में कोई दिलचस्पी नहीं है? क्या तुम्हें जानने की कोई इच्छा नहीं है?'

नहीं, महाराज, ऐसा नहीं है। तीस वर्ष पहले उसने मेरी मृत्यु का सामना करने में कठिनाई महसूस करते हुए अपनी जान गंवाई थी। सभी शास्त्रों में लिखा है कि यमलोक में हर परीक्षा के बाद दंड दिया जाता है। अब तक वह उस दंड को काफी

हद तक भुगत चुकी होगी। अब मेरे सामने आना उसके लिए आपके द्वारा दिए गए दंड से भी कहीं अधिक भीषण दंड हो सकता है। मैं मानता हूँ कि दंड देना आपका कर्तव्य है। लेकिन आप मुझे दंड के साधन के रूप में क्यों इस्तेमाल कर रहे हैं?
नहीं, आपने पूरी तरह से गलत समझा है। देखिए, मानव जगत में एक को दूसरे को दंडित करने के साधन के रूप में इस्तेमाल करना आम बात है। लेकिन इस धर्मलोक में, प्रत्येक व्यक्ति अपने दंड के लिए स्वयं जिम्मेदार है। इसी प्रकार, प्रत्येक व्यक्ति अपने सुख का स्वयं निर्माता है। लोहे के कौवे, उबलते तेल का कड़ाहा, जलता चूल्हा, कड़ाही - ये सब मनुष्य जगत की काल्पनिक रचनाएँ मात्र हैं। आप उसे देख सकते हैं और उसके वचन सुन सकते हैं, केवल अपने ज्ञान के लिए। लेकिन आप उसे दिखाई नहीं देंगे। उसे आपके यहाँ होने का ज्ञान नहीं होगा। क्या आप सहमत हैं?
'जी हे प्रभु, यह आपकी कृपा है।' यह कहने के बाद प्रेत ने अपने स्थान से स्थानांतरित होने का अनुभव किया। परन्तु स्थान परिवर्तन की इस विचित्रता से वह विचलित नहीं हुआ, क्योंकि वह समझ चुका था कि यहाँ स्थान, क्षेत्र और अंतरिक्ष पूरी तरह से भिन्न हैं। वह शांत रहा। परमेश्वरय्या की दृष्टि के केंद्र में एक प्रेत प्रकट हुआ, जो केवल एक गेंद के समान इच्छा-पिंड था, अंगूठे के आकार का, जिसमें आँखें, नाक, मुख, हाथ और पैर जैसे कोई स्पष्ट अंग नहीं थे। परमेश्वरय्या के प्रेत को यह ज्ञात नहीं था कि वह नया प्रेत स्वतः गतिमान था या अंतरिक्ष की गति से उत्पन्न एक अनुभूति थी। वह प्रेत केवल स्वयं को ही देख रहा था।
नियान्त्रु की वाणी ने नवगठित प्रेत से प्रश्न किया, "तुम अपने पूर्व जीवन से इतने लंबे समय तक विमुख रहे हो और तुमने उसका कुछ दंड भुगता है। मैंने तुम्हें यहाँ नई जानकारी प्राप्त करने के लिए बुलाया है। क्या तुम चित्रगुप्तों के बजाय स्वयं ही उत्तर देने जा रहे हो?"
'जी महाराज।'
'आपका नाम जनकम्मा था। आपकी मृत्यु के समय आपकी आयु पैंतीस वर्ष थी। आपके बच्चे वयस्क थे। आपने मंजय्या नामक एक व्यक्ति के साथ शारीरिक संबंध बनाए, जो लगभग आपके पुत्र की आयु का था। आपने ऐसा क्यों किया? क्या आपके पति में आपको संतुष्ट करने की क्षमता नहीं थी?'
जनकम्मा के प्रेत ने तुरंत उत्तर नहीं दिया। कुछ देर बाद, नियान्त्रु की वाणी सुनाई दी। 'चित्रगुप्तों से सब कुछ जानना मेरे लिए संभव है। मैं पहले से ही यह जान चुका

हूँ। लेकिन तुम्हारी परीक्षा लेने के लिए, कि क्या तुम कम से कम अब सत्य बोलने के स्तर तक पहुँच गए हो, मैं तुमसे पूछ रहा हूँ। मुझे जल्दी बताओ।'

'यमधर्म, यदि उस मानव जगत के न्यायाधीश ने मुझसे यह प्रश्न पूछा होता, तो मैं कह सकती थी कि "हाँ, मेरे पति में मुझे संतुष्ट करने की क्षमता नहीं थी" और मुझे विधि की सहानुभूति प्राप्त हो सकती थी। परन्तु जैसा कि आप सब जानते हैं, मैं ऐसा नहीं कह सकती। मेरे पति में पर्याप्त क्षमता थी। मैं उनसे प्रेम भी करती थी। मैं जानती थी कि वे भी मुझसे प्रेम करते थे और मेरे प्रति स्नेह रखते थे।'

फिर भी, तुम मंजय्या के साथ सोना क्यों चाहती थी?

'नियांत्रु, तुम इस सवाल का जवाब जानती हो। लेकिन तुम भी कोई हल नहीं बता सकतीं। तब तक मंजू कई स्त्रियों के साथ सो चुका था। वह मेरे घर आकर मुझे "अट्टे, अत्ते" कहकर पुकारता था। मुझे लगता था कि वह मेरी बेटी सीता के लिए एक अच्छा वर होगा, लेकिन चूंकि वह पहले ही भटक चुका था और अय्याश था, इसलिए मैंने उससे रिश्ता न रखने का फैसला किया। लेकिन फिर क्या हुआ? अगर मैं कारण बताने लगूँ तो यह टिप्पणी करने जैसा होगा। इसलिए मैं घटना ही सुनाती हूँ। मैं गाँव के तालाब में कपड़े धोने जाया करती थी। एक दिन, तालाब की सीढ़ियाँ कपड़े धोने आए लोगों से भरी हुई थीं और कोई जगह खाली नहीं थी। तो मैं उस ऊँट-चट्टान पर चली गई। मुझे पता था कि अगर मैं ज़रा सा भी फिसल गई तो वहाँ एक गहरा भंवर है। लेकिन मैंने खुद को समझाया कि मैं नहाने के लिए नीचे नहीं उतरने वाली हूँ और अगर मैं सिर्फ कपड़े धो रही हूँ तो कोई खतरा नहीं है। मैंने हिम्मत जुटाई। एक दिन वहाँ कपड़े धोने के बाद, मुझे वह जगह इतनी पसंद आ गई कि मैं हर रोज़ वहाँ कपड़े धोने जाने लगी। वैसे भी, गहरे पानी में हमेशा पानी साफ रहता है।' मुझे दूसरों के कपड़ों से पानी की बौछार पड़ने का कोई डर नहीं था और मैं बिना किसी की परवाह किए अपने कपड़ों को जितना चाहे उतना ज़ोर से उठा और पीट सकती थी। एक दिन जब मैं कपड़े धो रही थी, मंजय्या तैरते हुए वहाँ आ गया। मैंने मुड़कर देखा। साफ़ पानी की छोटी-छोटी लहरों के नीचे उसका सुडौल शरीर ऐसे दिख रहा था मानो सपने में कोई पेंटिंग बदल रही हो या रूपांतरित हो रही हो। मुझे उसे मंजय्या के रूप में पहचानने में लगभग एक मिनट लग गया। वह चट्टान के पास आया और उस पर चढ़कर बैठने की कोशिश की। पकड़ छूटने पर वह पानी में गिर गया। मुझे नहीं पता कि वह सचमुच गिरा था या नाटक कर रहा था। आखिर में उसने हाथ बढ़ाकर कहा, "अत्ते, मुझे थोड़ा पकड़

लो, मेरी बाहें पूरी तरह थक गई हैं।" वह हाँफ रहा था। मुझे उस पर दया आई और मैंने अपना हाथ बढ़ाया। उसने अपने दाहिने हाथ से मेरा दाहिना हाथ पकड़ा और आसानी से चट्टान पर चढ़ गया। लेकिन चढ़ने के बाद भी उसने मेरा हाथ नहीं हटाया। मैंने अपना हाथ छुड़ाने की कोशिश की, लेकिन उसने अपनी पकड़ और मज़बूत कर ली। उसने अपनी पकड़ इतनी कस ली कि मैं अपना हाथ छुड़ा नहीं पाई, और उसने कहा, "अगर तुम चली जाओगी, तो मैं अकेला क्या करूँगा?" मुझे गुस्सा आया, मैंने अपना हाथ झटक दिया, लेकिन उसने तब भी मेरा हाथ नहीं छोड़ा। उसने मेरे चेहरे को देखा, घूरा जैसे मेरी आँखों के ज़रिए मुझमें प्रवेश कर जाएगा। फिर उसने कहा, "खैर, हमने एक-दूसरे का हाथ पकड़ लिया है। अब मैं चलता हूँ। दूसरे लोग हमें इस हालत में न देखें, है ना?" वह सिर के बल पानी में कूद गया। काफी देर बाद, वह पानी से बाहर निकला, खड़ा हुआ और मेरी तरफ मुड़ा। मुझे बहुत गुस्सा आया। मैंने फिर से ठान लिया कि मैं अपनी बेटी की शादी ऐसे आदमी से नहीं करूँगी। मैंने कपड़े धोए और घर लौट आई। पूरे दिन जिस हाथ को उसने दबाया था, उसमें दर्द होता रहा। मैं बार-बार अपने बाएं हाथ से उस दाहिने हाथ को छूती रही। मैंने सोचा कि अगले दिन उस ऊँट-चट्टान पर कपड़े धोने नहीं जाऊँगी। लेकिन उस साफ पानी के भंवर का आकर्षण मैं छोड़ नहीं पाई। हाँ, मैं वहाँ गई, और ठान लिया, "आने दो, मैं उसे सबक सिखाऊँगी।" लेकिन वह उस दिन नहीं आया। कपड़े धोते-धोते मेरा मन पानी की लहरों को देखने का हुआ और मैं सोचने लगी, "वह अभी तक नहीं आया, क्यों नहीं आया?" ऐसा लग रहा था मानो लहरों के धुंधलेपन में मुझे उसका स्वप्न में बदलता हुआ, चित्रनुमा सुंदर शरीर दिखाई दे रहा हो। हे प्रभु, नीयन्त्रु, तब तक आप समझ चुके होंगे कि मेरे भीतर क्या चल रहा था। तीसरे दिन वह उसी तरह तैरता हुआ आया और हाथ बढ़ाकर बोला, "थोड़ा पकड़ लीजिए।" मैंने उसे डांटा, "छी, बेशर्म बदमाश।" लेकिन मैंने इतनी धीमी आवाज़ में डांटा था कि किसी ने सुना न हो। "मेरे हाथ थक गए हैं, देर मत कीजिए," उसने हाथ बढ़ाया। मैंने उसका हाथ पकड़ा और उसे चट्टान पर चढ़ने में मदद की। नीयन्त्रु, मुझे आपको उन तीव्र लहरों का वर्णन करने की आवश्यकता नहीं है जो मेरे भीतर से उठीं और मेरे पूरे अस्तित्व के आगे, पीछे और चारों ओर टकराईं। आप सब जानते हैं। वह दो दिन और उसी तरह तैरता हुआ आया। फिर एक दोपहर करीब तीन बजे वह हमारे घर आया। उन्हें भली-भांति पता था कि उस समय घर पर कोई नहीं होगा। मैं डर गई

थी। मेरे मुंह से 'ना' निकला, मैंने गिड़गिड़ाया और विनती की। लेकिन उनमें मन को समझने की अद्‌भुत शक्ति थी। उन्होंने कहा, "जब मन एकाग्र हैं, तो तुम 'ना' क्यों कह रही हो?" मैंने स्वयं पहल नहीं की थी। लेकिन मेरे पास न तो मन की शक्ति थी और न ही शरीर की, कि मैं उनका विरोध कर सकूं या उन्हें रोक सकूं। वे इस मामले में सर्वज्ञ थे। तब तक मैं अपने पति के प्रति समर्पित थी और उस दिन मैंने अपनी पवित्रता खो दी। सारा दिन मैं शोक में डूबी रही। वे अगले दिन भी आए और फिर एक और दिन भी आए। तब मैंने सोचा, मैं एक गृहिणी हूं, मेरे पति और बच्चे हैं, उनके साथ मेरा रिश्ता कहां खत्म होगा? कुछ भी ज्ञात नहीं था। लेकिन मेरे पास उन्हें छोड़ने की शक्ति नहीं थी। वे एक ऐसी शक्ति बन गए थे जो मुझे अपनी ओर खींच रही थी, मेरी बुद्धि, मन और इच्छाशक्ति से परे। मेरे भीतर कोई अज्ञात खिंचाव मुझे उनकी ओर धकेल रहा था। देखो नियान्त्रु, क्या मुझे जिम्मेदार ठहराना उचित है? मैं उस बाढ़ में बह गई जिसने मुझे अपने वश में कर लिया।

नियान्त्रु की आवाज ने पूछा, 'क्या तुमने अपने पति को छोड़कर मंजय्या से शादी करने के बारे में कभी सोचा था?'

'अरे, ये कैसे मुमकिन था? मंजू की उम्र क्या थी? मेरी उम्र क्या थी? और अगर मैंने ऐसा किया तो मेरे बच्चों के भविष्य का क्या होगा? मैंने इन सब बातों के बारे में सोच लिया था। और कोई चारा ही नहीं था। इसलिए मैंने मंजू से जितनी बार हो सके मिलने का फैसला किया, एक सुरक्षित समय ढूंढा और हम दोनों ने तय किया कि वो दोपहर तीन बजे तक आ जाए। अरे, नियान्त्रु, मैं तुमसे एक सवाल पूछती हूँ। मेरे अंदर ऐसी अतृप्त इच्छा किसने पैदा की? मंजू को किसने बनाया? क्या उसकी कोई ज़िम्मेदारी ही नहीं है?'

इसी बीच एक और प्रेत वहाँ आने लगा। एक ने दूसरे को देखा। नए आए प्रेत ने पल भर में पहले से मौजूद प्रेत को पहचान लिया और बोला, 'हे जनकम्मा, क्या तुम यहाँ हो?'

'ओह मंजू, क्या तुम हो?' प्रेत उत्साहित हो गया। 'तुम मुझे बहुवचन में क्यों संबोधित कर रही हो? क्या तुम मुझसे नाराज़ हो, क्योंकि मैं तुम्हें वहीं छोड़कर चली गई थी? क्या तुम्हें नहीं लगता कि उम्र का अंतर झूठ है, जब हम एक-दूसरे से प्यार करते हैं और एक हो जाते हैं?'

'अच्छा, जानकी, क्या तुम यहाँ हो?'

'ओह मंजू, तुम्हारी मृत्यु कब हुई? किस बीमारी से?'

नहीं, मैं मरी नहीं थी। मैं तुम्हें ढूंढते हुए यहाँ आई थी। उस दिन तुम्हारा पति अचानक आ गया था, तुम्हें याद है? मैं भाग गई, यह सोचकर कि अगर मैं वहाँ रहती तो तुम्हारा पति मुझे पकड़ लेता, पड़ोसियों और गवाहों को बुला लेता और सबूत बन जाते। वह सब खत्म हो गया था। तो फिर तुमने मुझे बिना बताए या बिना पूछे गाँव के तालाब में उस भंवर में क्यों छलांग लगा दी? मैंने तुम्हें बहुत ढूंढा, बहुत रोई, तुम्हारे बिछड़ने की आग में जलती रही। आखिरकार मैं उस दुनिया से तंग आ गई और यहाँ आ गई ताकि कम से कम तुमसे मिल सकूँ।

"मेरी मंजू, मुझे पता था कि तुम मेरे लिए कितना दुखी होगी। मुझे पता है कि तुम मेरे लिए सब कुछ त्याग दोगी। ओह, तुमने कितनी बार मेरे कानों में अत्यंत तीव्रता से फुसफुसाया था, "ओह जानू, मैं तुम्हारे लिए कुछ भी करूँगी।" जब यह बात मेरे मन में आती है तो जो पीड़ा मुझे होती है, वह यमलोक के इस दंड से करोड़ों गुना भयानक होगी।" ऐसा कहते हुए जानकी का प्रेत ज़मीन पर गिर पड़ा, लुढ़कते हुए करवटें बदलने लगा और रोने लगा, उसकी आँखों से भाप की तरह गर्म और लगातार आँसू बह रहे थे।

'उसकी बातें झूठ हैं।' एक और आवाज़ सुनाई दी। प्रेत ने अपने अनुभव से समझ लिया कि यह विनम्र लेकिन स्पष्ट आवाज़ चित्रगुप्तों की थी। चित्रगुप्तों की आवाज़ ने पूछा, 'यदि तुम उसके लिए इतना दुखी थे, तो तुमने उसकी बेटी से क्यों विवाह किया, गिड़गिड़ाकर, परेशान करके और तरह-तरह के हथकंडे अपनाकर? सुनो जनकम्मा, इस मंजय्या ने तुम्हारी बेटी सावित्री से गिड़गिड़ाकर विवाह किया। फिर उसने उसे छोड़ दिया और उसका जीवन बर्बाद कर दिया। अब वह तुमसे झूठ बोल रहा है।'

जानकी के प्रेत ने पूछा, 'मंजू, क्या तुमने सुना? क्या तुमने ऐसा किया?' मंजय्या के प्रेत ने उत्तर दिया, 'चित्रगुप्त केवल बाहरी घटनाओं को ही जानते हैं। वे अंतर्मन को कैसे समझ सकते हैं? देखो जानू, मैं ऊंट-चट्टान के उस भंवर में तैर रहा था, तुम्हें खोजता जा रहा था। क्या वहीं हमारी पहली मुलाकात नहीं हुई थी और हमने हाथ नहीं थामे थे? वहीं मुझे सावित्री मिली। तुम्हारा ही रूप, तुम्हारी ही आंखें, नाक, माथा, भौंहें और ठोड़ी। मुझे लगा कि मैं धन्य हो गया हूं, क्योंकि मेरी जानकी जो भंवर में डूब गई थी, मेरे लिए फिर से प्रकट हुई थी। तब मैंने उससे विनती की, गिड़गिड़ाया और विवाह कर लिया। लेकिन बाद में मुझे समझ आया कि मैं बाहरी रूप और सुंदरता के मोह में पड़ गया था, मुझे लगा कि मुझे धोखा दिया गया है।

मेरी जानकी बिल्कुल अलग थी। मेरे लिए, जिसने उसकी अंतरंगता का अनुभव किया था, इस सावित्री का साथ असहनीय हो गया। इसलिए, मैंने उसे छोड़ दिया। हां, तुम्हारी यादों में डूबे हुए मैंने उसे छोड़ दिया।'
जानकी का प्रेत शोक से रोने लगा, और अधिक आनंद की अनुभूति के साथ जोर-जोर से रोने लगा।
चित्रगुप्त की वाणी ने कहा, 'वह जो कहता है वह झूठ है।' नियान्तु की वाणी ने निर्णय सुनाया, 'यहाँ चित्रगुप्त जो कहते हैं वही एकमात्र सत्य है।'
मंजय्या का प्रेत ज़मीन पर लोट पड़ा और विनम्रतापूर्वक विनती की, "माननीय न्यायालय से मेरी अपील सुनने का अनुरोध है। मानव जगत में पेशेवर गवाहों के बयानों पर विश्वास नहीं किया जाता। लेकिन यहाँ आप पूरी तरह से चित्रगुप्त जैसे पेशेवर गवाहों पर निर्भर हैं। यदि आप इस पद्धति का पालन करेंगे तो मुझ जैसे निर्दोष, बेगुनाह आरोपी को न्याय कैसे मिलेगा?"
कुछ देर तक सन्नाटा छाया रहा। फिर नियान्तु की आवाज सुनाई दी, 'उसकी बातों पर ध्यान मत दो। तुम अपनी रिपोर्ट जारी रखो।'
'माई लॉर्ड, मंजय्या की हत्या महज एक बाहरी घटना है। दरअसल यह आत्महत्या है।'
लेकिन मंजय्या के प्रेत ने विरोध करते हुए कहा, 'नहीं, नहीं, मैं कभी भी आत्महत्या करने की कायरता नहीं रखता था।'
मंजय्या के प्रेत के विरोध की परवाह किए बिना चित्रगुप्त की आवाज़ जारी रही, "सरोजक्षी नाम की एक स्त्री के घर से निकलने के बाद, इस व्यक्ति ने लगभग सौ बार अत्यंत क्रोध में आकर स्वयं से कहा कि उसे अपने उस अंग को काट देना चाहिए जो विफल हो गया था और उसके पूरे अस्तित्व को अपमानित कर रहा था। यह उसके अहंकार का केंद्र बिंदु था, उसका सक्रिय सिद्धांत था। तीन दिन बाद, लक्कू नाम की एक स्त्री ने उसका बाहरी रूप काट दिया। फिर आत्महत्या का एक और लक्षण है। अब, जो भी प्राणी, चाहे पुरुष हो, स्त्री हो या कोई भी नर या मादा पशु, उसके उपवन में प्रवेश करता है, वे तुरंत कामुक हो जाते हैं। गायें मानो पागल हो गई हों, बैलों की तलाश में दौड़ती हैं; बैल यदि गायों तक नहीं पहुँच पाते हैं, तो भैंसों, गधों आदि जैसी अन्य मादा प्रजातियों पर चढ़ने का प्रयास करते हैं। कुत्तों के बारे में तो कहने की आवश्यकता ही नहीं है; यह मान्यता पूरे गाँव में फैली हुई है। सत्यप्पा नाम के एक व्यक्ति ने बेसहारा महिलाओं के लिए एक पुनर्वास

केंद्र, एक धार्मिक स्थान शुरू करने का प्रयास किया। लेकिन वहाँ आने वाली महिलाएं असामान्य शारीरिक इच्छाओं से ग्रस्त थीं।" वहाँ काम करने आए पुरुष मजदूर भी इसी समस्या से ग्रस्त हैं। नपुंसक या शक्तिहीन पुरुषों का मानना है कि इस उपवन में, कम से कम रात में छुपकर घूमने से उनकी शक्ति बढ़ सकती है। आत्महत्या का एक उद्देश्य उद्घोषणा भी है। यह उतना सफल नहीं हुआ जितना मंजय्या के मामले में हुआ। अतः, हम आपसे निवेदन करते हैं, माननीय न्यायाधीश, उनके उद्देश्य, उनके दृढ़ संकल्प और इसके सभी परिणामों को ध्यान में रखते हुए, उनकी मृत्यु को आत्महत्या माना जाना चाहिए।

चित्रगुप्तों की वृत्तांत अभी भी जारी थी। लेकिन तब तक, ऐसा लग रहा था कि दृश्य बदल चुका है। जनकम्मा का प्रेत अदृश्य हो गया था। नवगठित प्रेत भी गायब हो गया। केवल परमेश्वरय्या का प्रेत ही शेष रह गया, मानो असत्य और सत्य तलवारें लहरा रहे हों। उसका मन मंद पड़ गया और भ्रमित हो गया। कुछ देर बाद उसने पूछा:

हे प्रभु, झूठ की जड़ क्या है? क्या इसका कोई अंत नहीं है?

अनुवादक की टिप्पणी

जब पैंतीस वर्ष पूर्व भैराप्पा का पर्व प्रकाशित हुआ, तो आलोचकों ने महाभारत के प्रति उनके दृष्टिकोण की सराहना करते हुए इसे महाकाव्य का रहस्यमुक्त स्वरूप बताया। लेकिन, उनके साक्षी के प्रकाशन के तुरंत बाद, एक सामाजिक उपन्यास में यमधर्म, यमलोक, चित्रगुप्त और प्रेत जैसे मिथकों के समावेश से आलोचक अचंभित रह गए। भैराप्पा ने उत्तर दिया: 'मैं न तो मिथकों को हटाने के पक्ष में हूँ और न ही उन्हें बनाए रखने या नए मिथक गढ़ने के। एक कलाकार के रूप में मेरा उद्देश्य सत्य के विभिन्न स्तरों और आयामों का अन्वेषण करना है; मिथक तो केवल इसे प्राप्त करने का साधन मात्र हैं।'

इस उपन्यास में परमेश्वरय्या के प्रेत को यम के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है। यम प्रेत को एक विशेष विशेषाधिकार देते हैं: "मेरे दरबार में आमतौर पर प्रेतों को अपने जीवन का ब्यौरा देने का अवसर नहीं दिया जाता क्योंकि वे सज़ा से बचने के लिए झूठ बोलने की प्रवृत्ति रखते हैं। चित्रगुप्त, जो हर मनुष्य के भीतर निवास करते हैं, उसके आचरण का लेखा-जोखा रखते हैं, मेरे दरबार में रिपोर्ट प्रस्तुत करते हैं और वही अंतिम होती है। लेकिन चूंकि आपने झूठी गवाही के लिए आत्महत्या

करके स्वयं को दंडित किया है, इसलिए मैं मानता हूं कि आप सत्य के प्रति दृढ़ रहने की प्रबल प्रवृत्ति रखते हैं। अतः मैं आपको अपने जीवन का ब्यौरा देने का विशेषाधिकार देता हूं।"

वेदांत के अनुसार, व्यक्ति सत्य को तभी समझ पाता है जब उसकी चेतना पूर्णतः शुद्ध हो जाती है। साक्षी को सत्य और असत्य की समस्या से संबंधित एक आध्यात्मिक उपन्यास कहा जा सकता है, जिसके हल के बिना जीवन के अन्य मूल्यों और अवमूल्यों की समस्या का विश्लेषण नहीं किया जा सकता।

भैराप्पा ने यमलोक के जादुई यथार्थवाद के दायरे में इस संसार की घटनाओं को प्रस्तुत करने की एक अनूठी तकनीक विकसित की है। परमेश्वरय्या का अंगूठे के आकार का प्रेत यहाँ कथावाचक है, जो यमधर्म को रिपोर्ट करता है। मिथकों, दर्शन और मानवीय भावनाओं के सबसे बुरे और सबसे ऊंचे रूपों में मनोवैज्ञानिक अंतर्दृष्टि का मिश्रण उपन्यास की संरचना को एक अलग ही आभा प्रदान करता है। उपन्यास का पहला अध्याय, लेखक के भावों से ओतप्रोत, शेक्सपियर के नाटकों के परिचयात्मक दृश्यों की याद दिलाता है। पूरे उपन्यास में साक्षी शब्द में आध्यात्मिक भाव अंतर्निहित हैं। बुराई के अध्ययन और पुरुषार्थों के प्रति गहन चिंतन के रूप में, साक्षी एक अद्वितीय रचना है, जिसकी मिसाल किसी भी भारतीय भाषा में नहीं मिलती।

मैं लेखक का आभारी हूँ कि उन्होंने मुझे साक्षी जैसी उत्कृष्ट कृति का अंग्रेजी अनुवाद करने की अनुमति दी। पांडुलिपि तैयार करने और उसकी टाइपसेटिंग में सहयोग देने के लिए अर्जुन भारद्वाज को विशेष धन्यवाद।

***** *****